कच्छ देश पावन कर्ता मोटी पक्ष के परम पूज्य श्री कर्मसिंहजी महाराज के शिष्यवर्य महात्मा कविवर्य श्री नागचन्द्रजी महाराज !

इस शास्त्रोद्धार कार्य मे आद्योपान्त आप श्री प्राचीन शुद्ध शास्त्र, हुंडी, गुटका और समय२पर आवश्यकीय शुभ सम्मति द्वारा सहाय देते रहनेसेही मै इस कार्य को पूर्ण कर सका इस लिये केवल मै ही नहीं परन्तु जो जो भव्य इस शास्त्रोद्वारा लाभ प्राप्त करेंगे वे सब ही आप के आभारी होंगे

शुद्धाचारी पूज्य श्री खूबा ऋषिजी महाराज के शिष्यवर्य, आर्य मुनि श्री चेना ऋषिजी महाराजके शिष्यवर्य बालब्रह्मचारी पण्डित मुनि श्री अमोलक ऋषिजी महाराज! आपने बडे साहस से शास्त्रोद्धार जैसे महा परिश्रम वाले कार्य का जिस उत्साहसे स्वीकार किया था उस ही उत्साह से तीन वर्ष जितने स्वल्प समय में अहर्निश कार्य को अच्छा बनाने के शुभाशय से सदैव एक भक्त भोजन और दिन के सात घंटे लेखन में व्यतीत कर पूर्ण किया. और ऐसा सरल बनादिया कि कोई भी हिन्दी भाषज्ञ सहज में समज सके, ऐसे ज्ञानदान के महा उपकार तले दबे हुवे हम आप के बडे आभारी हैं

संघकी तर्फ से.

भवनी छतों आंद्र का त्याग कर हैद्राबाद [illegible] पंडित मुनि श्री अमोलक ऋषि [illegible] ज्ञानानंदी श्री देव ऋषिजी, वैय्यावृत्यी श्री राज ऋषिजी, तपस्वी श्री उदय ऋषिजी और विद्याविलासी श्री मोहन ऋषिजी. इन चारों मुनिवरोंने गुरु आज्ञाका बहुमान स्वीकार कर आहार पानी आदि सुखोप- चार का संयोग मिला. दो प्रहर का व्याख्यान, प्रसंगोंसे वार्तालाप कार्य दक्षता व समाधि भाव से सहाय दिया. जिस से ही यह महा कार्य इतनी शीघ्रता से [illegible] पूर्ण सके. इस लिये इस कार्य बहुत उक्त मुनिवरों का भी बड़ा उपकार है.

पंजाब देश पावन करता पूज्य श्री सोहन- लालजी, महात्मा श्री माधव मुनिजी, शतावधानी श्री रत्नचन्द्रजी, तपस्वीजी माणकचन्द्रजी, कवि- वर श्री अमी ऋषिजी, सुवक्ता श्री दौलत ऋषिजी, पं. श्री नथमलजी, पं. श्री जोरावरमलजी, कविवर श्री नानचन्द्रजी, प्रवर्तिनी सतीजी श्री पार्वतीजी, गुणज्ञ- सतीजी श्री रंभाजी. धोराजी सर्वज्ञ भंडार, भीना सरवाले कनीरामजी बहादुरमलजी बांठीया, कीवड़ी भंडार, कुचेरा भंडार, इत्यादिक की तरफ से शास्त्रों व सम्मति द्वारा इस कार्य को बहुत सहायता मिली है. इस लिये इन का भी बहुत उपकार मानते हैं.

आभारी-महात्मा

कच्छ देश पावन कर्ता मोटी पक्ष के परम पूज्य श्री कर्मसिंहजी महाराज के शिष्यवर्य महात्मा कविवर्य श्री नागचन्द्रजी महाराज !

इस शास्त्रोद्धार कार्य में आद्योपान्त आप श्री प्राचिन शुद्ध शास्त्र, हुंडी, गुटका और समय२पर आवश्यकीय शुभ सम्मति द्वारा मदद देते रहनेसेही मैं इस कार्य को पूर्ण कर सका. इस लिये केवल मैं ही नहीं परन्तु जो जो भव्य इस शास्त्रोद्धारा लाभ प्राप्त करेंगे वे सब ही आप के आभारी होंगे

आपका-अमोल ऋषि

हिन्दी भाषानुवादक

शुद्धाचारी पूज्य श्री खूबा ऋषिजी महाराज के शिष्यवर्य, आर्य मुनि श्री चेना ऋषिजी महाराजके शिष्यवर्य बालब्रह्मचारी पण्डित मुनि श्री अमोलक ऋषिजी महाराज! आपने बडे साहस से शास्त्रोद्धार जैसा महा परिश्रम वाले कार्य का जिस उत्साहसे स्वीकार किया था उस ही उत्साह से तीन वर्ष जितने स्वल्प समय में अहर्निश कार्य को अच्छा बनाने के शुभाशय से सदैव एक भक्त भोजन और दिन के सात घंटे लेखन में व्यतीत कर पूर्ण किया. और ऐसा सरल बनादिया कि कोई भी हिन्दी भाषज्ञ सहज में समज सके, ऐसे ज्ञानदान के महा उपकार तले दबे हुवे हम आप के बडे आभारी हैं.

संघकी तर्फ से.

सुखदेव सहाय ज्वाला प्रसाद

अपनी जन्म भूमि का त्याग कर हैद्राबाद सिकंद्राबादमें ठाना धारक बाल ब्रह्मचारी पण्डित मुनि श्री अमोलक ऋषिजीके शिष्यवर्य ज्ञानानंदी श्री देव ऋषिजी वैय्यावृत्यी श्री राज ऋषिजी. तपस्वी श्री उदय ऋषिजी और विद्याविलासी श्री मोहन ऋषिजी. इन चारों मुनिवरोंने गुरु आज्ञाको बहुमानसे स्वीकार कर आहार पानी आदि सुखोपचार का संयोग मिला. दो प्रहर का व्याख्यान, प्रसंगोंमें वार्तालाप कार्य दक्षता व समाधि भाव से सहाय दिया. जिस से ही यह महा कार्य इतनी शीघ्रता से लेखक पूर्ण सके. इस लिये इस कार्य बहुत उक्त मुनिवरों का भी बडा उपकार है.

पंजाब देश पावन करता पूज्य श्री सोहनलालजी, महात्मा श्री माधव मुनिजी, शतावधानी श्री रत्नचन्द्रजी. तपस्वीजी माणकचन्द्रजी, कविवर श्री अमी ऋषिजी,सुवक्ता श्री दौलत ऋषिजी.पं. श्री नथमलजी,पं. श्री जोरावरमलजी. कविवर श्री नानचन्द्रजी.प्रवर्तिनी सतीजी श्री पार्वतीजी.गुणज्ञसतीजी श्री रंभाजी. धोराजी सर्वज्ञ भंडार. भीना सरवाले कनीरामजी बहादुरमलजी बांठीया, लींबडी भंडार, कुचेरा भंडार,इत्यादिक की तरफ से शास्त्रों व सम्मति द्वारा इस कार्य को बहुत सहायता मिली है. इस लिये इन का भी बहुत उपकार मानते हैं.

दक्षिण हैद्राबाद निवासी जौहरी वर्ग में श्रेष्ठ धर्मप्रेमी दानवीर राजा बहादुर लाला जी साहेब श्री सुखदेव सहायजी ज्वालाप्रसादजी!

आपने साधु सेवा के और ज्ञान दान जैसे महा-लाभके लोभी बन साधुमार्गीय जैन धर्म के परम माननीय व परम आदरणीय बत्तीस शास्त्रों को हिन्दी भाषानुवाद सहित छपाने को रु २००००, का खर्चकर अमूल्य देना स्वीकार किया और यूरोप युद्धारंभ से सब वस्तु के भाव में वृद्धि होने से रु. ४०००० के खर्च में भी काम पूरा होनेका संभव नहीं होते भी आपने उस ही उत्साह से कार्य को समाप्त कर सबको अमूल्य महालाभ दिया, यह आप की उदारता साधुमार्गियों को गौरव दर्शक व परमादरणीय है!

शोबाला (काठियावाड) निवासी धर्म प्रेमी कार्यदक्ष कृतज्ञ मणिलाल शिवलाल शेठ! इन्होंने जैन ट्रेनिंग कालेज रतलाम में संस्कृत प्राकृत व अंग्रेजी का अभ्यास कर तीन वर्ष उपदेशक रह अच्छी कौशल्यता प्राप्त की. इन से शास्त्रोध्दार का कार्य अच्छा होगा ऐसी सूचना गुरुवर्य श्री रत्न ऋषिजी महाराज से मिलने से इन को बोलाये. इन्होंने अन्य प्रेस में शुद्ध अच्छा और शीघ्र काम होता नहीं देख शास्त्रोध्दार प्रेस कायम किया और प्रेस के कर्मचारियों को उत्साही कार्य दक्ष बना काम लिया. तैसे ही भाषानुवाद की प्रेसकॉपी बनाई यद्यपि यह भाइ पगार से रहे थे तथापि इन्होंने इस कार्य की सेवा वेतन के प्रमाण से अधिक की. इस लिये इनको भी धन्यवाद देते हैं.

आचारंग सूत्र की-प्रस्तावना

प्रणम्य श्रीजिनाधीशं, श्रीगुरुणामनुग्रहा, लिख्यते सुखबोधार्थ, माचारंगार्थवार्तिकं ।१।
सूत्रगंशब्दशास्त्रेण येषां बुद्धिरसंस्कृता ॥ व्यामोहो जायते तेषां, दुर्गमवृत्तिविस्तरं ॥२॥
ततोवृत्ति समुद्धृत,सुलभा लोक भाषया॥ धर्मस्य परोपकाराय, आचारांगार्थ वार्तिकं ॥३॥

अर्थ—सकल शुद्धार्थ की सिद्धि के कर्ता श्री जिनेश्वर भगवान् को नमस्कार कर के श्री गुरुदेव महाराज के अनुग्रह से सर्व जीवों को शास्त्र के सूक्ष्म–गहन अर्थ का सुख से बोधहो इसलिये इस आचारांग शास्त्र की वार्तिका अर्थात् भाषान्तर–हिन्दी अनुवाद करता हूं॥ १॥ मूल सूत्र तो मागधी भाषा में है और उस का विस्तृत अर्थ बताने के लिये कितने आचार्यों ने इस का संस्कृत भाषा में भी अनुवाद किया है. इस समय उक्त दोनों भाषा का ज्ञान बहुत अल्प जनों को रहगया है जिस से वह भी अर्थ दुरधिगम होगया है. तत्पश्चात् कितनेक आचार्यों ने आचारंग का गुर्जर भाषा में भी अनुवाद किया है. परंतु गुर्जर भाषा एक देशी होने से सर्व देश में सर्व लोगों को इस का बोध होना असंभवित है. परंतु हिन्दी के प्रायः सब देश में माननीय समझ में आवे ऐसी हिन्दी भाषा होने से हिन्दी अनुवाद की आवश्यकता जान उस पूर्वाचार्यों कृत वृत्ती से समुद्धृत कर सब लोगों को सुलभता से

दक्षिण हैदराबाद निवासी जौहरी वर्ग में श्रेष्ठ दृढधर्मी दानवीर राजा बहादुर लाला साहेब श्री सुखदेव सहायजी ज्वालाप्रसादजी!

आपने साधु सेवा के और ज्ञान दान जैसे महालाभ के लोभी बन साधुमार्गीय जैन धर्म के परम माननीय व परम आदरणीय बत्तीस शास्त्रों का हिन्दी भाषानुवाद सहित छपाने का रु २००००, का खर्च का अनुकरण करना स्वीकार किया और यूरोप युद्धारंभ से सब वस्तु के भाव में वृद्धि होने से रु ४०००० के खर्च में भी काम पूरा होनेका संभव नहीं होने भी आपने उस ही उत्साह से कार्य को समाप्त कर सबको अमूल्य महालाभ दिया. यह आप की उदारता साधुमार्गियों की गौरव दर्शक व परमादरणीय है!

शोबाल्या (काठीयावाड) निवासी धर्म प्रेमी कार्यदक्ष कृतज्ञ मणिलाल शिवलाल शेठ! इन्होंने जैन ट्रेनिंग कालेज रतलाम में संस्कृत प्राकृत व अंग्रेजी का अभ्यास कर तीन वर्ष उपदेशक रह अच्छी कौशल्यता प्राप्त की. इन से शास्त्रोध्धार का कार्य अच्छा होगा ऐसी सूचना गुरुवर्य श्री रत्न ऋषिजी महाराज से मिलने से इन को बोलाये. इन्होंने अन्य प्रेस में शुद्ध अच्छा और शीघ्र काम होता नहीं देख शास्त्रोध्धार प्रेस कायम किया और प्रेस के कर्मचारियों को उत्साही कार्य दक्ष बना काम लिया. तैसे ही भाषानुवाद की प्रेसकॉपी बनाई यद्यपि यह भाई पगार से रहे थे तथापि इन्होंने इस कार्य की सेवा वेतन के प्रमाण से अधिक की. इस लिये इनको भी धन्यवाद देते हैं.

आचारांग सूत्र की-प्रस्तावना

प्रणम्य श्री जगन्नाथं, श्रीगुरुं ज्ञानसुप्रदं, जिनवरं गुणधरं, आचारांगार्थवार्तिकं ॥१॥
सूत्रांशस्य आचारांग देवां वृत्तिसंस्कृता ॥ व्याख्याता जायते तेषां, दुर्गमवृत्तिविस्तारं ॥२॥
तस्यां ... भाषया ॥ धर्मस्य उपकाराय, आचारांगार्थ वार्तिकं ॥३॥

अर्थ—सकल इष्टार्थ की सिद्धि के कर्ता श्री जिनेश्वर भगवान् को नमस्कार कर के श्री गुरुदेव महाराज के अनुग्रह से सर्व जीवों को ज्ञान के सूक्ष्म-गहन अर्थ का ज्ञान हो इसलिये इस आचारांग शास्त्र की बालिका अर्थात् भाषान्तर-हिन्दी अनुवाद करता हूं ॥ १ ॥ मूल सूत्र तो मागधी भाषा में है और उस का विस्तृत अर्थ बताने के लिये कितने आचार्यों ने इस का संस्कृत भाषा में भी भाषान्तर किया है. इस समय इन दोनों भाषा का ज्ञान बहुत अल्प लोगों को रहता है जिस से यह ... दुर्लभ होता है. तत्पश्चात् कितनेक आचार्यों ने आचारांग का गुजराती भाषा में भी अनुवाद किया है परंतु गुजराती भाषा एक देशी होने से सर्व देश में सर्व लोगों को इस का बोध होना असंभव है परंतु हिन्दी के प्रायः सब देश में प्रचलित सब में जाने ऐसी हिन्दी भाषा होने से हिन्दी अनुवाद की आवश्यकता जान इस पूर्वाचार्यों कृत टीका से सहायता ले कर सब लोगों को सुगमता से

दक्षिण हैद्राबाद निवासी जौहरी वर्ग में श्रेष्ठ दृढधर्मी दानवीर राजा बहादुर लालाजी माहेब श्री सुखदेव सहायजी ज्वालाप्रसादजी!

आपने साधु सेवा के और ज्ञान दान जैसे महा-लाभके कार्यों वत साधुमार्गीय जैन धर्म के परम माननीय व परम आदरणीय बत्तीस शास्त्रो को हिन्दी भाषानुवाद सहित छपाने को रु ०००००, का खर्चकर अमूल्य देना स्वीकार किया और यद्यपि मुद्रालय में सब वस्तु के भाव में वृद्धि होने से रु ००००० के खर्च में भी काम पूरा होनेका संभव नहीं होने भी आपने उस ही उत्साह से कार्य का समाप्त कर सबको अमूल्य महालाभ दिया यह आप की उदारता साधुमार्गीयों को गौरव दर्शक व परमादरणीय है!

शोवान्या (काठीयावाड) निवासी धर्म प्रेमी कार्यदक्ष कृतज्ञ मणिलाल शिवलाल शेठ! इनोंने जैन ट्रेनिंग कालेज रतलाम में संस्कृत प्राकृत व अंग्रेजी का अभ्यास कर तीन वर्ष उपदेशक रह अच्छी कौशल्यता प्राप्त की. इन से शास्त्रोध्धार का कार्य अच्छा होगा ऐसी सूचना गुरुवर्य श्री रत्न ऋषिजी महाराज से मिलने से इन को श्रीबाये. इनोंने अन्य प्रेस में शुद्ध अच्छा और शीघ्र काम होता नहीं देख शास्त्रोध्धार प्रेस कायम किया और प्रेस के कर्मचारियों को उत्साही कार्य दक्ष बना काम लिया. तैसे ही भाषानुवाद की प्रेसकोपी बनाइ यद्यपि यह भाइ पगार से रहे थे तथापि इनोंने इस कार्य की सेवा वेतन के प्रमाण से अधिक की इस लिये इनको भी धन्यवाद देते हैं.

आचारंग सूत्र की-प्रस्तावना

प्रणम्य श्रीजिनाधीशं, श्रीगुरुणामनुग्रहात्, लिख्यते सुखबोधार्थं, माचारंगार्थवार्तिकं ॥१॥
गुर्जरांशब्दशास्त्रेण येषां बुद्धिरसंस्कृता ॥ व्यामोहो जायते तेषां, दुर्गमवृत्तिनिरतं ॥२॥
ततोवृत्ति समुद्धृत, सुलभा लोक भाषया ॥ धर्मस्य परोपकाराय, आचारांगार्थ वार्तिकं ॥३॥

अर्थ—सकल इष्टितार्थ की सिद्धि के कर्ता श्री जिनेश्वर भगवान् को नमस्कार कर के श्री गुरुदेव महाराज के अनुग्रह से सर्व जीवों को शास्त्र के सूक्ष्म-गहन अर्थ का सुख से बोध हो इसलिये इस आचारांग शास्त्र की वार्तिका अर्थात् भाषान्तर-हिन्दी अनुवाद करता हूं ॥ १ ॥ मूल सूत्र तो मागधी भाषा में है और उन का विस्तृत अर्थ बताने के लिये कितने आचार्यों ने इस का संस्कृत भाषा में भी अनुवाद किया है. इस समय उक्त दोनो भाषा का ज्ञान बहुत अल्प जनों को रहगया है जिस से यह भी अर्थ दुरधिगम होगया है. तत्पश्चात् कितनेक आचार्यों ने आचारंग का गुर्जर भाषा में भी अनुवाद किया है. परंतु गुर्जर भाषा एक देशी होने से सर्व देश में सर्व लोगों को इस का बोध होना असंभवित है. परंतु हिन्दी के प्रायः सब देश में माननीय समझ में आवे ऐसी हिन्दी भाषा होने से हिन्दी अनुवाद की आवश्यकता जान उस पूर्वाचार्यों कृत वृत्ती से समुद्धृत कर सब लोगों के ——

शास्त्र-प्रकाशक

दक्षिण हैद्राबाद निवासी जौहरी वर्ग में श्रेष्ठ दृढधर्मी दानवीर राजा बहादुर लाला साहेब श्री सुखदेव सहायजी ज्वालाप्रसादजी!

आपने साधु सेवा के और ज्ञान दान जैसे महा-लाभके कार्यों का साधुमार्गीय जैन धर्म के परम माननीय व परम आदरणीय बत्तीस शास्त्रों को हिन्दी भाषानुवाद सहित छपाने का रु २००००, का खर्चकर अमूल्य दना स्वीकार किया और सुंदर मुद्रालय में सब वस्तु के भाव में वृद्धि होने से रु ४०००० के खर्च में भी काम पूरा होनेका संभव नहीं होने भी आपने उस ही उत्साह से कार्य को समाप्त कर सबको अमूल्य महालाभ दिया. यह आप की उदारता साधुमार्गीयों को गौरव दर्शक व परमादरणीय है!

आश्रयदाता

धोराजी (काठीयावाड) निवासी धर्म प्रेमी कार्यदक्ष कृतज्ञ मणिलाल शिवलाल शेठ! इन्होंने जैन ट्रेनिंग कालेज रतलाम में संस्कृत प्राकृत व अंग्रेजी का अभ्यास कर तीन वर्ष उपदेशक रह अच्छी कौशल्यता प्राप्त की. इन से शास्त्रोध्धार का कार्य अच्छा होगा ऐसी सूचना गुरुवर्य श्री रत्न ऋषिजी महाराज से मिलने से [illegible] को बोलाये. इन्होंने अन्य प्रेस में शुद्ध अच्छा और शीघ्र काम होता नहीं देख शास्त्रोध्धार प्रेस कायम किया और प्रेस के कर्मचारियों को उत्साही कार्य दक्ष बना काम लिया. तैसे ही भाषानुवाद की प्रेसकोपी बनाई यद्यपि यह माह पगार से रहे थे तथापि इन्होंने इस कार्य की सेवा वेतन के प्रमाण से अधिक की. इस लिये इनको भी धन्यवाद देते हैं.

शोध होवे इस परोपकारिक बुद्धि से यह आचारांग सूत्र का हिन्दी अनुवाद किया है ॥ ३ ॥ श्री जिनेश्वर भगवान् ने अनादि निधि द्वादशांग में जिनवाणी [redacted] का कथन किया है, जिस में सब से प्राधान्य पना इस आचारांग शास्त्र का है. प्रश्न-अंगशास्त्र में सारो ? आगारो, तस्स कि हवइ सारो ? अणुओगत्थो सारं, तस्सावि परूवणाए सारं पण्णवणाए चरणं, तस्सवि होइ निव्वाणं, निव्वाणस्स सारं अव्वाबाहं, जिणाविति. प्रश्न-सर्व अंगों में सारभूत अंग कौनसा है ? उत्तर-आचारांग, प्रश्न-आचारांग सार भूत क्यों है ? उत्तर-जिस में करणानुयोग का कथन किया है. इस लिये सबसे प्रथम करणानुयोग-क्रिया-आचार का प्रतिपादन करना यही उत्तम है. क्यों कि आचार जैसा विचार होता है. शुद्धाचार से विचार की भी शुद्धि होती है. आचार और विचार दोनों की शुद्धि होने से कर्मोंका क्षय होता है और कर्म क्षय होने से निर्वाण (मोक्ष) पद की प्राप्ति होती है. निर्वाण की प्राप्ति होने से निराबाध निर्विकल्प सुख की प्राप्ति होती है. इस लिये निराबाध सुखेच्छु जीवों को अपने आचार का सुधारा करने की परमावश्यकता जान इस आचारांग शास्त्र को द्वादशांगी में प्रथम पद दिया है. इस आचारांग शास्त्र के दो श्रुतस्कंध है.—जिस में से प्रथम श्रुतस्कंध में आभ्यन्तर (अन्तःकरण) की शुद्धि करने पट्काय जीवों [redacted] आदि आत्मतत्व का विवेचन नव अध्ययन में किया है, और दूसरे श्रुतस्कंध में बाह्यक्रिया का सुधारा करने पिंडविशुद्धि आदि का १६ अध्ययन में कथन किया है. दोनों श्रुतस्कंध के २५ अध्ययन है. आंतरिक शुद्धि और बाह्यशुद्धि का शास्त्र स्वरूप इसीसे दोनों

श्रुतस्कन्ध के अन्त में श्री महावीर स्वामी का जीवन वृत्तान्त कहा है.

इस आचारांग सूत्र का अनुवाद करने में सहायता में तो राजकोट से छपे हुवे आचारांग सूत्र की सहायता है और भावनगर में कच्छदेश पावन कर्ता अट्ठ कोटी मोटी पक्ष के परमपूज्य श्री कर्मसिंहजी महाराज के शिष्य विद्वद्वर्य श्री नागचन्द्रजी महाराज के भेजे हुवे धनपतसिंह बाबू वाले आचारांग के और मारवाड देश [illegible] के हेमराजजी श्रावक का भेजा हुवा हस्तलिखित आचारांगजी की सहायता ली है उक्त तीनों प्रतों तथा एक हस्तलिखित और पास की प्रतों यों चारों प्रतों से मिलाकर यथामतिअनुसार शुद्ध कर पाठ व अनुवाद किया गया है इस लिये उक्त ग्रन्थ भेजने वाले महाशयों का आभार माना जाता है और नम्र निवेदन किया जाता है कि उपयोग शून्यता से व दृष्टि दोष से इस में दोष रहा हो उसे शुद्ध करने की कृपा करें,

आचारांग सूत्र की विषयानुक्रमणिका.

१ प्रथम शस्त्र परिज्ञा अध्ययन ... १
२ प्रथमोद्देशा जीवों का कथन ... १
३ द्वितीयोद्देशा पृथ्वीकाया का ... ५
४ तृतीयोद्देशा-अपकाया का ... १३
५ चतुर्थोद्देशा-तेऊकाया का ... १०
६ पंचमोद्देशा-वनस्पतिकाया का ... २४

७ षष्टोद्देशा-त्रसकाया का ... २९
८ सप्तमोद्देशा-वायुकाया का ... ३५
९ लोकविजय नामक द्वितीय अध्ययन ... ४०
१० प्रथमोद्देशा-विषय परित्याग ... ४०
११ द्वितीयोद्देशा-अरति निवारन ... ४६
१२ तृतीयोद्देशा-मद निवारण ... ५०
१३ चतुर्थोद्देशा-स्वजन ममत्व त्याग ... ५६
१४ पंचमोद्देशा-द्रव्य ममत्व त्याग ... ६१
१५ षष्टोद्देशा-हित शिक्षण ... ६८
१६ शीतोष्णीय नामक तृतीय अध्ययन ... ७५
१७ प्रथमोद्देशा-सुप्त जाग्रत का ... ७५
१८ द्वितीयोद्देशा-तत्वज्ञ अतत्वज्ञ ... ७९
१९ तृतीयोद्देशा-प्रमाद परित्याग ... ८४
२० चतुर्थोद्देशा-एक जाने वह सब जाने ... ८९
२१ सम्यक्त्व नामक पंचम अध्ययन ... ९४
२२ प्रथमोद्देशा-दयाधर्म का मूल ... ९४
२३ द्वितीयोद्देशा-सज्ञान अज्ञान ... ९७
२४ तृतीयोद्देशा-सुख प्राप्ति का उपाय ... १०३
२५ चतुर्थोद्देशा-सुसाधु के लक्षण ... १०६
२६ आवंतिनाम (लोकसार) पंचम अ० ११२
२७ प्रथमोद्देशा विषयासक्त मुनि नहीं ... १११
२८ द्वितीयोद्देशा-सावद्य अनुष्ठान के त्यागी मुनि ११६
२९ तृतीयोद्देशा-कनककांता के त्यागी मुनि ११९
३० चतुर्थोद्देशा-अव्यक्त मुनि अकेला नहीं १२५
३१ पंचमोद्देशा-ज्ञाता अज्ञाता की तफावत् १२९
३२ षष्टोद्देशा-प्रमादी अप्रमादी की तफावत् १३५
३३ धूताख्य षष्टम अध्ययन ... १४०
३४ प्रथमोद्देशा-कामाशक्त के दुःखो ... १४०
३५ द्वितीयोद्देशा-रक्त विरक्त के सुख दुःख १४७
३६ तृतीयोद्देशा-ज्ञानी मुनि की दिशा ... १५१
३७ चतुर्थोद्देशा-भ्रष्ट भ्रष्ट के लक्षण ... १५५
३८ पंचमोद्देशा-उत्तम साधु के लक्षण ... १६२
३९ महाप्रज्ञा सप्तम अध्ययन व्युच्छेद ... १६५
४० विमोक्ष नामक अष्टम अध्ययन ... १६६

४१ प्रथमोद्देशा-पन्नारों और मुनि ... १३३
४२ द्वितीयोद्देशा-अकल्पनीय परित्याग ... १७२
४३ तृतीयोद्देशा-शंका निवारण,परिषह सहन १७५
४४ चतुर्थोद्देशा-वस्त्र त्याग और मृत्यु ... १८१
४५ पंचमोद्देशा-वीरमुनिका कर्तव्य भक्त प्रत्याख्यान ... १८४
४६ षष्टोद्देशा-पपन्च त्याग इंगित मृत्यु ... १८९
४७ सप्तमोद्देशा-अभिग्रह पादोपगमन मृत्यु. १९४
४८ अष्टमोद्देशा-तीनों प्रकार के पंडित मृत्यु करने की विधी ... १९९
४९ उपाधानश्रुत नवम अध्ययनम ... २०९
५० प्रथमोद्देशा-महावीर स्वामीका वस्त्र युक्त आचार ... २०९
५१ द्वितीयोद्देशा-महावीर स्वामीके स्थानक. २१७
५२ तृतीयोद्देशा-महावीर स्वामी के परिषह २२३
५३ चतुर्थोद्देशा महावीर स्वामी का आचार और तप — २२७

द्वितीय-श्रुतस्कन्ध, २३३

५४ पिन्डैषणा दशम अध्ययनम् ... २३३
५५ प्रथमोद्देशा-कल्पनीय अकल्पनीय आहार २३३
५६ द्वितीयोद्देशा-अशुद्ध आहारका परित्याग २४५
५७ तृतीयोद्देशा-जेमनका आहार का त्याग २५५
५८ चतुर्थोद्देशा-आहार ग्रहण करनेकी विधी २६३
५९ पंचमोद्देशा-गोचरी का मार्ग शुद्धि २७१
६० छट्ठोद्देशा-भीक्षाग्रहण करने की विधी २८१
६१ सप्तमोद्देशा- दातार की शुद्धता ...२९०
६२ अष्टमोद्देशा-पानी प्रकार ग्रहण करने की विधि ३००
६३ नवमोद्देशा-आहार ग्रहण करना व परिठावने की विधी ... ३११
६४ दशमोद्देशा-आहार भोगवने की विधि ३१९
६५ एकादशमोद्देशा-बिमारों के लिये आहारलाने की विधि कपटत्याग, आहारकी सातएषणा पानी की सात एषणा ...३२८

६६ उपाश्रय नामकदशम अध्ययन ३३८
६७ प्रथमोद्देशा-सदोष उपाश्रय (स्थानक) ३३८
६८ द्वितीयोद्देशा ग्रहस्थ रहे उस स्थान में रहने की मना तथा, स्थानक की क्रिया और विधि ३५४
६९ तृतीयोद्देशा सदोष स्थानक का निषेध स्थानक की चार प्रतिज्ञा ३६९
७० ईर्याख्य द्वादश अध्ययन ३०२
७१ प्रथमोद्देशा-मार्ग गमनागमन, नावारूढ होने की विधि नदी उतरने की विधि ३९२
७२ द्वितीयोद्देशा नावारूढ के परिषह मार्ग शुद्धी ४०७
७३ तृतीयोद्देशा-मार्गातिक्रमण विधि ४१०
७४ भाषाजात नामक त्रयोदश अध्ययन ...४३९
७५ प्रथमोद्देशा-सोले वचन बोलने की विधि ४३९
७६ द्वितीयोद्देशा-सावद्य दुःखप्रदभाषा त्याग ४४९
७७ वस्त्रैषणाख्य चतुर्दशमध्ययन ...४५९
७८ प्रथमोद्देशा-कल्पनीक वस्त्र याचने की विधि ४५९
७९ द्वितीयोद्देशा-वस्त्र रखने की विधि ...४७९
८० पात्रैषणाख्यं पंचदश अध्ययन ...४८७
८१ प्रथमोद्देशा-अकल्पनीय कल्पनीय पात्र व पात्र याचने की विधी ...४८७
८२ द्वितीयोद्देशा-पात्र रखने की विधि ४९७
८३ अवग्रह-प्रतिमाख्यषोडश अध्ययन ५०१
८४ प्रथमोद्देशा-अदत्तत्याग, योग्यस्थानक
८५ द्वितीयोद्देशा- स्थानकपाटादि की आज्ञा याचना लेने की विधी व सात प्रतिज्ञा ...५१०
८६ स्थान सप्तदश अध्ययन खडे रहने के लिये जगह की चार प्रतिज्ञा ...५२२
८७ निशीथिका नामक अष्टादश अध्ययन स्वाध्याय करने के स्थानककी विधि ५२६
८८ उच्चार प्रस्रवण नामं एकोन वीश अध्ययन स्थंडिल (दिशा) जानेकी जगहकी विधी ५२८

[illegible] अध्ययन-विकार उत्पादक शब्द श्रवण का निषेध ६४३
[illegible] अध्ययन-विकार उत्पादक रूपदेखने का निषेध ...६०३
[illegible] अध्ययन ग्रहस्थ के पास क्रिया कराने का निषेध ६०७
[illegible] अध्ययन [illegible] क्रिया परस्पर कराना निषेध ६३९
०.३ भावनाख्य चतुर्विंशतितम अध्ययन-महावीर स्वामीका चारित्र तथा पंच महाव्रतों की २५ भावना ६३३
०.४ विमुक्त नामकं पंचविंशतितम अध्ययन पांच औपमाओं से साधुधर्म की प्रशंसा ६३४

इत्यानुक्रमणिका

बाल ब्रह्म श्री कहानजी ऋषि महाराज के सम्प्रदायके बालब्रह्मचारी मुनि श्री अमोलकऋषिजी ने [illegible] वर्ष में ३२ ही शास्त्रों का हिंदी भाषानुवाद किया, उन ३२ ही शास्त्रों की १,०००—१००० प्रतों को सीर्फ पांच ही वर्ष में छपवाकर दक्षिण हैद्राबाद निवासी राजा बहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी ने सब को अमूल्य लाभ दिया है!

आचाराङ्ग सूत्रम्.

प्रथमः श्रुतस्कंधः

शस्त्रपरिज्ञानामकं प्रथममध्ययनम्.

AUGARCHAND BHAIRODAN SETHIA
JAIN LIBRARY
BIKANER, RAJASTHAN

* प्रथमोद्देशः *

सु० सुना, मे० मैंने आ० आयुष्मान् ते० उन भ० भगवानने ए० एसा अ० कहा० इ० ॥१॥ इस लोक में ए० किनतेक को णो० नहीं स० समझ. भ० होती है, तं० वह ज० यथा पु० पूर्व वा० या दि० दिशा से

सुयं मे आउसं तेणं भगवया एवमक्खायं ॥ १ ॥ इह मेगेसिं णो सण्णा भवइ,

श्री महावीर परमात्मा के पाटवीय गणधर श्री सुधर्मा स्वामी अपने शिष्य श्री जंबुस्वामी से कहते हैं कि अहो आयुष्मान् जंबु! भगवान के मुखारविन्द से मैंने सुना है, उन्होंने ऐसा कथन किया था.॥१॥

आ० आया अ० मैं हूं दा० दक्षिण वा० या० दिशासे आ० आया अ० मैं हूं. प० पश्चिम वा० या दि० दिशा में आ० आया अ० मैं हूं. उ० उत्तर वा० या० दि० दिशा में आ० आया अ० मैं हूं. उ० ऊंची वा० या दि० दिशा मे आ० आया अ० मैं हूं. अ० नीची दि० वा० या० दि० दिशा मे आ०

तेजहा पुरत्थिमाओ वा दिसाओ आगओ अहमंसि, दाहिणाओ वा दिसाओ आगओ अहमंसि, पच्चत्थिमाओ वा दिसाओ आगओ अहमंसि, उत्तराओ वा दिसाओ आगओ अहमंसि, उड्ढाओ वा दिसाओ आगओ अहमंसि, अहे दिसाओ वा आगओ अहमंसि, अण्णयरीओवा दिसाओ अणुदिसाओवा आगओ अहमंसि, एव मेगेसिणो णायं भवइ.

इस प्रकार के कितनेक जीवों को एसा ज्ञान नहीं है कि मैं पूर्व दिशा से, दक्षिण दिशा से, पश्चिम दिशा से, उत्तर दिशा से, ऊंची दिशा से, नीची दिशा से अथवा ईशानादि विदिशा से और * अनुदि

*१८ द्रव्यदिशा-१ पूर्व,२ दक्षिण,३ पश्चिम,४ उत्तर,यह४ दिशा,५ ईशान,६ अग्नि, ७ नैऋत्य, ८ वायव्य यह चार विदिशा. इन आठो की अंतराल ऐसे १६ हुए १७ऊंची और १८ नीची. १८ भावदिशा-१ समुर्छिम, २ कर्म भूमि, ३ अकर्मभूमि, ४ अन्तरद्विपा, ये चार मनुष्य के भेद. ५ बेइन्द्रिय ६ तेइन्द्रिय ७ चौरिन्द्रिय ८ पंचेन्द्रिय, ये चार त्रस तिर्यंच, ९ पृथ्वी,१० अप् ,११ तेउ, १२वायु, ये चार स्थावर.१३ अग्रबीज, १४ मुलबीज, १५ स्कन्धबीज १६ पर्वबीज १७ देव और १८ नारकी.

शब्दार्थ आया अ० मैं हूं अ० दूसरी वा० या दि० दिशा से अं० अनुदिशासे आ० आया अ० मैं हूं. ए० ऐसे ए० कितनेक को णो० नहीं. णा० ज्ञान भ० होता है. अ० है मे० मेरा आ० आत्मा उ० उत्पन्न होने वाला. णो० नहीं. मे० मेरा आ० आत्मा उ० उत्पन्न होनेवाला के० कौन अ० मैं भ० था इ० यहां से चु० चवकरके इ० इस संसारमें पे० परभव में भ० होवूंगा. २ से० अब जं० जो पु० और जा० जाने स० स्वमति करके प० जिनोपदेशसे अ० दूसरे के अं० समीप वा० या सो० श्रवण करके तं० वह इस प्रकार पु० पूर्व वा० या दि० दिशा से आ० आया अ० मैं हूं जा० यावत अ० दूसरी वा० या० दि०

सूत्र अत्थि मे आया उववाइए णत्थि मे आया उववाइए, के अहंआसि ? के वा इओ चुओ इह पेच्चा भविस्सामि? २ से जं पुण जाणेज्जा सहसम्मइयाए परवागरणेणं अण्णेसिं अंतिए वा सोच्चा तं जहा-पुरत्थिमाओ वा दिसाओ आगओ अहमंसि जाव अण्णयरिओ वा दिसाओ अणुदिसाओ वा आगओ अहमंसि । एव मेगेसिं णो

भावार्थ शा से आया हूं. ऐसेही कितनेक जीवों को ऐसा भी ज्ञान नहीं है कि मेरा आत्मा उत्पन्न होता है या नहीं, मैं कौन था और यहां से मृत्यु के पिछे परभव में क्या होउंगा. २ पूर्वोक्तजीव स्वयं जातिस्मरण ज्ञान से, तीर्थंकर व केवली के कहने से, या दूसरे किसी के पास से श्रवण कर जान सकते हैं कि-मैं पूर्व दिशासे यावत विदिशासे आयाहूं एसे ही कितनेक को ऐसा भी ज्ञान नहीं होता है कि-मेरा आत्मा पुनर्जन्म को प्राप्त

दिशाने भ० अनुदिशा मे आ० या० आ० आया अ० मैं हूं. ए० ऐसे ए० कितनेक को नो० ज्ञान भ० होता है भ० है मे० मेरा आ० आत्मा उ० उत्पन्न होनेवाला जो० जो इ० इस दि० दिशा मे भ० विदिशा मे या० [illegible] भ० आता है स० सर्व दि० दिशा मे अ० विदिशा मे जो० जो आ० आया भ० फिरता है सो० मैं हूं ॥३॥ से उन को आ आत्मवादी, लो. लोकवादी क. कर्मवादी कि. क्रियावादी॥४॥ अ.क्रिया प० समुच्चयार्थ भ मन का० कराया च समुच्चयार्थ अ अनेक करनेवाले को स० अच्छा भ० जाना. ए० इतने ही

णाम भवइ अत्थिमे आया उववाइए. जो इमाओ दिसाओ अणुदिसाओ वा अणुसं-
चरइ सव्वाओ दिसाओ सव्वाओ अणुदिसाओ जो आगओ अणुसंचरइ सोहं ३ से आया
वादी, लोगावादी, कम्मावादी किरियावादी, ४ अकरिस्सं चहं, काराविस्सं चहं, करओया
वि समणुन्ने भविस्सामि. एयावंति सव्वावंति लोगंसि कम्मसमारंभा परिजाणियव्वा

होनेवाला है कि जो आत्मा उस दिशा मे या विदिशा मे आया है. जो दिशा मे विदिशा मे या सब दिशा मे आया हुवा है वह मैं हूं ॥३॥ उक्त कथनानुसार जो जाननेवाले होते हैं उन को ही आत्मवादी कर्मवादी और क्रियावादी कहते हैं. ॥४॥ मैने किया मैने कराया और करने वालेको भला जाना, मैं करता हूं मैं कराता हूं, और करने वालेको अच्छा जानता हूं. मैं करूंगा, मैं कराउंगा, और करने वालेको अच्छा जानुंगा इनको मन वचन कायाने तिगुने करनेसे सत्ताईस २७ भेद होते हैं यह कर्म बांधनेके कारण भूत क्रियाओंके भेद जानना०

...कर्म क० कर्म बांधने के स्थान प० जानने योग्य भ० होते हैं॥०॥ अ० नहीं जानने वाला क० कर्मोंको ख० निश्चय अ० यह पु० पुरुष जो० जो इ० इन दि० दिशायें अ० विदिशायें या० या अ० भ्रमण करते हैं स० सर्व दि० दिशायें स० सर्व अ० विदिशा में सा० फिरते हैं अ० अनेक रू० प्रकारकी जो० योनियों में सं० जाते हैं वि० तरह २ के फा० स्पर्श प० अनुभवते हैं॥७॥ त० वहां ख० निश्चय भ० भगवानने प० परिज्ञा शुद्ध समझ प० कही ७ इ० इस० सं० निश्चय जी० जीवितव्य के लिये प० वन्दनार्थ मा० मानार्थ पू० पूजार्थ जा० जन्म म० मृत्यु मो० मोचनार्थ दु० दुःखप्रतिघातार्थ. ८ ए० इतने सं० सव्वेति ॥५॥

सूत्र अपरिण्णायकम्मा खलु अयं पुरिसे जो इमाओ दिसाओ अणुदिसाओ वा अणुसंचरइ, सव्वाओ दिसाओ सव्वाओ अणुदिसाओ साहेति, अणेगरूवाओ जोणिओ संधेइ. विरूवरूवे फासे पडिसंवेदेइ॥६॥ तत्थखलु भगवया परिण्णा पवेइया; ७ इमस्सचेव जीवियस्स परिवंदण माणण पूयणाए, जाइमरण मोयणाए, दुक्खपडिघायहेउ; ८ एयावंति

भावार्थ उपर्युक्त क्रियाको नहीं जानने वाला पुरुष सर्वदिशा विदिशायें परिभ्रमण करता हुआ अनेक योनियोंमें उत्पन्न होता है और अनेक प्रकारके दुःखों को अनुभवता है ३ उनक्रियाओंके विषय में भगवानने शुद्ध समज (ज्ञपरिज्ञा और प्रत्याख्यान परिज्ञा.) कही है. ७ निश्चयही इस अनित्य जीवितव्यकेलिये, प्रशंसाकेलिये, पूजा मान वस्त्र पात्रादिककेलिये जन्म मरणसे मुक्त होने केलिये और दुःखों को दूर करने केलिये ...

सर्व लो० लोकों क० कर्मोपार्जन करने के स्थान प० जानने योग्य भ० होते हैं ज० जिसको० ए० ये लो० लोकों क० कर्म्मसमारंभ प० जाने हुवे भ० होते हैं से० वे हु० निश्चय मु० साधु प० शुद्धसंयमी इ० एसा बे० कहताहुं.

सव्वावंति लोगंसि कम्मसमारंभा परिजाणियव्वाभवंति. जस्सेते लोगंसि कम्म समारंभा परिण्णाया भवंति सेहु मुणी परिण्णायकम्मेत्ति बेमि, ॥९॥

* इति सत्थ परिण्णाज्झयणस्स पढमोद्देसो सम्मत्तो. *

क्रियाओं में प्रवर्तते हैं.८ पूर्वोक्त इतने सब कर्म्मों पार्जन करनेके स्थान जाननेयोग्य होतेहैं. सर्वज्ञ परमात्माने फरमाया है कि जिनोनें पूर्वोक्त क्रियाके भेदोंको ज्ञ प्रज्ञासे जाने हैं और प्रत्याख्यान परिज्ञासे त्यागे हैं वेही शुद्ध संयमी मुनिहैं एसा मैंने श्रीमहावीर परमात्माके मुखारविंदसे श्रवण कियाहै और वैसाही तेरेप्रतिकहताहुं यह शस्त्र परिज्ञा नामक प्रथम अध्ययनका प्रथम उद्देशा समाप्त हुआ. इस उद्देशामें जीवका अस्तित्व दर्शाया; अब जीवोंके रक्षण केलिये जीव की कायाका पृथक् २ स्वरूप बताते हैं:—

(द्वितीयउद्देशः)

अ० आर्तवन्त लो० लोक प० ज्ञान रहित दु० दुर्लभबोधी अ० विशिष्ट ज्ञान रहित अ० इस लो०

अट्टे लोए परिजुण्णे दुस्संबोहे अविजाणए, अस्सिं लोए पव्वहिए तत्थ तत्थ पुढोपास

शब्दार्थ

दोसंत दु० पशा हैं न नहीं २ पु० पृथक् २ पाप देखो, आ० आतुर प० दुःख देते हैं ॥ १ ॥ सं० हैं पा० प्राणी पु० पृथिव्याश्रित ल० लज्जा पाते पु० पृथक् २ पा० देखो ॥ २ ॥ अ० साधु मो० हम हैं इ० एसा प० कितनेक प० कहतेहुवे ज० पहले वि० अनेक प्रकारके स० शस्त्र से पु० पृथ्वीकायिकजीव क० कर्म स० आरंभ से पु० पृथ्वीका स० शस्त्र से स० आरंभ करतेहुवे अ० अन्य, अ० अनेक प्रकारके पा० प्राणी की वि० हिंसा करते हैं ॥ ३ ॥ त० वहाँ ख० निश्चय भ० भगवानने प० ज्ञान नमन प०

सूत्र

आउरा परितावेंति ॥ १ ॥ संतिपाणा पुढोसिया लज्जमाणा पुढो पास॥ २ ॥ अणगारा मोत्ति एगे पवयमाणा जमिणं विरूवरूवेहिं सत्थेहिं पुढविकम्मसमारंभेणं पुढवीसत्थं समारंभमाणा अण्णे अणेगरूवे पाणे विहिंसइ ॥ ३ ॥ तत्थखलु भगवया परिण्णा

भावार्थ

इस जगत में जीव इसका विषय अनिष्टका संयोग इत्यादि आर्त ध्यान करते विषय कषायरूप अग्निसे पचाय गये सकलसे ज्ञानहीन बने अज्ञान होरहे हैं कि जिनोंको समझाना बहुत कठिन होजाता है. वे जि- नां मोक्ष पृथ्वीकायके जीवोंका आतुर होकर के परिताप उपजाते हैं. ॥ १ ॥ (पृथ्वीकायाधिकार) पृ. पृथ्वीकाय पृथ्वीके आश्रित जीवोंके असंख्यात अलग २ शरीर रहे हैं. उनमें पृथक् २ असंख्यात जीवों का निश्चय जानकर ज्ञानी जन उनकी हिंसा करते हुवे लज्जित होते हैं. ॥ २ ॥ इस जगत में कि- तनेक शाक्य आदिक के भिक्षुक कहते हैं कि हम साधु हैं परंतु पृथ्वीकायिक जीवों

कही इ० इस जे० मनुष्यार्थवाची जी० जीवितव्यके लिये प० वंदनार्थ मा० मानार्थ पू० पूजार्थ जा० जन्ममरणमें मो० छूटने के लिये दु० दुःख प्रतिघातार्थ से० वे स० स्वयमेव पु० पृथ्वी का स० शस्त्र से स० आरंभ करता है अ० दूसरे पास पु० पृथ्वीका स० शस्त्र से सं० आरंभ कराता है अ० दूसरे को वा० या पु० पृथ्वीका स० शस्त्र से आरंभ करते को स० अच्छा जानता है तं० उसे मे० वह अ० अहितकर्ता तं० उसे मे० वह अ० अबोधकर्ता ॥ ४ ॥ से० सब सं० उसे सं० जानतेहुए आ० आदरने योग्य स० सावधानपने

पवेइया । इमस्सचेव जीवियस्स परिवंदण माणण पूयणाए जाइमरण मोयणाए दुक्खपडिघायहेउं से सयमेव पुढविसत्थं समारंभइ अण्णेहिं वा पुढविसत्थं समारंभावेइ अण्णेहिं वा पुढविसत्थं समारंभंते समणुजाणइ। तं से अहियाए तं से अबोहिए ॥४॥

शस्त्रों से हिंसा करते हुवे पृथ्वीके आश्रय से रहे हुवे अन्य अनेक प्रकार के त्रस स्थावर जीवोंको भी मारते हैं. इसलिये जो वे साधु का नाम धराते हैं वह मिथ्या है.॥ ३ ॥ श्री श्रमण भगवंतने फरमायाकि जो आयुष्यका निर्वाह करने केलिये, वंदना गुणानुवाद केलिये, सत्कार सन्मान केलिये, जन्म मरणसे मुक्तहोने केलिये, (धर्मार्थ), शारीरिक दुःख का निवारण करने केलिये, स्वयमेव पृथ्वीकायिक जीवकी हिंसा करता है, दूसरे के पास कराता है, और हिंसा करते को अच्छा जानता है, उसको इस हिंसाके फल अहित दुःख के देनेवाले और बोधबीज (सम्यक्त्व) के नाश करने वाले होवेंगे. ॥ ४ ॥ वैज्ञानिक तीर्थंकरादि

... गृह करके ज॰ निश्चयाणं भगवानके प॰ पास के अ॰ नवीन इ॰ यहां ए॰ किनेक को ना॰ ज्ञान प॰ होता है ए॰ यह न॰ निश्चय से॰ ग्रन्थी ए॰ यह न॰ निश्चय मो॰ मोह ए॰ यह न॰ निश्चय मृत्यु ए॰ यह न॰ निश्चय नि॰ नरक है. एसा होतेहुए भी ग॰ गृद्ध लो॰ लोक, जे॰ जो वि॰ विविध प्रकारके स॰ शस्त्र से पृ॰ पृथ्वी का क॰ कर्मारंभ से पृ॰ पृथ्वी का स॰ शस्त्र से स॰ आरंभ करते हुए अ॰ अन्य अ॰ अनेक प्रकार के पा॰ प्राणी वि॰ मारते हैं ॥ ० ॥ से॰ अब॰ मैं अ॰ कहता हूं अ॰ अपि

से तं संबुज्झमाणे आयाणीयं समुट्ठाए सोच्चाखलु भगवओ अणगाराणं वा अंतिए इह मेगेसिं णायं भवति - एसखलु गंथे, एसखलु मोहे, एसखलु मारे, एसखलु णिरए; इच्चत्थं गढिएलोए, जमिणं विरूवरूवेहिं सत्थेहिं पुढवीकम्म समारंभेणं पुढवीसत्थं समारंभमाणे अण्णे अणेगरूवेपाणे विहिंसइ ॥ ५ ॥ से बेमि - अप्पेगे अंध मब्भे अप्पेगे-

महात्माओं का उपदेश श्रवण कर आदरणीय वस्तु जो ज्ञानादिक हैं उनको अङ्गीकार करते हैं, वे समझते हैं कि पृथ्वी कायाका आरंभ निश्चय से ज्ञानावरणीयादि आठ कर्मबंधका कारण है, मोहका कारण है, मृत्युका कारण है, तथा नरक का कारण है. एसा होते हुवे भी अपने कार्योंमें गृद्धता कर के मनुष्य अनेक प्रकारके शस्त्रोंसे पृथ्वी तथा पृथ्वीके आश्रित अनेक प्रकारके जीवों की हिंसा करते हैं. ॥ ० ॥ श्री तर्थ

अंगावयवा १ [illegible] अ० अल्पेगे अ० केई अल्पगत्नावायां ए० [illegible] [illegible] अ० उरु
[illegible] पाद केई प० पाद [illegible], गु० गुल्फ जे० जंघा जा० जांन उ० [illegible], क० कम्मर, ना०
नाभी, उ० उदर पा० पसली, पि० पृष्ठ उ० छाति, हि० हृदय, थ० स्तन, खं० स्कन्ध, बा० भुजा, ह० हस्त,
अ० अंगुली, ण० नख, गी० ग्रीवा, ह० दाढी, हो० ओष्ट द० दांत, जि० जिव्हा, ता० तालु, ग० गाल,

अप्पेगे [illegible] अप्पेगे पायमब्भे, अप्पेगे गुंफमब्भे २ अप्पेगे जंघमब्भे २
अप्पेगे जाणुमब्भे २ अप्पेगे उरुमब्भे २, अप्पेगे कडिमब्भे २, अप्पेगे णाभिमब्भे २,
अप्पेगे उदरमब्भे २ अप्पेगे पासमब्भे २, अप्पेगे पिट्ठिमब्भे २, अप्पेगे उरमब्भे २,
अप्पेगे हिययमब्भे २ अप्पेगे थणमब्भे २, अप्पेगे खंधमब्भे २, अप्पेगे बाहुमब्भे २,

[illegible] गौतम स्वामी ने प्रश्न किया कि हे नाथ! पृथ्वी काय के जीवों को कर्ण, चक्षु घ्राण जिव्हा तथा
[illegible] नहीं हैं तो वे [illegible] कैसे वेदते हैं तदनन्तर सुधर्मा स्वामी ऐसा उत्तर देते हैं कि-जैसे कोई जन्मान्ध
[illegible] पुरुष को कोई मनुष्य निष्करुण उसके पैरसे लगाकर शिरतक के प्रत्येक अङ्ग को भे-
[illegible] छेदे, तब वह जन्मान्ध जन्म बधिर पुरुष जैसी अव्यक्त

* यहां [illegible] का अर्थ किया है वहां वहां पहिले कहे हुए दोनों शब्दों की तरह दूसरी वक्त यह ही
शब्द कहके [illegible] कहना.

शब्दार्थ ग० कपोल, क० कर्ण, णा० नासिका. अ० आंख, भ० भंवर गि० कपाल सी० मस्तक अ० किनेक सं० मूर्छित करे अ० किनेक उ० मारडाले ॥ ६ ॥ ए० इस तरह स० शस्त्र से स० आरंभ करनेवालोंको

सूत्र अप्पेगे हत्थमब्भे २ अप्पेगे अंगुलि मब्भे २ अप्पेगे नह मब्भे २ अप्पेगे गीवमब्भे २ अप्पेगे हणुयमब्भे २ अप्पेगे हाड्डमब्भे २ अप्पेगे दंतमब्भे २ अप्पेगे जीहमब्भे २ अप्पेगे तालुमब्भे २ अप्पेगे गलमब्भे २ अप्पेगे गंडमब्भे २ अप्पेगे कण्णमब्भे २ अप्पेगे नासमब्भे २ अप्पेगे अच्छिमब्भे २ अप्पेगे भमुहमब्भे अप्पेगे णिडालमब्भे २ अप्पेगे सीसमब्भे अप्पेगे संपमारए अप्पेगे उद्दवए ॥ ६ ॥ एत्थ सत्थं समारंभमा-

भावार्थ वेदना वेदता है परंतु किसी प्रकार बता नहीं सकता. वैसेही पृथ्वी कायके एकेन्द्रि जीव असत दुःख वेदते हैं परंतु बता नहीं सकते हैं तथा जैसे कोइ मूर्छित मनुष्य को अनिष्ट दुःख देवे तथा दंडादिसे मारडाले, तो वह जैसी अव्यक्त वेदना वेदता है, वैसेही पृथ्वीकाय के जीव अव्यक्त वेदना वेदते हैं. ॥ ६ ॥ जो पृथ्वी काय के जीवोंकी हिंसामें प्रवृत्त होता है उसे नतो आरंभ का ज्ञान होता है और न प्रत्याख्यान होता है

*उत्क्र जो धर्म के लिये हिंसा करने में दोष नहिं समझते हैं उनको भगवान के इन वचनोंका ख्याल रखनी चाहिये.

इ० एसा आ० हिंसा अ० असमज भ० होती है ए० इस तरह स० शस्त्र से अ० आरंभ नहीं करते को इस के आ० हिंसा की प० समज भ० होती है ॥ ७ ॥ तं० उसे प० जाण करके मे० पंडित ने० नहीं ज० स्वयं पु० पृथ्वीका स० शस्त्र से स० आरंभकरे, ने० नही दुसरे के पास पु० पृथ्वी का स० आरंभ, करावे ने० नहीं दूसरे पु० पृथ्वी कायका स० शस्त्र से स० आरंभ करते को स० अच्छा जाने ज० जिनको ए० ये पु० पृथ्वीकर्म्म समारंभ का प० जा नकर त्याग भ० होता है से० उन को हु० निश्चयार्थ मु० मुनि (साधु) प० शुद्धसंयमी इ० एसा बे० कहता हुं ॥ ८ ॥

जस्स इच्चेते आरंभा अपरिण्णाया भवंति।एत्थ सत्थं असमारंभ माणस्स इच्चेते आरंभा परिण्णाया भवंति ॥ ७ ॥ तं परिण्णाय मेहावी नेव सयं पुढवीसत्थं समारंभेज्जा, नेवण्णेहिं पुढवी सत्थं समारंभावेज्जा, नेवण्णे पुढवीसत्थं समारंभंते समणुजाणेज्जा

जस्से पुढवि कम्म समारंभा परिण्णाया भवंति से हु मुणी परिण्णाय कम्मेति बेमि ॥ ८ ॥

जिससे उसे निरंतर हिंसा जन्य पाप लगताही रहता है. और जो ज्ञानी पृथ्वीकी हिंसा से निवृत्त हुवे हैं उन को आरंभ का ज्ञान व त्याग होता है, अत एव उनको पाप नहीं लगता है ॥ ७ ॥ इसलिये बुद्धिमान पुरुष पृथ्वीकाया के आरंभ का कर्मबंध का कारण जान करके उसकी हिंसा करे नहीं, दूसरे के पास करावे नहीं. और जो आरंभ करता हो उसे अच्छा जाने नहीं. इस तरह से पृथ्वी कायिक जीवोंकी हिंसाकी अ-

[illegible] जीव का परित्याग करते हैं उनकोही अणगारी मुनि जानना ऐसा भगवान का कथन अनुसार मैं कहता हूं. ॥ ८ ॥

इति सत्थपरिण्णाअज्झयणस्स बीओद्देसो सम्मत्तो.

॥ ❀ इति शस्त्र परिज्ञा नामक प्रथम अध्ययनका द्वितीय उद्देशक समाप्त हुआ ॥ अब अप्कायके जीवों की [illegible] स्वरूप कहते हैं.

(तृतीयोद्देशः)

[illegible] मैं कहता हूं से० वे० ज० यथापि अ० साधु उ० आर्जवता के करनेवाले णि० मोक्षमार्ग प० [illegible] करते हुवे वि० कहे हैं जा० जिस स० श्रद्धा से णि० निकले हैं त० उसी श्रद्धासे [illegible] पू० पूर्वसंयोग व० कहा भी [illegible] वुसिका मार्ग ॥१॥ [illegible] उज्जुकडे णियागपडिवण्णे अमायं कुव्वमाणे वियाहिते [illegible] सद्धाए णिक्खंतो [illegible] विजहित्ता विसोत्तियं (पाठन्तरे पुव्वसंजोगं) [illegible] पृथ्वी कायाके आरंभ से जो निवृत्त हैं वे साधु सरल [illegible] करने वाले कहे हैं उन्हे उचित है कि जिस श्रद्धासे [illegible] छोडा गया पूर्व संयोग को त्याग करके संयम का कारन.

और आ० आज्ञा से अ० देखकरके अ० न होय भ० भय ॥ २ ॥ से० अब बे० मैं कहता हूं णे० नहींज स० स्वयं लो० लोक को (अप्काय) अ० नहीं हैं एसा माने णे० नहीज अ० आत्मा को अ० नास्तित्व माने जे० जो लो० अप्कायकी अ०शंका करता है से० वह आ० आत्मा की अ०शंका करता है जे० जो अ० आत्मा की अ० शंका करता है से० वह लो० लोककी अ० शंका करता है ॥ ३ ॥ ल० लज्जा पाते पु०

पणया वीरा महावीहिं॥१॥लोगंच आणाए अभिसमेच्चा अकुतो भयं॥२॥से बेमि णेव सयं लोगं अब्भाइक्खेज्जा णेव अत्ताणं अब्भाइक्खेज्जा जे लोयं अब्भाइक्खति से अत्ताणं अब्भाइक्खति जे अत्ताणं अब्भाइक्खति से लोयं अब्भाइक्खति ॥३॥ लज्जमाणा पुढो

पालन करे. क्योंकि यह मुक्तिका मार्ग तीर्थंकरादि शूरवीरों का आराधा हुआ है. ॥ १ ॥ श्री जिनेश्वर भगवान के कथनसे पानी को सजीव जानकर संयम पाले जिससे किसीभी जीवको भय नहीं होवे. ॥ २ ॥ अब अहो जंबु मैं कहता हुं कि सत्पुरुषों को अप्कायिक जीवोंके विषय शंकाशील न होना चाहिये और आत्मा का अस्तित्व में भी शंकाशील न होना चाहिये जो लोक(अप्काय) के जीवोंकी शंका करता है वह आत्मा के विषय में शंका करता है जो आत्मा के विषय शंका करता है वह लोक की शंका करता है एसे शंकाशील होनेसे नास्तिक ▣ भ्रष्ट हो जाता है. ॥ ३ ॥ इस जगत में कितनेक बौद्धमतादिक के भिक्षुक शरमिन्दे होते हुवे कहते हैं कि हम साधु हैं परंतु वे पानीके जीवोंकी विविध प्रकार के शस्त्रों से

आग म उ० पानी का क० कथनमात्र करते है प० कितनेक प० करते हुवे ज० परंतु वि० विविध प्रकारके स० अनेक प्रकारके [illegible] ॥ ४ ॥ त० तहां ख० निश्चय भ० भगवानने प० शुद्ध गमन प० कही इ० इस जे० लघुतार्थ जी० जीवितव्यके लिये प० वन्दनार्थ मा० मानार्थ पू० पूजार्थ जा० जन्ममरण मो० मोचनार्थ दु० दुःखप्रतिघातार्थ से० वह स० स्वयमेव उ० पानी का स० आरंभ स० आरंभ करता है. अ० दुसरे के पास या०

पास अणगारा मोत्ति एगे पवयमाणा जमिणं विरूवरूवेहिं सत्थेहिं उदयकम्मसमारंभेणं उदयसत्थं समारंभमाणा अण्णे अणेगरूवे पाणे विहिंसइ ॥ ४ ॥ तत्थ खलु भगवया परिण्णा पवेइया । इमस्सचेव जीवियस्स परिवंदण माणण पूयणाए जाइमरणमोयणाए दुक्खपडिघायहेउं से सयमेव उदयसत्थं समारंभति अण्णेहिं वा उदयसत्थं

हिंसा करते हैं जिनसे पानीके आश्रित रहे हुवे अनेक स्थावर त्रस जीवों की हिंसा होती है. इसलिये वे जो साधुका नाम धराते हैं सो मिथ्या है. ॥ ४ ॥ श्री भगवानने फरमाया कि जो आयुष्यका निर्वाह करने के लिये, वन्दना पूजा कीजिये, सत्कार सन्मान कीजिये, जन्म मरण के दुःखों से छूटने केलिये, शारीरिक व मानसिक दुःख का निवारण करने केलिये स्वयंही अपकायके जीवोंकी घात करता है, दूसरे के पास कराता है, दूसरे करते हुवे को अच्छा जानता है उसको अपकाय के जीवोंका आरंभ अहित [illegible]

... पानी का स० शस्त्र से स० आरंभ कराता है अ० अन्य वा० प० उ० पानी का स० शस्त्र से स० आरंभ करते को म० अच्छा जानताहै तं० उस से० वह अ० अहित कर्ता तं० उसे से० वह अ० अबोध कर्ता॥५॥द्वितीय उद्देशामें देखो ॥ ६ ॥ से० अब वे० मैं कहताहूं सं० हैं पा० प्राणी उ० उदक नि० आश्रित जी० जीव

समारंभावेति अण्णे वा उदयसत्थं समारंभंते समणुजाणाइ तं से अहियाए तं से अबोहिए ॥ ५ ॥ से तं संबुज्झमाणे आयाणीयं समुट्ठाए सोच्चा खलु भगवओ अणगाराणं वा अंतिए इह मेगेसिं णायं भवइ एस खलु गंथे, एस खलु मोहे, एस खलु मारे, एस खलु णिरए, इच्चत्थं गढिए लोए जमिणं विरूवरूवेहिं सत्थेहिं उदयकम्म समारंभेणं उदयसत्थं समारंभमाणा अण्णे अणेगरूवे पाणे विहिंसइ ॥ ६ ॥ से बेमि

तथा मिथ्यात्व का बढाने वाला होगा. ॥ ५ ॥ वैज्ञानिक तीर्थंकरादि महात्माओ का सद्बोध श्रवण करके आदरणीय वस्तु जो ज्ञानादिक है उनको अङ्गीकार करते हैं वे समझते हैं कि अप्काय का आरंभ निश्चय से कर्मबंध का कारण है, मोहका कारण है, मृत्यु का कारण है, तथा नरक का कारण है. ऐसा होते हुवे भी मनुष्यादि जीव अपने कार्य में गृद्ध बन करके अनेक प्रकारके शस्त्रों से पानीकी व पानीके आश्रय रहे हुवे अनेक त्रस स्थावरजीवों की हिंसा करते हैं॥६॥अहो जंबु मैं कहता हूं कि जलके आश्रित अनेक प्राणी

शब्दार्थ — अ० अनेक इ० इस में च० निश्चय भो० अहो अ० साधु को उ० पानीके जी० जीव वि० कहा स० शस्त्र से चे० सचेत अ० विचारकर पा० देखो पु० अलग२ स० शस्त्र प० कहे हैं. अ० अथवा अ० अदत्तादान ॥ ७ ॥ क० कल्पना है णं० इसको क० कल्पना है णे० इसको पा० पीनेको अ० अथवा वि० विभूषाके लिये पु० अलग२ स० शस्त्र से वि० हिंसा करते हैं ए० यह कथन नो० उन का णो० नहीं णि० न्याय का

मूल — संति पाणा उदयनिस्सिया जीवा अणेगे, इह खलु भो अणगाराणं उदयजीवा वियाहिया, सत्थं चेत्थ अणुवीइ पास पुढो सत्थं पवेदितं अदुवा अदिन्नादाणं ॥ ७ ॥ कप्पति णे कप्पति णे पाउं अदुवा विभूसाए पुढो सत्थेहिं विउट्टंति एत्थवि तेसिं णो

भावार्थ — हैं और जिन प्रवचन में निश्चये जलरूप जीव अणगार को बताये हैं. एसा ज्ञान साधुको होना चाहिये और अग्नि क्षारादि शस्त्रसे निर्जीव बना हुआ पानी को ग्रहण कर अपना कार्य चलाना परंतु सचित्त पानी कदापि ग्रहण नहीं करना, क्योंकि उसे ग्रहण करने में जीवोंकी चोरी लगती है, और जिनाज्ञा का चोर होता है ॥ ७ ॥ कितनेक मतावलम्बी कहते हैं कि हमारे शास्त्रमें पानी को पीने में व स्नान शोभा करने के वास्ते ग्रहण करने में कुछभी दोष नहीं है. एसा कहकर वे अनेक प्रकारके शस्त्रों से पानीकी हिंसा करते हैं परंतु उनका यह कथन असमीचीन है ॥ ८ ॥ इस तरह जो अप्काायिक जीवों की हिंसा में प्रवर्तते हैं उन्हें-नतो आरंभ का ज्ञान है और न प्रत्याख्यान है, जिससे उसको निरंतर हिंसा जन्य पाप लगताही रहता है और

णितरणाए ॥८॥ एत्थ सत्थं समारंभमाणस्स इच्चेते आरंभा अपरिण्णाया भवंति एत्थ सत्थं असमारंभमाणस्स इच्चेते आरंभा परिण्णाया भवंति तं परिण्णाय मेहावी णेव सयं उदयसत्थं समारंभेज्जा, णेवन्नेहिं उदयसत्थं समारंभावेज्जा, उदयसत्थं समारंभंतेवि अण्णे ण समणुजाणेज्जा जस्सेते उदयसत्थं समारंभा परिण्णाया भवंति से हु मुणी परिण्णायकम्मेत्ति बेमि ॥ १ ॥

जो ज्ञानी जन अप्कायकी हिंसासे निवृत्त हुए हैं उनको आरंभ का ज्ञान व त्याग होता है. अत एव उनको पाप नहीं लगता। इसलिये अप्कायके आरंभ को कर्म बंधका कारण जाण करके बुद्धिमान अप्काय की हिंसा स्वयं करे नहीं दूसरे के पास करावे नहीं. और करते को अच्छा जाने नहीं, इस तरह से अप्कायकेजीवोंकी हिंसा को अहित कर्ता जानकर जो परित्याग करते हैं उनकोही मैं शुद्धसंयमी साधु कहता हूं एसा श्री श्रमण भगवान का कथन है

✿ इति सत्थपरिण्णाज्झयणस्स तइओद्देसो सम्मत्तो ✿

यह शस्त्र परिज्ञा नामक प्रथम अध्ययन का तृतीय उद्देशक पूर्ण हुआ आगे भगिआरंभ विषय बोध करते हैं

नोट महाभारत के अनुशासन पर्व में पानी को अनेक जीवों...

(चतुर्थ उद्देशः)

तृतीयउद्देशार्थ देखो ॥ १ ॥ जे० जो दी० दीर्घलोक (वनस्पति) के स० शस्त्र के खे० खेदज्ञ से० वे अ० अशस्त्र के खे० खेदज्ञ जे० जो अ० अशस्त्रके खे० खेदज्ञ से० वे दी० दीर्घलोक के स० शस्त्र के खे० खेदज्ञ ॥ २ ॥ वी० वीर पुरुषोंने ए० यह अ० जीतकरके दि० देखी है सं० संयमवन्त स० सदा ज०

सूत्र

सेवेमि णेव सयं लोगं अब्भाइक्खेज्जा णेव अत्ताणं अब्भाइक्खेज्जा. जे लोगं अब्भाइक्खति से अत्ताणं अब्भाइक्खति जे अत्ताणं अब्भाइक्खति से लोगं अब्भाइक्खति ॥ १ ॥ जे दीहलोगसत्थस्स खेयन्ने से असत्थस्स खेयन्ने जे असत्थस्सखेयन्ने से दीहलोय सत्थस्स खेयन्ने ॥ २ ॥ वीरेहिं एयं अभिभूय दिट्ठं संजतेहिं सया जतेहिं सया अपमत्तेहिं ॥ ३ ॥

भावार्थ

अब मैं कहता हूं कि अहो जंबु ! सत्पुरुषों को अग्निकायके जीवोंके विषय शंकाशील न होना चाहिये और आत्मा का अस्तित्वमें भी शंकाशील न होना चाहिये. जो अग्निकायकी शंका करता है वह आत्माका अस्तित्वकी शंका करता है और जो आत्माका अस्तित्व की शंका करता है वह अग्निकायकी शंका करता है. ऐसे शंकाशील होनेसे नास्तिक बन भ्रष्ट होजायगा. ॥ १ ॥ जो दीर्घलोक (वनस्पतिकाय) का शस्त्र जो अग्नि है उसका जानकार है वह ही अशस्त्र जो संयम उसका जानकार है. और जो संयम का जानकार है वह वनस्पति के शस्त्र का [illegible]

सदैव जितेन्द्रिय. तथा

जितेन्द्रिय अ० अप्रमादि ॥ ३ ॥ जे० जो प० प्रमादी गु० गुणास्थित मे० उनको इ० निश्चय दं० दंडी प० कहते हैं उ० उसे प० जाण करके मे० पंडित इ० अब णो० नहीं जं० जो मैंने पु० पूर्व अ० किया प० प्रमाद से ॥ ४ ॥ ल० लज्जापाते पु० पृथक् २ पा० देखो अ० साधु मो० हम है ए० कितनेक प० कहतेहुए ज० यद्यपि वि० विविध प्रकारके स० शस्त्रसे अ० अग्निकर्म स० आरंभ करनेसे अ० अग्नि को स० शस्त्रसे स० आरंभ करते हुवे अ० दूसरे अ० अनेक प्रकारके पा० प्राणी वि० मारते हैं ॥ ५ ॥ द्वितीय उद्देशा में

जे पमत्ते गुणट्ठिए से हु दंडे पवुच्चति। तं परिण्णाय मेहावी इयाणि णो जमहं पुव्व म-
कासी पमादेणं ॥ ४ ॥ लज्जमाणा पुढो पास अणगारा मोत्ति एगे पवयमाणा जमिणं
विरूवरूवेहिं सत्थेहिं अगणिकम्मसमारंभेणं अगणिसत्थं समारभमाणे अण्णे अणे-
गरूवे पाणे विहिंसइ ॥ ५ ॥ तत्थ खलु भगवया परिण्णा पवेइया इमस्स चेव जी-

अप्रमत्त ऐसे वीर पुरुषोंने कर्मरूप शत्रु को नष्ट करके यह बात साक्षात् देखी है. ॥ ३ ॥ जो अग्नि काया का आरंभ करते हैं वे दुःखी कहलाते हैं ऐसा जानकर विद्वान निश्चय करते हैं कि मैंने जैसा प्रमाद के वश में भूतकालमें अग्निका आरंभ किया वैसा अब नहीं करुंगा ॥४॥ इस जगत में कितनेक बौद्धमतादिक के भिक्षुक वरधिदे होते हुए कहते हैं कि हम साधु हैं परंतु वे अग्निके जीवों की विविध प्रकार के शस्त्रोंसे हिंसा करते हैं जिससे अग्निके आश्रित रहे हुए अनेक त्रस स्थावर जीवोंकी हिंसा होती है ...

सूत्र

हेता ॥ ३ ॥ द्वितीय उद्देशार्थे ऽर्थो ॥ ६॥ से० अथ से० मैं कहता हूं पा० प्राणी पु० पृथिव्याश्रित न० तृणा-

विरूवरूवं परिवंदणमाणणपूयणाए जाइमरणमोयणाए दुक्खपडिघायहेउं से सयमेव अगणिसत्थं समारंभति अण्णेहिं वा अगणिसत्थं समारंभावेइ अण्णेहिं अगणि सत्थं समारंभमाणे समणुजाणति तं से अहियाए तं से अबोहिए ॥ ६ ॥ से तं संबुज्झमाणे आयाणीयं समुट्ठाए सोच्चा खलु भगवओ अणगाराणं वा अंतिए इह मेगेसिं णायं भवति एस खलु गंथे, एस खलु मोहे, एस खलु मारे, एस खलु णिरए, इच्चत्थं गढिए लोए, जमिणं विरूवरूवेहिं सत्थेहिं अगणिकम्मसमारंभेणं अगणिसत्थं समारंभमाणे अण्णे अणेगरूवे पाणे विहिंसइ ॥ ७ ॥ से बेमि संति पाणा पुढविणिस्सिया तणणिस्सिया पत्तणि-

भावार्थ

वे जो मात्र का नाम करते हैं सो मिथ्या है. ॥ ५ ॥ श्री श्रमण भगवानने फरमाया कि जो आयुष्यका निर्वाह करनेको, यश महिमा पूजा केलिये, सत्कार सन्मान केलिये, जन्म मरण से छूटने केलिये, शारीरिक व मानसिक दुःख का निवारण करने केलिये स्वयं ही अग्नि कायके जीवों की घात करता है दूसरेके पास कराता है और दूसरे घात करते हुवे को अच्छा जानता है उसको अग्नि कायका आरंभ अहित का कर्ता तथा मिथ्यात्वका बढाने वाला होगा. ॥ ६ ॥ अब वैज्ञानिक तीर्थंकरादि महात्माओंका

सू०

मूल

भावार्थ

(थे न० तृ०के आश्रित का० काष्ट के आश्रित गो० गोबर के आश्रित क० कचवर [कचरा] के आ-श्रित सं० है सं० उडतेहुए पा० प्राणी आ० अपतास० उडकर पडते हैं प० प० अ० अग्निको स्प० निश्चय पुं० स्पर्शताहुआ प० कितनेक सं० संकुचितपना को आ० प्राप्त होते हैं जे० जो सं० संकुचितपना को आ० प्राप्त होते हैं ते० वे त० वहां प० मूर्छित होते हैं जे० जो त० वहां प० मूर्छित होते हैं ते० वे त०

रिसया कट्ठणिस्सिया गोमयणिस्सिया कयवरणिस्सिया संति संपातिमा पाणा आहच्च संपयंति य अगणिंच खलु पुट्ठा एगे संघाय मावज्जंति जे तत्थ संघाय मावज्जंति ते तत्थ परियाविज्जंति. जे तत्थ परियाविज्जंति ते तत्थ उद्दायंति ॥ ८ ॥ एत्थ सत्थं

आदरणीय वस्तु जो ज्ञानादिक है उनको अङ्गीकार करते हैं वे समझते है कि अग्निकाया का आरंभ निश्चय से कर्म बंधका कारण है मोहका कारण है मृत्यु का कारण है तथा नरक का कारण है ऐसा होते हुए भी मनुष्यादि अपने कार्य में गृद्ध बनकर के अनेक प्रकारके शस्त्रों से अग्नि का व अग्नि आश्रित रहे हुवे अनेक त्रस स्थावर की हिंसा करते हैं ॥ ७ ॥ अब अहो जंबु मैं कहताहूं कि पृथिवी, तृण, पत्र, काष्ट गोमय, (छाणे) और कचवरके आश्रित अनेक जीव रहते हैं. सिवाय पतंगीये प्रमुख अकस्मात् आकार, उसे मरतादिक अग्निमें पडते हैं अग्निमें पडने से कितनेक का शरीर संकोचको प्राप्त होता है. जिन जीवों का शरीर संकुचित होजाता है वे जीव वहां मूर्छित होते हैं. और जो जीव मूर्छित होते हैं वे जीव वहां ही

वहां २० प्राणभूत होते हैं ॥ ८ ॥ दूसरा उद्देशामें देखो ॥ ९ ॥ द्वितीय उद्देशामें देखो ॥ १० ॥

समारंभमाणस्स इच्चेते आरंभा अपरिण्णाया भवंति एत्थ सत्थं असमारंभमाणस्स इच्चेते आरंभा परिण्णाया भवंति ॥ ९ ॥ तं परिण्णाय मेहावी णेव सयं अगणिसत्थं समारंभेज्जा णेवण्णेहिं अगणिसत्थं समारंभावेज्जा अगणिसत्थं समारंभंते वि अण्णे ण समणुजाणेज्जा जस्सेते अगणिकम्म समारंभा परिण्णाया भवंति से हु मुणी परिण्णाय कम्मेत्तिबेमि ॥ १० ॥ इति सत्थपरिण्णाज्झयणस्स चउत्थो उद्देसो सम्मत्तो.

समजाते हैं. ॥ ८ ॥ जो अग्नि कायकी हिंसामें प्रवृत्त होता है उसे न तो आरंभ का ज्ञान होता है और न प्रत्याख्यान होता है जिससे उसे निरंतर हिंसा जन्य पाप लगताही रहता है. और जो ज्ञानीजन पृथ्वी कायाकी हिंसा से निवृत्त हुवे हैं उनको आरंभ का ज्ञान व त्याग होता है अतएव उनको पाप नहीं लगता है. ॥ ९ ॥ इसलिये बुद्धिमान पुरुष अग्नि कायाके आरंभ को कर्म बंधका कारण जान करके स्वयं अग्नि कायकी हिंसा करे नहीं दूसरे के पास करावे नहीं, और जो हिंसा करता होवे उसे अच्छा भी जाने नहीं इस तरह अग्नि कायकी हिंसा को अहित कर्ता जान कर जो परित्याग करते हैं उनकोही वे शुद्ध संयमी मुनि कहलाते ऐसा भगवान का कथनानुसार मैं कहता हूं ॥ १० ॥ यह शस्त्र परिज्ञानात्मक प्रथम अध्ययन का चतुर्थ उद्देश पूर्ण हुवा आगे वनस्पति का वर्णन दर्शाते हैं.

से० इस लिये णो० नहीं क० करूंगा म० सावधान म० जान करके म० बुद्धिमान अ० निर्भयी वि० जान करके तं० उस को जे० जो णो० नहीं करे ए० एसा व० निवर्ते ए० इस मे अधिक ए० यह अ० साधु प० एसा प० कहता हूं ॥ १ ॥ जे० जो गु० गुण से० वे आ० संसार जे० जो आ० संसार से० वे गु० गुण ॥ २ ॥ उ० उर्ध-ऊर्ध्व अ० अधो ति० तिर्यक् पा० दिशाओं में पा० देखता हुआ रू० रूप पा० देखता है सु० सुनता हुआ स० शब्दों सुनता है उ० ऊर्ध्व अ० अधो ति० तिर्यक् पा० दिशाओं में मु० मूर्छित होता हुआ रू० रूपों मु० मूर्छित होता है स० शब्दादिक में भी ए० यह लो० लोक वि० कहा ए०

सूत्र

तं णो करिस्सामि समुट्ठाए मत्ता मतिमं अभयं विदित्ता तं जे णो करए एसोवरए एत्थोवरए एस अणगारेत्ति पवुच्चइ ॥ १ ॥ जे गुणे से आवट्टे जे आवट्टे से गुणे ॥२॥ उड्ढं अहं तिरियं पाइणं पासमाणे रूवाइं पासइ सुणमाणे सद्दाइं सुणइ उड्ढं अहे तिरियं पाइण मुच्छमाणे रूवेसु मुच्छति सद्देसुयावि एस लोगे वियाहिए एत्थ अगुत्ते अणाणाए

भावार्थ

अहो बुद्धिमान! जो वनस्पति को सजीव समझकर सावधान होता है कि मैं साधु सब जीवों का रक्षक हुआ हूं इसलिये वनस्पतिकी भी हिंसा नहीं करूंगा. इस तरह जिन प्रवचन में रक्त हो करके जिसने वनस्पति काय के आरंभ का त्याग किया है वह ही अणगार है एसा मैं कहता हूं. ॥ १ ॥ जो शब्दादि विषय हैं सो ही संसार का कारण है और जो संसार का कारण है सोही शब्दादि विषय हैं. ॥ २ ॥ मनुष्य ऊंची नीची

शब्दार्थ इस में व० प्रमत्त म० मायावादि पु० वारंवार गु० गुणआस्वादता वं० वक्रता स० समाचरे प० प्रमा-
दी घा० घर में आ० रहे ॥ ३ ॥ द्वितीय उद्देशा में देखो ॥ ४ ॥ द्वितीय उद्देशा में देखो ॥ ५ ॥ द्वितीय

मूल पुणो पुणो गुणासाते वंक समायारे पमत्ते आगार मावसे ॥ ३ ॥ लज्जमाणा पुढो पास अणगारा मोत्ति एगे पवयमाणा, जमिणं विरूवरूवेहिं सत्थेहिं वणस्सइ कम्म समारंभेणं वणस्सइ सत्थं समारंभमाणे अण्णे अणेगरूवे पाणे विहिंसइ ॥ ४ ॥ तत्थ

भावार्थ और पूर्वोक्त दिशाओं में अवलोकन करता हुआ अनेक पदार्थ देखता है, सुनता हुआ अनेक शब्द श्रवण करता है देखे तथा सुने हुए रूप तथा शब्द में आसक्त होता है. ऐसेही रस गंध और स्पर्श के विषय आसक्त होता है. ये विषय कहाते हैं. इन पूर्वोक्त विषयों में जो प्रवर्तता है वह जिनाज्ञा से बाहिर है वह वारंवार शब्दादि विषयों को आस्वादता है. वह असंयम का आचरण करने वाला गृहस्थी के घर में रहता है ॥ ३ ॥ इस जगत में कितनेक बौद्ध, मताविक के निग्रंथ शाक्यादि होते हुए कहते हैं कि हम साधु हैं परंतु वे वनस्पति के जीवों की विविध प्रकार के शस्त्रों से हिंसा करते हैं जिससे वनस्पति के आश्रित रहे हुए अनेक त्रस स्थावर जीवों की भी हिंसा होती है इसलिये वे जो साधु का नाम धराते हैं सो मिथ्या है. ॥ ४ ॥ श्री भगवानने फरमाया कि जो आयुष्य का निर्वाह के लिये, यशकीर्ति पूजा के लिये, सत्कार सन्मान के लिये, जन्म मरण के दुःख से छूटने के लिये, शारीरिक व मानसिक दुःख का निवारण

इच्छा से देखा ॥ ६ ॥ मे० अब वे० कहता हूं ६० इनकाभी जा० उत्पत्ति होने [redacted] हरभार ए० उनकाभी

सूत्र

खलु भगवया परिण्णा पवेइया इमस्स चेव जीवियस्स परिवंदणमाणणपूयणाए जाइ मरण मोयणाए दुक्खपडिघायहेउं से सयमेव वणस्सइसत्थं समारंभइ, अण्णेहिं वा वणस्सइ सत्थं समारंभावेति, अण्णे वा वणस्सइ सत्थं समारंभमाणे समणुजाणइ तं से अहियाए तं से अबोहिए ॥ ५ ॥ से तं संबुज्झमाणे आयाणीयं समुट्ठाए सोच्चा खलु भगवओ अणगाराणं वा अंतिए इह मेगेसिं णायं भवइ एस खलु गंथे एस खलु मोहे, एस खलु मारे, एस खलु णिरए इच्चत्थं गढिए लोए जमिणं विरूवरूवेहिं सत्थेहिं वणस्सइकम्मसमारंभेणं वणस्सइसत्थं समारंभमाणे अण्णे अणेगरूवे पाणे विहिंसइ

भावार्थ

हर्षित होवे, स्वयंही वनस्पति काय के जीवों की घात करता है दूसरे के पास कराता है, और घात करते हुए को अच्छा मानता है, उनको वनस्पति काय का आरंभ अहित का कर्ता अबोध [redacted] कर्ता होगा. ॥८॥ तीर्थंकरादिक महात्माओं का उपदेश श्रवण करके आदरणीय वस्तु जो ज्ञानादिक है उनको अंगीकार करते हैं वे समझते हैं कि वनस्पतिकायका आरंभ निश्चय से कर्मबंधका कारण है, मोहका कारण है, मृत्यु [redacted] कारण है, तथा नरक [redacted] कारण है. ऐसा होते हुए भी मनुष्यादि जीव अपने कार्य में

...शान होनेका स्वभाव इ० इसकाभी बु० वृद्धि धर्म ए० उसकाभी बु० वृद्धि धर्म इ० यह भी चि० चित्त ए० वहभी चि० चित्त इ० यह छि० छेदने से मि० सूकता है ए० वहभी छि० छेदने से सूकती है इ० यहभी आहारक ए० वहभी आ० आहारक इ० यहभी अ० अनित्य ए० वहभी अनित्य इ० यह अ० अशाश्वत ए० वहभी अ० अशाश्वत इ० यहभी च० चयोपचित इ० वहभी च० चयोपचित इ० यहभी

मूल

॥ ६ ॥ से बेमि इमंपि जाइधम्मयं एयंपि जाइधम्मयं इमंपि वुड्ढिधम्मयं एयंपि वुड्ढि धम्मयं इमंपि चित्तमंतयं एयंपि चित्तमंतयं, इमंपि छिन्नं मिलाति एयंपि छिन्नंमिलाति, इमंपि आहारगं एयंपि आहारगं, इमंपि अणिच्चयं एयंपि अणिच्चयं, इमंपि असासयं एयंपि असासयं, इमंपि चओवचइअं एयंपि, चओवचइयं इमंपि विपरिणामधम्मयं

भावार्थ

गृह ! करके अनेक प्रकार के शस्त्रों से वनस्पति कायके तथा वनस्पति के आश्रय रहे हुए त्रस स्थावर जीवों की हिंसा करते हैं. ॥ ६ ॥ अब अहो जंबु ! वनस्पति का चैतन्यपना मैं बतलाता हूं-जैसे अपना शरीर का स्वभाव उत्पन्न होने का है वैसाही वनस्पति का स्वभाव उत्पन्न होने का है. जैसे शरीर वृद्धि पाता है वैसेही इनकी वृद्धि होती है. जैसे शरीर में चित्त है वैसे उनमेंभी चित्त है. जैसे शरीर को काटने से सूकजाता है वैसेही उनको काटने से सूकजाते है. जैसे शरीर को आहार की जरूरत है वैसेही उसको आहार की जरूरत है. जैसे शरीर अनित्य है वैसेही वह भी अनित्य है. जैसे शरीर अशाश्वत है वैसेही वहभी अशाश्वत

शब्दार्थ वि० विशेषणाधिकर्मी प० परभी वि० पारिणामिक धर्मी है ॥ ७ ॥ द्वितीय उद्देशामें देखो ॥ ८ ॥

मूल एयंपि विपरिणामधम्मयं ॥ ७ ॥ एत्थ सत्थं समारंभमाणस्स इच्चेते आरंभा अपरिण्णाया भवंति एत्थ सत्थं असमारंभमाणस्स इच्चेते आरंभा परिण्णाया भवंति तं परिण्णाय मेहावी णेव सयं वणस्सइ सत्थं समारंभेज्जा णेवण्णेहिं वणस्सइ सत्थं समारंभावेज्जा णेवण्णेहिं वणस्सइ सत्थं समारंभंते समणुजाणेज्जा जस्सेते वणस्सइ सत्थ समारंभा परिण्णाया भवंति से हु मुणी परिण्णाय कम्मेत्तिबेमि ॥ ८ ॥ इति सत्थपरिण्णाअज्झयणस्स पंचमोद्देसो सम्मत्तो. * * * *

भावार्थ है जैसे शरीर का चयउपचय होता है वैसेही उनका भी चयउपचय होता है. जैसे शरीर अनेक विकार पाता है वैसेही वह भी अनेक विकार पाता है. इसलिये वनस्पति सजीव है. ॥ ७ ॥ जो वनस्पतिकाय के जीवों का हिंसा में प्रवृत्त होता है उसे नतो आरंभ का ज्ञान होता है और न प्रत्याख्यान होता है. जिससे उनको निरंतर वनस्पति काय की हिंसा जन्य पाप लगता रहता है. और जो ज्ञानी जन वनस्पति काय की हिंसा से निवृत्त हुए हैं उनको आरंभ का ज्ञान व त्याग होता है, इसलिये उनको पाप नहीं लगता है. इसलिये वनस्पति काय के आरंभ को कर्म बंध का कारण जान कर उसकी हिंसा आपस्वयं करे नहीं. दूसरे के पास करावे नहीं, और हिंसा करने वाले को अच्छा भी जाने नहीं. उनकोही मैं सच्चा शुद्धसंयमी साधु

पदार्थ

पर्यवस्कों प० गुप्तप्रिय है स० सर्व पा० प्राणीकों भ० सर्व भू० भूतकों स० सर्व जी० जीवकों म० सर्व स० सत्वको अ० अशाता अ० अप्रिय म० महाभय कर्ता दु० एसा बे० कहताहूं ॥ २ ॥ त० त्रस पाने हैं पा० प्राणी दि० दिशाविदिशामें स० सदा २ पु० पृथक् २ पा० देखो आ० आतुर प० दुःख देते हैं सं०

सूत्र

जीवाणं सव्वेसिं सत्ताणं असातं परिणिव्वाणं महब्भयं दुःखंत्तिबेमि ॥ २ ॥ तसंति पाणा दिसासुदिसासु य तत्थ तत्थ पुढो पास आतुरा परितावेंति संति पाणा पुढो सिया ॥ ३ ॥ लज्जमाणा पुढो पास अणगारा मोत्ति एगे पवयमाणा जमिणं विरूवरूवेहिं सत्थेहिं तसकायसमारंभेणं तसकायसत्थं समारंभमाणा अण्णे अणेगरूवे पाणे वि-

भावार्थ

पंचेन्द्रियादि सर्व जीवों को और पृथिव्यादि सर्व सत्वों को एक सुखही प्रियकारी है दुःख अप्रिय और महाभय का कारण है ॥ २ ॥ ये त्रस प्राणी चारों ओर के दुःख से भय भीत रहते हैं तथापि विषय कषाय में मूर्छ बने हुए मनुष्य अपना अनेक प्रकार का स्वार्थ को पूर्ण करनेकेलिये इनको परिताप उपजाते हैं. इस दुःख से भयभीत [illegible] कर बिचारे पृथिव्यादिक का आश्रय ग्रहण कर अलग २ रहते है कि इनको कोइ न संतावे. ॥ ३ ॥ इस जगत में कितनेक बौद्ध मतादिक के भिक्षुक लज्जित होते हुए कहते हैं कि हम साधु हैं परंतु वे विविध प्रकार के शस्त्रों से त्रस काय के जीवों की हिंसा करते हैं जिनसे त्रस काया के आश्रित रहे हुये अन्य स्थावर जीवों की भी हिंसा होती है. इसलिये वे जो साधु का नाम धराते हैं सो मि-

शब्दार्थ

उद्देशाके ॥ १ ॥ द्वितीय उद्देशामें ॥ ४ ॥ से० अब बे० मैं कहता हूं. सं० हे सं० उडते पा० प्राणी आ०

मूल

सयमेव वाउसत्थं समारंभति, अन्नेहिं वा वाउसत्थं समारंभावेति अण्णेहिं वा वाउसत्थं समारंभंते समणुजाणइ तं से अहियाए तं से अबोहिए ॥ ३ ॥ से तं संबुज्झमाणे आयाणीयं समुट्ठाए सोच्चा खलु भगवओ अणगाराणं वा अंतिए इह मेगेसिं णायं भवइ एस खलु गंथे, एस खलु मोहे, एस खलु मारे, एस खलु णरए, इच्चत्थं गढिए लोए जमिणं विरूवरूवेहिं सत्थेहिं वायुकम्मसमारंभेणं वाउसत्थं समारंभमाणे अण्णे अणेगरूवे पाणे विहिंसइ ॥ ४ ॥ से बेमि संति संपाइमापाणा आहच्च संपयंति

भावार्थ

न वायु काय के जीवो की घात करता है, दूसरे के पास कराता है, और घात करने वाले को अच्छा जानता है उसको वायुकाय का आरंभ अहित का कर्ता तथा अबोध का कर्ता होगा. ॥ ३ ॥ वैज्ञानिक तीर्थंकरादि महात्माओंका सद्बोध श्रवण करके आदरणीय वस्तु जो ज्ञानादि है उनको अङ्गीकार करते है. वे समझते हैं कि वायुकाय का आरंभ निश्चय से कर्मबंध का कारण, मोहका कारण, मृत्यु का कारण, तथा नरक का कारण है. एसा होते हुए भी मनुष्यादि जीव अपने कार्य में गृद्ध बनकरके अनेक प्रकार के शस्त्रों से वायु काय की तथा वायु काय के आश्रय रहे हुए त्रस स्थावर जीवों की घात करते हैं. ॥ ४ ॥ अब अहो जंबु! मैं कहता हूं कि इस वायु के साथ अनेक उडते प्राणीयों मच्छर आदि एकत्रित होकर पानी अग्नि

... य० च० फ० स्पर्श प० निश्चयार्थ पु० स्पर्शी हुआ. प० कितनेक सं० संकुचित-पना को आ० प्राप्त होते हैं ते० जो त० वहां सं० संकुचितपना को आ० प्राप्त होते हैं ते० ते त० वहां प० परिताप पाते हैं जे० जो त० वहां प० परिताप पाते हैं ते० ते त० वहां उ० मरजाते हैं ॥ ६ ॥ द्वितीय

मूलं

य फरिसं च खलु पुट्ठा एगे संघाय मावज्जंति. जे तत्थ संघाय मावज्जंति ते तत्थ परिया विज्जंति जे तत्थ परियाविज्जंति ते तत्थ उद्दायंति ॥ ६ ॥ एत्थ सत्थं समारंभमाणस्स इच्चेते आरंभा अपरिण्णाया भवंति. एत्थ सत्थं असमारंभमाणस्स इच्चेते आरंभा परिण्णाया भवंति. तं परिण्णाय मेहावी णेव सयं वाउसत्थं समारंभेज्जा णेवन्नेहिं वाउसत्थं समारंभावेज्जा णेवन्ने वाउसत्थं समारंभंते समणुजाणेज्जा.

भावार्थ

जरसे ते वायुसत्थं स-भादि उष्णवद स्थान में गिरते हैं. वे उस स्पर्श को स्पर्शते हुए संकुचित होते हैं. जो वहां संकुचित होते हैं, वे वहां मूर्च्छा पाते हैं. और जो वहां मूर्च्छित होते हैं, वे मृत्यु को प्राप्त होते हैं. ॥ ६ ॥ जो वायु काय के जीवों की हिंसा में प्रवृत्त होता है, उसे उनके आरंभ का ज्ञान होता है, और न प्रत्याख्यान होता है; जि-ससे उसको निरंतर वायुकाय की हिंसा जन्य पाप लगता रहता है. और जो ज्ञानी जन वायुकाय की हिंसा से निवृत्त हुए हैं उनको आरंभ का ज्ञान व त्याग होता है अतः पाप उनको हिंसा जन्य पाप नहीं लगता है. इसलिये वायुकाय का आरंभ को कर्मबंध का कारण जानकर उसकी हिंसा आप

थे उद्देशायें ॥ ५ ॥ ए० इन सब को अ० भी जा० जाने उ० कर्मबंधनेवाले जे० जो आ० आचार में न० नहीं र० रमते है. आ० आरंभ करते हुए वि० संयम व० बोलते हैं छ० स्वच्छन्दाचारी अ० प्राप्त हुए आ० आरंभमें आसक्त प० करते हैं सं० कर्मबंध ॥ ७ ॥ से० अब व० ज्ञानादिलक्ष्मीयुक्त स० सर्व स० साधु को योग्य प० प्रज्ञासे अ० आत्मासे अ० अयोग्य पा० पापकर्म णो० नहीं अ० अन्यमें ॥ ८ ॥ तं० उन

सूत्र मारंभा परिण्णाया भवंति से हु मुणी परिण्णाय कम्मेत्ति बेमि ॥ ६ ॥ एत्थपि जाण उवादीयमाणा, जे आयारे न रमंति, आरंभमाणा विणयं वयंति, छंदोवणीया, अज्झोववण्णा, आरंभसत्ता पकरेंति संगं ॥७॥ से वसुमं सव्वसमण्णागयपण्णाणेणं अप्पाणेणं अकरणिज्जं पावकम्मं णो अन्नेसिं ॥ ८ ॥ तं परिण्णाय मेहावी णेव सयं छजी-

भावार्थ स्वयं करे नहीं, दूसरे के पास करावे नहीं, और हिंसा करने वाले को अच्छा भी जाने नहीं, उनको ही मैं शुद्धसंयमी साधु कहता हूं. ॥ ६ ॥ उक्त प्रकार से छकाय के जीवों का वध से कर्मबंधन होता हुवा जानकर जो आचार में न रहते हैं, आरंभ करते हुए हम संयमी है ऐसा बोलते हैं स्वच्छाचारी हैं. मात्र काम भोगो में तल्लीन रहते हैं, और जो आरंभ में आसक्त रहते हैं, वे कर्मबंध करते हैं. ॥ ७ ॥ इसलिये ज्ञानादि मात्र लक्ष्मी युक्त साधु को चाहिये कि अयोग्य पाप कर्म को आप समाचरे नहीं ॥ ८ ॥ उपर्युक्त कथन सर्वज्ञ प्रभुका जाणकर पंडित पुरुषों का कर्तव्य हैं कि आप स्वतः छ

शब्दार्थ — प० जाणकर से पंडित णे० नहीं स० स्वयं छ० छजीवनिका कायाका म० शस्त्र से स० आरंभ करे णे० नहीं अ० छजीव निकायका स० शस्त्र से स० आरंभ करावे णे० नहीं अ० अन्य छ० छजीवनिकाय को स० शस्त्र से आरंभ करते स० भलाजाणे ज० जिस को ए० ये छ० छजीवनिकाय के स० शस्त्र का स० आरंभ की प० परिज्ञा भ० हुई है ने० उन को ही मु० मुनि प० शुद्ध संयमी इ० ऐसा मैं० मैं कहता हूं ॥ २. ॥

मूल — वणिकायसत्थं समारंभेज्जा, णेवन्नेहिं छज्जीवणिकायसत्थं समारंभावेज्जा, णेवन्ने छज्जीवणि कायसत्थं समारंभंते समणुजाणेज्जा. जस्से ते छज्जीवणिकायसत्थंसमारंभा परिण्णाया भवंति से हु मुणी परिण्णाय कम्मेत्ति बेमि॥२॥इति सत्थपरिण्णा णाम पढम मज्झयणं सम्मत्तं ॥

भावार्थ — जीवनिकाय की हिंसा करे नहीं, दूसरे के पास कदापि करावे नहीं और हिंसा करने वाले को अच्छा भी जाने नहीं. इस तरह जो छजीवनिकाय की हिंसा से निवर्ते हैं, उनकोही मैं शुद्ध संयमी साधु कहता हूं ॥ २ ॥ यह प्रथम अध्ययन में छजीवनिकाय का स्वरूप कहा उस को ज्ञपरिज्ञासे जानकर प्रत्याख्यान परिज्ञा से त्याग करे. वह आचारवंत साधु होवे जो लोक कहिए शब्दादि विषय तथा रागादि कषाय इन का विजय नाम जिते अत एव लोक विजय नामक दूसरा अध्ययन श्री सुधर्मास्वामी कहते हैं.

॥ अथ लोकविजयनामकं द्वितीयमध्ययनम् ॥

जे० जो गु० विषय से० वे मू० संसारस्थान जे० जो मू० संसारस्थान से० वे गु० विषय इ० ऐसा से० वे गु० विषयार्थी म० महा प० परिताप से व० रहे प० प्रमादी तं० वह ज० इस प्रकार मा० माता मे० मेरी पि० पिता मेरा भा० भ्राता मेरा भ० भगिनी मेरी भ० भार्या मेरी पु० पुत्र मेरा धू० पुत्री मेरी सु० पुत्रवधू स० मित्र स० स्वजन सं० सम्बन्धि सं० संस्तवी मे० मेरे वि० विचित्र प्रकार के उपकरण प० परिवर्तन भो० भोजन वस्त्रादि मेरे इ० इस में ग० गृद्धि लोक व० रहते हैं प० प्रमादी ॥ १ ॥ अ०

सूत्र

जे गुणे से मूलट्ठाणे जे मूलट्ठाणे से गुणे इति से गुणट्ठी महता परियावेणं वसे पमत्ते तंजहा-माया मे, पिया मे, भाया मे, भइणी मे, भज्जा मे, पुत्ता मे, धूया मे, सुण्हा मे, सहि, सयण, संगंथ, संथुया मे विविचोवगरणपरियट्टण भोयणच्छायणं मे, इच्चत्थं गड्डिए लोए वसे पमत्ते ॥ १ ॥ अहोयराओ परितप्पमाणे कालाकालसमुट्ठाइ संजो-

भावार्थ

जो विषय हैं वे संसार के हेतु हैं, और जो संसार के हेतु हैं वे विषय हैं. इसलिये जो विषयार्थी होते हैं, वे महादुःख पाते हैं, और कहते हैं कि-माता मेरी है, पिता मेरा है, भ्राता, भगिनी, स्त्री, पुत्र, पुत्री, पुत्रवधु, मित्र, स्वजन, सम्बन्धि मेरे हैं. वैसेही विचित्र प्रकार के उपकरण हाथी, घोडा, शयनासन प्रमुख, भोजन, वस्त्रादिक मेरे हैं. ऐसे तरह विषयी लोकों प्रमादी बन मोह गृद्धि बने रहते हैं. ॥ १ ॥

दिन य० च० रा० रात्रि प० परिताप पातेहुए का० मनिनपण स० सावधान हुवे सं० संजोगार्थी अ० धन के लोभी आ० लुब्ध स० सहसात्कार वि० विषय में दत्त चित्त ए० यहां स० हिंसा में पु० वारंवार ॥ २ ॥ अ० अल्प च० निश्चयार्थ वाची आ० आयुष्य, इ० यहां ए० कितनेक मा० मनुष्यों को तं० वह ज० इस प्रकार सो० श्रोतेन्द्रिय की प० परिज्ञा प० घटती है च० चक्षुकी प० परिज्ञा प० घटती है, घा० घ्राणेन्द्रिय की प० परिज्ञा प० घटती है. र० जिव्हा की प० परिज्ञा प० घटती है, फा० स्पर्शेन्द्रिय की प० परिज्ञा प० घटती है, अ० मनुष्य आती है, व० वृद्धावस्था च० और च० निश्चय सं० भरती तरह

मूल

अट्ठी, अट्ठालोभी, आलुंपे, सहसाकारे, विणिविट्ठचित्ते, एत्थ सत्थे पुणो पुणो ॥ २ ॥ अप्पं च खलु आउयं इह मेगेसिं माणवाणं तंजहा—सोयपरिण्णाणेहिं परिहायमाणे, चक्खुपरिण्णाणेहिं परिहायमाणे, घाणपरिण्णाणेहिं परिहायमाणे, रसणपरिण्णाणेहिं परिहायमाणे, फासपरिण्णाणेहिं परिहायमाणे, अभिक्कंतं च खलु वयं संपेहाए, तओ से

भावार्थ

उक्त कुटुम्ब व संपत्तिकेलिये अहोरात्रि दुःखित होता हुआ, सपण्डुः समय की कुछभी परवाह नहीं करता हुआ उद्यम करता है. उक्त पदार्थ में ही लुब्ध होकर निडर पनेसे छेद भिद्यादि अनेक कुकर्म करने में षट्काय के जीवों के प्राण वारंवार लूटता हुआ आयुः व्यतीत करता है, ॥ २ ॥ प्रथमतो मनुष्य का आयुष्यही अल्प है, उसमे भी जरा—वृद्धा वस्था प्राप्त होतेही कान, आंख, नाक, जीव्हा,

पदार्थ

देखकरके न० नव मे० वे ए० एकदा मू० मूढभाव ज० उत्पन्न करते हैं ॥ ३ ॥ जे० जिस की वा० या स० साथ मे० रहता है ते० वे वा० या णं० उस को पु० एकदा णि० पुत्रादि पु० पहिले प० छोडदेते हैं. सो० वह वा० या ते० उन णि० पुत्रादिक को प० पीछे मे प० छोडदेता है. ण० नहीं ते० वे न० तेरी ता० रक्षा के लिये वा० या स० शरण के लिये तु० तेभी ते० उन का ण० नहीं. ना० रक्षा के लिये ते० वे ण० नहीं हा० हास्य के लिये कि० क्रीडा के लिये, ण० नहीं र० आनंद के लिये ण० नहीं. वि० विभूषा के लिये

मूल

एगया मूढभावं जणयंति ॥ ३ ॥ जेहिं वा सद्धिं संवसति ते वा णं एगया णियगा पुव्वं परिवयंति, सो वा ते णियगे पच्छा परिवएज्जा । णालं ते तव ताणाए वा सरणाए वा तुमंपि तेसिं नालं ताणाए सरणाए वा । सेण हासाए, ण किड्डाए, ण रतीए,

भावार्थ

और शरीर इसकी शक्ति प्रतिदिन कमी होती जाती है. उस वृद्धावस्था को देखकर विषयासक्त प्राणी इच्छा तृप्त करने मे असमर्थ हो दिङ्मूढ बन जाता है, और आरति भोगता है. ॥ ३ ॥ जिन पुत्र कलत्रादिकों के साथ वह वृद्धपुरुष रहता है, वेही एकदिन उस वृद्ध पुरुष की भत्सना कर पहिले ही छोड देते हैं वह वृद्ध पुरुष भी पीछे उन पुत्र कलत्रादि कों की निन्दा करता हुआ छोड देता है. कदाचित पुण्योदयसे सुपुत्रादिक मिले और अपना वृद्ध पिताको न त्यागे तोभी वे उनका बचाव करने व शरण देने मे समर्थ नहीं होते हो. सकते है. और वह वृद्ध भी उनका बचाव करने में व शरण देने में समर्थ नहीं होसक

शब्दार्थ [illegible] करके [illegible] यथोक्त संयमानुष्ठान ॥ ४ ॥ [illegible] और [illegible]
[illegible]
[illegible] जाता है, जो
[illegible]
[illegible] ॥ ३ ॥ [illegible]

सूत्र

ण विस्सए। इच्चेवं समुट्ठिए अहोविहाराए ॥ ४ ॥ अंतरं च खलु इमं संपेहाए
धीरे मुहुत्तमवि णो पमायए, वओ अच्चेइ जोव्वणं च ॥ ५ ॥ जीविए इह जे पम-
त्ता से हंता छेत्ता, भेत्ता, लुंपित्ता, विलुंपित्ता, उद्दवित्ता, उत्तासइत्ता, अकडं क-
रिस्सामि त्ति मण्णमाणे ॥ ६ ॥ जेहिं वा सद्धिं संवसति ते वा णं एगया णियगा

भावार्थ

[illegible] शस्त्र, [illegible]
[illegible] अनुष्ठान में [illegible] ॥ ४ ॥ [illegible]
[illegible] प्रमाद नहीं करे, क्यों कि [illegible]
जाता है ॥ ५ ॥ [illegible] नहीं है, वे [illegible]
[illegible] मारते हैं, [illegible] प्रकार से [illegible] करते हैं, [illegible]

मे पो० पोषते हैं मो० वह ते० उन णि० पुत्रादिक को प० पिछे पो० पोषताहै णा० नहीं ते० वे त० तेरा ता० रक्षण स० शरण के लिये तु० तूभी ते० उनका णा० नहीं ता० रक्षण स० शरण ॥८॥ उ० भोगवते बचा हुवा सं० पास सं० संचय क० करे इ० यहां ए० एकेक अ० अंतराये भो० भोगवने के लिये त० तत्र से० उनको रो० रोगोत्पत्ति स० होती है ॥८॥ जे० जिसकी स० साथ सं० रहता है ते० वे णं० उनको णि०

पुव्वि पोसंति सो वा ते णियगे पच्छा पोसेज्जा । णालं ते तव ताणाए वा सरणाए वा तुमंपि तेसिं णालं ताणाए वा सरणाए वा ॥ ७ ॥ उवादियसेसेण वा संणिहीसंणियओ कज्जति इह मेगेसिं असंजताणं भोयणाए तओ से एगया रोग समुप्पाया समुप्पज्जंति ॥ ८ ॥ जेहिं वा सद्धिं संवसति ते वा णं एगया णियगा पुव्विं परिहरंति सो वा ते

देते हैं और ऐसा मानते कर्तव्यकिजो किसीने आजतक नहीं किया सो करूंगा.॥६॥ परंतु मंदभाग्य जीवको किसीरभी धनकी प्राप्ति नही होवे तो कुटुम्बी जन उनकी पोषणा करते हैं. तथा समय पाकर धन प्राप्त कर वह भी कुटुम्बीजनोंकी पोषणा करता है. परंतु वे कुटुम्बी जन उनकी पालना करने तथा शरण देने में समर्थ नही है. और वह भी कुटुम्बीजनो को पालने में तथा शरण देनेमे समर्थ नहीं होताहै. ॥ ७ ॥ उक्त प्रकारसे भोगवते बचा हुवा द्रव्य का संचय करके रखतेहैं, ऐसा जानतेहैं, कि यह द्रव्य हम को तथा हमारे कुटुम्बके उपभोगार्थ होगा परंतु अन्तरायोदयसे एकदा उनको रोगकी प्राप्ति होजातीहै, जिससे उस द्रव्य को

शब्दार्थ पुत्रादि णि० पहिले प० छोड़देते हैं सो० वह ते० उन णि० पुत्रादिक को प० पीछे से प० छोड़देता णा० न
नहीं ते० वे त० तेरे ता० रक्षण के लिये स० शरण के लिये तु० तूभी ते० उनके णा० नहीं ता० रक्षण स०
शरण के लिये ॥ ९ ॥ ए० ऐसा जा० जान करके दु० दुःख प० प्रत्येक का सा० सुख अ० नहीं गए हुए
और च० [illegible] व० वय से० देखकर ख० अवसर जा० जानो प० पंडित ॥१०॥ जा० जबतक सो०
श्रोतेन्द्रिय का ज्ञान अ० हीन न हुवा ने० चक्षुइन्द्रिय का ज्ञान अ० हीन न हुवा घा० घ्राणेन्द्रिय का ज्ञान अ०

मूल णियगा पच्छा परिवेयंति नालं ते तव ताणाए वा सरणाए वा, तुमंपि तेसिं नालं ताणाए वा सरणाए वा ॥ ९ ॥ एवं जाणित्तु दुक्खं पत्तेयं सायं अणभिक्कंतं च खलु वयं संपेहाए खणं जाणाहि पंडिए ॥ १० ॥ जाव सोयपरिण्णाणेहिं अपरिहायमाणेहिं, नेत्तपरि-

भावार्थ संपन्न नहीं सकते हैं. ॥८॥ जिनकी साथ वह रहता है व उस पुरुष को पहिले छोड़देते हैं. और वह पुरुष भी उनका पीछे से त्याग देता है. वे पुत्रादिक उसका रक्षण करने व शरण देने में समर्थ नहीं होसकते हैं. और तूभी उनका रक्षण करने में व शरण देने में समर्थ नहीं हो सकता है ॥९॥ प्रत्येक जीव अपने सुख दुःख को आप ही भोगते हैं. ऐसा जान कर जबतक वृद्धावस्था प्राप्त नहीं हुई वहीं यौवन वय को देखकर हे पंडित अवसर को पहिचानो ॥१०॥ जहां तक श्रोत्र, चक्षु, घ्राण, रस, और स्पर्श इन पांचो इन्द्रियों के ज्ञान शक्ति कमी नहीं हुई है, उस दरम्यान आत्माके अर्थ संयम अनुष्ठान का सम्यक् रीति

हिन नहीं हुवा र० रसेन्द्रिय का ज्ञान अ० हिन नहीं हुवा फा० स्पर्शेन्द्रिय का ज्ञान अ० हिन नहीं हुवा इ० इनका वि० विविध प्रकार के प० ज्ञान से अ० हीन न हुवा आ० आत्मा स० सम्यक् करे स० पालनकरेपा ऐसा मैं कहता हूं ॥ ११ ॥ इ० यह लोकविजय अ० अध्ययनका प० प्रथमोद्देश ॥

अ० अरति आ० दूर करे मे० वे मे० पंडित ख० क्षणमें मु० मुक्त होते हैं अ० आज्ञाकी वाहिर पु०

णाणेहिं अपरिहायमाणे, घाण परिण्णाणेहिं अपरिहायमाणे रसपरिण्णाणेहिं अपरिहायमाणे, फास परिण्णाणेहिं अपरिहायमाणे इच्चेतेहिं विरूवरूवेहिं परिण्णाणेहिं अपरिहायमाणे आयट्ठसम्मं समणुवासिज्जासित्तिबेमि ॥ ११ ॥ इति लोगविजयज्झयणस्स पढमो देसो सम्मत्तो ॥ × × ×

अरइ आउट्टे से मेहावी खणंसि मुक्के अणाणाए पुट्ठावि एगे णियट्टंति मंदा मोहेण

से पालन करे ऐसा मैं कहता हूं. ॥११॥ प्रथम उद्देश में ज्ञानियों का संगत्याग कहा जो स्नेह त्यागी होगा वह संयम में दृढ रहेगा वह आगे बताते हैं. यह लोकविजय दूसरे अध्ययनका प्रथमोद्देश हुवा.

संयम पालते ॥ कदाचित अरति पैदा होजाय उसे ज्ञानी दूरकरे क्यों वह ज्ञानी शिघ्रही मुक्तिप्राप्त

[illegible] निवर्त्तते ए० एवं मो० मोह में पा० डूबा हुआ ॥ १ ॥ अ० अपरिग्रही भ० होवेंगे स० [illegible] काम भो० कामभोग अ० ग्रहन करे अ० आज्ञा बाहिर मु० साधु को प० प्रतिलेखते हैं [illegible] बारंबार स० आसक्त णो० नहीं ह० इधर के णो० नहीं पा० उधर के ॥ २ ॥ वी० [illegible] जे ज० मनुष्य जे० जो ज० जन पा० पारगामी लो० लोभ को अ० अलोभ से दु०

[illegible] ॥ १ ॥ अपरिग्गहा भविस्सामो समुट्ठाए लद्धे कामे अभिगाहंति, अणाणाए मुणिणो पडिलेहंति, एत्थं मोहे पुणो पुणो सण्णा णो हव्वाए, णो पाराए ॥ २ ॥ विमुत्ता हु ते जणा, जे जणा पारगामिणो लोभं अलोभेणं दुगुंछमाणे लद्धे कामे णाभि-

[illegible] (बनजारी की तरह) और मोहसे आच्छादित बने हुए कितनेक पूर्व अरति परिषह प्राप्त होने पर संयम की आज्ञा बाहिर हो संयम से निवृत्त होते हैं. अर्थात् भ्रष्ट हो जाते हैं, ॥ १ ॥ वे वेषधारी साधु [illegible] करते हैं. कि हम अपरिग्रही बनेंगे. यों कहकर वे जिनाज्ञा के विरुद्ध कार्य कर लोगों से धनादि ठगकर प्राप्त [illegible] सामग्री को. भोगते हैं. इसी से विषय की गवेषणा करते हुए बारंबार मोहरूप कीचड़में फसते हैं. [illegible] (मुनि पर्व में) रहते हैं. न उसके (गृहस्थ पर्व में) रहते हैं. ॥ २ ॥ निश्चय से वही पुरुष त्यागी हैं कि जो शुद्ध संयम सदा पालते रहते हैं. जो निर्लोभता से लोभका तिरस्कार करके प्राप्त कामभोगों को नहीं भोगते हैं अथवा मूलसे ही लोभको निर्मूल कर शोभित होते हैं, वे कर्म रहित होकर के

शब्दार्थ

दुगंछा करते हुवे क० प्राप्त का० कामभोग णा० नहीं ग्रहण करे वि० विना लो० लोभ नि० निकले ए० यह अ० अकर्मी जा० जाने पा० देखे प० देख करके ण० नहीं अ० वांच्छता है ए० यहां अ० साधु इ० ए सा प० कहलाता है ॥ ३ ॥ अ० अहोरात्रि प० परिताप पाते का० समय दुः समय सं० सावधान हो सं० संजोगार्थी अ० अर्थ लोभी आ० लूंटे स० विना विचारे करे वि० विविध वस्तु में मन ए० यहां स० शस्त्र से पु० वारंवार ॥४॥ से० वे आ० आत्मबलार्थ से० वे णा० ज्ञाति बलार्थ से० वे स० स्वजनबलार्थ मि० मित्र बलार्थ प० प्रेत्य बलार्थ दे० देवबलार्थ रा० राज्यबलार्थ चो० चोरबलार्थ अ० अतिथिबलार्थ कि० कृपणबलार्थ

मूल

गाहइ विणात्रि लोभं निक्खम एस अकम्मे जाणति पासति. पडिलेहाए णावकंखति एस अणगारेत्ति पवुच्चति ॥ ३ ॥ अहोयराओ परितप्पमाणे, कालाकालसमुट्ठाइ, संजोगट्ठी, अट्ठालोभी, आलुंपे, सहसाकारे, विणिविट्ठचित्ते, एत्थ सत्थे पुणो पुणो ॥४॥ से आयबले, से णाइबले, से सयणबले, से मित्तबले, से पेच्चबले, से देवबले, से

भावार्थ

सर्वज्ञ सर्वदर्शी होते हैं. ऐसा विचार करके जो लोभको नहीं चाहता है वही सच्चा अणगार कहाता है. ॥३॥ अज्ञानी मनुष्य अहो रात्रि दुःखित होते हुवे, समय दुःसमय की परवाह नहीं करते हुए, धन और स्त्री में लालची बन अनेक वस्तुओं में चित्तको स्थापन करते हुवे, बगर विचारे वारम्वार अनेक प्रकार के आरंभ समारंभ करते हैं ॥ ४ ॥ जगतवासी जीव शरीरका, ज्ञातिका, स्वजनका, मित्रका, प्रेत्यका, देवका,

स० साधुवधार्थं इ० इत्यादि वि० विविध का० कार्यार्थ दं० दंड समाचरे सं० देख करके भ० भय क० करे प० पाप से छूटना इ० ऐसा म० मानता हुवा अ० अथवा आ० आकांक्षा में ॥ ५ ॥ तं० उसको प० जाण करके मे० पंडित णे० नहीं स० स्वयं ए० ऐसे क० कार्यों से दं० हिंसा स० करे णे० नहीं अ० अन्य पास ए० ऐसे क० कार्यों से दं० करावे ए० ऐसे क० कार्यों से दं० हिंसा स० करने वाले अ० अन्यको नहीं स० अच्छा जाने ॥ ६ ॥ एस० यह म० मार्ग आ० तीर्थंकरों ने प० कहा ज० जहां अ० अर्थ कुशल

सूत्र

रायवले, से चोरवले, से अतिहिवले, से किवणवले, से समणवले, इच्चेतेहिं विरूवरूवेहिं कज्जेहिं दंडसमायाणं संपेहाए भया कज्जति पावमोक्खोत्ति मण्णमाणे, अदुवा आसंसाए ॥ ५ ॥ तं परिण्णाय मेहावी णेव सयं एएहिं कज्जेहिं दंडं समारंभेज्जा, णेवण्णेहिं एएहिं कज्जेहिं दंडं समारंभाविज्जा, एएहिं कज्जेहिं दंडं समारंभंतेवि अण्णे णो समणुजाणेज्जा ॥ ६ ॥ एस मग्गे आरिएहिं पवेदिए, जहेत्थ कुसले णो वलिम्पिज्जासि-

भावार्थ

राज्यका, चोरका, अतिथिका, कृपण का तथा साधु का बल, इत्यादि अनेक प्रकारके बल के लिये प्राणातिपातादि पापाचरण करते हैं. ऐसा जान करके कि यदि ऐसा कार्य नहीं करूंगा तो पूर्वोक्त शरीरादि बल नहीं होंगे; इस भयसे तथा पापसे छूटने के लिये अथवा अप्राप्त वस्तु को प्राप्त करने के लिये, प्राणातिपातादि पाप करते हैं ॥ ५ ॥ ऐसा जानकर पण्डित पुरुष उक्त कार्य साधने के लिये किसी प्रकार का पाप आप करे

न० नहीं लि० लेपाय इ० एसा बे० मैं कहता हूं॥७॥ इ० यह लो० लोकविजय अध्ययनका बि० दूसरा उद्देशा स० समाप्त.

मे० वे अ० अंनतवार उ० उंचगोत्र में अ० अनंतीवार णी० नीचगोत्र में णो० नहीं ही० हीन णो० नहीं अ० अधिक णो० नहीं पि० वांच्छे इ० एसा स० जानकर क० कौन गो० गोत्रवादी क० कौन मानवादी क० किस में वा० या ए० कोइ गि० गृद्ध होवे ॥१॥ तं० इस लिये पं० पंडित णो० नहीं ह० हर्ष पामे णो० नहीं

त्ति बेमि इति लोगविजयज्झयणस्स बीओद्देसो सम्मत्तो. * *

असइं उच्चागोए, असइं णीयागोए, णो हीणे, णो अतिरित्ते, णो पीहए इति संखाए के गोयावादी, के माणावादी, कंसि वा एगे गिज्झे ॥ १ ॥ तम्हा पंडिए णो हरिसे

नहीं, दूसरे के पास करावे नहीं, और पाप करते हुवे को अच्छाभी जाने नहीं ॥ ७ ॥ यह मार्ग तीर्थंकर भगवान ने फरमाया है. इसलिये अपनी आत्मा कर्म से न लेपाय वैसे पंडित पुरुषों को वर्तना चाहिये. यह लोक विजय नामक द्वितीय अध्ययन का द्वितीय उद्देशा पूर्ण हुआ. इसमें संयम की दृढता बताइ जो मान का निग्रह करेंगे वे संयम में दृढ रहेंगे इसलिये आगे मान निग्रह करने का कहते हैं. + +

संसारी जीव अनंतवार ऊंच गोत्रमें और अनंतीवार नीच गोत्रमें उत्पन्न हो आया है. इसमें कुछभी न्युनाधिकता नहीं है. (क्योंकि दोनों के कर्म वर्गणाके पुद्गल सरिखे हैं.) एसा जान आठमदमें से एकही मदका स्थान वांच्छे नहीं. जो जिसका मद करता है; आगे उसी वस्तुमें की हीनता पाता है. एसा

अ० आपार० स० संचय करता ति० त्रिविध जि० जितने से० उसके त० तहां भ० प्रमाण भ० होती ए भ० थोडा व० बहुत से० वे त० तहां ग० गृद्धि बना चि० रहे भो० भोगवने को ॥ ९॥ त० तब से० वे ए० एकदा ति० त्रिविध प० शेष रहा सं० उत्पन्न हुवा म० महाउपकरण भ० होवे तं० उसको मे० वे ए० एकदा दा० कुटुम्ब वि० हिस्सा लेते हैं अ० चोर से० उसे अ० हरते हैं रा० राजा से० उसे वि० दंड लेता है णा० नाश पाता है वि० विनाश होता है से० वह अ० घर दा० जलने में० वह द० जलना है इ० इस प्रकार से प० परार्थ कु० क्रूर क० कर्म बा० अज्ञानी प० करता हुवा ते० उस दु० दुःख से मू० मूर्ख वि०

सूत्र

था से तत्थ गढिए चिट्ठइ भोयणाए ॥ ९ ॥ तओ से एगया विविहं परिसिट्ठं संभूयं महोवगरणं भवति, तंपि से एगया दायादा विभयंति, अदत्ताहारा वा से अवहरंति, रायाणो वा से विलुंपंति, णस्सति वा से, विणस्सति वा से, अगारदाहेण वा से डज्झइ इति से परस्सट्ठाए कूराइं कम्माइं बाले पकुव्वमाणे तेण दु-

भावार्थ

भोगनेके लिये धन संचय करता है. और उस धनादि में मन वचन और काया से गृद्ध रहता है. ॥ ९ ॥ कदाचित् उसको पुण्योदयसे नाना प्रकार की धनसम्पत्ति एकत्रित हो जावे तो उसको एकदा पापोदयसे गोत्रिज भाग करलेते हैं. चोर चोरी करजाते हैं, राजा लूटता है, व्यापारादि में क्षय होजाता है, तथा स्वतःही विनाशको प्राप्त होजाता है. अग्निप्रयोगसे जल जाता है इत्यादि अनेक तरह से धनक्षय प्रत्यक्ष में देखते हुवे भी अज्ञानी जीव परकेलिये अनेक प्रकारके क्रूर कर्म करते हैं

परिणपनाको उ० पाता है ॥ १० ॥ पु० तीर्थंकरों ने हु० निश्चय ए० यह प० कहा है अ० अर्थात् तीरने वाले ने ० ये ण० नहीं ओ० ओघ त० तीरे अ० तीर को प्राप्त नहीं हुवे ए० ये ण० नहीं ति० तीरगामी अ० नहीं पारगामी ए० ये ण० नहीं पा० पारगामी ॥ ११ ॥ आ० आदरणीय च० निश्चय आ० आदरकर तं० उस ठा० स्थान में ण० नहीं चि० रहे वि० असत्य प० प्राप्त कर अ० अविज्ञ तं० उस ठा० स्थान में चि० रहे ॥ १२ ॥ उ० उपदेश पा० तन्मय को ण० नहीं है ॥ १३ ॥ बा० मूर्ख पु० फिर णे० स्नेह का०

सूत्र

करेण मूढे विपरियासमुवेति ॥ १० ॥ मुणिणाहुएयं पवेइयं अणोहंतरा एते णय ओहं तरित्तए अतीरंगमा एते णय तीरंगमित्तए अपारंगमा एते णय पारंगमित्तए ॥ ११ ॥ आयाणिज्जं च आयाय तंमि ठाणे ण चिट्ठइ, वितथं पप्पअखेयन्ने तंमिठाणंमि चिट्ठइ, ॥ १२ ॥ उद्देसो पासगस्स णत्थि ॥ १३ ॥ बाले पुण णेहे कामसमणुण्णे असमित

भावार्थ

होते है. अर्थात् विपरीत भाव को प्राप्त होतेहैं. ॥ १० ॥ तीर्थंकर भगवानने निश्चय से ऐसा वर्णन किया है; कि जो कुतीर्थिक तथा पार्श्वस्थादिक हैं, वे संसार समुद्रकेप्रवाह को तीरने में, तीरे पहोंचने में, पार होने में असमर्थ हैं अत एव न तो वे तीर सकते हैं, और न वे तीरपर पहुंच सकते हैं, और न पार हो सकते हैं ॥ ११ ॥ क्योंकि अज्ञानी जीव आदरणीय जो संयम हैं, उसको ग्रहण कर उस संयम स्थान में नहीं तिष्ठते और कुगुरु के मिथ्या उपदेश को ग्रहण करके उसमेंही तिष्ठते हैं, इसलिये वे पार नहीं पहुंचे सकतेहैं.

उपजते नहीं दुःदुःखमें दु० दुःखी दु० दुःखी को आ० भावमें अ० पर्यटन करता है ॥ १८ ॥ इ० मा० लोकविजय अध्ययनका त० तीसरा उद्देश ॥

उत्पन्न होती है ॥ १ ॥ जे० जिसके या० साथ वसते हैं ते० पुत्रादि प० परिजन प० अवर्णवाद बोलता है गा०

दुःखी दुःखपुरस्सरं आवट्टं अणुपरियट्टइत्ति बेमि ॥ इति लोगविजयज्झयणस्स तइओ उद्देसओ ॥

* * *

तओ से एगया रोगा समुप्पाया समुप्पज्जंति ॥ १ ॥ जेहिं वा सद्धिं संवसति ते

॥ १७ ॥ ऐसे पुरुष को उपदेश देने की आवश्यकता नहीं है. क्यों की वे सदैव न्यायपंथगामी होते हैं. ॥ १८ ॥ परन्तु जो अज्ञानी जीव है, वह बारंबार रागोदय में काम भोगों को भला जानता है. इससे अत्यंत दुःख के लिये दुःखी होकर शारीरिक व मानसिक दुःख के चक्रमें पर्यटन करता रहता है. ऐसा मैं कहता हूं ॥ १९ ॥ यह लोकविजय नामक द्वितीय अध्ययनका तृतीय उद्देशा पूर्ण हुआ. आगे भोगको रोग रूप बताते हैं.

× + × × +

इस प्रकार से भोग में अत्यंत लुब्ध विषयासक्त जीवों को अनेक रोगोंकी उत्पत्ति होती है. ॥ १ ॥ जिन पुत्र कलत्रादिक के साथ वह रहता है. उसको जब रोगादिक की प्राप्ति होजाती है. तब वे पुत्र

... मेरी ना० रक्षाकर म० शरण देने तु० तूभी तं० उनको णा० नहीं ना० रक्षाकर वा० या स०
शरण देने॥ जा० जान करके दु० दुःख प० प्रत्येक सा० साता भो० भोग को अ० अनुशोचनीय इ० यहां ए०
कितनेक मा० मनुष्य को ति० त्रिविध जो० जो कुछ से० उनको त० तहां प० प्रमाण भ० होता है अ० थोडा
ब० बहुत मे० वे० व० उसमें ग० गृद्धि, चि० रहते हैं भो० भोगवने में ॥ ३॥ त० तत्र से० वे ए० एकदा

सूत्र

वा णं एगया णियगा पुव्विं परिवयंति, सो वा ते णियगे पच्छा परिवएज्जा, णालं ते तव ताणाए वा सरणाए वा, तुमंपि तेसिं णालं ताणाए वा सरणाए वा ॥ २ ॥ जाणित्तु दुक्खं पत्तेयं सायं भोगामेव अणुसोयंति—इहमेगेसिं माणवाणं तिविहेण जावि-से तत्थ मत्ता भवइ, अप्पा वा बहुआ वा से तत्थ गढिए चिट्ठति ? भोयणाए ॥ ३ ॥

भावार्थ

कलत्रादिक उस रोगीको निंदा करते हुवे छोड देते हैं. यह भी उन पुत्र कलत्रादिक से दुष्ट हुवा उनकी निन्दा करता हुवा छोड देता है. कदाचित् न छोडदेवे तो वे पुत्रादि तेरा रक्षण करने व तुझ को शरण देने में समर्थ नहीं होंगे और तूभी उनकी रक्षा करने व शरण देने में समर्थ नहीं होगा. ॥ २ ॥ दुःख और सुख प्रत्येक को अलग २ ही होता है. इस लोकमें कितनेक मनुष्यों को भोगकी इच्छा रहती है. थोडा बहुत धनकी व खान पान की प्राप्ति हुइ है, उसमें मन वचन और काया के त्रियोग से गृद्ध बन मरण पर्यन्त मग्न रहते हैं. ॥ ३ ॥ उपभोग करते बचा हुवा या व्यापारादिसे प्राप्त हुवा धन कदाचित्

१० भागवत हुवे पपा से० उत्पन्न हुवा म० महान उपकरण भ०होवे ते०उसकोभी से०ने ए०एकदा दा० स्व-जन वि० विभाग करते हैं अ० चोर अ० हरते हैं रा०राजा से०उसे लु० दंड लेता है णा० नाश होताहै से०वे वि० विनाश पाताहै अ० पर दा०अग्नेमें से० वह ड०जलता है इ०इसतरह प०दूसरोंकेलिये कू० क्रूरकर्म बा० अज्ञानी प० करता हुवा ते० उस दुःख से मू० मूर्ख वि० विपरीतता को उ० जाता है ॥४॥ आ० आशा छं०स्वछंदता

तओ से एगया विप्परिसिट्ठं संभूयं महोवगरणं भवति । तंपि से एगया दायाया विभ-यंति अदत्ताहारो वा से अवहरंति, रायाणो वा से विलुंपंति, णस्सइ वा से विणस्सइ, वा से अगारदाहेण वा से डज्झति. इति से परस्सअट्ठाए कूराणि कम्माणि बाले पकुव्वमाणे तेण दुक्खेण मूढे विप्परियासमुवेति ॥ ४ ॥ आसं च छंदं च विगिंच धीरे । तुमं चेव तं सल्लमाहट्टु ॥ ५ ॥ जे णासिया तेण णोसिया ॥ ६ ॥ इणमेव

पुण्योदय से उसके पास जो आवेतो उसका भी स्वजन विभाग लेते है, चोर चोरते हैं, राजा दंड लेता है, व्यापारादि से नष्ट होजाता है, तथा अग्निआदि से विनाश को प्राप्त होता है. इस तरह धनकी विदिशा होती हुई देख करके भी अज्ञानी दूसरे के लिये खोटे कर्म करते हैं. और उस दुःख से वे विपरीतपना को प्राप्त होते हैं ॥ ४ ॥ अहो धीर पुरुषों ! तुमको विषय वांच्छा तथा लालच से सदैव दूर रहना चाहि-ये ; क्योंकि जो आशारूप शल्य को धारन करते हैं. वे दुःखी होते हैं. ॥ ५ ॥ जिस धन से कदापि सुख

पदार्थ

भंगूरस्वभाव स० उन देखो ॥ ११ ॥ ण० अतृप्ति पा० देख अ० पूर्ण हो त० इनभोग से ए० यह ए० ऐसी तरह पा० देख मु० साधु म० महाभय ण० नहीं अ० वध करे कं० किसीका ॥ १२ ॥ ए० यह वी० वीर प० प्रशंसा पाये हुवे जे०जो ण०नहीं नि०खेदित होवे आ० संयम में ण० नहीं मे०मुझे दे०देवे ण० नहीं कु० कोप करे थो० थोडा ल० प्राप्त करके ण० नहीं खि० निन्दे प० ना कहे प० पिछा फिरे प० दियेबाद प० पीछा फिरे ॥ १३ ॥ ए० ऐसा स० साधु को स० संयम पालना चाहिये ति०

मूल

कुसलस्स पमादेण संति—मरणं सपेहाए भिदुरधम्मं सपेहाए ॥ ११ ॥ णालं पास, अलं ते एएहिं, एयं पास मुणी, महब्भयं णातिवाएज्जा कंचणं ॥ १२ ॥ एस वीरे पसंसिए, जेण णिविज्जइ आदाणाए, णमेदेति ण कुप्पेज्जा, थोवं लध्धुं ण खिंसए, पडिसेहिओ परिणमेज्जा, पडिलाभिओ परिणमेज्जा ॥ १३ ॥ एयं मोणं समणुवासि०

भावार्थ

शरीर को क्षण भङ्गुर जान करके चतुर पुरुषों को प्रमाद नहीं करना चाहिये. ॥११॥ भोग भोगवने से कदापि तृप्ति नहीं होती है. इसलिये भोगोंकी अभिलाषा नहीं करनी चाहिये क्योंकि भोगो को महाभय का कारण जान कर मुनि किसी भी प्राणी का वध करे नहीं ॥ १२ ॥ जो साधु संयम पालने में बिलकूलही खेदित नहीं होता है वह पराक्रमी मुनि प्रशंसनीय है. भिक्षार्थ गये यदि कोइ भिक्षा नदेवे तो उसपर क्रोध नकरे, थोडा देवेतो निन्दा नकरे, गृहस्थ ना कहेतो तुर्त पीछा फीर जाय, या भिक्षा प्राप्त होते ही पीछा चला जाय॥१३॥अहो मुनि ! तुमको सदैव इस तरह संयम पालना चाहिये, यथा श्री भगवान का कथनानुसार

शब्दार्थ नहीं म० मद करे अ० अलाभ होवे ण० नहीं सो० शोक करे ब० बहुत मिलने पर ण० न संग्रहे प० परिग्रह से अ० आत्मा को अ० दूर रख अ० अन्यथा न० नहीं देखे प० ममत्व त्यागे ॥८॥ ए० यह म० मार्ग अ० तीर्थंकरों ने प० कहा है ज० यथार्थ कु० होंश्यार णो० नहीं लि० लेपावे ति० ऐसा कहता हूं ॥ ९ ॥ का० काम दु० दुरुल्लंघनीय जी० जीवितव्य दुर्वर्धनीय का० कामका का० अभिलाषी स० निश्चय अ० यह पुरुष से० वे सो० शोक करता है झु० झुरता है ति० मर्यादभ्रष्ट होता है पि० दुःख पाता है प० परिताप पाता है ॥ १० ॥ आ० दीर्घदर्शी लो० लोकदर्शी लो० लोक का अ० अधोभाग जा० जाने उ० उर्ध्व-

सूत्र ण सोएज्जा, बहुंपि लध्धुं ण णिहे परिग्गहाओ अप्पाणं अवसक्केज्जा अण्णहा णं पासए परिहरेज्जा ॥ ८ ॥ एस मग्गे आरिएहिं पवेदिते, जहेत्थ कुसले णोवलिप्पेज्जासि त्तिबेमि ॥ ९ ॥ कामा दुरतिक्कमा, जीवियं दुप्पडिबूहणं कामकामी खलु अयं पुरिसे, से सोयति, झूरति, तिप्पति, पिड्डति, परितप्पति ॥ १० ॥ आयतचक्खू लोगविपस्सी

भावार्थ होना ज्यादा मिलजायतो ज्यादा ग्रहण नहीं करना. निष्परिग्रही रहना धर्मोपकरण को परिग्रहमें न देखना और उनपर ममत्व भी नही करना ॥ ८ ॥ पूर्वोक्त मोक्षमार्ग श्री तीर्थंकर महाराजने फरमाया है. इसमें प्रवर्तने वाले कुशल पुरुषही कर्म बंधसे लेपाते नहीं है. ऐसा मैं कहताहूं. ॥ ९ ॥ ये कामभोग अतीही दुर्जय हैं. और जीवितव्य बढसकता नही है. तथापि काम भोगके अभिलाषी पुरुष उसके लिये शोक करते हैं

[illegible] जानो? ॥ग० गृद्धि लो० लोक अ० परिभ्रमण करते हुये सं०गांधि [illegible] यह प० पुन्य लोक में प० यह वी० वीर प० प्रशंसा किया हुआ जे० जो व० बंधन में प० [illegible] ॥ २० ॥ ज० जैसा अं० अंदर त० तैसे बा० बाहिर ज० जैसा बा० बाहिर त० तैसा पा० अं- [illegible] अं० अंदर पृ० पवित्री दे० शरीर को विभाग पा० देखता है पु० पृथक २ सं० झरते प० पं-

[illegible] अहोभागं जाणति, उड्ढभागं जाणति, तिरियभागं जाणति ॥ ११ ॥ गढिए [illegible] अणुपरियहमाणे संधिं विदित्ता इह मच्चिएहिं एस वीरे पसंसिए जे बद्धे पडि- [illegible] ॥ १२ ॥ जहा अंतो तहा बाहिं जहा बाहिं तहा अंतो. अंतो पुतिदेहंतरा-

[illegible] है. [illegible] होता है, पीड़ित होता है, और दुःख पाता है. ॥ १० ॥ जो दीर्घदर्शी (आत्म [illegible] लोकके [illegible] जानता है वह लोक का ऊंचा, नीचा तथा तिर्यक् भागको जानता है, [illegible] जीव किस प्रकार उत्पन्न होते हैं उसे जान सकता है. ॥ ११ ॥ विषय गृद्धि लोक संसार [illegible] है इसलिये इस लोकमें ज्ञान दर्शन चारित्र रूप संधि (ग्राम अवसर) को जानकर [illegible] वही वीर प्रशंसनीय होते हैं, और वेही पुरुष दूसरे संसारबन्धन से बन्धे हुवे जीवोंको मुक्त [illegible] है. ॥ १२ ॥ यह उदारिक शरीर जैसा अंदर से असार है. वैसा बाहिर से भी असार [illegible] और जैसा बाहिर से असार है. वैसा अंदर से भी असार है. इससे पंडित पुरुषों को उचित है. कि शरीर

...ही म० ममत्व अ० अलाभ होवे ण० नहीं सो० शोक करे ब० बहुत मिलने पर ण० न संग्रह प० परि-ग्रह से अ० आत्मा को अ० दूर रख अ० अन्यथा न० नहीं होवे प० ममत्व मागे ॥८॥ ए० यह म० मार्ग अ० तीर्थंकरों ने प० कहा है ज० यथार्थ कु० होंस्यार णो० नहीं लि० लेपावे ति० ऐसा कहता हूं ॥ २ ॥ का० काम दु० दुरुल्लंघनीय जी० जीवितव्य दुर्वंधनीय का० कामका का० अभिलाषी प० निश्चय अ० यह पुरुष से० वे सो० शोक करता है झू० झुरता है ति० मर्यादाभ्रष्ट होता है पि० दुःख पाता है प० परिता-पाता है ॥ १० ॥ आ० दीर्घदर्शी लो० लोकदर्शी लो० लोक का अ० अधोभाग जा० जाने उ० उर्ध्व-

ण संपज्जा, बहुंपि लध्धुं ण णिहे परिग्गहाओ अप्पाणं अवसक्केज्जा अण्णहा णं पासए परि-हरेज्जा ॥ ८ ॥ एस मग्गे आरिएहिं पवेदिते, जहेत्थ कुसले णोवलिप्पेज्जासि त्तिबेमि ॥ ९ ॥ कामा दुरतिक्कमा, जीवियं दुप्पडिवूहणं कामकामी खलु अयं पुरिसे, से सोयति, झूरति, तिप्पति, पिड्डति, परितप्पति ॥ १० ॥ आयतचक्खू लोगविपस्सी

होना ज्यादा मिलजाय तो ज्यादा ग्रहण नहीं करना, निष्परिग्रही रहना धर्मोपकरण को परिग्रह में न देखना और उनपर ममत्व भी नहीं करना ॥ ८ ॥ पूर्वोक्त मोक्षमार्ग श्री तीर्थंकर महाराजने फरमाया है. इसमें वर-तने वाले कुशल पुरुषों कर्म बंधने लेपाते नहीं है. ऐसा मैं कहता हूं. ॥ ९ ॥ ये कामभोग अतीही दुर्जय हैं. और जीवितव्य बढ़ सकता नहीं है तथापि काम भोगके अभिलाषी पुरुष उनके लिये शोक करते हैं

[illegible] हुवे लो० लोक प० परिभ्रमन करने हुवे पं० मांगे

[illegible] से प० मह बी० बीज प० वनेगा किया हुवा जे० जो प० शेन में प०

[illegible] तो० बाहिर प० लेना प० चाहिर न० नैना प० भं०

[illegible] शरीर को [illegible] है पु० पुत्रक २ मे० सने प० पं०

[illegible] जानति, उड्डुमाणं जानति, णिविस्साणं जानति ॥ ११ ॥ गहित

[illegible] विकिंचा इह मविन्दि [illegible] जे वड़े पडि०

[illegible] ॥ १० ॥ जहा अंतो तहा वाहिं जहा वाहिं तहा अंतो. अंतो पुतिदेहंतरा०

[illegible] है. [illegible] ॥ १२ ॥ जो [illegible] (

[illegible] जानता है.

[illegible] लोक [illegible]

[illegible]) को जानकर

[illegible] ॥ १० ॥ [illegible] जीवों को [illegible]

[illegible] गति को [illegible]

शब्दार्थ दित प० पालनसंग ॥ १३ ॥ से० वे म० बुद्धिवन्त प० जान करके मा० नहीं य० फिर हु० नि धय ला० धूकपरना मा० नहीं ते० उसमें ति० विमुख म० आप मा० आदरे ॥ १३ ॥ का० क- र्तव्यव्याकुल स० निश्चय अ० यह पु० पुरुष ब० बहुतमायावी क० करे मू० मूढ पु० फिर लं० लोभ क० करता है लो० लोभ वे० वैर व० वृद्धि करे अ० अपनी आत्मा में ॥१५॥ ज०

मूल जि पासति पुढो विरत्तंनि पंडिए पडिलेहए ॥ १३ ॥ से मतिमं परिण्णाय मा य हु लालपधासी मा तेसु तिरिच्छ मप्पाण मावायए ॥ १४ ॥ कासंकसे खलु अयं पुरिसे, बहुमायी, कडेण मूढे पुणो तं करेति लोभं वेरं वड्ढति अप्पणो ॥ १५ ॥ जमिणं प-

भावार्थ के बाहिर प्रत्यक्ष नवद्वारों से झरते हुवे मलमूत्रादि को देखकर शरीर के अंदर का स्वरूप को पहिचानना और एवं प्रकार शरीर से ममत्व त्यागकर अपना आत्महित साधलेना ॥ १३ बुद्धिमानों का कर्तव्य है कि काम वृद्धि नहीं करे अर्थात्—जैसे कुत्ता मुखमें से पडती हुइ लार (थूक) को पीछा चूमलेता है, वैसे विद्वान वमनकिये हुवे काम भोगोंको नहीं ग्रहण करे और ज्ञानाभ्यासादिकमें विमुख भी नबने ॥ १४ ॥ कामी पुरुष मैं, ने, किया और मैं यह करूंगा एसी चिन्ता में व्याकुल होता हुआ मायावी बनकर लोभी बनता है और इसीने अपनी आत्मा की साथ वैरकी वृद्धि करता है, ॥ १५ ॥ मत्त गृद्धि पुरुष इस क्षणभङ्गर शरीर को अजर अमर करता हुवा इसकी वृद्धि केलिये सदैव चिन्तातुर रहता है, एसा देखकर मुनि शरीर

शब्दार्थ जिसलिये प० कहते हैं इ० यह च० निश्चय प० वृद्धिपाता है अ० अपरवत म० महा गृद्धि अ० अरति पे० यह देखो ॥ १६ ॥ अ० अज्ञान कं० दुखी होते हैं से० उसे तं० तूं जा० जान ज० जो मैं बे० कहता हूं ॥ १७ ॥ ते० वे इ० यहां प० पंडित प० कहते हुवे से० ऐसे ह० मारनेवाले भे० भेदनेवाले छे० छेदनेवाले लुं० लूंटने वाले वि० छीनने वाले उ० प्राणरहित करनेवाले करे अ० नहीं किया क० करूंगा मि० इति एसा म० मनमाना ज० जिसको वि० उपदेश करे ण० नहीं अ० पूर्ण बा० अज्ञानी की स० संगतिमें ते० जो

सूत्र णिकहिज्जइ इमस्स चेव पडिवूहणयाए अमरायइ महासड्ढी अट्ट—मेतं पेहाए ॥ १६ ॥ अपरिण्णाय कंदति से तं जाणह जमहं बेमि ॥ १७ ॥ ते इत्थ पंडिते पवयमाणे, से हंता, भेत्ता, छेत्ता, लुंपिता, विलुंपिता, उद्दवइत्ता, अकडं करिस्सामित्ति मण्णमाणे ज-

भावार्थ पर प्रसन्न रहे नहीं ॥ १६ ॥ जो जीव आत्मस्वभाव से अजान हैं, वे जीव विषय तृष्णा के वश होकर के अनेक दुःख भोगते हैं इसलिये हे भव्यों जो मैं कहताहूं उस उपदेश को जानो ॥ १७ ॥ अहो भव्यों ! इस जगतमें अनेक कुमतियों परमार्थ के अजान होने परभी पंडित नामकी उपाधि धारण करके निर्विकारी मुद्रा वेष पहिनके जगत के नायक बन बैठते हैं. और किसीने भी न किया एसा मन में मानते हुवे वे अनेक जीवों को मारते हैं, काटते हैं, लूटते हैं, प्रपंच कर सोसते हैं. समय पर प्राण भी हरण कर लेते हैं, और एसाही उपदेश करके कर्म बंध करते हैं. इसलिये एसे ढोंगीयों कि संगत बिल्कुलही करना नहीं चाहिये इतनाहीनहीं

शब्दार्थ कोइ मे॰ उसकी क॰ करे ए॰ एसा अ॰ साधु, को जा॰ कल्पे होवे ति॰ ऐसा बे॰ मैं कहता हुं ॥ १८ ॥ से॰ अब तं॰ उसे सं॰ जानकर अ॰ ज्ञानादिमें स॰ सावधानहो त॰ इसलिये प॰ पाप कर्म णे॰ न करे ण॰ न करावे ॥ १ ॥ सि॰ कदाचित् त॰ उसमें की एक भी वि॰ हिंसा करे छ॰ छेमें की अ॰ किसी भी क॰ करे ॥ २ ॥ सु॰ सुखार्थी ल॰ लालपाल करता हुवा स॰ स्वकीय दु॰ दुःख से मू॰

सूत्र स्सवियणं करेइ, अलं बालस्स संगेणं जे वा से करेति बाले ण एवं अणगारस्स जाय ति त्ति—बेमि ॥ १८ ॥ इति लोगविजयज्झणस्स पंचम उद्देसो सम्मत्तो. *

से तं संबुज्झमाणे आयाणीयं समुट्ठाए तम्हा पावकम्मं णेव कुज्जा णेव कारवे ॥ १ ॥

भावार्थ परन्तु इनके फंदमें फसने वाले की भी संगत करना नही चाहिये और जो सच्चा साधु है, उनको एसा उपदेश देनाभी कल्पता नही है. एसा मैं श्री भगवान की आज्ञा से कहताहुं ॥ १८ ॥ इति लोकविजयनामक द्वितीय अध्ययन का पांचवा उद्देशा पूर्ण हुवा इसमें लोक की नेश्रायमें न वर्तना एसा उपदेश दिया जो ममत्व त्यागी होवेंगे वे लोककी नेश्रायमें न रहेंगे इसलिये संयमी को ममत्व त्याग का उपदेश आगे कहते हैं.

उक्त बोध को जानने वाले मुनि ज्ञानादि में सावधान बन आप स्वयं पाप करे नहीं दूसरे केपास करावे नही ॥ १ ॥ जो कोइ छजीवनिकाय में से एक भी काया का घात करता होवे उसे छे ही जीविकाय के घातक कहना अथवा एक प्राणातिपात विरमण व्रतादि छ व्रतो में से किसी भी व्रत का

... पाने प० स्वकीय वि० विविध प्रमाद से पु० अलग २ व० व्रत प०
करे से० विष प० यह पा० प्राणी का वा० वध करे प० देखकर णो० नहीं णि० निकरण के लिये
प० करी प० ममत्व प० कही क० कर्मोपशांति ॥ ३ ॥ जे० जो म० ममत्वबु० बुद्धि ज० छोडता है
से० वे ज० छोडते हैं प० ममत्व से० वे दृ० निश्चय दि० दृष्टपन्थी मु० साधु ज० जिसको ण० नहीं
म० ममत्व ॥ ४ ॥ तं० उसे प० जानकर मे० पण्डित वि० जानकर लो० लोक व० वमनकरे लो०

सूत्र

सिया तत्थगयं विप्परामुसति छसु अण्णयरंमि कप्पति ॥ २ ॥ सुहट्ठी लालप्पमाणे सएण दुक्खेण मूढे विप्परियासमुवेति. सएण विप्पमाएण पुढोवयं पकुव्वति, जंसि-मे पाणा पव्वहिया पडिलेहाए णो णिकरणाए एस परिण्णा पवुच्चति कम्मोवसंती ॥ ३ ॥ जे ममाइयमतिं जहाति से जहाइ ममाइतं सेहु दिट्ठपहे मुणी जस्स णत्थि ममाइतं ॥ ४ ॥ तं परिण्णाय मेहावी विदित्ता लोगं वंता लोगसण्णं से मतिमं परिक्कमेज्जात्ति त्तेमि

भावार्थ

न करने वाला है। व्रत का भंग करने वाला गिना जाता है ॥ २ ॥ मूर्ख जीव सुख के लिये ला-लपता करता हुआ (भटकता हुआ) अपने दुःख से विपरीतता को प्राप्त होता है—अर्थात् दुःखी बनता है, तथा अपने ही प्रमाद से व्रतों का भंग करता है. इस संसार में प्राणी का वध होता है उसे देखकर दूसरेको दुःख होवे ऐसा कर्म करे नहीं. इसको ही परिज्ञा कहते हैं, और इसीसे कर्मोपशान्ति होती है ॥ ३ ॥ जो ममत्व बुद्धि का त्याग करते हैं वेही ममत्व को छोड सकते हैं, और जिनको ममत्व नहीं है वे ही मोक्ष

[illegible] उपदेश क० कर ए० ऐसा अ० साधु, को आ० करने होवे त्ति० ऐसा बे० मैं कहता हूं ॥ १८ ॥

[illegible] मानकर अ० ज्ञानादि में स० सावधानी न० इसलिये प० पाप कर्म णे० न करे [illegible] न करावे ॥ १ ॥ सि० कदाचित् त० उसमें से एक भी हि० हिंसा करे छ० छैं की अ० [illegible] करे ॥ २ ॥ सु० सुखार्थी ला० लालपात करता हुआ स० स्वकीय दु० दुःख से मू०

आयाण [illegible], अल बालस्स संगेणं जे वा से कारेति बाले ण एवं अणगारस्स जाय

[illegible]-शमि ॥ १८ ॥ इति लोगविजयज्झयणस्स पंचम उद्देसो सम्मत्तो. *

से [illegible] आयाणीयं समुट्ठाए तम्हा पावकम्मं णेव कुज्जा णेव कारवे ॥ १ ॥

[illegible] करने वाले की भी संगत करना नहीं चाहिये और जो सच्चा साधु है, उनको ऐसा उपदेश [illegible] नहीं है ऐसा मैं श्री भगवान की आज्ञा से कहता हूं ॥ १८ ॥ इति लोकविजयनामक [illegible] का पांचवा उद्देशा पूर्ण हुआ इसमें लोक की नेश्रायमें न रहना ऐसा उपदेश दिया जो [illegible] नेश्रायमें न रहेंगे इसलिये संयमी को ममत्व त्याग का उपदेश आगे कहते हैं.

[illegible] का जानने वाले मुनि ज्ञानादि में सावधान बन आप स्वयं पाप करे नहीं दूसरे के पास [illegible] नहीं ॥ १ ॥ जो कोई छजीवनिकाय में से एक भी काया का घात करता होवे उसे छे ही जी[illegible] का घातक कहना अथवा एक प्राणातिपात विरमण व्रतादि [illegible] व्रतो में से किसी भी व्रत [illegible]

शब्दार्थ

म्यगदर्शी ए० यह ओ० संसार त० तिरने वाला मु० साधु ति० तिरता है मु० मुक्त होता है वि० निवर्तता है वि० कहा ति० ऐसा कहता हूं ॥ ७ ॥ दु० मुक्तिगमन अयोग्य मु० साधु आ० आज्ञा बाहिर तु० तुच्छ गि० गिलानवने व० बोलने को ए० यह वी० वीर प० प्रशंसनीय अ० अतिक्रमे लो० लोक के सं० संयोग्य है ॥ ८ ॥ ए० यह णा० न्याय प० कहा है जं० जो दु० दुःख प० कहा इ० यहां मा० मनुष्य को त० उस दुःख मे कु० होश्यार प० परिज्ञा मु० कही ॥ ९ ॥ इ० ऐसे क० कर्म प० जान स० सर्वथा जे० जो

सूत्र

मुत्तं विरते वियाहिते त्ति-बेमि ॥ ७ ॥ दुव्वसु मुणी अणाणाए, तुच्छए, गिलाति वत्तए एस वीरे पसंसिए, अच्चेइ लोय संजोयं ॥ ८ ॥ एस णाए पवुच्चति, जं दुक्खं पवेदितं इह माणवाणं तस्स दुक्खस्स कुसला परिण्ण मुदाहरंति ॥ ९ ॥ इति कम्मपरि-

भावार्थ

वाला मुनिही तिरता है-मुक्त होता है, सावद्य योगसे निवर्तता है. ऐसा मुनि बखाना गया है. ऐसा मैं कहता हूं ॥ ७ ॥ तीर्थंकर की आज्ञा भंग करनेवाले स्वेच्छाचारी, प्रत्युत्तर देने में अचकाने वाले, तथा ज्ञान रहित मुनि मुक्ति गमनके अयोग्य होते हैं. और जिनाज्ञानुसार चलने वाले, सर्व जंजाल से दूर रहने वाले पराक्रमी साधु इस लोकमें प्रशंसनीय बनते हैं. ॥ ८ ॥ यही न्याय मार्ग कहा गया है. इस संसार में तीर्थंकर भगवानने मनुष्योंको दुःख बतायेहैं. उसको कुशल पुरुष ज्ञानपरिज्ञासे जानकर प्रत्याख्यान परिज्ञासे त्याग करते हैं. ॥ ९ ॥ इस तरह कर्म का स्वरूप जानकर सर्वथा उपदेश करना कि जो परमार्थदर्शी हैं, वे मोक्ष

शब्दार्थ लोकसज्ञा मे० वे म० बुद्धिमन्त म० पराक्रम करे नि० ऐसा बे० कहता हूं ॥ ५ ॥ णा० नहीं भ० उदासी म० मदन कर वी० वीर णो० नहीं स० धरे र० खुशी ज० जिसलिये अ० शांत चित्त वाला वी० धीर त० इसलिये वी० धीर ण० नहीं र० रती धरे ॥ ६ ॥ स० शब्द फा० स्पर्श अ० सह ते णि० त्याग णं० खुशी इ० यह जी० जीवितव्य के लिये मु० साधु मो० संयम स० आदरकर धु० दूर कर क० कर्म स० शरीर प० प्रान्त लू० रूखा से० भोगवे वी० वीर स०

सूत्र ॥ ५ ॥ णारति सहते वीरे, वीरेणो सहतेरतिं, जम्हा अविमणे वीरे, तम्हा वीरेण रज्जति

॥ ६ ॥ सद्दफासे अहियासमाणे णिव्विंद णंदिं इह जीवियस्स, मुणी मोणं समादाय

धुण कम्मसरीरगं, पंतं लूहं च सेवंति वीरा संमत्त दंसिणो एसे ओघतरे मुणी तिन्ने

भावार्थ मार्ग को जानने वाले साधु हैं ॥ ४ ॥ उक्त कथन को जानकर बुद्धिमान साधु लोक का स्वरूप को जानकर लोक सज्ञा (देखा देखी) को छोडे ॥ ५ ॥ जो पराक्रमी साधु होते हैं वे किसी [illegible] पदार्थसे खुशी नहीं होते हैं वैसेही उदास नहीं होते हैं जिससे वे शान्त स्वभावी रहते हैं. इसलिये ही रागरूपी शत्रु उनका पराभव नहीं कर सकता है. ॥ ६ ॥ अहो साधुओ तुमको असंयम जीवितव्यके लिये शब्दादि काम भोगों की प्राप्ति होवे तो उसमें खुशी नहीं होना, परंतु संयम को अंगीकार करके कर्म और शरीर को निर्बल बनाना सम्यग्दर्शी वीर पुरुष हलका और रूखा भोजन को सेवन करे. ऐसा संसार समुद्रको पार होने

शब्दार्थ म्यगदर्शी ए० यह ओ० संसार त० तिरने वाला मु० साधु ति० तिरता है मु० मुक्त होता है वि० निवर्तता है वि० कहा ति० ऐसा कहता हूं ॥ ७ ॥ दु० मुक्तिगमन अयोग्य मु० साधु आ० आज्ञा बाहिर तु० तुच्छ गि० गिलानवने व० बोलने को ए० यह वी० वीर प० प्रशंसनीय अ० अतिक्रमे लो० लोक के सं० संयोग्य है ॥ ८ ॥ ए० यह णा० न्याय प० कहा है जं० जो दु० दुःख प० कहा इ० यहां मा० मनुष्य को त० उस दुःख से कु० होश्यार प० परिज्ञा मु० कही ॥ ९ ॥ इ० ऐसे क० कर्म प० जान स० सर्वथा जे० जो

सूत्र मुत्ते विरते वियाहिते त्ति-बेमि ॥ ७ ॥ दुव्वसु मुणी अणाणाए, तुच्छए, गिलाति वत्तए एस वीरे पसंसिए, अच्चेइ लोय संजोयं ॥ ८ ॥ एस णाए पवुच्चाति, जं दुक्खं पवेदितं इह माणवाणं तस्स दुक्खस्स कुसला परिण्ण मुदाहरंति ॥ ९ ॥ इति कम्मपरि-

भावार्थ वाला मुनिही तिरता है-मुक्त होता है, सावद्य योगसे निवर्तता है. एसा मुनि बखाना गया है. एसा मैं कहता हूं ॥ ७ ॥ तीर्थंकर की आज्ञा भंग करनेवाले स्वेच्छाचारी, प्रत्युत्तर देने में अचकाने वाले, तथा ज्ञान रहित मुनि मुक्ति गमनके अयोग्य होते हैं. और जिनाज्ञानुसार चलने वाले, सर्व जंजाल से दूर रहने वाले पराक्रमी साधु इस लोकमें प्रशंसनीय बनते हैं. ॥ ८ ॥ यही न्याय मार्ग कहा गया है. इस संसार में तीर्थंकर भगवानने मनुष्योंको दुःख बतायेहैं. उसको कुशल पुरुष ज्ञानपरिज्ञासे जानकर प्रत्याख्यान परिज्ञासे त्याग करते हैं. ॥ ९ ॥ इस तरह कर्म का स्वरूप जानकर सर्वथा उपदेश करना कि जो परमार्थदर्शी हैं, वे मोक्ष

शब्दार्थ सम्यगदर्शी से० वे आ० अन्य में नहीं रमें जे० जो अ० अन्य में नरमे से० वेही अ० सम्यग्दर्शी ॥ १० ॥ ज० जैसा पु० पुण्यात्मा को क० कहतेहैं त० तैसा तु० तुच्छात्मा को क० कहते हैं, ज० जैसा तु० तुच्छात्मा को क० कहते हैं, त० तैसा पु० पुण्यात्मा को क० कहते हैं ॥ ११ ॥ अ० आपे ह० मारे अ० अनमानना, ए० इस तरहभी जा० जान भे० श्रेय ति० इति ण० नहीं. के कौन

सूत्र णणाय सव्वसो । जे अणण्णदंसी से अणण्णारामे, जे अणण्णा रामे से अणण्णदंसी ॥ १० ॥ जहा पुण्णस्स कत्थति तहा तुच्छस्स कत्थाति, जहा तुच्छस्स कत्थति तहा पुण्णस्स कत्थानि ॥ ११ ॥ अत्रियहणे अणातियमाणे एत्थंपि जाण सेयं-ति णत्थि केयं पुरिसे कंचणए । एस वीरे पसंसिए जे बद्धे पडि मोयए. उड्ढं अहं तिरियं दि-

भावार्थ मार्ग छोडकर अन्य मार्ग में रमण नहीं करते हैं और जो अन्य मार्ग में रमण नहीं करते हैं. वेही परमार्थदर्शी होते हैं ॥ १० ॥ निःस्वार्थी मुनि जैसे राजा को उपदेश देते हैं. वैसेही रंक को उपदेश देते हैं. और जैसे रंकको उपदेश देते हैं. वैसेही राजाको उपदेश देते हैं. क्योंकि दोनों की आत्मा मोक्ष प्राप्ति केलिये तुल्य है. ॥ ११ ॥ उपदेशको को श्रोताजन के अभिप्राय, ज्ञाति व धर्म इत्यादि का ज्ञान जरूरही रखना चाहिये. क्योंकि अज्ञान पने से कदाचित अयोग्य उपदेश होजाय, और प्रतिपक्षी कदाचित राजा आदि समर्थ होतो द्वेषके वशसे क्रोधित बनकर के उपदेशको मारे अपमान करे, तथा धर्म वृद्धि बदल धर्म हानी

शब्दार्थ

यह पुरुष कं० किस देवको नमता है, ए० ऐसे वी० वीर प० प्रशंसनीय जे० जो ब० बद्ध प० छूटे उ० ऊर्ध्व अ० अधो ति० तिर्यक् दि० दिशा में ॥ १२ ॥ से० वे स० सर्व काल स० सर्व प० प्रज्ञाचारी ण० नहीं लि० लिपाते छ० हिंसा से वी० वीर ॥ १३ ॥ मे० वे मे० पण्डित जे० जो अ० कर्म को दूर करने में निपुण, जे० जो ब० और ब० बन्ध मो० मोक्ष म० गवेषक, ॥ १४ ॥ कु० केवलज्ञानी पु० और णो० नहीं ब० बन्धाये हुवे णो० नहीं मु० मुक्त थये हुवे से० वे जे० जो च० निश्चय आ० क्रिया

सूत्र

सागु ॥ १२ ॥ से सव्वतो सव्व परिण्णाचारी ण लिप्पती छणपदेण वीरे ॥ १३ ॥ से मेहावी जे अणुग्घायणस्स खेयण्णे जे य बंधपमोक्खमन्नेसी ॥ १४ ॥ कुसले पुण णो बद्धे णो मुक्के । से जं च आरंभे जं च णारंभे अणारद्धं च ण आरंभे

भावार्थ

और इसलिये उपदेश विधि का ज्ञान बिना उपदेश देने में कुछभी कल्याण नहीं होता है. यह कौन पुरुष है, और किस देव को नमस्कार करता है इत्यादि जान होकर धर्मोपदेशकों को यथार्थ करना चाहिए. जो ऊर्ध्व, अधो, व तिर्यक् दिशामें कर्मसे बंधे हुए जीवको मुक्त कर सकताहै, वह ही वीर पुरुष प्रशंसनीय है. ॥ १२ ॥ इस तरह जो पराक्रमी सत्पुरुष सदैव परिज्ञाचारी होते हैं वे हिंसादि दोषोंसे निर्लेप रहते हैं. ॥ १३ ॥ जो कर्म को दूर करने में निपुण हैं, और बंध मोक्षको जानते हैं, वही विद्वान पंडित कहे जाते हैं ॥ १४ ॥ जो केवल ज्ञानी परमात्मा हैं उनको न तो बंध है, और न मोक्ष है. क्योंकि वे कृत कृत्य है.

... महा आ० करे ॥ १६ ॥ छ० क्षण २ प० परिज्ञासे जान कर छोडे लो० लोककी संज्ञा, स० सर्व ॥१६॥ उ० उपदेश पा० तत्वदर्शी को ण० नहीं ॥१७॥ बा० अज्ञानी पु० फिर णि० स्नेह का० कामको स० अनुमोदते, अ० उपशम नहीं दुःख जिसको दु० दुःखी हो दु० दुःख के ही आ० चक्र में अ० परिभ्रमण करता है त्ति० ऐसा कहता हूं ॥ १८ ॥ ÷ ॥

सूत्र

॥ १५ ॥ छणं छणं परिण्णाय लोगसन्नं च सव्वसो॥१६॥ उद्देसो पासगस्स णत्थि ॥ १७ ॥ बाले पुणणिहे काम समणुण्णे असमितदुक्खे दुक्खी दुक्खाणमेव आवट्टं अणुपरियट्टति त्तिबेमि ॥ १८ ॥ इति लोगविजयज्झयणस्स छट्ठोद्देसो, इति लोगविजय णाम बीअ मज्झयणं सम्मत्तं.

* * *

भावार्थ

ऐसा बनने की इच्छावाले को चाहिये कि उन्होंने जो किया सो करना और मना किया सो नहीं करना ॥ १५ ॥ लोक संज्ञाको तथा हिंसा को क्षण २ में जान कर सर्व प्रकार से त्याग करे.॥१६॥ तत्वज्ञ पुरुषों को उपदेश की आवश्यकता नहीं है. क्योंकि वे सदैव न्यायपंथगामी है. ॥ १७ ॥ परंतु जो अज्ञानी जीव है, वे वारंवार रागोदय से काम भोगोंको अच्छा जानते हैं, इनसे अनुपशान्त दुःखसे दुःखी होकर शारीरिक मानसिक दुःख चक्र में परिभ्रमण करते हैं, एसा मैं कहता हूं ॥ १८ ॥ इति भाव लोक विषय कषायादिकको विजय करने कि रीति बताने वाला द्वितीय अध्ययन पूर्ण हुवा ॥ आगे शीतोष्णीय नामक तृतीय अध्ययन परिसह सहन करनेके लिये बताते हैं.

× ÷

॥ शीतोष्णीय नामकं तृतीयमध्ययनम् ॥

सु० सोते हुवे अ० अज्ञानी स० सदा, मु० साधु स० सदा जा० जागते हैं॥१॥ लो० लोक में जा० जानो अ० अहितके लिये दु० दुःख स० आचार लो० लोक का जा० जान कर ए० यहां स० शस्त्र से उ० निवर्ते ॥ २ ॥ ज० जिस के लिये स० शब्द रू० रूप ग० गन्ध र० रस फा० स्पर्श अ० सब संसार कारण रूप भ० होवे ॥ से आ० आत्मा णा० ज्ञान वे० वेद ध० धर्म जान बं० ब्रह्म प० प्रज्ञा से प० जानता है लो० लोक को मु० साधु ति० ऐसा व० कहना. ध० धर्म का जान अं० ऋजु आ० आवर्त, सो० सोत स० सङ्ग प०

सुत्ता अमुणी सया । मुणिणो सया जागरंति ॥ १ ॥ लोयंसि जाण अहियाय दुक्खं, समयं लोगस्स जाणित्ता एत्थ सत्थोवरए ॥ २ ॥ जस्सिमे सद्दा य, रूवा य, गंधा य, रसा य, फासा य, अभिसमन्नागया भवंति, से आयवं, णाणवं, वेयवं, धम्मवं, बंभवं, पण्णाणेहिं परियाणति लोयं, मुणीति वच्चे, धम्मविउत्ति अंजु आवट्टसोयसंग - मभिजा-

पापी और परमार्थ के अजान जागते हुवे भी सोते समान हैं, और धर्मार्थ उद्यमी बने हुए साधु परमार्थ दर्शी होने से सोते हुवे सदा जागते समान हैं, ॥ १ ॥ लोक में दुःख अहित कर्ता है. ऐसा तू जान. तथा लोकों का छकाय के जीवों का यथार्थ आचार है, उसे जान करके निवृत्ति धारण करो ॥ २ ॥ जो पुरुष शब्द, रूप, रस, गंध और स्पर्श इनकी सुंदरता विरूपता में समभाव धारन करते हैं; रागद्वेष नहीं करते हैं वे पुरुष आत्मा. ज्ञान. वेद. धर्म और ब्रह्मको जानते हैं; तथा ज्ञानबलसे लोककोभी जान सकते हैं, उन

जंग भी आ० जाता है. नि० शीत उ० उष्ण चा० त्यागी से० वे नि० निग्रन्थ अ० दुःख र० सुख म० नहीं प० दःख णो० नहीं वे० वेदे, जा० जागृत वे० वैरसे उ० निवर्ते धी० धीर ए० यों दु० दुःख से प० छूटते हैं ॥ ३ ॥ ज० वृद्धावस्था म० मृत्यु व० वशपडे ण० मनुष्य स० निरंतर मू० मूर्ख ध० धर्म णा० नहीं जाणे ॥ ४ ॥ पा० देखकर आ० आतुर पा० प्राणी को अ० अप्रमत्त प० प्रवर्ते मं० जानकर ए० ऐसा म० बुद्धिवन्त पा० देखे ॥ ५ ॥ आ० आरंभ से उत्पन्न हुआ दु० दुःख इ० यह ण० जानकर मा० मायावी

पमि मआरिणच्चाइ. से निग्गंथे अरतिरतिसहे, फरुसयं णो वेदेति. जागरे वेरो- वरए वीरे एव दुक्खा पमुच्चति ॥ ३ ॥ जरामच्चुवसोवणीए णरे सततं मूढे धम्मं णाभिजाणति ॥ ४ ॥ पासिय आउरिए पाणे अप्पमत्तो परिव्वए । मंता एयं मइमं पास ॥ ५ ॥ आरंभजं दुक्ख मिणंति णच्चा, मायी पमाई पुण-रेइ गब्भं, उवेहमाणे

मार करते हैं. ऐसे धीर मान स्वभावी साधु रागद्वेष और विषय कषायादि संसार चक्र का स्वरूप का जानते हैं सुखदुःख की जराभी दरकार नहीं करते हैं, संयमसे भानी हुए मुनिवरों की साथ ध्यान नहीं देते हैं. और वैर के साथ वैरविरोध की निवृत्ति करते हैं. वे सर्व पलेशसे मुक्त होते हैं. ॥ ३ ॥ वृद्धावस्था तथा मृत्यु के वशीभूत तथा निरंतर मूढ मनुष्य धर्म को नहीं जानते हैं ॥ ४ ॥ जगत जन्तुओं को दुःखी देखकर साधुओं को संयम में अप्रमत्त विचरना चाहिये. अहो बुद्धि- मान मुनि ऐसा जानकर कभी वैसा दुःखी होने की इच्छा करे नहीं. ॥ ५ ॥ जगत् में जीव अनेक प्रकार

... फिर प० भावे ग० गर्भ में उ० उपेक्षा करता म० शब्द रू० रूप में, भे० मरण
मा० मृत्यु से डरनेवाला प० मृत्यु से प० छूटता है ॥ ३ ॥ अ० अप्रमत्त का० काम से उ० अलगारहे
पा० पापकर्म से वी० वीर पुरुष आ० आत्मगुप्त जे० जो खे० खेदज्ञ ॥ ७ ॥ जे० जो प० पर्यवजात स० शस्त्र
के खे० निपुण से० व अ० असत्यके खे० निपुण जे० जो अ० असत्यके खे० निपुण से० वे प० पर्यवजात
स० शस्त्र के खे० निपुण ॥ ८ ॥ अ० निष्कर्मी को व० व्यवहार ण० नहीं वि० होता है, क० कर्म से उ०

सूत्र

सद्द रूवेसु अंजू, मारामिसंकी मरणा पमुच्चति ॥ ६ ॥ अप्पमत्तो कामेहिं उवरतो
पावकम्मेहिं वीरे आयगुत्ते जे खेयन्ने ॥ ७ ॥ जे पज्जवजातसत्थस्स खेयन्ने, से
असत्थस्स खेयन्ने, जे असत्थस्स खेयन्ने से पज्जवजात सत्थस्स खेयन्ने ॥ ८ ॥

भावार्थ

के दुःख भोगते हैं उस दुःखोत्पत्ति का मुख्य कारण आरंभ ही है. प्रमादी व मायावी प्राणी वारंवार गर्भ में आकर के मृत्यु वश पड़ता है. जो ज्ञानी महात्मा मृत्यु से डरते हैं, वे शब्दादि विषयों से दूर रहते हैं, और जो यथावस्थित सम्यक्त्व में वर्तते हैं, वे मृत्यु के दुःख से मुक्त होते हैं. ॥ ६ ॥ जो ज्ञानी दूसरे के दुःख को जानने वाले होते हैं, वे अप्रमादी आत्मगुप्त वीर पुरुष काम भोगसे तथा पाप कर्म से दूर रहते हैं, ॥ ७ ॥ जो शब्दादि विषय सेवने में प्राणी हिंसादि क्रिया को यथावस्थित जानता है, वह संयम का निपुण होता है और जो संयम का निपुण होता है, वह शब्दादि विषय को अनर्थकारी जानता है. ॥ ८ ॥

पदार्थ उपाधि जा० होती है ॥ ९ ॥ क० कर्म को प० देखकर क० कर्म मू० मूल जं० जो छ० प्राणी की घात प० देखकर स० सर्व स० ग्रहणकर दो० दोनों अ० अन्तरसे से आ० त्याग करना ॥ १० ॥ ते० उसे प० जानकर सा० मे० पण्डित वि० जानकर के लो० लोको वं० वमे लो० लोक संज्ञा से० वे म० बुद्धिवन्त प० पराक्रम करेंगे त्ति० ऐसा बे० मैं कहता हूं ॥ ११ ॥ + + +

सूत्र अकम्मस्स ववहारो ण विज्जति, कम्मणा उवाही जायति ॥ ९ ॥ कम्मं च पडिलेहाए कम्ममूलं च जं छणं, पडिलेहिय सव्वं समायाय दोहिं अंतेहिं आदिस्समाणे ॥ १० ॥ तं परिण्णाय मेहावी विदित्ता लोगं, वंता लोगसन्नं, से मइमं परक्कमिज्जासित्ति बेमि ॥ ११ ॥ इति सीतोस्सणीयाज्झयणस्स पढमोद्देसो सम्मत्तो. * *

भावार्थ निष्कर्मी को संसार नहीं है. क्योंकि संसार परिभ्रमण रूप उपाधि मात्र कर्मही है. ॥ ९ ॥ कर्म के स्वरूप को देखकर तथा हिंसा को कर्म का मूल हेतु जानकर उससे दूर रहना और कर्म सागनेका जो उपदेश है उसे ग्रहण करके राग और द्वेष इन दोनों का परिहार करना ॥ १० ॥ बुद्धिमान् साधु रागादि शत्रुओं को अहितकर्ता जानकर उनका त्याग करें. वैसेही लोको को रागादि शत्रु की पाश में फसे हुए देख करके आप लोक संज्ञासे दूर रहा हुआ संयम मे पराक्रम करता रहे ऐसा मैं कहता हूं. ॥ ११ ॥ पद

जा० जन्म च० और वु० वृद्धत्व च० और इ० इस संसार में अ० आर्य पा० देख, भू० जीव जा० जान प० देख करके सा० सुख त० इसलिये अति०तत्व प० परम ति०ऐसा ण०जाण करके स० सम्यग्दर्शी ण० नहीं क० करे पा० पाप कर्म उ० मुक्त हो पा० फास से इ० इस संसार में म० मनुष्य के साथ, आ० आ-रंभ से उपजीवी उ० दोनों को देखनेवाला का० कामभोग में गि० गृद्ध णि० संचय क० करते हैं. सं० संचय करनेवाले पु० पुनरपि ए० आता है ग० गर्भ में ॥ १ ॥ अ० सभावना सं० वे हा० हंसीम-

सूत्र

जातिं च वुड्ढिं च इहज्ज पास । भूतेहिं जाणे पडिलेह सातं ॥ तम्हा तिविज्जो पर-मंति णच्चा । संमत्तदंसी ण करेति पावं ॥ १ ॥ उम्मुंच पासं इह मच्चिएहिं । आरंभजीवी उभयाणुपस्सी ॥ कामेसु गिद्धा णिचयं करेंति । संसिच्चमाणा पुणरेंति

भावार्थ

शीतोष्णीय नामक तृतीय अध्ययन का प्रथमोदेश पूर्ण हुआ आगे पापके फल तथा हितोपदेश कहते हैं.

अहो मुनि तुम जन्म जरा के दुःख को देखो. जैसे तुमको सुख प्रिय है, वैसेही सब को सुख प्रिय है. ऐसा तत्त्वज्ञ बनकर मोक्षको जानता हुवा किसी भी प्रकार का पाप नहीं करना. साधुको गृहस्थ के साथ बहुत परिचय नहीं रखना, क्योंकि वे आरंभ से उपजीविका करनेवाले हैं. शारीरिक तथा मानसीक दुःख के देखने वाले है. जो कामभोगमें आसक्त कर्म का संचय करते हैं वे कर्म से भारी बन फीर गर्भ में आते है.

शब्दार्थ

उपाधि जा० होती है ॥ ९ ॥ क० कर्म को प० देखकर क० कर्म मू० मूल जं० जो छ० प्राणी की घात प० देखकर स० सर्व स० ग्रहणकर दो० दोनों अ० अन्तरसे से आ० त्याग करना ॥ १० ॥ ते० उसे प० जानकर सावे मे० पण्डित वि० जानकर के लो० लोकको वं० वमे लो० लोक संज्ञा से० वे म० बुद्धिवन्त प० पराक्रम करे त्ति० ऐसा बे० मैं कहता हूं ॥ ११ ॥ + + +

सूत्र

अकम्मस्स ववहारो ण विज्जति, कम्मणा उवाही जायति ॥ ९ ॥ कम्मं च पडिलेहाए कम्ममूलं च जं छणं, पडिलेहिय सव्वं समायाय दोहिं अंतेहिं अदिस्समाणे ॥ १० ॥ तं परिण्णाय मेहावी विदित्ता लोगं, वंता लोगसन्नं, से मइमं परक्कमिज्जासित्ति बेमि ॥ ११ ॥ इति सीतोस्सणीयाज्झयणस्स पढमोद्देसो सम्मत्तो. ● ●

भावार्थ

निष्कर्मी को संसार नहीं है क्योंकि संसार परिभ्रमण रूप उपाधि मात्र कर्मही है. ॥ ९ ॥ कर्म के स्वरूप को देखकर तथा हिंसा को कर्म [illegible] मूल हेतु जानकर उससे दूर रहना और कर्म त्यागनेका जो उपदेश है उसे [illegible] करके राग और द्वेष इन दोनों का परिहार करना ॥ १० ॥ बुद्धिमान् साधु रागादि शत्रुओं को अहितकर्ता जानकर उनका त्याग करे. वैसेही लोकों को रागादि शत्रु की पाश में फसे हुए देख करके भाव लोक संज्ञासे दूर रहा हुआ संयम मे पराक्रम करता रहे ऐसा मैं कहता हूं. ॥ ११ ॥ यह

जा० जन्म च० और वु० वृद्धत्व च० और इ० इस संसार में अ० आर्य पा० देख, भू० जीव जा० जान प० देख करके सा० सुख त० इसलिये अति० तत्वज्ञ प० परम ति० ऐसा ण० जाण करके स० सम्यग्दर्शी ण० नहीं क० करे पा० पाप कर्म उ० मुक्त हो पा० काल से इ० इस संसार में म० मनुष्य के साथ, आ० आरंभ से उपजीवी उ० दोनों को देखनेवाला का० कामभोग में गि० गृद्ध णि० संचय क० करते हैं. सं० संचय करनेवाले पु० पुनरपि ए० आता है ग० गर्भ में ॥ १ ॥ अ० संभावना स० ने हा० हंसीम-

सूत्र

जातिं च वुड्ढिं च इहज्ज पास । भूतेहिं जाणे पडिलेह सातं ॥ तम्हा तिविज्जो परमंति णच्चा । संमत्तदंसी ण करेति पावं ॥ १ ॥ उम्मुंच पासं इह मच्चिएहिं । आरंभजीवी उभयाणुपस्सी ॥ कामेसु गिद्धा णिचयं करेंति । संसिच्चमाणा पुणरेंति

भावार्थ

शीतोष्णीय नामक तृतीय अध्ययन का प्रथमोद्देश पूर्ण हुआ आगे पापके फल तथा हितोपदेश कहते हैं.

अहो मुनि तुम जन्म जरा के दुःख को देखो. जैसे तुमको सुख प्रिय है, वैसेही सब को सुख प्रिय है. ऐसा तत्वज्ञ बनकर मोक्षको जानता हुवा किसी भी प्रकार का पाप नहीं करना. साधुको गृहस्थ के साथ बहुत परिचय नहीं रखना, क्योंकि वे आरंभ से उपजीविका करनेवाले हैं. शारीरिक तथा मानसीक दुःख के देखने वाले है. जो कामभोगमें आसक्त कर्म का संचय करते हैं वे कर्म से भारी बन फीर गर्भ में आते है.

शब्दार्थ ...की से ह० मारे ण० क्रीडा करे म०माने अ० पूर्ण बा० अज्ञानी की स० संगति से वे० वैर व० वृद्धी करे, अ० अपनी आत्मा से ॥ २ ॥ त० इस लिये ति० ऐसा तत्वज्ञ प० परम उत्कृष्ट नि० ऐसा ण० जानकर अ० दुःखदर्शी न० नहीं क० करे पा० पाप अ० अग्र च० और मू० मूल वि० दूर करे च० निश्चय धी० धीर पुरुष प० इनें छि० छेदकर णं० अपनेको णि० निष्कर्मी देखनेवाले ॥ ३ ॥ ए० यह म० मरण से प० छूटता है. से० वे हु० निश्चय दि० देखे भ० डर मु० साधु लो० लोक के प० परम-

मूल ...गाभ ॥ २ ॥ १ ॥ अवि से हासमासज्ज, हंता णंदीति मन्नति; अलं बालस्स संगेणं, वेरंवड्डुति अप्पणो ॥ २ ॥ २ ॥ तम्हा तिविज्जं परमं – ति णच्चा । अयंकदंसी ण करेति पाव ॥ अग्गं च मूलं च विगिंच धीरे । पलिछिंदियाणं णिक्कम्मदंसी ॥४॥३॥ एस मरणा पमुच्चति - से हु दिट्ठी भए मुणी, लोकंसि परमदंसी, विवित्तजीवी

भावार्थ ॥ १॥ अज्ञानीजीव कामासक्त बन हास्य मस्करी के बश जीवों को मारने में क्रीडा मानते हैं. ऐसे अज्ञानी की संगति नहीं करना क्योंकि जैसी संगति वैसी असर होने से कुमार्ग में आत्मा भ्रमण करता हुवा दुःख के भोक्ता बनता है ॥ २ ॥ जो तत्ववेत्ता महामुनि हैं, वे मोक्षमार्ग को उत्कृष्ट जानकर नरक के दुःख को देखते हुवे पाप नहीं करतेहैं. इसलिये अहोधीरमुनि अग्र और मूल कर्मको दूर करो जिससे स्वतःको निष्कर्मी देखनेवाले होवोगे ॥ ३ ॥ उक्त गुण संपन्न मुनि संसारके दुःखों से डरता हुआ मोक्षमें रहे. मोक्षको देखते हुवे

सूत्र

[illegible] (अंत) [illegible] सत्य को ग्रहण करे, [illegible]

[illegible] ॥ ७ ॥ [illegible]

[illegible]

भावार्थ

[illegible] अहो भव्य! यदि तुम जानते हो कि हमने बहुत पाप किये हैं, तो [illegible] ऐसे पाप करने वाले [illegible] करते हैं. ॥ ८ ॥ जैसे कोई [illegible] कि जिस मन को [illegible] होता है, [illegible] करावे, [illegible] करावे, तथा [illegible] करावे

शब्दार्थ

अ॰ अनपद प॰ परिताप देनेकेलिये अ॰ अनपद प॰ परिग्रहण करने ॥६॥ आ॰ सेवन करके ए॰ इस अर्थ को इ॰ ऐसे ही कितनेक स॰ सावधान हुवे त॰ इस लिये तै उसे वि॰ दूसरा नो॰ नहीं से॰ सेवन करे णि॰ निःसार पा॰ देखकर णा॰ ज्ञानी ॥ ७ ॥ उ॰ उत्पात च॰ चवन ण॰ जानकर अ॰ संयम अंगीकार मु॰ मुनि से॰ वे ण॰ नहीं छ॰ मारे ण॰ नहीं छ॰ मरावे छ॰ मारते को नं॰ वे णा॰ अच्छा नहीं जान ॥ ८ ॥ ण॰ नहीं इ॰ जं॰ विषयानन्द अ॰ आसक्त प॰ स्त्रीओं में, अ॰ आज्ञादर्शी णि॰ निवर्तना पा॰ पाप क॰ कर्म से ॥ ९ ॥ को॰ क्रोध मा॰ मान ह॰ हने वी॰ वीर लो॰ लोभ की पा॰ फास

मूल

॥ ६ ॥ आसेवित्ता एतमट्ठं इच्चेवेगे समुट्ठिया तम्हा तं बिइयं नो सेवते णिसा-र पासिय णाणी ॥ ७ ॥ उववायं चवणं णच्चा अणण्णं चर माहणे,से ण छणे ण छणावए छणंतं णाणुजाणइ ॥ ८ ॥ णिब्विद णंदि अरते पयासु , अणोमदं सी णिसण्णो पावेहिं कम्मेहिं ॥ ९ ॥ कोहाइ माणं हणियाय वीरे । लोभस्स पा

भावार्थ

को नाश करते हैं. ॥ ६॥ कितनेक भरतेश्वरादि महान् पुरुषोंने ऐसे अनेक आरंभ करके भी छोड दिया है. अगले संयम ग्रहण करके उपशान्त बने हैं. वे ज्ञानी काम भोगोंको निःसार जानकर असंयम का सेवन नहीं करते हैं. ॥ ७ ॥ अहो मुने ! जन्म मरण सब को होता है. एसा जानकर संयम अंगीकार करना और किसी जीव की घात करना नहीं, कराना नहीं और घात करते हुवे को अच्छा जानना नहीं ॥ ८ ॥ स्त्रीयों में आसक्तता त्यागने केलिये भोग के दुःखोंको विचारना और ज्ञानादि उत्तम वस्तुको धारन कर पाप कर्म

...नरक के दुःख प० पडे हैं त० इस लिये वी० वीर नि० निवर्ते ग० ग्रंथ से छि० छेदे सो० शोक न० रहित होकर गा० जानाजावे ॥ १ ॥ गं० ग्रन्थ प० जानकर इ० यहां अ० आर्य वी० वीर सो० श्रोत प० जान कर च० विचरे द० दमना उ० ऊंचा आया न० पाया इ० यहां पा० मनुष्यपणो णो० नहीं पा० प्राणीयों के पा० प्राणों का सं० समारंभ करे इ० ऐसा बे० कहता हूं ॥ १० ॥

सूत्र से णिग्गंथे महंते ॥ तम्हा य वीरे विरते वहाओ । छिंदिज्ज सोयं लहुभूयगामी ॥ १ ॥ गंथं परिण्णाय इहज्ज वीरे सोयं परिण्णाय चरिज्ज दंते ॥ उम्मज्ज लद्धुं इह माणवेहिं । णो पाणिणं पाणे समारंभज्जासि—त्तिबेमि ॥ २ ॥ ॥ १० ॥ इति सीतोसणीयाज्झयणस्स—बीओ उद्देसो सम्मत्तो

भावार्थ से दूर रहना ॥ ९ ॥ पराक्रमी साधु क्रोध और क्रोध का कारण मान इन दोनों का क्षय करते हैं, तथा लोभ से नरकादि दुःख की प्राप्ति होती है ऐसा जानते हैं. इसलिये मोक्षार्थी मुनि को हिंसा तथा शोक संताप से दूर रहना उचित है. परिग्रह को आहित कर्ता जान तत्काल छोड देना ऐसेही विषय का मर्यादको आदि कर्ता जान इन्द्रियों को संयम में रखना. इस मनुष्य जन्म में संयमधर्म तक उन्नति को आत्मा प्राप्त हुवी है ऐसा जान किंचित मात्रभी हिंसा कदापि नहीं करनी ऐसा तीर्थंकर भगवान के कथनानुसार मैं कहता हूं ॥ १० ॥ यह शीतोष्णीय नामक तृतीय अध्ययन का द्वितीय उद्देशा पूर्ण हुवा आगे परीसहों को जान कर संयम पालनेवाले साधु कहाये जाते है सो बताते हैं.

शब्दार्थ

लिये, अ० अनपर प० परिताप देनेकेलिये अ० अनपर प० परिग्रहण करने ॥६॥ आ० सेवन करके प० इस भावे को इ० ऐसे ही कितनेक स० सावधान हुवे [illegible] लिये तै उने वि० दूसरा नो० नहीं से० सेवन करे णि० निःसार पा० देखकर णा० ज्ञानी ॥ ७ ॥ उ० उत्पात च० चवन ण० जानकर अ० संयम अंगीकार मु० मुनि मे वे ण० नहीं ए० मारे ण० नहीं ए० मरावे ए० मारने को नं० वे णा० अच्छा नहीं जान ॥ ८ ॥ ण० नहीं इच्छे ण० विषयानन्द अ० आसक्त प० स्त्रीयों में, अ० आज्ञादर्शी णि० निरतेना पा० पाप क० कर्म मे ॥ ९ ॥ को० क्रोध मा० मान ह० हणे वी० वीर लो० लोभ की पा० काम

मूल

॥ ६ ॥ आसेविता एतमट्ठ इच्चेवेगे समुट्ठिया तम्हा तं विइयं नो सेवते णिसा॰ र पासिय णाणी ॥ ७ ॥ उववायं चवणं णचा अणण्णं चर माहणे,से ण छणे ण छणावए छणत णाणुजाणइ ॥ ८ ॥ णिव्विद णंदि अरते पयासु, अणोमदंसी णिसणो पावेहिं कम्मेहिं ॥ ९ ॥ कोहाइ माणं हणियाय वीरे । लोभस्स पा

भावार्थ

को नष्ट करते है ॥ ६॥ कितनेक भरतेश्वरादि महान पुरुषोंने ऐसे अनेक आरंभ करके भी छोड दिया है. अपने संयम ग्रहण करके उपशान्त बने है. वे ज्ञानी काम भोगोंको निःसार जानकर असंयम का सेवन नहीं करते है ॥ ७ ॥ अहो मुनि ! जन्म मरण सब को होता है. एसा जानकर संयम अङ्गीकार करना और किसी जीव की घात करना नहीं, कराना नहीं और घात करते हुवे को अच्छा जानना नहीं ॥ ८ ॥ स्त्रीयों से आसक्तता त्यागने केलिये भोग के सुखोंको धिक्कारना और ज्ञानादि उत्तम वस्तुको धारन कर पाप कर्म

... से बढ़ है त० इस लिये वी० वीर वि० निवर्ते व० वध से छि० छेदे सो० शोक
ल० हल्का होकर गा० जानाजावे ॥ ९ ॥ गं० ग्रन्थ प० जानकर इ० यहां अ० आर्य वी० वीर सो० श्रोत
प० जान कर च० विचरे द० दमना उ० ऊंचा आया ल० पाया इ० यहां मा० मनुष्यपणो णो० नहीं पा०
प्राणीयों के पा० प्राणों का सं० समारंभ करे इ० ऐसा बे० कहता हूं ॥ १० ॥

मूत्र

से णिरयं महंतं ॥ तम्हा य वीरे विरते वहाओ । छिंदिज्ज सोयं लहुभूयगामी
॥ १ ॥ गंथं परिण्णाय इहज्ज वीरे सोयं परिण्णाय चरिज्ज दंते ॥ उम्मज्ज लद्धुं इह
माणवेहिं । णो पाणिणो पाण समारंभेज्जासि—त्तिबेमि ॥ २ ॥ ॥ १० ॥ इति सीतो-
सणियाऽज्झयणस्स—बीओ उद्देसो सम्मत्तो

* * *

भावार्थ

से दूर रहना ॥ ९ ॥ पराक्रमी साधु क्रोध और क्रोध का कारण मान इन दोनो का क्षय करते हैं, तथा
लोभ से नरकादि दुःख की प्राप्ति होती है ऐसा जानते हैं. इसलिये मोक्षार्थी मुनि को हिंसा तथा शोक
संताप से दूर रहना उचित है. परिग्रह को अहित कर्ता जान तत्काल छोड देना ऐसेही विषय का मवाहको
अहित कर्ता जान इन्द्रियों को संयम में रखना. इस मनुष्य जन्म में संयमधर्म तक उन्नति को आत्मा आप
हुवी है. ऐसा जान किंचित मात्रभी हिंसा कदापि नहीं करनी ऐसा तीर्थंकर भगवान के कथनानुसार मैं
कहता हूं ॥ १० ॥ यह शीतोष्णीय नामक तृतीय अध्ययन का द्वितीय उद्देशा पूर्ण हुवा आगे परीसहों को
सहन कर संयम पालनेवाले साधु कहाये जाते है सो बताते हैं.

÷ ÷

शब्दार्थ

स० अवसर लो० लोक का जा० जाणकरके अ० आत्मवत् ब० दूसरे को पा० देख त० इस लिये ण० मत मारो ण० मत मरावो ॥ १ ॥ ज० जो यह अ० अन्योन्य वि० शरमसे प० देखकर ण० न करे पा० पापकर्म किं० क्या त० तहां मु० साधुपना का० कारण, सि० होवे स० समभाव त० तहां उ० उपेक्षा में अ० अपनीआत्मा वि० प्रशान्त करना ॥ २ ॥ अ० अन्योन्य प० संयम में ना० ज्ञानी णो० नहीं प० प्रमाद क० कदापि आ० आत्मगुप्त स० सदा धैर्यवंत जा० यत्नासे मा० मान से जा० निभावे ॥ ३ ॥

सूत्र

संधिं लोगस्स जाणित्ता, आयओ बहिया पास तम्हा ण हंता ण विघायये ॥ १ ॥
जमिणं अन्नमन्नवितिगिंच्छाए पडिलेहाए ण करेइ पावकम्मं किं तत्थ मुणि-
कारणं सिया समयं तत्थ उवेहाए अप्पाणं विप्पसायए ॥ २ ॥ अणण्ण परमं ना-
णी णो पमादे कयाइवी, आयगुत्ते सया धीरे, जायमायाइ जावए ॥ ३ ॥ २ ॥

भावार्थ

अहो मुनि संसार में मुक्त होने का अवसर (संधि) प्राप्त होगया है. अब प्रमाद नहीं करना. और जैसे अपनी आत्माको देखता है वैसेही प्राणियों को देख कीसी को मारना नही और दूसरे पास मरानाभी नहीं ॥ १ ॥ निश्चयनयवादीका मत यह है, कि एक दूसरे के देखादेख पाप का त्याग करने से क्या साधुपना कारणभूत होता है अपितु नहीं किन्तु " समय समणा होइ " अर्थात् समता भाव पाने शान्त स्वभाव में रमण करने सेही साधु होते हैं ॥ २ ॥ ज्ञानी मुनियों को संयम में कदापि प्रमाद न करना अपि-तु सदैव आत्मा को वश कर धैर्यता धारण करना और संयम में यत्नावंत होकर शरीर को निभाना ॥ ३ ॥

सूत्र

[illegible]

भावार्थ

[illegible]

शब्दार्थ

स० अवसर लो० लोक का जा० जाणकरके अ० आत्मार्थ ब० दूसरे को पा० देख न० इस लिये न मारे ण० मत मारो ॥ १ ॥ ज० जो [redacted] अ० अन्योन्य वि० सामने प० देखकर ण० न करे पा० पापकर्म कि० क्या त० वहां मु० साधुपना का का० कारण, नि० होवे स० समभाव त० वहां उ० उपेक्षा न अ० अपनीआत्मा वि० प्रशान्त करना ॥ २ ॥ अ० अन्योन्य प० संयम में ना० ज्ञानी णो० नहीं प० प्रमाद क० कदापि आ० आत्मगुप्त स० सदा धैर्यवंत जा० यत्नामे मा० मान मे जा० निभावे ॥ ३ ॥

मूल

समयं लोगस्स जाणित्ता, आयओ बहिया पास तम्हा ण हंता ण विघायये ॥ १ ॥ जमिण अन्नमन्नवितिगिच्छाए पडिलेहाए ण करेइ पावकम्मं किं तत्थ मुणिकारण सिया समयं तत्थ उवेहाए अप्पाणं विप्पसायए ॥ २ ॥ अणण्ण परमं नाणी णो पमाए कयाइवी, आयगुत्ते सया धीरे, जायमायाइ जावए ॥ १ ॥ ३ ॥

भावार्थ

यहां मुनि ममार मे मुक्त होने का अवसर (संधि) प्राप्त होगया है. अब प्रमाद नहीं करना. और जैसे अपनी आत्माको देखता है वैसेही सब प्राणियों को देख कीसी को मारना नहीं और दूसरे पास मरानाभी नहीं ॥ १ ॥ निश्चयनयवादीका मत यह है, कि एक दूसरे के देखादेख पाप का त्याग करने मे क्या साधुपना कारणभूत होता है अपितु नहीं किन्तु " समय समता होइ „ अर्थात् समता भाव वाले शान्त स्वभाव मे रमण करने सेही साधु होते हैं ॥ २ ॥ ज्ञानी मुनियों को संयम में कदापि प्रमाद न करना अपितु सदैव आत्मा को वश कर धैर्यता धारण करना और संयम मे यत्नावंत होकर शरीर को निभाना ॥ ३ ॥

क्यों य० बाहिर का मि० मित्र इ० चहाता है? ॥ ९ ॥ जं० जिस को जा० जानेगा उ० कर्म के नाश करनेवाला तं० उस को जा० जानेगा दू० मोक्ष जानेवाला जं० जिस को जा० जानेगा दू० मोक्ष जानेवाला तं० उस को जा० जानेगा उ० कर्म के नाश करनेवाला ॥ १० ॥ पु० पुरुष अ० आत्माको ही अ० शुद्ध न करता ए० ऐसे दु० दुःख से प० छूटेगा ॥ ११ ॥ पु० पुरुष स० सत्य को ही स० जान स० सत्य की आज्ञा में उ० वर्तक मे० वे मे० पण्डित मा० मृत्यु से तिरते हैं, स० युक्त ध० धर्म मा० ग्रहणकर से० श्रेय

सूत्र

मेव तुमं मित्तं, किं बहिया मित्त मिच्छसि ॥ ९ ॥ जं जाणेज्जा उच्चालइयं तं जाणेज्जा दूरालइयं, जं जाणेज्जा दूरालइयं, तं जाणेज्जा उच्चालइयं ॥ १० ॥ पुरिसा अत्ताण मेव अभिणिगिज्झ एवं दुक्खा पमोक्खसि ॥ ११ ॥ पुरिसा सच्चमेव समभिजाणाहि सच्चस्साणाए से उवट्ठिए से मेहावी मारं तरति सहितो धम्म मादाय

भावार्थ

करने वाला जानेगा; उसी आत्मा को मोक्ष प्राप्त करने वाला जानेगा और जिसको मोक्ष प्राप्त करने वाला जानेगा उसीको कर्म क्षय करने वाला जानेगा ॥ १० ॥ अहो पुरुष ! तू तेरी आत्मा को विषय से शुद्ध मन करना इससे शीघ्रही दुःख से मुक्त होजायगा ॥ ११ ॥ अहो पुरुष तू सत्यकारी सेवनकर क्योंकी सत्य त्याग मार्ग में चलनेवाले ही तत्त्व ...

[सकते हैं और धर्म को ग्रहण कर कल्याण को प्राप्तकर

शब्दार्थ कितनेक इ० यहां मा० मनुष्यों ज० जो इते होगया तं० वह आ० होवेगा ॥ ६ ॥ णा० नहीं अती अ० अर्थ ण० नहीं आगामीक अ० अर्थ, नि० निर्णय करे त० यथातथ्य जाननेवाले; वि० निवर्ते क० कल्पमे, ए० इने देखनेवाला, णि० जलानेवाला स० क्षय करे म० महा ऋषि ॥ ७ ॥ का० क्या अ० अराते के० कैसा आ० आनन्द ए० इसमें अ० गृद्धता रहित च० विचरे स० सर्व हा० हास्य को प० छोडे, आ० अलिप्त गु० गुप्तेन्द्रियपने प० प्रवर्तें ॥ ८ ॥ पु० पुरुष तु० तुंही तु० तेरा मि० मित्र है, कि०

सूत्र

नीतिमट्ठं णय आगमेस्सं । अट्ठं निअच्छंति तहा गताओ ॥ विधूतकप्पे एताणुपस्सी । णिज्झोसइत्ता खवए महेसी ॥ २ ॥ ॥ ७ ॥ का अरति ! के आणंदे ! एत्थंपि अग्गहे चरे, सव्वं हासं परिच्चज्ज आलीणगुत्तो परिव्वए ॥ ८ ॥ पुरिसा, तुम

भावार्थ

है, वे एमा नहीं कहते है वे एमा कहते हैं; कि जैसे २ कर्म होते हैं, वैसे २ स्थान में उत्पन्न हो आत्मा दुःख भोगता है इसलिये कल्पातीत, (केवल ज्ञानी) एतदनुदर्शी, तथा कर्मों को नाश करनेवाले महर्षि कर्म क्षय करते हैं. ॥ ७ ॥ योगियों के मन में क्या तो खुशी और क्या उदासी होती है. कदाचित् खुशी और उदासी आजावे तो वे उसमें तल्लीन पणा धारण नहीं करते हैं. और सर्व हास्यादि कुतूहल को छोडकर काचबे की तरह मन, वचन, और काया इन तीनों योगों को संयम में रखते हुवे विचरते हैं. ॥ ८ ॥ अहो पुरुष ! तूही तेरा मित्र है. अन्य बाह्य मित्र की क्यों इच्छा करता है. ॥ ९ ॥ जिस आत्मा ...

क्यों व० बाहिर का मि० मित्र इ० चाहता है? ॥ ९ ॥ जं० जिस को जा० जानेगा उ० कर्म के नाश करनेवाला तं० उस को जा० जानेगा दू० मोक्ष जानेवाला जं० जिस को जा० जानेगा दू० मोक्ष जानेवाला तं० उस को जा० जानेगा उ० कर्म के नाश करनेवाला ॥ १० ॥ पु० पुरुष अ० आत्माको ही अ० वश कर ए० ऐसा दु० दुःख से प० छूटेगा ॥ ११ ॥ पु० पुरुष स० सत्य को ही स० जान स० सत्य की आज्ञा में उ० उद्यत से० वो मे० पंडित मा० मृत्यु से तिरते हैं. स० युक्त ध० धर्म मा० ग्रहणकर से० श्रेय

सूत्र

मेव तुमं मित्तं. किं बहिया मित्त मिच्छसि ॥ ९ ॥ जं जाणेज्जा उच्चालइयं तं जाणेज्जा दूरालइयं, जं जाणेज्जा दूरालइयं, तं जाणेज्जा उच्चालइयं ॥ १० ॥ पुरिसा अत्ताण मेव अभिणिगिज्झ एवं दुक्खा पमोक्खसि ॥ ११ ॥ पुरिसा सच्चमेव समभिजाणाहि सच्चस्साणाए से उवट्ठिए से मेहावी मारं तरति सहिते धम्म मादाय

भावार्थ

करनेवाला जानेगा उसी आत्मा को मोक्ष प्राप्त करने वाला जानेगा और जिसको मोक्ष प्राप्त करने वाला जानेगा उसीको कर्म नाश करने वाला जानेगा ॥ १० ॥ अहो पुरुष! तू तेरी आत्मा को विषय में युक्त मत बना इसीसे शीघ्र ही दुःख से मुक्त होजायगा ॥ ११ ॥ अहो पुरुष तू सत्यवादी होकर क्योंकी सत्य ज्ञान मार्गमें चलनेवाले ही जन्म मृत्यु संसार से तीर सकते हैं और धर्म को ग्रहण कर कल्याण को प्राप्तकर

कितनेक इ० यहां मा० मनुष्यों ज० जो इसे होगया तं० वह आ० होवेगा ॥ ६ ॥ णा० नहीं अती अ० अर्थ ण० नहीं आगामीक अ० अर्थ, नि० निर्णय करे त० यथातथ्य जाननेवाले; वि० निवर्ते क० कल्पसे. ए० इसे देखनेवाला, जि० जलानेवाला ख० क्षय करे म० महा ऋषि ॥ ७ ॥ का० क्या अ० अरति के० कैसा आ० आनन्द ए० इसमें अ० गृद्धता रहित च० विचरे स० सर्व हा० हास्य को प० छोड़. आ० अलिप्त गु० गुप्तेन्द्रियपने प० प्रवर्ते ॥ ८ ॥ पु० पुरुष तु० तूंही तु० तेरा मि० मित्र है, किं०

सूत्र

नीतमहं णय आगमेस्सं । अट्ठं निअच्छंति तहा गताओ ॥ विधूतकप्पे एताणुपस्सी । णिज्झोसइत्ता खवए महेसी ॥ २ ॥ ॥ ७ ॥ का अरति ! के आणंदे ! एत्थंपि अग्गहे चरे, सव्वं हासं परिच्चज्ज आलीणगुत्तो परिव्वए ॥ ८ ॥ पुरिसा, तुम

भावार्थ

है. वे ऐसा नहीं कहते हैं वे ऐसा कहते हैं; कि जैसे २ कर्म होते हैं, वैसे २ स्थान में उत्पन्न हो आत्मा सुख दुःख भोगता है इसलिये कल्पातीत. (केवल ज्ञानी) एतदनुदर्शी, तथा कर्मों को नाश करनेवाले महर्षि कर्म क्षय करते हैं. ॥ ७ ॥ योगियों के मन में क्या तो खुशी और क्या उदासी होती है. कदाचित् खुशी और उदासी आजावे तो वे उसमें तल्लीन पणा धारण नहीं करते हैं. और सर्व हास्यादि कुतूहल को छोडकर कछवे की तरह मन, वचन, और काया इन तीनों योगों को संयम में रखते हुवे विचरते हैं. ॥ ८ ॥ अहो पुरुष ! तूही तेरा मित्र है. अन्य बाह्य मित्र की क्यों इच्छा करता है. ॥ ९ ॥ जिन आत्मा को कर्म दुख

...अवलोकन क० देखनेवाले का० क्रोध को मा० मान को मा० माया को लो० लोभ को प० यह पा०
पं० पन है. उ० निवर्ते है स० शस्त्र से जो प० संसारके अंत करनेवाले आ० आश्रव स० दूर करे
॥ १ ॥ जे० जो ए० एक को जा० जानता है से० वह स० सर्व जा० जानता है जे० जो स० सर्व जा०
जानता है से० वह ए० एक जा० जानता है. ॥ २ ॥ स० सर्व से प० प्रमादीको भ० डर है स० सर्व से
अ० अप्रमादी को ण० नहीं है ॥ ३ ॥ जे० जो ए० एक णा० नमावे से० वे ब० बहुत णा० नमावे जे०

सूत्र

से वंता कोहं च, माणं च, मायं च, लोभंच, एयं पासगस्स दंसणं उवरयसत्थस्स पलियंतकरस्स आयाणं सगडब्भि ॥ १ ॥ जे एगं जाणइ से सव्वं जाणइ । जे सव्वं जाणइ से एगं जाणइ ॥ २ ॥ सव्वतो पमत्तस्स भयं, सव्वतो अप्पमत्तस्स णत्थि भयं ॥ ३ ॥ जे एगं णामे से बहुणामे, जे बहुणामे से एगं

भावार्थ

जो पूर्व बांधे किये हुवे कर्मों को दूर करके यथोक्त रीतिसे संयम पालेगा वह क्रोध, मान, माया, लोभ, को दूर करे ऐसा परमदर्शी, शस्त्ररहित, संसारांतकर्ता भगवान श्री तीर्थंकरका दर्शन है. ॥ १ ॥ जो एक परमाणु आदि सूक्ष्म वस्तु को जानता है वह सर्व पदार्थों को जानता है. और जो संसार के वर्तमान सर्व पदार्थ को जानता है, वह एक घटिकादि वस्तु जानता है. ॥ २ ॥ प्रमादी जीवों को सर्व स्थान में भय है और अप्रमादी को किसी का भय नहीं है. ॥ ३ ॥ जो एक मोहनीय कर्म को नमाता है,

शब्दार्थ

स० सम्यक प्रकारसे देखता है ॥ १२ ॥ दु० दोनों से मरायाहुवा जी० जीवितव्य के लिये प० वंदना मा० सत्कार पू० पूजा जं० जिन मे ए० कितनेक प० प्रमोद पाते हैं ॥ १३ ॥ स० ज्ञानादि सहित दु० दुःख पु० स्पर्शे णो० नहीं झ० व्याकुल होना पा० देखे द० मुक्ति लो० लोक आ० आलोच कर प० प्रपंचसे मु० छूटे ति० ऐसा बे० कहता हूं ॥ १४ ॥

÷ ÷ +

मूल

... यं समणुपस्सति ॥ १२ ॥ दुहओ जीवियस्स परिवंदण माणण पूयणाए, जंसि ... गे पमोयंति ॥ १३ ॥ सहिए दुक्ख मत्ताए पुट्ठो णो झंझाए पासिमं दविए लोयालोयपवंचाओ मुच्चति त्तिबेमि ॥ १४ ॥ इति सीतोसणीया ज्झयणस्स—तइओ उद्देसो सम्मत्तो।

* * *

भावार्थ

सकते हैं ॥ १२ ॥ रागद्वेषादि से कलुषित हृदय जिनका होरहा है ऐसे कितनेक कीर्ति, मान, पूजा के लिये हिंसा करनेमें प्रमोद पाते हैं ॥ १३ ॥ संयम पालते कदाचित् दुःखभी आजावे तो व्याकुल होना नहीं. किसी प्रकार के प्रपंच में पड़ना नहीं; परंतु ऐसा विचारना कि दुःख ही कर्मों का निकन्दन करने का कारण है. ऐसे विचार से जो संयमी प्रवर्तते हैं; वेही सर्व लोक के प्रपंचों से छूटकर मुक्ति पाते हैं. ऐसा मैं तीर्थंकर के कथनानुसार कहता हूं ॥ १४ ॥ यह शीतोष्णीय नामक तृतीय अध्ययन का तृतीय उद्देशा पूर्ण हुआ आगे कषायत्याग का उपदेश देते हैं.

× + ×

...यह मान करनेवाले को० क्रोध को मा० मान को मा० माया को लो० लोभ को प० यह पा० सम्यक्त्वीका दं० दर्शन है. उ० निवर्ते हैं स० शस्त्र से जो प० संसारके अंत करनेवाले आ० आश्रव स० दूर करे ॥ १ ॥ जे० जो ए० एक को जा० जानता है से० वह स० सर्व जा० जानता है से० जो स० सर्व जा० जानता है से० वह ए० एक जा० जानता है. ॥ २ ॥ स० सर्व से प० प्रमादीको भ० डर है स० सर्व से अ० अप्रमादी को नहीं भय है ॥ ३ ॥ जे० जो ए० एक णा० नमावे से० वे ब० बहुत णा० नमावे जे०

सूत्र से वंता कोहं च, माणं च, मायं च, लोभंच, एयं पासगस्स दंसणं उवरयसत्थस्स पलियंतकरस्स आयाणं सगडब्भि ॥ १ ॥ जे एगं जाणइ से सव्वं जाणइ । जे सव्वं जाणइ से एगं जाणइ ॥ २ ॥ सव्वतो पमत्तस्स भयं , सव्वतो अप्पमत्तस्स णत्थि भयं ॥ ३ ॥ जे एगं णामे से बहुणामे, जे बहुणामे से एगं

भावार्थ जो पूर्व बांधे हुवे कर्मों को दूर करके यथोक्त रीतिसे संयम पालेगा वह क्रोध, मान, माया, लोभ, त्यागता हुवा रोगता पाता नहीं. सत्यवादी, संसारांतकर्ता भगवान श्री वीरप्रभुका दर्शन है. ॥ १ ॥ जो एक ज्ञानादि और सूक्ष्म वस्तु को जानता है वह सर्व पदार्थों को जानता है. और जो संसार के सर्व पदार्थों को जानता है, वह एक पदार्थको वस्तु जानता है. ॥ २ ॥ प्रमादी जीवों को सब तरफ से भय है और अप्रमादी को किसी का भय नहीं है. ॥ ३ ॥ जो एक मोहनीय कर्म को नमाता है,

मूल

णामे ॥ ४ ॥ दुक्खं लोगस्स जाणित्ता, वंता लोगस्स संजोगं, जंति वीरा महाजाणं, परेण परं जंति णावकंखंति जीवियं ॥ ५ ॥ एगं विगिंचमाणे पुढो विगिंचइ, पुढो विगिंचमाणे एगं विगिंचइ ॥ ६ ॥ सड्ढी आणाए मेहावी । लोगंच आणाए अभिसमेच्चा अकुतो भयं ॥ ७ ॥ अत्थि सत्थं परेण परं । णत्थि असत्थं प-

शब्दार्थ

ओ ब० बहुत णा० नमावे ने० वे ए० एक नमावे ॥ ४ ॥ दु० दुःख लो० लोक का जा० जानके व० वमन करके लो० लोक का सं० संजोग जे० जो वी० वीर म० मोक्ष में प० परंपरा से (अनुक्रम) जा० जावे णा० नहीं कं० वांच्छे जी० जीवितव्य ॥ ५ ॥ ए० एक को वि० खपानेवाला पु० अलग २ वि० खपाता है, पु० अलग २ वि० खपानेवाला ए० एक को वि० खपाता है ॥ ६ ॥ स० श्रद्धावंत आ० आज्ञानुसारी मे० पण्डित, लो० लोक को आ० आज्ञा से आ० जाणकर अ० न करे भ० भय ॥ ७ ॥

भावार्थ

वह बहुत को नमाता है और जो बहुत को नमाता है, [illegible] एक को नमाता है. ॥ ४ ॥ पराक्रमी शूरवीर पुरुष लोक (नरकादि) के दुःखों को जानकर मात कुटुम्बादि संग के त्यागी [illegible] संयम ग्रहण करते हैं और परंपरा से मोक्षको भी प्राप्त करते हैं वे कदापि असंयम जीवितव्य की वांच्छा करे नहीं ॥ ५ ॥ जो एक अनंतानुबंधी क्रोध का क्षय करता है. वह दर्शन मोहनीयादि कर्मों का क्षय करता है. और जो दर्शन मोहनीयादि कर्मोंका क्षय करता है [illegible] अनंतानुबंधी क्रोधादिक [illegible] क्षय करता है, ॥ ६ ॥ जो मेधावी तीर्थंकर की आज्ञामें श्रद्धावान हैं, वे तीर्थंकर की आज्ञा में ही लोक का स्वरूप जानते हैं. और जीवों को भय नहीं उपजाते हैं ॥ ७ ॥ जैसे द्रव्य

अ० है स० शस्त्र प० विविध प्रकारके ण० नहीं है अ० अशस्त्र प० विविध प्रकारके ॥ ८॥ जे० जो को० क्रोधदर्शी; से० वे मा० मानदर्शी, जे० जो मा० मानदर्शी से० वे मा० माया दर्शी, जे० जो मा० मायादर्शी से० वे लो० लोभदर्शी, जे० जो लो० लोभदर्शी, से० वे पे० रागदर्शी जे० जो पे० रागदर्शी से० वे दो० द्वेषदर्शी, जे० जो दो० द्वेषदर्शी से० वे मो० मोहदर्शी, जे० जो मो० मोहदर्शी से० वे ग० गर्भदर्शी, जे० जो ग० गर्भदर्शी से० वे ज० जन्मदर्शी, जे० जो ज० जन्मदर्शी से० वे म० मृत्युदर्शी, जे० जो मा० मृत्युदर्शी से० वे णि० नरकदर्शी, जे० जो णि० नरकदर्शी से० वे ति० तिर्यचदर्शी जे० जो

सूत्र

रेण परं ॥ ८ ॥ जे कोहदंसी से माणदंसी, जे माणदंसी से मायदंसी, जे मायदंसी से लोहदंसी, जे लोहदंसी से पेज्जदंसी, जे पेज्जदंसी से दोसदंसी, जे दोसदंसी से मोहदंसी, जे मोहदंसी से गब्भदंसी, जे गब्भदंसी से जम्मदंसी, जे जम्मदंसी से मारदंसी, जे मारदंसी से णिरयदंसी,

भावार्थ

से पंचादिके शस्त्र तरह २ के होते हैं, वैसेही असंयम शस्त्र भी विविध प्रकार के होते हैं. परंतु अशस्त्र जो संयम वह तो सदैव एकही रूप रहता है. ॥ ८ ॥ जो क्रोध को छोडेंगे वे मान को छोडेंगे, जो मान छोडेंगे वे माया को छोडेंगे, जो माया को छोडेंगे वे लोभ को छोडेंगे, यों क्रमशः राग द्वेष, मोह, गर्भ, जन्म, मरण,

शब्दार्थ [illegible] दुःखदर्शी ॥ ९ ॥ मे० वे मे० पण्डित अ० निर्वर्ते को० क्रोध से, मा० मान से, मा० माया से, लो० लोभ से, पे० राग से, दो० द्वेष से, मो० मोह से, ग० गर्भ से, ज० जन्म से म० मरण से, न० नरक से, ति० तिर्यंच से, और दु० दुःख से, ए० यह पा० पश्यक का द० मत उ० निवर्त्तने वाले म० शस्त्र के प० अन्तकरनेवाले ॥ १० ॥ आ० आदान णि० निषेध स० कर्मों को भेद-

मूल जे पिज्जदंसी से दिज्जदंसी, जे निरियदंसी से दुक्खदंसी ॥ ९ ॥ से मेहावी अभिणिवट्टेज्जा-कोहंच, माणंच, मायंच, लोहंच, पेज्जंच, दोसंच, मोहंच, गब्भंच, जम्मंच, मरणंच, णरगंच, तिरियंच, दुक्खंच, एय पासगस्स दंसणं उवरयसत्थस्स पलियंतकरस्स ॥ १० ॥ आयाणं णिसिद्धा सगडब्भि। किमत्थि उवाधि पासग-

भावार्थ नरक, तिर्यंच और दुःखों का त्याग करेंगे ॥ ९ ॥ उक्त युक्ति से पंडित क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, मोह, गर्भ, जन्म, मरण, नरक तथा तीर्यंचके दुःखों से अपनी आत्मा को बचावे यही मत शस्त्र त्यागी, संसार के अंत कर्ता श्री वीरप्रभु का है. ॥ १० ॥ आते हुए कर्मों को संवर से रोक करके पूर्व को कर्मों को खपावे. ऐसे कर्म क्षय कर जो केवल ज्ञानी हुए है, उनको अब कोनसी उपाधि है. अपितु कुछभी उपाधि नहीं है. ऐसा तीर्थंकर भगवान के कथनानुसार मैं कहता हूं यह शीतोष्णीय नामक तृतीय अध्ययन

[illegible] कस्सइ कोई पा० नहीं है पा० नहीं है त्ति ऐसा कहता हूं ॥१३॥ [illegible] नामक त० तीसरा अ० अध्ययन स० समाप्त.

[illegible] णत्थि त्तिबेमि ॥ १३ ॥ इति सीतोसणीय ज्झयणस्स चउत्थो उद्देसो [illegible] सीतोसणीया णाम चउत्थ मज्झयणं सम्मत्तं

[illegible] कहा यह सम्यक्त्व से होता है. इसलिये आगे सम्यक्त्व का [illegible] अध्ययन कहते हैं.

अथ सम्यक्त्वनामकं चतुर्थमध्ययनम्.

शब्दार्थ से० अब बे० कहता हूं जे० जो अ० भूतकाल के, जे० जो प० प्रत्युत्पन्नकाल के, जे० जो आ० भविष्य कालके अ० अर्हत भ० भगवन्त ते० वे स० सर्व ए० ऐसा आ० फरमाते हैं, ए० एसा भा० बोलते हैं, ए० ऐसा प० प्रतिपादन करते हैं ए० एसा प० प्ररूपते हैं स० सर्व पा० प्राणी स० सर्व भू० भूत स० सर्व जी० जीव स० सर्व स० सत्व ण० नहीं ह० मारना ण०नहीं अ० ताडना ण०नहीं प० घात करना ण०

सूत्र से बेमि--जय अतीता, जेय पडुप्पन्ना, जेय आगमिस्सा, अरहंता भगवंतो, ते सव्वेवि एव--माइक्खंति, एवं भासंति, एवं पण्णवंति, एवं परूवेंति--सव्वे पाणा, सव्वे भूया, सव्वे जीवा, सव्वे सत्ता, ण हंतव्वा, ण अज्जावेयव्वा, ण परिघेतव्वा, ण परि-

भावार्थ अहो शिष्य मैं कहता हूं कि गतकालमें जो अनंत तीर्थंकर हुवे हैं, वर्तमानकालमें बीस विहरमान तीर्थंकर हैं, और आगामी काल में अनंत तीर्थंकर होवेंगे वे सब अरिहंत भगवान ऐसा कहते हैं, ऐसा बोलते हैं, ऐसा बताते हैं, और ऐसा प्ररूपते हैं; कि बेइन्द्रियादि सर्व प्राणी, वनस्पत्यादि सर्व

…मा प० नहीं कि० किलामना देना ण० नहीं उ० उद्वेग उपजाना ए० यह थ० धर्म सु० शुद्ध णि० नित्य सा० शाश्वत म० लोक के दुःख को देख करके खे० खेदज्ञने प० फरमाया है तं० वह जे० यथा—उ० सावधान को अ० असावधान को, उ० दण्ड से निवर्ते को, अ० दण्ड से नहीं निवर्ते को, सो० सोपाधि को अ० निरुपाधी को, सं० संजोगी को, अ० असंजोगी को त० तथ्य इ० यह त० तैसा अ०

सूत्र नावेयव्वा, ण किलामेयव्वा, ण उद्दवेयव्वा. एस धम्मे सुद्धे, णितिए, सासए, समेच लोगं खेयन्नेहिं पवेतिते—तंजहा उट्ठिएसुवा, अणुट्ठियसुवा, उवरयदंडेसुवा, अणुवरयदंडेसुवा, सोवहिएसुवा, अणोवहिएसुवा, संजोगेसुवा, असंजोगेसुवा, तच्चं चेयं तहाचेयं, अस्सिं चेयं पवुच्चइ ॥ ३ ॥ तं आइतु ण णिहे ण णिक्खिवए जाणितु धम्मं

भावार्थ दि स० जीव तथा पृथिव्यादि सर्व सत्व को मारना नहीं, ताड़ना नहीं, घात करना नहीं, परीताप उपजाना नहीं, किलामना देनी नहीं, तथा शरीर से प्राणों का व्यवच्छेद करना नहीं. यही धर्म शुद्ध है, सनातन है, शाश्वत है. ऐसा श्री सर्वलोक के जीवों के दुःख को जानने वाले श्री सर्वज्ञ महावीरप्रभु का फरमान है. यह कथन किसके लिये किया है, सो बताते हैं. जो धर्मकार्य कोलिये सावधान हुवे हैं, या अभी भी प्रमादी रहे हैं, जो सावधान होकर के पापके त्यागी बने हैं, या अभी त्याग नहीं किया, जो बाह्याभ्यन्तर सर्व उपाधि रहित हुवे हैं. या उपाधि सहित हैं, जो त्यागी हुवे, या न हुवे, इत्यादि सब प्राणियों के लिये उपर्युक्त

शब्दार्थ इस में ही चे० निश्चय प० कहागया है ॥ १ ॥ तं० उसे आ० आदरकर ण० नहीं णि० छिपावे ण० नहीं णि० छोडे जा० जानकर ध० धर्म ज० यथातथ्य ॥ २ ॥ दे० देख के णि० वैराग में ग० चले णो० नहीं लो० लोकानुगत च० चले; ज० जिस को ण० नहीं इ० यह णा० ज्ञाति अ० अन्य त० उस को क० कहां से होवे ॥ ३ ॥ दि० देखा सु० सुना म० माना, वि० जाणा जं० जो ए० यह प० कही ॥ ४ ॥ स० गृद्ध होना प० लेपाना पु० वारम्वार जा० जाति में प० परिभ्रमण करे ॥ ५ ॥ अ० दिन को रा०

सूत्र जहातहा ॥ २ ॥ दिट्ठेहिं णिव्वेयं गच्छेज्जा णो लोगस्सेसणं चरे ॥ जस्स णत्थि- इमा णाति । अन्ना तस्स कओसिया ॥ १ ॥ ३ ॥ दिट्ठं, सुयं, मयं, विन्नायं, जमेयं परिकहिज्जइ ॥ ४ ॥ सममाणा पलेमाणा पुणो पुणो जातिं पकप्पंति ॥ ५ ॥ अहो

भावार्थ धर्म यथातथ्य है तथा प्रकार यह है, और इसजिनप्रवचन में यही धर्म कहा हुआ है. ॥ १ ॥ ऐसा परम पवित्र धर्म को अंगीकार करने में प्रमाद नहीं करना और ग्रहण किये बाद प्राण जाने पर छोडना नहीं ॥ २ ॥ दुनिया के इन राग मे मोहित नहीं होते हुवे वैराग्य को धारण करना. दुनिया की देखा देखी नहीं करना. जिसको लोक की देखा देखी नहीं है, उसको अन्य आरंभ की प्रवृत्ति कहांसे होवे अर्थात् नहीं होवे ॥ ३॥ अहो जंबु ! जो मै कहता हूं वह मेरा देखा हुवा है, सुना हुवा है, जाना हुवा है, और अनुभव किया हुवा है ॥ ४ ॥ जो संसार में आसक्त बनकर फसे रहते हैं, वे संसार में वारंवार परिभ्रमण करते हैं. ॥ ५ ॥

प० प्रमादी म० महा प० पराक्रम करे जि० एसा पे० कहता हूं ॥ ३ ॥
ते० जो आ० आश्रव ते० वे प० अनाश्रव, जे० जो प० अनाश्रव ते० वे आ० आश्रव जे० जो अ० अनाश्रव ते० वे अ० अनाश्रव ही जे० जो आ० आश्रव ते० वे आ० आश्रव ही ॥१॥ ए० इस प० पद को सं०

सूत्र य गओय जयमाणे धीरे सया आगयपण्णाणे पमत्ते बहिया पास । अप्पमत्ते सया परिक्कमिज्जासि—त्तिबेमि ॥ ६ ॥ इति सम्मत्त ज्झयणस्स पढमोद्देसो
जे आसवा ते परिस्सवा । जे परिस्सवा ते आसवा ॥ जे अणासवा ते अपरिस्सवा । जे अपरिस्सवा ते अणासवा ॥ १ ॥ एते पए संबुज्झमाणे लोयंच आणा-

भावार्थ इस लिये तत्त्वदर्शी धीर पुरुषों को प्रमादियों को धर्म से विमुख जानकर अहोरात्रि धर्ममें उद्यमी बनकर सावधानताने प्रवर्तना एसा मैं कहता हूं इति सम्यक्त्व नामक चतुर्थ अध्ययन का प्रथम उद्देश पूर्ण हुवा
अब अन्यमत का निराकरण करते हैं.
जो कर्मबन्ध करने के कारणभूत क्रियादि होते हैं, वे वैरागीपुरुषों को कर्मबन्ध से मुक्त कराने वाले होते हैं. तथा गगनभिन्न और जो कर्मबन्ध से मुक्त के कारण साधु आदि हैं वे मिथ्यात्वीयों को कर्म के कारण होजाते हैं पालक प्रधान वत्. तथा जो संवरस्थान हैं वे किसि को निर्जराका स्थान नहीं भी होते हैं. इदरिकाग और जो निर्जराका स्थान नहीं है, वहां पर संवर भी होजाता है — ऋषी कुमारवत् ॥ १ ॥

पदार्थ

समझनेवाला लो० लोक को आ० आज्ञा से अ० सम्यक् जानकर पु० अलग २ प० करता ॥ २ ॥ अ० फ-रमाते है, णा० ज्ञानी इ० यहां मा० मनुष्यों को सं० संसारमें स्थित को सं० समझनेवाले को वि० बुद्धि-वान को अ० आर्तरत सं० धर्म उपाचरे अ० अथवा प० प्रमादी अ० यथातथ्य इ० यह नि० ऐसा वे० कहता हूं ॥ ३ ॥ न० नहीं अ० अगमन म० मृत्युमुखका अ० है, इ० स्वेच्छाचारी वं० असंयमी का० कालप्राप्त णि० समूह णि० तल्लीन पु० अलग २ जा० जाति में प० फिरते हैं (अन्य आ-

मूल

ए अभिसमेच्चा पुढो च पवेदितं ॥ २ ॥ अग्घाति णाणी इहं माणवाणं संसार पडिव

ण्णाण संबुज्झमाणाणं विन्नाणपत्ताणं अट्टावि संता अदुवा पमत्ता अहासच्चमिणं ति-

बेमि ॥ ३ ॥ नाणागमो मच्चुमुहस्स अत्थि इच्छापणीया वंकाणिकेया कालग्ग

हिआ णिचये णिविट्ठा पुढो पुढो जाइं पकप्पंति (पाठान्तरे)—इत्थ मोहे पुणो पुणो

भावार्थ

उक्त पदों को समझनेवाले तीर्थंकर के कथनानुसार जगत् जन्तुओं को कर्मों मे बंधाते हुए देखकर धर्म के लिये क्यों उद्यमी नहीं बनेंगें ॥ २ ॥ ज्ञानी महात्मा संसार मे रहे हुवे सरलबोधी विद्वान प्राणीयों को इस तरह से बोध करते हैं कि जिससे वे आर्तध्यान मे व्याकूल ओर प्रमाद मे ग्रसित होते हुवे भी धर्माचरण करलेते हैं, यह बात [illegible] है ॥ ३ ॥ मृत्यु के मुख में रहे हुवे प्राणी को मृत्यु ग्रसित नहीं करे एसातो कदा-चित होता ही नहीं है, तथापि आशारूपी पाश में फसे हुवे असंयमी प्राणि काल के मुख में रहते हुवे भी

[illegible] पुनः २ ॥ ४ ॥ इ० यहां ए० कितनेक को न० नहा २ पुं० परिचय म० होता है [illegible] में वा० उत्पन्न होते हुवे फा० स्पर्श सं० वेदते हैं ॥ ६ ॥ नि० भांत कू० मोटे [illegible] दुःखदाइ स्थान में नि० रहते हैं, अ० न रहे कू० कुकर्म में णो० नहीं नि० [illegible] स्थान म रहते हैं ॥३॥ ए० कितनेक व० कहते हैं अ० अपना ति णा० ज्ञानी, णा० ज्ञानी [illegible] ॥ ७ ॥ आ० यावंतः के० कितनेक लो० लोक में स० साधु मा०

॥ ४ ॥ इह मर्गाति [illegible] संथवो भवति अहोववाइए, फासे पडिसंवेदयंति

॥ ५ ॥ चिट्ठं कूरेहिं कम्मेहिं चिट्ठं परिचिट्ठति, अचिट्ठं कूरेहिं कम्मेहिं णो चिट्ठं प-

रिचिट्ठति ॥ ६ ॥ एगे वयंति अदुवावि णाणी, णाणी वयंति अदुवावि एगे ॥

॥ ७ ॥ आवंति केआवंति लोयंसि समणाय माहणाय पुढो विवादं वयंति से

[illegible] और एकेन्द्रियादि अनेक जाति में परिभ्रमण करते हैं. ॥ ४ ॥ कितनेक [illegible] का परिचय होता है, इस लिये वे वैसेही कर्म कर उसीही स्थान में उत्पन्न हो [illegible] ॥ ५ ॥ जो जीव अभी ही क्रूर कर्म करते हैं, वे अतिही दुःखस्थान में रहते हैं और [illegible] नहीं करते हैं. वे ऐसे दुःख स्थान में ज्यादा नहीं रहते हैं ॥ ६ ॥ जैसा श्रुत केवली [illegible] उपदेश देते हैं. और जैसा केवल ज्ञानी उपदेश देते हैं, वैसाही श्रुत के- [illegible] देते हैं. ॥ ७ ॥ इस जगत् में कितनेक साधु ब्राह्मण पृथक् [illegible] और कहते हैं कि

शब्दार्थ इस में ही चे० निश्चय प० कहागया है ॥ १ ॥ तं० उसे आ० आदरकर ण० नहीं णि० छिपावे ण० नहीं णि० छोडे जा० जानकर ध० धर्म ज० यथातथ्य ॥ २ ॥ दे० देख के णि० वैराग में ग० चले णो० नहीं लो० लोकानुगत च० चले; ज० जिन को ण० नहीं इ० यह णा० ज्ञाति अ० अन्य त० उस को क० कहां से होवे ॥ ३ ॥ दि० देखा सु० सुना म० माना, वि० जाणा जं० जो ए० यह प० कही ॥ ४ ॥ स० गृद्ध होता प० लेपाता पु० वारम्वार जा० जाति में प० परिभ्रमण करे ॥ ५ ॥ अ० दिन को रा०

सूत्र जहातहा ॥ २ ॥ दिट्ठेहिं णिव्वेयं गच्छेज्जा णो लोगस्सेसणं चरे ॥ जस्स णत्थि इमा णाति । अन्ना तस्स कओसिया ॥ १ ॥ ३ ॥ दिट्ठं, सुयं, मयं, विन्नायं, जमेयं परिकहिज्जइ ॥ ४ ॥ समेमाणा पलेमाणा पुणो पुणो जातिं पकप्पंति ॥ ५ ॥ अहो

भावार्थ धर्म यथातथ्य है. तथा प्रकार यह है, और इसजिनप्रवचन में यही धर्म कहा हुआ है. ॥ १ ॥ एसा परम पवित्र धर्म को अंगीकार करने में प्रमाद नहीं करना और ग्रहण किये बाद प्राण जाने पर छोडना नहीं ॥ २ ॥ दुनिया के रंग राग में मोहित नहीं होते हुवे वैराग्य को धारण करना. दुनिया की देखा देखी नहीं करना. जिसको लोक की देखा देखी नहीं है, उसको अन्य आरंभ की प्रवृत्ति कहांसे होवे अर्थात् नहीं होवे ॥ ३॥ अहो जंबु ! जो मैं कहता हूं वह मेरा देखा हुवा है, सुना हुवा है, जाना हुवा है, और अनुभव किया हुवा है. ॥ ४ ॥ जो संसार में आसक्त बनकर फसे रहते हैं, वे संसार में वारंवार [illegible]

शब्दार्थ क० कर्म के स० सफल द० देख न० उस से णि० निवर्ते वे० वनस्पति ॥ ९ ॥ जे० जो ख० निश्चय वी० वीर स० समितित स० ज्ञानादि सहित स० सदा यत्नी स० निरंतर दे० दर्शी आ० पाप निवर्ते अ० यथातथ्य लो० लोक सु० देखने पा० पूर्व प० पश्चिम दा० दक्षिण उ० उत्तर ए० ऐसा स० सत्य में ठि० स्थित क० ॥ १० ॥ सा० हम कहेंगे णा० ज्ञान वी० वीर का स० समितिवंत का स० ज्ञानादि सहित का स० सदायत्नीका सं० सदादर्शी का आ० पाप से निवर्तने वाले का आत्मवत्ती अ० यथा

मूत्र कम्मुणा सफलं दट्ठं तओ णिज्जाति वेयवी ॥ ९ ॥ जे खलु भो वीरा; समिता, सहि-ता, सया जया [illegible] संपेहिणो, आओवरया अहातहा लोगं उवेहमाणा पाईणं, पडीणं, दाहिणं, उदीणं इति सच्चंसि परिचिट्ठिंसु॥ १० ॥साहिस्सामो णाणं वीराणं, समिताणं, स

भावार्थ [illegible] के हेतुओं से सदैव दूर रहते हैं, ॥ ९ ॥ जो महात्मा सदैव पराक्रमी, सत्प्रवृत्ति में प्रवर्तनेवाले, ज्ञानादि गुणों से सम्पन्न, सदैव उद्यमी, कल्याण की तरफ दृढ लक्ष्य रखने वाले, पाप से निवर्तने वाले तथा यथार्थ पने लोक को देखने वाले वे पूर्व, पश्चिम, दक्षिण, तथा उत्तर ये चारों दिशाओं में रहते हुवे भी सत्य के ही प्रार्थी थे ॥ १० ॥ ऐसे गुणों से युक्त सत्पुरुषों का अभिप्राय मैं कहता हूं, कि तत्त्वदर्शीयों को किसी प्रकार की उपाधि नहीं है इति सम्यक्त्वाख्य चतुर्थ अध्ययन समाप्त हुवा. जो सम्यक्त्वधारी होवेंगे वे

शब्दार्थ

छाद नहीं सं० संजोग त० अन्धकार में अ० नान अ० आज्ञा का लं० लाभ ण० नहीं ति० ऐसा बे० कहता हूं ॥ ५ ॥ जि० जिसको ण० नहीं पु० पहिले प० पीछे म० बीच में त० उस को कु० क्या सि० कदाच ॥ ६ ॥ से० व हु० निश्चय प० प्रज्ञावन्त बु० बुद्धिवंत आ० आरंभ से निवर्ते स० समभाव ए० इस को पा० देखो जे० जिस से ब० बंधन व० वध घो० रौद्र प० परिताप च० और दा० दारूण ॥ ७ ॥ प० छोडकर बा० बाहिर के च० निश्चय सो० सोत णि० निष्कर्मदर्शी इ० यहां म० मनुष्यभव में ॥ ८ ॥

सूत्र

लंभो णत्थि त्तिबेमि ॥ ५ ॥ जस्स णत्थि पुरा पच्छा मज्झे तस्स कुओसिया ॥ ६ ॥ से हु पन्नाणमंते बुद्धे आरंभोवरए सम्ममेयंति पासह; जेण बंधं; वहं; घोरं; परितावं-च दारुणं ॥ ७ ॥ पलिछिंदिय बाहिरगं च सोयं णिकम्मदंसी इह मच्चिएहिं ॥ ८ ॥

भावार्थ

ऐसा मैं कहता हूं ॥ ५ ॥ जिसको पहिले भी ज्ञानादि गुण की प्राप्ति नहीं हुई और पीछे भी नहीं है, तो मध्यमभव में कहां से होगी ॥६॥ आरंभ से वध बंधन आदि अनेक दारूण भयंकर दुःख की प्राप्ति होती है एसाजान ज्ञानीजन आरंभ से सदैव दूर रहते हैं इससे वे इसलोक में तथा परलोक में प्रशंसा पात्र और सुख के भोक्ता बनते हैं. ॥ ७ ॥ अहो मुनि ! इस मनुष्य भव में बाह्य प्रतिबन्ध का छेदन कर, आरंभ को छोड़, मोक्ष तरफ लक्ष रखना चाहिये ॥ ८ ॥ कृत कर्म के फल अवश्यही प्राप्त होते हैं [illegible]

शब्दार्थ क० कर्म के स० सफल द० देख न० उस ने णि० निवर्ते वे० तत्वज्ञ ॥ ९ ॥ जे० जो ख० निश्चय भो० अहो वी० वीर स० समितिवंत स० ज्ञानादि सहित स० सदा यत्नी स० निरंतर दं० दर्शी आ० पापसे निवर्ते अ० यथातथ्य लो० लोक उ० देखने पा० पूर्व प० पश्चिम दा० दक्षिण उ० उत्तर इ० ऐसा स० सत्य में प० अति व्यवस्थित रहे ॥ १० ॥ सा० हम कहेंगे णा० ज्ञान वी० वीर का स० समितिवंत का स० ज्ञानादि सहित का स० सदायत्नीका सं० सदादर्शी का अ० पाप से निवर्तने वाले का आत्मवती अ० यथा

सूत्र कम्मुणा सफलं दट्ठु तओ णिज्जाति वेयवी ॥ ९॥ जे खलु भो वीरा; समिता, सहि-ता, सयाजता संपडदंसिणो, आतोवरया अहातहा लोग मुवेहमाणा पाईणं, पडीणं, दाहिणं, उदीणं इति सच्चंसि परिविचिट्ठिंसु॥ १०॥साहिस्सामो णाणं वीराणं, समिताणं, स

भावार्थ बंध के हेतुओं से सदैव दूर रहते हैं, ॥ ९ ॥ जो महात्मा सच्चे पराक्रमी, सत्यवृत्ति से वर्तनेवाले, ज्ञानादि गुणों से रमनेवाले, सदैव उद्यमी, कल्याण की तरफ दृढ लक्ष्य रखने वाले, पाप से निवर्तने वाले तथा यथार्थ पने लोक को देखने वाले वे पूर्व, पश्चिम, दक्षिण, तथा उत्तर ये चारों दिशाओं में रहते हुवे भी सत्य के ही ग्राही थे ॥ १० ॥ ऐसे गुणों से युक्त सत्पुरुषों का अभिप्राय मैं कहता हूं, कि तत्वदर्शीयों को किसी प्रकार की उपाधि नहीं है. इति सम्यक्त्वाख्य चतुर्थ अध्ययन समाप्त हुवा. जो सम्यक्त्वधारी होवेंगे वे

...है उ० उपाधी पा० केवली को न० नहीं है ग० नहीं है
...करता है ॥ १३॥ इ० ऐसा म० सम्यक्त्व अध्ययन म० संपूर्ण.

ह्रियाण समाजनाणं सघडदंसणिं, आनोत्तरयाणं, अहानहा लोग मुवेहमाणाणं, त्रिमातिम उवाधि पासगस्स? णविज्जति णत्थि त्तिबेमि ॥१३॥ इति सम्मत्त ज्झयणस्स चउत्थोद्देसो सम्मत्तो इति सम्मत्त णाम चउत्थ मज्झयणं सम्मत्तं

चारित्र अंगीकार कर सकेंगे इसलिये चारित्र के कथन रूप लोकसार नामक पंचम अध्ययन करता हूं

आवंती नाम्ना प्रसिद्धं लोकसार नामकं पंचम मध्ययनम्.

शब्दार्थ आ० जितने के० कितनेक लो० लोक में वि० हिंसा करते हैं अ० अर्थ अण० निरर्थक वा० या ए० इनके
में वे वि० विनाश [illegible] उत्पन्न होते हैं. गु० भारी से० उन को का० काम भोग त० तब से० वे मा० मृत्यु के
अं० बीच में त० तब से० वे दू० दूर [illegible] अं० बीच में त० तब से० वे दू० दूर णे० नहीं से० वे अं० मध्य
में नहीं से० वे दू० दूर ॥ १ ॥ से० वे पा० देखे फु० कुमार पि० जैसा कु० कुशाग्र प० भग्न नि०
पड़े [illegible] पा० वायु से प्रेरित [illegible] पु० ऐसा बा० अज्ञानी का जी० जीवितव्य [illegible]

मूल आवंती केयावंती लोयंसि विप्परामुसंति अट्ठाए अणट्ठाए वा, एएसु चेव विप्परामु-
संति गुरू से कामा तओ से मारस्स अंतो जओ से मारस्स अंतो तओ से दूरे
णेव से अंतो णेव से दूरे ॥ १ ॥ से पासति फुसियमिव कुसग्गे पणुन्नं णिवतितं

भावार्थ जो कोई लोक में प्रयोजन से या निष्प्रयोजनसे जीवों की घात करते हैं, वे मृत्यु पाकर उन्हीं योनि
में उत्पन्न होते हैं. विषयोंका सेवन करनेवाले, उनको विषय से मुक्त होने में बहुतही कठिनता मालुम हो
ती है इसही कारण से वे जन्म मरण रूप चक्रमें रहते हैं. ऐसा होने से वे मुक्ति पंथसे दूर रहते हैं, इस तरह
वे नतो सुख के भोक्ता बन सकते हैं, और न संसार से दूर हो सकते हैं. ॥ १ ॥ तत्त्वदर्शी [illegible]

लिं० ऐसा मैं कहता हूं ॥ ११॥ इ० ऐसा स० सम्यक्त्व अध्ययन स० संपूर्ण.

सूत्र

हियाण मणाजनाण सपङ्दंसणिं, आनोवरयाणं, अहातहा लोग मुवेहमाणाणं.
विसंति चश्वाधि पारगास्स? णत्थिवानि णत्थि त्तिबेमि ॥११॥ इति सम्मत्त ज्झयणस्स
चउत्थोदेसो सम्मत्तो इति सम्मत्त णाम चउरथ मज्झयणं सम्मत्तं

भावार्थ

चारित्र भंगीकार करेगे इसलिये चारित्र के कथन रूप लोकसार नामक पंचम अध्ययन कहता हूं

पु० वारम्वार ॥ ३ ॥ सं० संशय प० जाने वह सं० संसार का प० जान भ० होता है, सं० संशय अ० न जाणे वह सं० संसार का अ० अजाण भ० होता है ॥ ४ ॥ जे० जो छे० निपुण सा० स्त्री को ण० नहीं

सूत्र

वातेरितं एवं बालस्स जीवियं मंदस्स अविजाणओ ॥ २ ॥ कूराइं कम्माइं बाले पकुव्वमाणे, तओ दुक्खेण मूढे विपरियास मुवेति, मोहेण गब्भं मरणाइ एति एत्थ मोहे पुणो पुणो ॥ ३ ॥ संसयं परियाणतो संसारे परिण्णाते भवति । संसयं अपरि जाणओ संसारे अपरिण्णाते भवति ॥ ४ ॥ जे छेए सागारियं ण से सेवए । कट्टु -

भावार्थ

कि जैसे कुशाग्र पर रहा हुवा पानी का बिन्दु, दूसरा पानी का बिन्दु आने से या वायु से कम्पित होने से शिघ्र गिर पडता है; वैसे ही अज्ञानी जीवों का आयुष्य क्षय होजाता है. ॥ २ ॥ अज्ञानी जन क्रूर कर्म करते हुवे दुःख से मूढ बन के विपरीतताको प्राप्त होता है. और मोहोदय से गर्भ में तथा गर्भ से मरण ऐसे वारंवार दुःखों को भोगताही रहता है. ॥ ३ ॥ जो अर्थ संशय (मोक्षका कारण) अनर्थ संशय (संसार का कारण) इन दोनों को ज्ञपरिज्ञा से जानकर प्रत्याख्यान परिज्ञा से अनर्थ संशय को त्याग करता है, वह संसार को त्याग करता है. और जो संशय का अजान होता है, वह संसार का भी अजान होता है. ॥ ४ ॥ चतुर पुरुष को स्त्री संग कदापि करना नहीं कदाचित् कर्मोदय से होजाय

... ऐसा मानते हुवे ॥ ८ ॥ इ० यहां मे० कितनेक ए० एकलविहारी
भ० होते हैं, से० वे ब० बहुत क्रोधी, ब० बहुत मानी, ब० बहुत मायावी, ब० बहुत लोभी, ब० बहुत ढोंगी,
ब० बहुत धूर्त, ब० बहुत दुष्ट परिणामी आ० आश्रववाला, प० कर्माच्छादित, उ० सावधान हो प० कहते हैं
"मा० मुझे के० कोइ अ० देखे" अ० अज्ञान प० प्रमादी दो० दोष से मू० मूर्ख ध० धर्म णा० नहीं
जा० जानता है ॥ ९ ॥ अ० आर्त प० प्रथा मा० मनुष्य क० कर्म बंध में को० प्रवीण जे० जो अ० नि-

सूत्र

आरंभजीवी एत्थवि बाले परिपच्चमाणे रमति पावेहिं कम्मेहिं असरणं सरणंति म-
ण्णमाणे ॥ ८ ॥ इह मेगेसिं एगचरिया भवति । से बहुकोहे, बहुमाणे, बहुमाए,
बहुलोहे, बहुरए, बहुनडे, बहुसढे, बहुसंकप्पे, आसवसक्की, पलिओच्छन्ने, उट्ठियवायं पव
यमाणे "मा मे केइ अदक्खू" अन्नाणपमाय दोसेणं सततं मूढे धम्मं णाभिजाणति॥९॥

भावार्थ

चरण करते हैं ॥ ८ ॥ कितनेक साधु एकल विहारी होजाते हैं, वे बहुत क्रोधी, बहुत मानी, मायावी,
लालची, पापीष्ट, ढोंगी, धूर्त, दुष्ट परिणामी, हींसक और कुकर्मी होतेहुवे कहते हैं, कि हम आध्यात्मी
धर्म दीपक हैं. एसा मिथ्यात्वकवाद करनेवाले अपने पाप छिपाते हैं, कि रखेने मुझे कोइ देखलेवे.
एसे रहते हुवे एकिले विचरते हैं. वे अज्ञान व प्रमाद से मूढ बन कर धर्म में कुच्छभी नहीं समझते हैं.
॥ ९ ॥ अहो मनुष्यों ! विषय कषाय से पीडित जीवों कर्मबन्ध करने में कुशल, पापानुष्ठान से अनिवृत्त,

अशुद्ध प० संसार का नाश पा० करे. आ०भ्रमण प० करते हैं. त्ति०ऐसा बे०कहताहूं॥१०॥ आ० यावंतः के० कितनेक लो० लोक में अ० अनारंभ जीवी ए० इस में प० अनारंभ जीवी ॥ १ ॥ ए० इस से उव० निवर्तनेवाला सं० उस झो० क्षय करनेवाला अ० यह सं० सन्धि है नि० इति

सूत्र

अट्टापया माणव? कम्म कोविया जे अणुवरया अविज्जाए पलिमोक्खमाहु आवट्टमेव मणुपरियट्टंति त्तिबेमि. इति—लोगसार ज्झयणस्स पढमोद्देसो ॥ १० ॥

आवंति केआवंति लोयंसी अणारंभजीवी एतेसु चेव मणारंभजीवी ॥ १ ॥ एत्थो-

भावार्थ

अज्ञान से मोक्ष मानने वाले, अरहट घटिका के न्याये संसार में परिभ्रमण करते हैं. ऐसा मैं कहता हूं ॥१०॥ यह पांचवा लोकसार नामक अध्ययनका प्रथम उद्देशा पूर्ण हुवा आगे हिंसा से निवर्तने वाले ही साधु होते हैं; ऐसा मैं कहता हूं

\+ × +

इस जगत में जो आरंभ के त्यागी साधु हैं वे गृहस्थ केलिये निपजाया हुआ निर्दोष अहार लेकर अनारंभपने से रहते हैं. ॥ १ ॥ जो सावद्यानुष्ठान का त्याग करते हैं वेही साधु कहे जाते हैं. और सावद्यानुष्ठान का त्याग आर्य क्षेत्र, उत्तम कुलमें जन्म, शुद्ध श्रद्धा इत्यादि अवसर प्राप्त होने से होता है. इसलिये जिन साधु का ऐसा अवसर प्राप्त हुवा है वे सर्व प्रमाद का त्याग कर, शरीर को अशुचि का भंडार जान

शब्दार्थ भ० देव जे० जो इ० इस वि० शरीरका अ० यह ख० अवसर है ऐसा म० मान कर ॥ २ ॥ ए० यह म० मार्ग भा० आर्यों ने प० फरमाया उ० सावधान हो णो० नहीं प्रमाद करे जा० जानकर दु० दुःख प० प्रत्येक को सा० साता ॥ ३ ॥ पु० अलग २ छ० छान्दे इ० यहां मा० मनुष्यों के पु० अलग २ दु० दुःख प० कहा से० वे अ० अहिंसक हो अ० अमृषावादी हो पु० अलग २ फा० स्पर्श वि० सहन करे ए० यह स० सम्यक् प० पर्याय वि० कही ॥ ४ ॥ जे० जो अ० अगृद्ध पा० पापकर्म से उ० कहा ते० वह आ०

सूत्र

वरए तं झोसमाणे अयं संधीति "अदक्खू" जे इमस्स विग्गहस्स अयं खणेत्ति मन्नेसी॥२॥

एस मग्गे आरिएहिं पवेदिते उट्ठितो णो पमायए जाणि—तु दुक्खं पत्तेय सायं ॥ ३ ॥

पुढो छंदा इह माणवा । पुढो दुक्खं पवेदितं से अविहिंसमाणे अणवयमाणे पुट्ठो-

फासे विप्पणीदल्लए एस समियापरियाए वियाहिते ॥ ४ ॥ जे असत्ता पावेहिं क-

भावार्थ कर तथा क्षण २ में इस की पर्याय पलटती हुइ देखकर तप संयम में शरीर को झोंन देवे ॥ २ ॥ यह मार्ग तीर्थंकरों ने फरमाया है. इसलिये सुख दुःख की प्राप्ति प्रत्येक को अलग २ होती है. ऐसा जान दीक्षित को प्रमाद नहीं करना चाहिये ॥ ३ ॥ इस संसार में मनुष्य के आशय व दुःख पृथक् २ हैं; इसलिये किसी की घात नहीं करना. असत्य नहीं बोलना. तथा आये हुए परिषहों को ...

शब्दार्थ अ० देख जे० जो इ० इस वि० शरीरका अ० यह ख० अवसर है ऐसा म० मान कर ॥ २ ॥ ए० यह म० मार्ग आ० आर्यों ने प० फरमाया उ० सावधान हो णो० नहीं प्रमाद करे जा० जानकर दु० दुःख प० प्रत्येक को सा० साता ॥ ३ ॥ पु० अलग २ छ० छान्दे इ० यहां मा० मनुष्यों के पु० अलग २ दु० दुःख प० कहा से० वे अ० अहिंसक हो अ० अमृषावादी हो पु० अलग २ फा० स्पर्श वि० सहन करे ए० यह स० सम्यक प० पर्याय वि० कही ॥ ४ ॥ जे० जो अ० अगृद्ध पा० पापकर्म से उ० कहा ते० वह आ०

सूत्र वरए तं झोसमाणे अयं संधीति "अदक्खु" जे इमस्स विग्गहस्स अयं खणेत्ति मन्नेसी॥२॥
एस मग्गे आरिएहिं पवेदिते उट्ठितो णो पमायए जाणि–तु दुक्खं पत्तेय सायं ॥ ३ ॥
पुढो छंदा इह माणवा । पुढो दुक्खं पवेदितं से अविहिंसमाणे अणवयमाणे पुट्ठो-
फासे विप्पणोदल्लए एस समियापरियाए वियाहिते ॥ ४ ॥ जे असत्ता पावेहिं क-

भावार्थ कर तथा क्षण २ में इस की पर्याय पलटती हुइ देखकर तप संयम में शरीर को झोंक देवे ॥ २ ॥ यह मार्ग तीर्थंकरों ने फरमाया है. इसलिये सुख दुःख की प्राप्ति प्रत्येक को अलग २ होती है. ऐसा जान दीक्षित को प्रमाद नहीं करना चाहिये. ॥ ३ ॥ इस संसार में मनुष्य के आशय व दुःख पृथक् २ हैं; इसलिये किसी की घात नहीं करना, असत्य नहीं बोलना, तथा आये हुए परीषहों को सम्यक् भाव से सहन करना. यही साधु [illegible] उनपर भी कदाचित कर्मोदय से रोगोत्पत्ति

शब्दार्थ भव से ही है, ए० इस से वि० निवर्ते अ० साधु दि० दिन को रा० रातको ति० सहन करे ॥ ११ ॥ प० ममत्त व० बाहिर पा० देख अ० अप्रमत्त प० प्रवर्ते, ए० यह मो० साधु स० सम्यक् अ० पालना चाहिये त्ति० में कहता हूं ॥ १२ ॥ इ० ऐसा लो० लोकसार अ० अध्ययन का बी० दूसरा उद्देशा. *

आ० यावंतः के० कितनेक लो० लोक में अ० अपरिग्रही ए० इस में ही अ० अपरिग्रही सो० मुन के

सूत्र अज्झत्थंचमे, बंधपमोक्खो च तुज्झ अज्झत्थेव; एत्थ विरते अणगारे दीहरायं तितिक्खए ॥ ११ ॥ पमत्ते बहियापास । अप्पमत्तो परिवए ॥ एयं मोणं सम्मं—अणुवासिज्जासि त्तिबेमि ॥ १२ ॥ इति लोकसार मज्झयणस्स—बीओद्देसो *

आवंती केआवंती लोयंसि अपरिग्गहावंती, एएसु चेव अपरिग्गहावंती सोच्चावइ-

भावार्थ मुक्त होना " यह कार्य अपनी आत्मा से ही होता है. इसलिये परिग्रह त्यागी मुनि को जीवन पर्यंत आये हुवे सब संकटों को निश्चल पने सहन करना. ॥ ११ ॥ प्रमादीयों को धर्म से परङ्मुख होते हुवे देख साधु को अप्रमत्त पने विचारना. एसे सम्यक् प्रकार से तीर्थंकर प्रणित संयम की क्रिया को सदैव पालना चाहियें ऐसा मैं कहता हूं. ॥ १२ ॥ इति लोकसार नामक पंचम अध्ययनका द्वतीय उद्देशा पूर्ण हुवा. आगे साधु को विषय परिग्रह की इच्छा का त्याग कहते हैं. * *

इस जगत में जो निष्परिग्रही होते हैं वे तीर्थंकरोंकी वाणी मुन और महात्मा व पंडितोंके वचनोंको अवधारन

मूल

ए० यही ए [illegible] को भ० महाभय कर्ता भ० होता है लो० लोकों का आचार उ० उपेक्षाग ॥ ९ ॥ ए० [illegible] अच्छे प्रतिबोधी मु० अच्छे गुणसम्पन्न ऐसा [illegible] पाकर [illegible] प० [illegible] वि० पराक्रमी. ए० उस में ही ब० ब्रह्मचर्य ति० ऐसा बे० कहता हूं ॥ [illegible] ॥ [illegible] अ० अनुभवा मैंने, ब० बन्ध और मोक्ष स० निश्चय तु० तेरे अ० अनु-

[illegible] परिग्गहावन्ति—से अप्पंवा बहुयंवा, अणुंवा, थूलंवा, चित्तमंतंवा, अचित्तमन्तं [illegible] परिग्गहावंती ॥ ८ ॥ एवमेगेसिं महब्भयं भवति. लोगवि [illegible] ॥ ९ ॥ एसे संगे अविजाणतो से सुपडिबुद्धं सूवणीयंति णच्चा - पुरिसा [illegible] । एतेसु चेव बंभचेरं त्तिबेमि ॥ १० ॥ से सुयंचमे

भावार्थ

[illegible] ॥८॥ यह परिग्रहही कितनेक को नरकादि महाभयका कारणहै वैसे ही [illegible] परिग्रहादि भी महाभय का कारण है इन को ऐसा दुष्ट जान [illegible] परिग्रह [illegible] साधुओं ही अच्छी तरह प्राप्ति बोध पाकर निकले हुवे होते हैं. परिग्रह [illegible] ज्ञानादि गुणों की प्राप्ति होती है. ऐसा जानकर अहो पुरुषों तुम को [illegible] और उत्तम गुण वाले सत्पुरुषों में ही ब्रह्मचर्य (मोक्ष प्राप्ति) का गुण होता [illegible] कहता हूं ॥ १० ॥ अहो जम्बु ! मैंने सुना है. और अनुभव भी किया है, कर्मों से

शब्दार्थ मे० मेधावी प० पण्डित णि० अवधारकर ॥ १ ॥ स० समतासे ध० धर्म आ० आरिहंतने प० फरमाया ज० जिस प्रकार म० मैंने सं० सन्धि झो० क्षय करे ए० ऐसे ही अ० अन्यत्र सं० सन्धि दु० दुष्कर त्पाने में भ० होती है. इस लिये बे० कहता हूं णो० नहीं णि० गोपे वी० विर्य ॥ २ ॥ जे० जो पु० पहिले उठे णो० नहीं प० पीछे पडे, जे० जो पु० पहिले उठे, प० पीछे पडे, जे० जो णो० नहीं पु० प-

सूत्र मेहावी पंडियाण णिसामिया ॥ १ ॥ समियाए धम्मे आरिएहिं पवेदिते—जहेत्थ मए संधी झोसिए एव—मण्णत्थ संधि दुज्झोसए भवती. तम्हा बेमि णो णिहणेज्ज वीरियं ॥ २ ॥ जे पुव्वुट्ठाई णो पच्छाणिवाती । जे पुव्वुट्ठाई णो पच्छाणिवाती । जे पुव्वु ट्ठाई पच्छाणिवाती, जे णो पुव्वुट्ठाइ णो पच्छाणिवाइ । सेवितारिसए सिया । जे-

अर्थ करके विवेकवन्त बन के सर्व परिग्रह का त्याग करते ही निष्परिग्रही बनते हैं. ॥ १ ॥ श्री तीर्थंकर देवने समता में धर्म फरमाया है कि अहो मुमुक्षु ! जिसरीति मे मैंने कर्म क्षय किये हैं; उसीरीति से अन्य स्थान कर्म क्षय करना कठिन है. इसलिये मैं कहता हूं, कि मेरा दृष्टांत लेकर अन्य मुमुक्षुओं को अपना पराक्रम छिपाना नहीं ॥ २ ॥ कितनेक सिंहकी तरह दीक्षा लेते हैं, और सिंहकी तरह ही पालते हैं. पीछे पतित नहीं होतेहैं यथा अणगारवत्. २ कितनेक सिंहकी तरह दीक्षा लेते हैं, और श्रृगाल (सियाल) तरह शिथिल होजाते हैं. कुंडरिकवत् ३ कितनेक नतो दीक्षा ग्रहण करते हैं और न पतित होते हैं, गृहस्थ या

र्थ

॥ ६ ॥ ज० जिनवर कु० कुशलपुरुषो प० परिज्ञा वि० विवेक भा० कहा. चु० भ्रष्ट हु० निश्चय बा० अज्ञानी ग० गर्भ में र० रहता है ॥ ७ ॥ अ० इस में ही प० फरमाया है, छ० रूप में वा० या छ० हिंसा में या० या ॥ ८ ॥ से० वे हु० निश्चय ए० एक सं० सम्यक् प्रकारे [illegible] किया मार्ग [illegible] मु० साधु अ० अन्यथा लो० लोक को देखकर ॥ ९ ॥ इ० ऐसे क० कर्म को प० जानकर स० सर्वथा

सूत्र

खलु दुल्लहं ॥ ६ ॥ जहेत्थ कुसलेहिं परिण्णाविवेगे भासिते चुते हु बाले गब्भाइसु रज्जति ॥ ७ ॥ अंसि चेयं पव्वुचति । रूवंसि वा छणंसि वा ॥ ८ ॥ से हु एगे- संविद्धपहे मुणी अण्णहालोग-मुवेहमाणे ॥ ९ ॥ इति कम्मं परिण्णाय सव्वसो, से-

भावार्थ

करने में क्या फायदा है [illegible] शरीर फिर मिलना मुश्किल है. ॥ ६ ॥ तीर्थंकरने विविध प्रकार के भाव जो फरमाये हैं, [illegible] पुरुष उन्हे श्रद्धते हैं, वेही आत्म कल्याण कर सकते हैं. और जिन वचनों का आशय [illegible] विपरित अर्थ करके धर्म से भ्रष्ट बननेवाले अज्ञानी जीव वारंवार गर्भ में उत्पन्न होते हैं ॥ ७ ॥ जिन आगम में ही ऐसा कहा जाता है कि [illegible] [illegible] होता है ॥ ८ ॥ [illegible] साधु वह ही है कि लोकों की प्रवृत्ति धर्मविरुद्ध होते हुवे भी आप धर्म परायण बना रहे ॥ ९ ॥ बुद्धवन्तो मुनि कर्म का स्वरूप को जानकर प्रत्येक जीवों का अलग २ सुख दुःख विचार

अन्वयार्थ

[illegible] वे पा० नहीं [illegible] मारे धं० साधु णो० नहीं प० धीठ बने उ० जानता हुआ प० अलग २ सा० [illegible] ॥ १० ॥ व० [illegible] पा० न आरंभकरे कं० किंचित् स० सर्व लोक ए० एकान्त संयममें रक्त [illegible] शुद्धाचारी अ० अरक्त प० जीवों में ॥ ११ ॥ से० वे व० संयमी स० सर्व स० साधुता योग्य प० प्रज्ञा से अ० आत्मा अ० नहीं करने योग्य पा० पापकर्म तं० उसे णो० नहीं अ० [illegible] ॥ १२ ॥ जं० जो स० सम्यक्त्व पा० देखे, तं० वे मो० साधुत्व को पा० देखे; जं० जो मो० साधुत्व

सूत्र

ण [illegible] मंतति णो पच्चभति, उवेहमाणो पत्तेयं सायं ॥ १० ॥ वन्नादेसी णारभे-
कंचणं सव्वलोए, एग—प्पमुहे विदिसप्पतिन्ने निव्विन्नचारी अरए पयासु ॥ ११ ॥ से-
वसुमं सव्वसमन्नागयपन्नाणेणं अप्पाणेणं अकरणिज्जं पावकम्मं तं णो अन्नेसी-
॥ १२ ॥ जं सम्मं—ति पासह, तं मोणं—ति पासह, जं मोणं—ति पासह तं सम्मं—

भावार्थ

[illegible] के सुख का त्याग कर, संयम में स्थित हुवे किसी भी जीव की हिंसा नहीं करते हैं, ॥ १० ॥ [illegible] के इच्छक मुनि सर्व लोक के पाप से निवृत्त होकर जीवों में विरक्त रहता हुआ आरंभ का सर्वथा त्याग कर और [illegible] न देखता हुआ मात्र मोक्ष की तरफ ही दृष्टि रखे ॥ ११ ॥ ऐसे पवित्र साधु की बुद्धि [illegible] अकार्य पाप कर्म की तरफ कदापि दृष्टि नहीं करती ॥ १२ ॥ जो सम्यक्त्व है, वह ही साधुपना है, और जो साधुपना है, वह ही सम्यक्त्व है, ॥ १३ ॥ यह साधुपना धैर्य रहित

शब्दार्थ

॥ ६ ॥ ज० जिनवचन कु० कुशलपुरुषों प० परिज्ञा वि० विवेक भा० कहा. चु० भ्रष्ट हु० निश्चय बा० अज्ञानी ग० गर्भ में र० रहता है. ॥ ७ ॥ अ० इस में ही प० फरमाया है, रू० रूप में वा० या छ० हिंसा में या० या ॥ ८ ॥ से० वे हु० निश्चय ए० एक सं० सम्यक् प्रकारे विचार किया मार्ग जिनोंने मु० साधु अ० अन्यथा लो० लोक को देखकर ॥ ९ ॥ इ० ऐसे क० कर्म को प० जानकर स० सर्वदा

सूत्र

खलु दुरुहं ॥ ६ ॥ जहेत्थ कुसलेहिं परिण्णाविवेगे भासिते चुते हु बाले गब्भाइसु रज्जति ॥ ७ ॥ अस्सिं चेयं पव्वुचति । रुवंसि वा छणंसि वा ॥ ८ ॥ से हु एगेसंविद्ध पहे मुणी अण्णहा लोग-मुवेहमाणे ॥ ९ ॥ इति कम्मं परिण्णाय सव्वसो, से-

भावार्थ

करने में क्या फायदा है यह जिन योग एसा शरीर फिर मिलना मुश्किल है. ॥ ६ ॥ तीर्थंकरने विविध प्रकार के भाव जो फरमाये हैं, वेही विवेकी पुरुष उन्हे श्रद्धते हैं, वेही आत्म कल्याण कर सकते हैं. और जिन वचनों का आशय समझे बिना विपरीत अर्थ करके धर्म से भ्रष्ट बननेवाले अज्ञानी जीव वारंवार गर्भ में उत्पन्न होते हैं. ॥७॥ जिन शासन में ही ऐसा कहा जाता है कि विषयासक्त बने वाला हिंसक होता है ॥ ८ ॥ निश्चय से साधु वह ही है कि लोकोंकी प्रवृत्ति धर्मविरुद्ध होते हुवे भी आप धर्म परायण बना रहे ॥ ९ शुद्धव्रतधारी मुनि कर्म का स्वरूप को जानकर प्रत्येक जीवों का अलग २ ...

[illegible] ईर्याविहार दुःकृत जाना दुःकृत प्रयत्नपरिमा प० होते अ० अव्यक्त(१) भि० साधु
को ॥ १ ॥ [illegible] विवेक वो० भंगादीका कु० करता है मा० मनुष्य उ० उन्नतमान ण०
[illegible] बहुत मु० फिर दु० दुर्लंघनीय अ० अजानको अ०

सूत्र

गामाणुगामं दूइज्जमाणस्स दुज्जातं दुप्परक्कंतं भवति अवियत्तस्स भिक्खुणो ॥ २ ॥
वयसा वि एगे [illegible] माणवा । उन्नयमाणे य नरे महता मोहेण मुज्झति ।
संबाहा बहवे [illegible] अजाणतो अपासतो एयं ते मा होउ एयं कुसलस्स-

भावार्थ

[illegible] ग्रामानुग्राम [illegible] कष्ट दीखता तथा उसका पराक्रमपरिना खराब है, उत्तर चौभंगी
[illegible] अव्यक्त [illegible] की परिक्षा रहता न करे, क्यों की इसने संयम की तथा
[illegible] अव्यक्त तथा वर्ष व्यक्त साधु को एकाकी फिरना कल्पे नहीं,
[illegible] होवे (३) श्रुत से व्यक्त तथा वय से अव्यक्त साधु को
[illegible] ध्यान पराक्रमकारी होवे (४) तथा श्रुत से और वय से
[illegible] बिना आज्ञा एकाकी फिरना कल्पता नहीं॥१॥
[illegible] मात्र से विरुद्ध विरुद्ध वन गच्छ का परित्याग करते हैं.
[illegible] होवे, कि वे उनको दुर्लंघनीय होते हैं. इसलिये अहो मुनि ! तुम
[illegible] गच्छमें रहनेवाला १२ वर्ष की वयका तथा गच्छ के
[illegible] वर्ष तक गच्छवासी श्रुतअव्यक्त गच्छमें रहनेवाला जो आचारांगका ज्ञान तथागच्छक
[illegible] रहनेवालेको नवपूर्वकी तीसरी वस्तु तकका ज्ञान नहीं हुआहोवे.

रो पा० देवे, से० वे स० सम्यक्त्व पा० देखे, ॥ १३ ॥ ण० नहीं इ० यह स० शक्य नि० शिथिल अ० सावर गु० विषयासक्त, वं० कपटी प० प्रमादी, गा० गृहवासी ॥ १४ ॥ मु० साधु मो० मौन स० समादरे धु० धुनाते क० कर्म स० शरीर पं० हलका लु० लूखा से० सेवन करते हैं. वी० वीर सम्यक्त्व दर्शी, ए० यही ओ० संसार त० तिरनेवाले मु० साधु ति० तिरे हुवे हैं मु० मुक्त हुवे हैं वि० विरक्त हुवे हैं वि० कहावे, त्ति० ऐसा कहता हूं ॥ १५ ॥ ✽ ✽

मूल

शिथिल ॥ १३ ॥ ण इमं सक्कं सिढिलेहिं अद्दिज्जमाणेहिं, गुणासातेहिं, वंकसमायारेहिं, पमत्तेहिं, गारमावसंतेहिं ॥ १४ ॥ मुणी मोणं समायाय धुणे कम्म—सरीरगं, पंतं लूहं सेवंति वीरा संमत्तदंसिणो । एस ओहंतरे मुणी तिण्णे मुत्ते विरए वियाहिते—त्तिबेमि ॥ १५ ॥ इति लोगसार ज्झयणस्स—तइओद्देसो ✽

भावार्थ

शिथिल परिणामी विषयासक्त, कपटी, प्रमादी, और गृहस्थ मुनिपना पालन नहीं कर सकते हैं, ॥ १४ ॥ किन्तु साधु ही ऐसा संयम अंगीकार करके शरीर को शोषते हैं. ऐसे सम्यक्त्वदर्शी वीर पुरुष रूक्ष, तुच्छ, आहार करते हैं. और ऐसे पराक्रमी सदनुष्ठान में विचरते हुवे संसार तीरे हुवे विरक्त कहलाये गये हैं, ऐसा मैं तीर्थंकर का कथनानुसार कहता हूं. इति लोकसार नामक पंचम अध्ययनका तृतीय उद्देशा पूर्ण हुवा आगे अयोग्य साधु को अकेले फिरने में दोष बताते है. ✕ ÷

गामानुग्राम दु० फिरनेहवे दु०दुक्कर जाना दु०दुक्कर पराक्रमकरना भ० होवे अ०अव्यक्त(१) भि०साधु को ॥ १ ॥ व० वचनसेभी ए० कितनेक चो० प्रेराहुवा कु० कोपकरते हैं मा० मनुष्य उ० उन्नतमान ण० नर म० महा मोहसे. मु० मुन्झाते सं० दुःख व० बहुत मु० फिर दु० दुर्लंघनीय अ० अजानको अ०

सूत्र गामाणुगामं दूइज्जमाणस्स दुज्जातं दुप्परक्कंतं भवति अवियत्तस्स भिक्खुणो ॥ १ ॥ वयसावि एगे चोइआ कुप्पंति माणवा । उन्नयमाणे य णरे महता मोहेण मुज्झति- संबाहा बहवो भुज्जो दुरतिक्कमा अजाणतो अपासतो एयं ते मा होउ एयं कुसलस्स-

भावार्थ अव्यक्त साधुको ग्रामानुग्राम विहार करना फिरना तथा उनका पराक्रमकरना खराब है, उसपर चौभंगी उतारते हैं-(१)सूत्र तथा वय से अव्यक्त साधु को एकिला रहना न कल्पे, क्यों की इससे संयम की तथा आत्माकी विराधना होवे (२) श्रुत से अव्यक्त तथा वय से व्यक्त साधु को एकिला फिरना कल्पे नहीं, अगीतार्थपना से संयम तथा आत्माकी विराधना होवे (३) श्रुत से व्यक्त तथा वय से अव्यक्त साधु को एकिला फिरना कल्पे नहीं बालकपने से सब स्थान पराभवकारी होवे (४) तथा श्रुत से और वय से व्यक्त साधु को गुरुकी आज्ञा से एकिला फिरना कल्पता है परंतु विना आज्ञा एकिला फिरना कल्पता नहीं॥१॥ कितनेक अभीमानी साधु हितशिक्षा का वचन मात्र से विकल्प करके गच्छ का परित्याग करते हैं. एसे अज्ञान, अनन्तदर्शी से अनेक अनन्त दुःख प्राप्त होते हैं कि वे उनको दुर्लंघनीय होते हैं. इसलिये अहो मुनि ! तुम

(१) वयसे अव्यक्त, तथा सूत्रसे अव्यक्त. गच्छमें रहनेवाला १६ वर्ष की वयका तथा गच्छ के बाहिर रहनेवाला ३० वर्षकी वय वाला श्रुतअव्यक्त गच्छमें रहनेवाला को आचारांगका ज्ञान तथा गच्छके बाहिर रहनेवालेको नवपूर्वकी तीसरी वत्थु तकका ज्ञान नहीं हुआ होवे

शब्दार्थ नहीं दर्शनवालेको ए० ऐसीतरह वो म० मतहोवो ए०यह कु० अरिंन का दं० अभिप्राय है ॥१॥ त० तदृष्टि से, त० तदमुक्ति से त० तदृनत्कार मे तदृदशा से, त० तदृ निवास, ज० यत्ना से भर्ते चारित्र चि० चित्तलेपी, पं० पंथगामी, प० आज्ञानुवर्ती पा० जंतुप्रेक्षक, ग० विचरे से० वे अ० जाते प० आते सं० संकुंचन करते, प० प्रसारितकरते नि० निवर्तते सं० प्रमार्जन करते॥२॥ए० एकदा गु० गुणयुक्तको री० फिरते का० कायाके स्पर्शने म० आयेहुवे ए० एकदा पा० प्राणी उ० घातहोवे इ० इसलोक वे० वेदना

सूत्र दंसणं ॥२॥ तद्दिट्ठीए, तम्मुत्तीए, तपुरक्कारे, तस्सनी, तन्निवेसणे, जयं विहारी चित्त णिवाति पंथणिज्झाती, पलियाहिरे, पासिय पाणे गच्छेज्जा। सेअभिक्कममाणं पडिक्कममाणं, संकुंचमाणे, पसारेमाणे, विणियट्टमाणे संपलिमज्जमाणे ॥ ३ ॥ एगया गुणसमियस्स रीयतो काय संफास–मणुचिन्ना एगतिया पाणा उद्दायंति, इहलोगवेयण

भावार्थ को ऐसा नहीं, ऐसा श्री वीर परमात्मा का फरमान है. ॥ २ ॥ साधु का प्रधान कर्तव्य यही है. कि सदैव गुरुकी दृष्टिगोचर रहना. गुरु मनाइ करे उनकी संगति नहीं करना, गुरुकी आज्ञा सन्मान पूर्वक मानना, गुरु के कार्यों पर पूर्ण श्रद्धा रखना, यत्ना मे कार्य करना, गुरुके आने का मार्ग का अवलोकन करना, सर्व प्राणियों की रक्षा पूर्वक गुरुकी साथ ग्रामानुग्राम विचरना, इत्यादि सर्व अभियु जाते, आते, उठते, बैठते, सोते, और पूंजते इत्यादि सर्व कार्य करते गुरु की आज्ञा धारन करना ॥ ३ ॥ सद्गुणी मुनि को यत्ना पूर्वक वर्तते हुवे कदाचित जीव घात हो जावे तो उस पाप का उसी भव में क्षय हो सके इतनाही कर्मबन्ध होता है.

मरा दर्शनवाला ए० एवंतरह वा म० मनको ए०यह कु० अरिहंत का दे० अभिप्राय है ॥२॥ त० तद्दृष्टि, त० तद्मुक्ति से त० तद्सत्कार में तद्संज्ञा में, त० तदी.वान, ज० यत्न में सर्व.वाथ वि० विचरंगी. प० पंथगामी, प० आज्ञानुवर्ती पा० जंतुदेशक, म० विचरे मे० वे अ० जाने प० आते सं० संकुचर करते. प० प्रमार्जित वि० विवर्जित मं० प्रमार्जन करते॥३॥ ए० एकदा गु० गुणयुक्तको री० फिरते का० कायाके स्पर्श म० आयेहुवे ए० एकदा पा० प्राणी उ० पाताहो. इ० इ.लोक वे० वेदना

सूत्र

देरसण ॥२॥ तद्दिट्ठीए, तम्मुत्तीए, तपुरक्कारे, तस्सन्नी, तन्निवेसणे, जयं विहारी चित्त णिवाति पंथाणिज्झाती, पलिबाहिरे, पासिय पाणे गच्छेज्जा। सेअभिक्कममाणं पडिक्कम माणं, संकुचमाणे, पसारेमाणे, विणियट्टमाणे संपलिमज्जमाणे ॥ ३ ॥ एगया गुण-समियस्स रीयतो काय संफास-समणुचिन्ना एगतिया पाणा उद्दायंति, इहलोगवेदण

भावार्थ

को ऐसा नहीं. ऐसा श्री वीर परमात्मा का फरमान है. ॥ २ ॥ साधु का प्रधान कर्तव्य यही है. कि सदैव गुरुकी दृष्टिमें रहना गुरु मना करे उनकी संगति नहीं करना, गुरुकी आज्ञा सन्मान पूर्वक मानना, गुरु के कार्यों पर पूर्ण श्रद्धा रखना, यत्ना से कार्य करना, गुरुके आने का मार्ग का अवलोकन करना, सर्व प्राणियों की रक्षा पूर्वक गुरुकी साथ ग्रामानुग्राम विचरना, इस तरहकी आदि जाते, आते, उठते, बैठते, सोते, और पूंजते इत्यादि सर्व कार्य करते गुरु की आज्ञा पालन करना ॥ ३ ॥ सद्गुणी मुनि को यत्ना पूर्वक वर्तते हुवे कदाचित जीव घात हो जावे तो उस पाप का उसी भव में क्षय हो सके इसवाही कर्मबंध होता है.

वे० कर्मकारकर्म नं० जो आ० आकुट्टीके का० करे कर्म नं० उसे प० जानकर ति० निर्लोभ प० ऐसे अ० अगाढ़ से [illegible] निर्लोभ [illegible], वे० प्राणी ॥ ४ ॥ मे० अब प० दीर्घदर्शी प० [illegible] । उ० उपमान [illegible] मं० मलिन म० [illegible] कर्मके [illegible] अ० आत्मा का [illegible] न० [illegible] कं० कांडी प० यह [illegible] प० पाप आगम जा० जो है [illegible] [illegible] मा० [illegible] विधय प० कहा है ॥ ५ ॥ उ० पीड़ित होना मा० इन्द्रिय [illegible] अ० भी [illegible] आतङ्क

सूत्र

वेजावहिय, जं आउट्टीकयं कम्मं तं परिण्णाय विवेग-मेति । एवं से अप्पमाएणं विवेगं किट्टति वेयवी ॥ ४ ॥ से पभूयदंसी पभूयपरिण्णाणे उवसंते समिए सहिते सयाजए दट्ठुं विप्पडिवेदेति अप्पाणं,—"किमेस जणो करिस्सति, एस मे परमारामो जाओ लोगंसि इत्थिओ" मुणिणा हु एतं पवेदितं ॥ ५ ॥ उब्बाहिज्जमाणे गामधम्मेहिं अवि

भावार्थ

कदाचित् कारणवशात् आकुट्टी—जानकर पाप करना पड़े तो [illegible] आचार्य [illegible] शिष्य [illegible], यह मायाधिक अवधारीपने आदरने से कर्म बंध होते हैं, ऐसा ज्ञान महात्माओं का फरमान है. ॥ ४ ॥ इसलिये दीर्घदर्शी, विवेकी, [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], और [illegible] [illegible] जी को देखकर विचार करते हैं कि यह जीव [illegible] क्या कल्याण होगा ! यह तरुण स्त्रियों के मन को मोहित करती है. यह [illegible] [illegible] श्री [illegible] है. ॥ ५ ॥ यदि पांचांद्रिक

शब्दार्थ अ० असत्य हो० होता है. अ० असत्य म० मानतेहुवे को ए० एकदा स० सत्य हो० होता है, अ० असत्य म० मानतेहुवे को ए० एकदा अ० असत्य हो० होता है ॥ ४ ॥ स० सत्य ऐसा म० माननेवाले को स० सत्य वा० या अ० असत्य वा० या स० सत्य हो० होवे उ० विचारणासे अ० असत्य म० माननेवाले को स० सत्य वा० या अ० असत्य वा० या अ० असत्य हो० होवे उ० विचारणासे ॥ ५ ॥

सूत्र असमियंति मण्णमाणस्स एगया समियाहोति, असमियं–ति मण्णमाणस्स एगया असमिया होति ४ समियं-ति मण्णमाणस्स समिया वाअसमियावा समिया होति उवेहाए-असमियं-ति मण्णमाणस्स समिया वा असमिया वा असमियाहोति उवेहाए।५।उवेहमाणो अणुवेह

भावार्थ कीतनक शुद्ध श्रद्धे हैं १ कितनेक अल्पज्ञ दीक्षा ग्रहण करते समय तो सत्य मानते हैं और फीर कितनेक भरमाने से भ्रमित होजाते हैं, तथा असत्य मानने लग जाते हैं. ॥ ४॥ कितनेक सरल स्वभावी दीक्षा ग्रहण करते समय दीक्षा का कुच्छभी मतलब नहीं समझते हैं. परंतु जैसे २ तत्वों का स्वरूप की पहिचान होती जाती है, वैसे २ श्रद्धालु बन जाते हैं, और कितने पाखण्डी मिथ्याग्रही बन जिनवचन को सदैव असत्य ठहराते हैं. ।६। जो सम्यक् ज्ञानी हैं, उनकी असत्य व सत्य दोनों बातों यथार्थ विचारणासे सम्यक् समझतीहै

शब्दार्थ

उ० ज्ञान. अ० अज्ञान में कु० करे उ० विचार करे स० सत्य में इ० ऐसे त० तहां स० कहीं नित्य ओ० ओलगावा म० होता है ॥ ६ ॥ से० वे उ० सावधान हुवे द्वि० अस्थित ग० सुगति स० अच्छीतरह पा० देखो. ए० यहां भी बा० अज्ञानी अ० अपनी आत्मा को णो० नहीं उ० उपदेश करे ॥ ७ ॥ तु० तू है स० वह चे० निश्चय जं० जिन को हं० मारना नि० ऐसा म० मानता है, तु० तू ही है स० वह चे० निश्चय. जं० जिसे अ० कब्ज करना नि० ऐसा म० मानता है, तु० तू ही है स० वह चे० निश्चय जं० जिसे

सूत्र

मागं वृया—उवेहाहि समियाए, इच्चेवं तत्थ संधी झोसितो भवति ॥ ६ ॥ से उट्ठियस्स ठियस्स गतिं समणुपासह । एत्थवि बालभावे अप्पाणं णो उवदंसेज्जा ॥ ७ ॥ तुमंसि नाम स चेव जं हंतव्वं ति मन्नसि, तुमंसि नाम स चेव जं अज्जावेयव्वंति मन्नसि, तुमं

भावार्थ

है. उनको अनन्य व सत्य दोनों वातों यथार्थ विचारना से सम्यक परगमाते है. और मिथ्यादृष्टिको सत्य व अनन्य दोनों वातों अयथार्थ विचारना से असम्यक परगमती है. ॥ ६ ॥ सम्यक्ज्ञानी मिथ्यात्वी को सम्यक्त्वी बनाने के लिये प्रेरित करते हैं, कि अहो बुद्धिमान तुम सम्यक प्रकार से विचारकरो. क्योंकि ऐसा सम्यक विचार करने में ही कर्म क्षय होता है. ॥ ६ ॥ अहो मुनि ! श्रद्धावान तथा गुरुकुल निवासी मुनि की पद्धति और गति का अवलोकन करो, वैसेही पार्श्वस्थ तथा स्वच्छंदाचारी की पद्धति का तथा गति का विचार करो: फिर तत्ववेत्ता बन असंयम से आत्मा को बचावो ॥ ७ ॥ अहो पुरुष ! जिसको तू

[illegible] माना है. तु० तू ही है स० वह चे० निश्चय जं० जिसकी प० घात करना म० मानता है ए० ऐसे ही तु० तू ही है स० वह च० निश्चय जं० जिसे उ० उद्वेग करना म० मानता है. अं० सरल चे० इस में प्रतिबुद्ध जीवी, त० इस लिये ण० न मारो वि० विग्रह करो अ० पीछा भोगने अ० आत्मा से जं० जिसे हं० मारना णा० न वांछे ॥ ८ ॥ जे० जो, आ० आत्मा से० वे वि० जाणनेवाला

सूत्र सि नाम स चेव जं परितावेयव्वांति मन्नासि तुमंसि नाम स चेव जं परिघेतव्वांति मन्नासि एवं तुमंसि नाम स चेव जं उद्दवेयव्वांतिमन्नासि, अंजू चेयंपडिबुद्धजीवी तम्हा णहंता, णविघाय ए अणुसंवेयणं–मप्पाणेणं, जं हंतव्वं णाभिपत्थए ॥ ८ ॥ जे आया से विन्नाया जे

भावार्थ मारने का, तारे करने का, दुःखी करने का, पकडने का, प्राण रहित करने का विचार करता है. उस समय यह भी विचारना चाहिये कि वह ही मैं हूं. ऐसी समझ सरल स्वभावीयों की होती है. इसलिये साधु किसी को मारे नहीं. क्योंकि अन्य को मारने से अपनी आत्मा को दुःख भोगना पडता है. ऐसा जानकर किसी को दुःख देने का विचार सुद्धां नहीं करना ॥ ८ ॥ जो आत्मा है वह ही जानने वाला है, और जो जानने वाला है वह ही आत्मा है. जिस ज्ञान से जाना जाय वह ज्ञानही आत्मागुण है. और इस गुणकी अपेक्षा से ही आत्मा कहा जाता है. इस तरह [illegible]

शब्दार्थ जे० जो वि० जाननेवाला है से० वे आ० आत्मा, जे० जिस से वि० जानाजाता है प० यह आत्मा तं० उस प० अंश प जानना, ए० यह आ० आत्मवादी स० सम्यक प्रकार प० संयम वि० कहा त्ति० ऐसा प० कहता हूं ॥ ५ ॥ इ० ऐसा लो० लोकसार अध्ययन पं० पंचम उ० उद्देश. * *

अ० अनाज्ञा में ए० कितनेक उ० उद्यमी आ० आज्ञा में ए० कितनेक नि० निरुद्यमी ए० यह ते० तुमको मा० मत हो दोनों ए० यह कु० कुशल का दं० दर्शन है. ॥ १ ॥ त० तद्दृष्टि में त० तन्मुक्ति में

सूत्र विन्नाया से आया, जेण वियाणति से आया तं पडुच्च परिसंखायए, एस आयवादी समियाए परियाए वियाहिते—त्तिबेमि ॥ ५ ॥ इति लोकसाराज्झयणस्स पंचम उद्देसो.

अणाणाए एगे सोवट्ठाणे, आणाए एगे निरुवट्ठाणे, एतं ते मा होउ एयं कुसलस्स दंसणं ॥ १ ॥ तद्दिट्ठीए, तम्मुत्तीए, तप्पुरक्कारे, तस्सण्णी तण्णिवेसणे, अभिभूय अदक्खु अण

भावार्थ यह ही सो आत्मवादी है और उसकाही संयमअनुष्ठान यथार्थ कहा जाता है, ॥ ५ ॥ इति लोकसार नामक पंचम अध्ययन का पंचम उद्देशा पूर्ण हुवा. आगे उन्मार्ग तथा रागद्वेष त्यागने का बोध करते हैं.

इस जगत् में कितनेक जिनाज्ञा के विरुद्ध वर्तन करते हैं. और कितनेक जिनाज्ञानुकूल प्रवृत्तिमें निरुद्यमी रहते हैं अहो मुनि ! तुम को ये दोनों बातों न होवो. ऐसा श्री तीर्थंकरका दर्शन है ॥ १ ॥ जो मुनि गुरुकी आज्ञा में रहते हुवे गुरु का कथन स्वीकारते हैं, गुरुको बहुत सन्मान करते हैं, श्रद्धा रखते हैं,

अन्वयार्थ

स० सातकार में स० शब्दादि में सावद्यनिराम में, अ० जीतकर अ० ऐसा न० नहीं जीवात्मा प० पर्मे नि० निराकरी अ० जो म० महात्मा, अ० भगवान की आज्ञा में मन ॥ २ ॥ प० गुरुपरम्परा से प० श्रवन, जा० जाने म० सर्वज्ञ से, प० जि० उपदेशसे, अ० दूसरेके पा० या अ० पास सो० सुनकर ॥ ३ ॥ नि० आ- ज्ञा ना० नहीं उल्लंघे मे० पंडित मु० अच्छी तरह विचारकर, म० सर्वथा स० सम्यक्प्रकार से स० समजा- कर ॥ ४ ॥ इ० यहां (जगत में) प० जानकर अ० अतीन गुप्त प० सर्वेन्द्रिय नि० दोषार्थी वी० वीर आ०

मूल

निमंते, एस णिरालंबणयाए जे महं अबहिमणे ॥२॥ पवादेणं पवायं जाणेज्जा सहस- म्मइयाए परवागरणेणं अन्नेसिं वा अंतिए सोच्चा ॥ ३ ॥ णिद्देसं णातिवत्तेज्जा मेहावी सुपडिलेहिय सव्वओ सव्वप्पाए सम्ममेव समभिजाणिया ॥ ४ ॥ इहारामं परिण्णा

भावार्थ

जो महात्मा हो वह सर्वोपदेश से कदापि बाहिर नहीं जाता है. और वे किसी से पराभूत नहीं होते हुवे निरालम्बनरूप भावना भाने को समर्थ होते हैं, ॥ २ ॥ गुरुकी परंपराने जिनोपदेश को जानना अथवा जिनोपदेश से परवादीया के प्रवाद समझना वे जिन प्रवाद तथा परतीर्थिक प्रवाद जिस प्रकार से जाने जाते हैं सर्वज्ञादि द्वारा तीर्थंकर के कहने से तथा आचार्यादिक की पासमे श्रवण करनेसे॥३॥ उक्त प्रकार से स्वसमवाद तथा परमवाद को समाप्त कर सर्वज्ञ प्रवाद को यथार्थ जानकर बुद्धिमान सर्वो- पदेश को उल्लंघे नहीं ॥ ४ ॥ इस जगत में संयम को सच्चा सुखस्थान जानकर जितेन्द्रिय रहना

शब्दार्थ आज्ञा में स० सदा प० विचरे नि० ऐसा बे० कहता हूं ॥५॥ उ० ऊर्ध्व सो० श्रोत, अ० अधो सो० श्रोत ति० तिर्यग् सो० श्रोत वि० जानना. ए० इतने सो० श्रोत वि० कहाये, जे० जो इस को सं० संग पा० देखो आ० आवर्त में ए० यहां पे० देखकर ए० इस वि० निवर्ते वे० ज्ञानी ॥६॥ वि० निवर्तने के लिये सो० श्रोत नि० निकले ए० यह म० महंत अ० निष्कर्मी जा० जानता है पा० देखता है प० देखकर के णा०

सूत्र य अल्लीणगुत्तो परिव्वए णिट्ठियट्ठि वीरे आगमेणं सयापरिक्कमेज्जासित्तिबेमि ॥५॥ उड्ढं सोता अहे सोता तिरियं सोता वियाहिया, एते सोया वियक्खाया, जेहिं संगति पासह आवट्टं सेयंतु पेहाए एत्थ विरमेज्ज वेयवी ॥६॥ विणेउं सोयं णिक्खम्म एस महं अकम्मा जाणति पासति पडिलेहाए णावकंखति. इह आगतिं गतिं परिण्णाय अच्चाति जा-

भावार्थ इच्छता नहीं परन्तु मेधावी धीरों को सदा जिनाज्ञा में ही रहना ऐसा मैं कहता हूं. ॥ ५ ॥ ऊंची, नीची व तिर्यक् दिशा में संयमस्थान में पापोपार्जन करने का प्रवाह बह रहा है. इससे जहां २ आसक्तता होती है, वहां २ कर्मबन्ध होते हैं. ऐसे पापचक्र का परिवर्तन देख विषय भोगोंसे ज्ञानी को दूर रहना ॥ ६ ॥ जो पुण्य पाप आनेका प्रवाह को बंध करने के लिये दीक्षा लेते है, वे घातिक कर्मों का क्षय करके सर्वज्ञ सर्वदर्शी बनते हैं. उनकी इन्द्रादि महिमा पूजा करते हैं. तथापि वे परमार्थी उसको नहीं चाहते हैं. और प्राणियों को संसार में परिभ्रमण करते हुवे देखकर आप उस परिभ्रमण से मुक्त होकर मुक्ति का सुख में विराजमान

शब्दार्थ

भा० भारक र० रास उ० भाणी में उ० उदकरूप आ० आकाशगामी, पा० माणी मा० माणीको कि० क्लेश देवे पा० देख लो० लोक में म० महाभय ब० बहुत दु० दुःखी हु० निश्चय जं० जीवों ॥ ८ ॥ स० आसक्त का० कामभोग में मा० मनुष्यों अ० निर्दयता से व० वध को ग० जाते हैं स० शरीर प० क्षणभंगुर ॥ ९ ॥ अ० आर्तवंत से० वे ब० बहुत दु० दुःखी इ० ऐसे बा० अज्ञानी प० करते हैं ए० यह रो० रोग ब० बहुत ण० जान अ० आतुर प० परीताप पावे ॥ १० ॥ ण० नहीं पूर्ण पा० देवे अ०

मूल

संसिराणा भालगा रसगा उदर उदयचरा आगासगामिणो पाणाराणे किलेसंति । पा

स लोए महब्भयं, बहुदुक्खा हु जंतवो ॥८ ॥ सत्ता कामेहिं माणवा अबलेण वहं गं

च्छंति सरीरिणं पभंगुरेण ॥ ९ ॥ अट्टे से बहुदुक्खे इति बाले पकुव्वति एते रोगे बहु

णच्चा, आउरपरितावए ॥ १० ॥ णालं पास अलं तवेतेहिं एयं पास मुणी महब्भयं

भावार्थ

इस जगतमें महाभय हो रहा है तथा जीव बहुत दुःखी हो रहे हैं. ॥८॥ मनुष्य काम भोगमें आसक्त होकर के वल क्षणभंगुर शरीरके लिये पापकर्के दुःखी होते हैं.॥९॥ आर्तध्यान तथा बहुत दुःख भुक्तनेवाले अज्ञानी शरीर मे आये हुवे अनेक रोगों को देखकर उनकी चिकित्सा के लिये अनेक प्रकारके जंतुओं का संहार करते हैं ॥ १० ॥ औषधि से कुछभी रोग दूर नहीं होता है. परंतु हिंसा युक्त औषधि सेवन करने से कर्म रोग की

शब्दार्थ अनुप्र. ॥ १ ॥ अ० अथ कितनेक ध० धर्म आदर अ० प्रदीप कुरण सहित मु० परिषद सहते, ...अ० अभिग्रह द० दृढ, स० सर्व ने गि० शुद्धताको प० जान करके ए० ऐसी प० संयम में ... मा० महामुनि, ॥ २ ॥ अ० अकिंचनके अ० छोड स० सर्वथा; स० स्नेह ण० नहीं म० मेरा ... है ए० ऐसा ए० अकेला ह० मैं हूं, ज० यत्नसे ए० यहां, वि० विरति अ० साधु स० सर्वथा

सूत्र रिणाणाए भेदो । एवंसे अंतराइएहिं कामेहिं आकेवलिएहिं अवितिण्णाचेए ॥ १ ॥ अहेगे धम्ममादाय आदाणप्पभिति सुपणिहिए चरे अप्पलीयमाणे दढे सव्वं गिद्धिं परिण्णाय एस पणते महामुणी ॥ २ ॥ अइअच्च सव्वतो संगं णमहं अत्थित्ति इति एगो हमंसि, जयमाणे एत्थ विरते अणगारे सव्वतोमुंडे रियंते, जे अचेले परिवुसिए संचि

भावार्थ ... मानना निश्चित मुश्किल है ॥ १ ॥ और कितनेक भव्य धर्म का स्वरूप जानकर दीक्षा अंगीकार करके ... आचार पालते हैं किसी प्रकारके प्रपंचमें पडते नहीं हैं और ग्रहण किये हुवे व्रतों को शुद्ध रीति ... आज्ञा में रहते हैं वे ही त्यागी महामुनि कहाये गये हैं ॥ २ ॥ इस लिये साधु को सर्व प्रपंचों का त्याग करके " मेरा कोई नहीं है मैं एकिला हूं " ऐसी एकान्त भावना भावता हुवा पापकर्म से निवर्तना चाहिये तथा द्रव्य भाव से मुण्डित होकरके अचेल (वस्त्र रहित) बनना सदा उत्साह पूर्वक संयम

शब्दार्थ

भपूर्ण अ० अतृप्त. ॥ १ ॥ अ० अथ कितनेक ध० धर्म आदर अ० धर्मोप करण सहित सु० परिषह सहते, च० धर्मपाले, अ० अप्रतिबद्ध द० दृढ, स० सर्व में गि० शुद्धताको प० जान करके ए० येही प० संयम में नतर मा० महामुनि, ॥ २ ॥ अ० अतिक्रमके अ० छोडे स० सर्वतः स० सम्बंध ण० नहीं म० मेरा अ० है इ० ऐसा ए० अकेला इ० मैं हूं, ज० यतना से ए० यहां, वि० निवर्तो अ० साधु स० सर्वथा

सूत्र

ग्भिाणाए भेदो । एवंमे अंतराइएहिं कामेहिं आकेवलिएहिं अवतिन्नावेए ॥ १ ॥ अहेगे धम्ममादाय आदाणप्पाभीति सुपणिहिए चरे अप्पलीयमाणे दढे सव्वं गिद्धिं परिणाय एस पणते महामुणी ॥ २ ॥ अइअच्च सव्वतोसंगं णमहं अत्थित्ति इति एगो हमंसि, जयमाणे एत्थ विरते अणगारे सव्वसोमुंडे रियंते, जे अचेले परिवुसिए संचि

भावार्थ

ऐसी सामग्री मिलनी मुश्किल है ॥ १ ॥ और कितनेक भव्य धर्म का स्वरूप जानकर दीक्षा अंगीकार करके आरंभ से दूर रहते हैं किसी प्रकारके प्रपंचमें पडते नहीं हैं और ग्रहण किये हुवे व्रतों को शुद्ध रीति से पालते सदा आत्मरमणता में रहते हैं वे ही यती महामुनि कहाये गये हैं ॥ २॥ इस लिये साधु को सर्व प्रपंचों का त्याग करके " मेरा कोई नहीं है मैं एकिला हूं " ऐसी एकान्त भावना भावता हुवा पापकर्म से निवर्तना चाहिये तथा द्रव्य भाव से मुण्डित होकरके अचेल (ममत्व रहित) बनकर ...

शब्दार्थ पु० पीड़ित गा० [illegible] अ० वस्त्र रहित प० धान्य सं० रहते ओ० उणोदरी करता ॥३॥ से० वे [illegible] पाल्क
ह० मारे लु० लुंचते प० निन्दा परिनिन्दाकरे अ० अथवा प० विशेष निन्दे अ० असत्य स० शब्द
फा० स्पर्श इ० इन सं० जाणकर पु० अनुकूल अ० प्रतिकूल अ० जानकर ति० सहन करता प०
प्रवर्ते जे० जो हि० मनोहर अ० अमनोहर चि० छोड़ स० सर्व वि० शंका फा० स्पर्श स० सम्यग
दर्शनी ॥ ४ ॥ ए० यह मो० अहो ण० निग्रन्थ वु० कहे, जे० जो लो० लोकमें अ० प्रतिमा पाल्क

सूत्र कस्सवि आतायणियाए ॥३॥ से आकुट्टे वा, हए वा, लुंचिए वा, पलियं पकंथे अदुवा पकंथे अतहेहिं सद्दफासेहिं इति संखाए एगतरे अन्नयरे अभिन्नाय तितिक्खमाणे परिव्वए जय हिरीमणं जे य अहिरीमाणं चिच्चा सव्वं विसोत्तियं फासे समियदंसणे॥४॥एते भो णगि

भ.सार्थ पाल्क और परिमित आहार लेकर उणोदरी तप करता ॥ ३ ॥ जिस समय कोई द्वेष से पूर्व किये हुवे [illegible] कर्मों को याद कर साधु की बेअदबी करे, असत्य कलंक चढ़ाकर, चपेटादि मारकर, बालादि खेंच कर, दुःख देवे तब मुनि को विचारना कि ये मेरे पूर्वकृत कर्म के फल उदय हुवे हैं इनको भोगने से ही मुक्त होवूंगा. इस विचार से अनुकूल स्तुति योग और प्रतिकूल परिषहादि [illegible]

शब्दार्थ
ध० धर्मी. " आ० आज्ञामें मा० मेरा ध० धर्म " ए० यह उ० प्रधान वा० वाद इ० यहां
मा० मनुष्यों को वि० कहा है. ॥ ६ ॥ ए० संयम में रक्त तं० उसे झो० क्षय करते हुए आ० आश्रव को
प० जानकर प० संयम से वि० दूर करे. ॥ ७ ॥ इ० यहां ए० कितनेक ए० एकल विहारी, हो० होते
हैं. त० तहां इ० अन्य इ० दूसरे कु० कुलसे सु० शुद्ध एषणा युक्त. स० सर्व एषणा युक्त से०
वे० मे० पण्डित प० भरते सु० सुरभिगंध अ० अथवा दु० दुरभिगंध अ० अथवा त० तहां भे० भयङ्कर

सूत्र
णा वुत्ता जे लोगंसि अणागमणधम्मिणो ॥५॥ "आणाए मामगं धम्मं,, एस उत्तरवा
दे इह माणवाणं वियाहिते ॥ ६ ॥ एत्थोवरए तं झोसमाणे आयाणिज्जं परिण्णाय प
रियाएणं विगिंचइ ॥ ७ ॥ इह मेगेसिं एगचरिया होति तत्थियरा इयरेहिं कुलेहिं
सुद्धेसणाए सव्वेसणाए से मेहावी परिव्वए सुब्भि अदुवा दुब्भि अदुवा तत्थ भेरवा

भावार्थ
नेर्ग्रंथ कहे जाते हैं ॥५॥ श्री तीर्थंकर भगवान का फरमान है कि, "आज्ञा में ही मेरा धर्म है." यह फरमान
मनुष्यों के लिये उत्कृष्ट है. ॥ ६ ॥ इस लिये मुनि को संयम में तल्लीन रहकर कर्मोंका क्षय करते हुवे धर्म
कार्य करना क्योंकि, धर्म का स्वरूप जाने बाद ही संयम से कर्म क्षय होते हैं ॥ ७ ॥ कितनेक उत्तम
मुनि एकिले फिरते हैं, उन को आन्त प्रान्त कुल में से निर्दोष आहार लेकर शुद्ध संयम पालते हुवे विचरना
सुगंधि या दुर्गंधि आहार होवे तो भी उस पर रागद्वेष नहीं करना. एकिले फिरते [illegible]

शब्दार्थ

पा० प्राणी पा० प्राणीको कि० क्लेशउपजाते हैं. ते० वे फा० स्पर्श पु० स्पर्शे धी० धीर अ० सहन करे ते० ऐसा बे० कहता हूं ॥ ८ ॥ * * *

ए० यह सु० निश्चय मु० साधु आ० आश्रव(?) स० सदा सु० अच्छा कहा ध० धर्म वि० सम्यक् प्रकारे नहीं आचार णि० त्याग करके ॥ १ ॥ जे० जो अ० वस्त्र रहित प० संयममें रहते हैं. त० उन गि० साधु

सूत्र

पाणा पाणे किलेसंति ते फासे पुट्ठो धीरो अहियासेज्जासि त्तिबेमि ॥ ८ ॥ इति धूता ख्य मज्झयणस्स बीओद्देसो सम्मत्तो. * * *

एयं खु मुणी आयाणं सया सुअक्खायधम्मे विधूतकप्पे णिज्झोसइत्ता ॥ १ ॥ जे

भावार्थ

परिसह उत्पन्न होवे तो उसे भी समभाव से सहना. इति धूताख्य छट्ठा अध्ययन का द्वितीय उद्देशा पूर्ण हुवा. इस उद्देशा में कर्मक्षय करने का उपाय कहा. कर्म क्षय ममत्वत्याग से होता है इस लिये उपकरण और शरीर का ममत्वत्याग आगे बताते हैं, * * *

सदा शुद्धाचारी, धर्म पालनेवाले, सद्बोधक मुनि धर्मोपकरण सिवाय सर्व वस्तु का परिहार करते हैं. ॥ १ ॥ जो साधु × वस्त्ररहित रहते हैं उन को कभी ऐसा विचार नहीं होता है कि, यह मेरा वस्त्र जीर्ण

शब्दार्थ को णो० नहीं ए० ऐसा भ० होवे प० जीर्ण हुवे मे० मेरे व० वस्त्र; व० वस्त्र जा० याचूंगा सु० सूत जा० आदूंगा, सु० सूइ आ० आदूंगा, सं० जोडूंगा सी० सीवूंगा उ० बडा करूंगा वो० छोटा करूंगा प० पहरूंगा प० ओढूंगा. ॥ २ ॥ अ० अथवा त० वहां प० पराक्रम करते तं० उन मु० फिर अ० वस्त्र रहित को त० तृण फा० स्पर्श, फु० स्पर्शे सी० शीत फा० स्पर्श फु० स्पर्शे, ते० उष्ण फा० स्पर्श फु० स्पर्शे, द० दंशमच्छर फा० स्पर्श फु० स्पर्शे. ए० अनुकूल अ० प्रतिकूल वि० विविध प्रकारके फा० स्पर्श अ० सहनकरे अ० वस्त्र रहित ला० हलकापना अ० जानता हुवा त० तपका से० उने अ० लाभ उपार्जन भ० होवे

मूल अचेले परिवुसिए तस्सणं भिक्खुस्स णो एवं भवइ:—परिजिण्णे मे वत्थे, वत्थे जाइस्सामि, सुत्तं जाइस्सामि, सूइं जाइस्सामि, संधिस्सामि, सीविस्सामि, उक्कासिस्सामि, वोकसिस्सामि, परिहरिस्सामि, पाउणिस्सामि ॥ २ ॥ अदुवा तत्थ परक्कमंतं भुज्जो अचेलं तणफासा फुसंति, सीयफासा फुसंति, तेउफासा फुसंति, दंसमसगफासा फुसंति, एगयरे

भावार्थ होगया है अब मैं नया याचूं, उसे सीने के लिये सूइ दोरा याचूं, उसे कमीज्यादा छोटा बडा करूं या पहरू ओढूं ॥ २ ॥ वस्त्र रहित मुनि के शरीर में घास, कंकर, कांटे आदि तीक्ष्ण वस्तु लगजाते हैं. शीत, ताप, डांस मच्छरादि दुःख देते हैं और भी तरह २ के अनुकूल प्रतिकूल परिसह उन को सहन करने पडते हैं इतने परिसह पडने पर भी स्वाध्याय ध्यान नहीं छोडते हुवे जो समभावसे रहते हैं उन को बडा तपका लाभ

[illegible] भगवन्ने प० कहा है म० मैंना अ० मानकलं म० मर्व मरह
[illegible] अच्छा जाने प० एंगे मे० उन म० महावीर पुरुषों न० प्रकृत काल,
[illegible] हुवे ह० योग्यों पा० हेतो अ० सहन किये ॥ ४ ॥ आ०
[illegible] हार प० मोटे पे० मोम गो० रक्त वि० विपुल क० करे
[illegible] अहियासेति, अचेले ल्हाथं आगममाणं, नवेमे अतिममणा
[illegible] नमेव अतिसमेच्चा सच्चंसो सच्चताए स
[illegible] महावीराणं चिरराई पुव्वाई वासाणि रीयमाणाणं
[illegible] आगयपण्णाणाणं किसा बाहा भवंति, पयणुए मंस
[illegible] सेणी मुंते विरए त्रियाहिए—त्तिबेमि ॥ ६ ॥ त्रि
[illegible] फरमाया है. ऐसा परिषह आदय सहित महावीर ने सहना और
[illegible] जो कुछ सहन किया है उस को ऐसी चिन्हु यथा मयरा
[illegible] और उन के शरीर में मांस रक्त कम रहता है ऐसे साधु स-
[illegible] गुणों के धारक होते हैं. मैं यथाप

शब्दार्थ को णो० नहीं ए० ऐसा भ० होवे प० जीर्ण हुवे मे० मेरे व० वस्त्र; व० वस्त्र जा० याचूंगा सु० सूत आ० लाउंगा. सू० सूइ जा० जाचूंगा, सं० जोडूंगा सी० सीवूंगा उ० बडा करूंगा वो० छोटा करूंगा प० पहरूंगा प० ओढूंगा. ॥ २ ॥ अ० अथवा त० तहां प० पराक्रम करते तं० उने भु० फिर अ० वस्त्र रहित को त० तृण फा० स्पर्श, फु० स्पर्शे सी० शीत फा० स्पर्श फु० स्पर्शे, ते० उष्ण फा० स्पर्श फु० स्पर्शे. दं० दंशमच्छर फा० स्पर्श फु० स्पर्शे. ए० अनुकूल अ० प्रतिकूल वि० विविध प्रकारके फा० स्पर्श अ० सहनकरे अ० वस्त्र रहित ला० हलकापना अ० जानता हुवा त० तपका से० उने अ० लाभ उपार्जन भ० होवे

सूत्र अचेले परिवुसिए तस्सणं भिक्खुस्स णो एवं भवइ:—परिजिण्णे मे वत्थे, वत्थे जाइस्सामि, सुत्तं जाइस्सामि, सूइं जाइस्सामि, संधिस्सामि, सीविस्सामि, उक्कासिस्सामि, वोक्कासिस्सामि, परिहरिस्सामि, पाउणिस्सामि ॥ २ ॥ अदुवा तत्थ परक्कमंतं भुज्जो अचेलं तणफासा फुसंति, सीयफासा फुसंति, तेउफासा फुसंति, दंसमसगफासा फुसंति, एगयरे

भावार्थ होगया है. अब मैं नया याचूं, उसे सीने के लिये सूइ दोरा लावूं, उसे कमीज्यादा छोटा बडा करूं या पेहरूं, ओढूं. ॥ २ ॥ वस्त्र रहित मुनि के शरीर में घास, कंकर, कांटे आदि तीक्ष्ण वस्तु लगजाते हैं. शीत, ताप, डांस, मच्छरादि पीडा देते हैं. और भी तरह २ के अनुकूल प्रतिकूल परिसह उन को सहन करने पडते हैं ऐसे परिसह पडने पर भी लाघवपना का धर्म नहीं छोडते हुवे जो समभावसे रहते हैं उन को महा तपका लाभ

...यह भ० भगवन्तने प० कहा है त० तैसा अ० जानकरके स० सर्व तरह
म० सर्वात्मपने म० समभावित म० अच्छा जाने ए० ऐसे ते० उन म० महावीर पुरुषको च० बहुत काल,
पु० पूर्वोक्त वा० वर्षोतक री० रहते हुवे द० मोक्षार्थी पा० देखो अ० सहन किये ॥ ४ ॥ आ०
आगत प० प्रज्ञावंत कि० कृश बा० हाथ भ० होवे प० थोड़े मं० मांस सो० रक्त वि० विपुल क० करे
प० परिज्ञा से प० यह लि० लिंग मु० मुक्त वि० अनंत वि० कहा है त्ति० ऐसा बे० कहता हूं ॥ ५ ॥ वि०

अणयंर विरूवरूवे फासे अहियासेति, अचेले लाघवं आगममाणे, तवेसे अभिसमण्णा
गए भवति ॥ ३ ॥ जहेयं भगवता पवेदितं तमेव अभिसमेच्चा सव्वतो सव्वत्ताए स
मत्त मेव समभिजाणिया, एवं तेसिं महावीराणं चिरराइं पुव्वाइं वासाणि रीयमाणाणं
दवियाणं पास, अहियासियं ॥ ४ ॥ आगयपण्णाणाणं किसा बाहा भवंति, पयणुए मंस
सोणिए विस्सेणिं कट्टु परिण्णाए एस तिण्णे मुत्ते विरए वियाहिए—त्तिबेमि ॥ ५ ॥ वि

...होता है ॥ ३ ॥ जैसा भगवन्त ने फरमाया है, वैसा पवित्र आशय सहित समभाव से चलना और
...काल में महर्षियों ने बहुत पूर्वो के वर्षों पर्यन्त जो कष्ट सहन किया है उस को दृष्टि बिन्दु बना रखना
॥ ४ ॥ ज्ञानी मुनियों की भुजा कृश होती है, और उन के शरीर में मांस रक्त कम रहता है ऐसे साधु स-
...राग द्वेष कषायरूप संसारश्रेणी का नाश कर क्षमादि गुणों के धारक होते हैं. वे भवोघ
...से मुक्त तथा पापवृत्ति से दूर कहलाते हैं, ऐसा मैं कहता हूं ॥ ...

...नु प० विचरते चि० बहुत काल से सि० कदाचित् अ० अरति त० तहां कि क्या वि० हरजित होवे॥६॥ सं० जोडता स० सावधान अैसे से० वे दी० दीप अ० ढके नहीं ए० ऐसे से० उनका ध० धर्म आ० आर्य प० प्रणित ॥ ७ ॥ ते० वे अ० निर्वाच्छक पा० प्राणी का घात नहीं करते द० नियकारी मे० मेधावी, पं० पण्डित. ॥ ८ ॥ ए० ऐसे ते० उनके भ० भगवन्त को अ० असावधान ज०

सूत्र

रयं भिक्खुं रीयंतं चिरराते सियं अरती तत्थ किं विहारए? ॥ ६ ॥संदेमाणे समुट्ठिए जहा से दीवे असंदीणे—एवं से धम्मे आरियपदेसिए ॥ ७ ॥ ते अणवकंखमाणा, पाणे अणतिवातेमाणा दइता मेहाविणो पण्डिया ॥ ८ ॥ एवं तेसिं भगवओ अणुट्ठा

भावार्थ

संयम पालनेवाले, असंयम से निवर्तनेवाले, अनुत्तर-प्रधानधर्म की वृद्धि करनेवाले साधु को भी कदाचित् अरति पैदा हो जाय तो वे चलित हो जाते हैं ॥ ६ ॥ कदाचित् उक्त गुणविशिष्ट साधु को अरति कुछ भी नहीं कर सकती है क्यों की उनके अच्छे प्रणामों की श्रेणी बढती जारही है. ऐसे वर्धमान परिणामी साधु पानी ढके नहीं ऐसा द्वीप तुल्य है. वैसे ही तीर्थंकर भाषित धर्म भी द्वीप तुल्य है ॥ ७ ॥ साधु सर्व भोगों की इच्छाओं का त्याग करके सर्व प्राणियों के पालक बने हैं इस से सब को सहकारी हैं और मर्यादा से रहते हुवे पंडित पद को प्राप्त हुवे हैं ॥ ८ ॥ जिन को ऐसा ज्ञान नहीं होता है, वे भगवान के धर्म में

... पराक्रम, ए० ऐसे वे शि० शिष्य को दि० दिनको रा० रातको अ० अनुक्रमे वा० पढाते हैं. त्ति० ऐसा मैं कहता हूं ॥ ४ ॥ ÷ ÷

ए० ऐसे ते० वे शि० शिष्य दि० दिनको रा० रात को अ० अनुक्रम से वा० पढाते अभ्यास कराते ते० वे म० महावीर पुरुषों प० प्रज्ञावन्त ते० तत समीप प० प्रज्ञा मु० प्राप्त किया हुआ ॥ छ० छोडके

सूत्र

णं जहा से दियपोए, एवं ते सिस्सा दिया य राओ य अणुपुव्वेण वाइय—त्तिबेमि॥५॥

इति धूताख्य मज्झयणस्स तइओ इसो * *

एवं ते सिस्सा दिया य राओ य अणुपुव्वेण वाइया तेहिं महावीरेहिं पण्णाणमंतेहिं ते

भावार्थ

पूर्णतया उत्पन्न नहीं होते हैं. ऐसे शिष्यों को पण्डित मुनि जैसे पक्षी अपने बच्चों को पालते हैं वैसे ही पाले—धर्म में प्रवीण बनावें. इस तरह अभ्यास होने से वे संसार को उत्तीर्ण होने में समर्थ बनजाते हैं ऐसा मैं कहता हूं. इति धूताख्य छट्ठा अध्ययन का तीसरा उद्देशा पूर्ण हुआ इस उद्देशा में शरीर उपकरण के ममत्व का त्याग क..., और साधु को मुलक्षण नहीं होना सो बताते हैं. ÷

महा पराक्रमी, विद्वान गुरु शारीरिक परिश्रम करके अपने शिष्यों को पढावें. उन में से कितनेक शिष्यों ऐसे हैं कि गुरु की पास से विद्या प्राप्त कर बाद शान्तभाव को छोड़ अभिमानी ...

उपदेश प० कठिन स० आदरे ॥१॥ ब० रहकर के० ब्रह्मचर्य में आ० आज्ञा० नं० उसको णो० नहीं मानते हुवे भा० रहते सो० गुरु कर बि० धारकर स० अच्छी तरह जानकर जी० जीते ए० कितनेक नि० [illegible] अ० सहन होते बि० बाह से जलते हुए का० काम में गि० गृद्धि अ० नाश हुवे स० समाधि आ० कहने प० को सेवा करते स० शिक्षा को, फ० कठिन शब्द व० कहते हैं ॥२॥ सी० शीलवंत, उ० उपशांत, स० प्रज्ञा से री० रहते हुवे अ० कुशीलिया अ० निर्दंत हुवे की वि० दुगुणी प० मूर्खता

सिक्खिए पण्णाण सुयमन्तं हेचा उवसमं फारुसियं समादियंति ॥ १ ॥ वसित्ता बंभचेरं सि आणं त णो त्ति मण्णमाणा, अग्घायं तु सोच्चा णिसम्म समणुन्ना जीविस्सामो, एगे निक्खम्म ते असंभवंता विडज्झमाणा कामेहिं गिद्धा अज्झोववण्णा समाहि माघाय म ज्जोसयंता सत्थारमेवं फरूसं वदंति ॥ २ ॥ सीलमंता, उवसंता संखाए रीयमाणा अ

रख जाते हैं ॥ १ ॥ और कितनेक शिष्य संयम अंगीकार किये बाद तीर्थंकर की आज्ञा का अनादर करके गुरु के समक्ष ही शरीर की शोभा करने लग जाते हैं. कितनेक अभिमान में उन्मत्त बनकर ऐसे विचार करते हैं कि "यदि अब दीक्षा लेवें तो सब को माननीय बनें" ऐसे साधु मोक्षमार्ग का त्याग कर [illegible] में अत्यंत [illegible] पढकर तीर्थंकर भगवान की समाधि से निवृत्त रहते हैं. ऐसे को कोई नि शिक्षा देवे तो उलटा उन का अपमान और निन्दा करने लग जाते हैं ॥ २ ॥ कितनेक स्वयं [illegible]

शब्दार्थ
बा० अज्ञानी की ॥३॥ णि० संयम से नि० निवर्तते के० कितनेक आ० आचार गोचर मा० कहते हैं. ॥ ४ ॥ णा० ज्ञानसे भ्रष्ट दं० दर्शननाशक ण० नमते हुवे ए० कितनेक जी० जीवितव्य को वि० विपरीत करते हैं. ॥५॥ पु० स्पर्शाया हुवा ए० कितनेक णि० निवर्तते है जी० जीवितव्यके का० कारण णि० निकलनाभी तं० उनका दु० निन्दा पात्र होता है ॥६॥ बा० अज्ञान प० निर्दनीक हु० निश्चय ते० वे न० मनुष्य पु० वारम्वार ना० मार्गमें प० भ्रमण करते हैं. अ० नीचे सं० रहता हुवा वि० विद्वान मानता हुवा अ० हम हैं. वि० प्रशंसा

सूत्र
सीला अणुवयमाणस्स बिंतिया मंदस्स बालया ॥ ३ ॥ णियट्टमाणा वेगे आयारगों पर माइक्खंति ॥ ४ ॥ णाणभट्ठा दंसणलूसीणो णममाणा एगे जीवितं विप्परि णामंति ॥ ५॥ पुट्ठावेगे णियट्टंति जीवियस्सेव कारणा णिक्खंतंपि तेसिं दुन्निक्खंतं भ

भावार्थ
अपने दुर्गुणों का आच्छादन करते हुए अन्य सदाचारी समाधान विवेकयुक्त विहार करनेवाले मुनि की निन्दा करते हैं सद्गुणोंको दुर्गुणमय बनाते हैं ऐसे अज्ञानीयों की मूर्खाइ दुगुनी है ॥ ३ ॥ कितनेक शुद्ध संयम नहीं पाल सकते हैं परंतु शुद्धाचार प्ररूपते हैं ऐसे दो तरह की मूर्खाइ नहीं करते हैं ॥ ४ ॥ कितनेक स्वयं भ्रष्ट हो लोकों को कहते हैं कि हम जो पालते हैं वही आचार है. वे ज्ञान दर्शन से भ्रष्ट हुवे आ० पार्श्वस्थ को नमस्कार करतेहुवे भी संयम धर्म से दूर हैं ॥ ५ ॥ कितनेक अब साधु परिसहों से डरकर असंयम के कारण यामसांत के लिये संयम से भ्रष्ट होते हैं. इन का गृहत्याग स्तुतिपात्र नहीं होता है परंतु

शब्दार्थ

करे उ० मध्यस्थ को फ० कठोर शब्द वे० कहे प० निन्दा करे, अ० अथवा प० निन्दा पाप, अ० अतथ्य वचन से तं० उसको मे० मेधावी जा० जाने प० धर्म को. ॥ ७ ॥ अ० अधर्मार्थी तु० तू है णा० नाम बा० मूर्ख आ० आरंभार्थी अ० कहता हुवा ह० मारो प्राणीको घा० घात करते को ह० मारते को स० अच्छा

सूत्र

वति ॥ ६ ॥ बालवयणिज्जा हु ते नरा पुणो पुणो जातिं पकप्पंति अहे संभवंता वि-द्दायमाणा "अहमंसि" विउक्कसे उदासीणे फरुसं वदंति. पलियं पगंथे अदुवा पगंथे अ तहेहिं तं मेहावी जाणिज्जा धम्मं ॥ ७ ॥ अहम्मट्ठी तुमंसि णाम बाले, आरंभट्ठी अणुवयमाणे 'हण पाणे' 'घायमाणे, हणओयावि समणुजाणमाणे "घोर धम्मे उदीरिए"

भावार्थ

धिक्कार पात्र होता है. ॥ ६ ॥ वे संयम से भ्रष्ट होकर विद्वत्ताका गर्व धारण करते .वे कहते हैं कि, " हमही विद्वान शास्त्रपारंगत हैं " यदि कोइ मध्यस्थ भाव से उन को हित शिक्षा देवे तो उन की निन्दा करने लगजाते हैं. ऐसे पाप परिपूर्ण साधु बहुत काल पर्यंत संसार में परिभ्रमण करते हैं. ऐसा जान विद्वान मुनि धर्म को अच्छी तरह से ग्रहण करना. ॥ ७ ॥ संयम से भ्रष्ट होनेवाले को सत्पुरुष इस तरह उपदेश करते हैं कि अहो ! तू आरंभ का पक्ष करता है, और जीवों को मारो ऐसा कुबोध करता है, इस से तू हिंसा का अभिलाषी है. धर्म का अजान है. अधर्म का अर्थी है. तीर्थंकरोंने दुष्कराराधन हो के ऐसा धर्म फरमाया है. उन का वैसे जैसा बराबर निर्वाह नहीं कर सकता है इस से तू जिनाज्ञा का भंगकर धर्म

...ता है " चे० गाढ प० धर्म उ० प्रकाशित " उ० उपेक्षा करे आ० आज्ञा बाहिर ए० यह वि० हिंसक
वि० कहागया है बि० ऐसा बे० कहता हूं. ॥८॥ कि० क्या हमारे भो० अहो ज० स्वजनने क० करेंगा
चि० ऐसा म० मानता हुआ ए० इसतरह ऐ० कितनेक वि० जानकर भा० भ्राताको पि० पिताको हि०
छोडकर णा० ज्ञातीयों को य० और प० परिग्रहको वी० पराक्रम बताते स० सावधान अ० अहिंसा
सु० सुव्रती द० दमित प० देखकर दी० दीनहो, उ० चढकर प० प्रतिपन्न व० व्रतों का० काय ए० यह

सूत्र

उवेहइ णं अणाणाए एस विसण्णे विनट्ठे वियाहिते त्तिबेमि ॥ ८ ॥ किमणेणं भो
जणेण करिस्सामि-त्ति मण्णमाणा एवं एगे विदित्ता. मातरं पितरं हिच्चा णातओ य
परिग्गहं वीरायमाणे समुट्ठाए अविहिंसा सुव्वया दंता, पस्स दीणे उप्पइए पडिवयमा

भावार्थ

की उपेक्षा करता रहता है, और विषयासक्त बनकर हिंसा में तत्पर रहता है ऐसा मैं कहता हूं ॥ ८ ॥
कितनेक वैराग्य प्राप्त होते समय मातापिता स्वजन आदि को जानते हैं कि ये मुझको क्या काम में आवेगें
ऐसा जान धन स्वजन का सर्वथा त्याग करके शूरपना से दीक्षा ग्रहण करते हैं, अहिंसा सत्य आदि पवित्र
नियमों का आचरण करते हैं. और जीतेन्द्रिय बनते हैं. फीर हीन बनके संयमधर्म से भ्रष्ट होते हैं.
विषय कषाय के वश कायर पुरुष व्रत का भंग करते हैं. वे सत्वहीन भ्रष्ट जनों जगत में बहुत अपकीर्ति के
पात्र बनते हैं, और लोको भी बोलते हैं कि देखो ! यह साधुपना से भ्रष्ट हो भटकता फीरता है. ॥ ९ ॥

पदार्थ

भ० मन छु० प्रतिविध्वंसक भ० होवे, अ०' अथ मे० कितनेकको सि० श्लाघ पा० खराब भ० होवे, से० वे स० साधु भ० होकर स० भ्रष्टहोवे. ॥ ९ ॥ पा० देखो ए० कितनेक स० उग्रविहारीकेसाथ भ० शिथिलचारी, ण० विनितके साथ, अ० अविनीत, द० व्रतिके साथ अ० अव्रति द० मोक्षार्थी के साथ अ० अमोक्षार्थी. ॥ १० ॥ अ० भगवानके प० पण्डित मे० मेधावी णि० निवर्ती अर्थ वी० वीर आ० आगमसे स० सदा प० विचरे त्ति० ऐसा कहता हूं. ॥ ११ ॥

सूत्र

णे । वसट्टा कायरा य जणा लूसगा भवंति' अहमेगोसिं सिलोए पावए भवति, से समणा भविता समणविब्भंते ॥ ९ ॥ पासहेगे समन्नागएहिं असमन्नागए णममाणे हिं अणममाणे, विरतेहिं, अविरते, दविएहि अदविए ॥ १० ॥ अभिसमेच्चा पण्डिए मेहावी णिट्ठियट्ठे वीरे आगमेणं सया परक्कमेज्जासि त्तिबेमि ॥ ११ ॥ इति धूताख्यमज्झयणस्स–चउत्थो देसो सम्मत्तं

भावार्थ

कितनेक पुण्यहीन उग्रविहारी के साथ रहकर भी प्रमादी बनजाते हैं व्रती की साथ रहकर भी अव्रती रहते हैं तथा पवित्र पुरुषों की साथ रहकर अपवित्र रहते हैं ॥ १० ॥ ऐसा समझके पण्डितों को विषय वांच्छासे मुक्त हो हिम्मतवान बन के उपदेशानुसार सदैव प्रवर्तना ऐसा मैं कहता हूं इति धूताख्य अध्ययन का चतुर्थ उद्देशा समाप्त हुवा. इस उद्देशा में तीन गर्व का त्याग करने का कहा जो गर्व रहित होगा वह उपसर्ग सहन करेगा इस लिये आगे उपसर्ग सहन करना और महिमा को नहीं वांच्छना सो बताते हैं.

सूत्र

... गृहान्तर में, गा० ग्राम में गा० ग्रामान्तर में न० नगर में न० नगरान्तर में ज० देशमें ज० देशान्तरमें सं०हैं ए० कितनेक ज० मनुष्य लू० उपसर्ग कर्ता भ० होते हैं. अ० अथवा फा० स्पर्श पु० स्पर्शते हैं. ते० उन फा० स्पर्श से पु० स्पर्शा हुवा धी० धैर्यवन्त अ० सहनकरे ओ० अकेला स० समदृष्टि. ॥ १ ॥ द० दया लो० लोककी जा० जान करके प० पूर्वके, प० पश्चिम के, दा० दक्षिण के, उ० उत्तर आ० कहे वि० विभाग कि० करे वे० ज्ञानी. ॥ २ ॥ से० वे उ० सावधान हुवे

से गिहेसु वा गिहंतरेसु वा, गामेसु वा गामंतरेसु वा, नगरेसु वा नगरंतरेसु वा, जणवएसु वा, जणवयंतरेसु वा, संतेगातिया जणा लूसगा भवंति, अदुवा फासा फुसंति ते फासे पुट्ठो धीरो अहियासए ओए समियदंसणे ॥ १ ॥ दयं लोगस्स जाणित्ता पादीणं पडीणं, दाहीणं, उदीणं, आइक्खे विभये किट्टे वेदवी ॥२॥ से उट्ठिएसु वा अणुट्ठिएसु वा

भावार्थ

साधु को गृहस्थ के घरों में तथा घर की आसपास, ग्राम में तथा ग्राम की आसपास, नगर में तथा नगर की आसपास, देश में तथा देश की आसपास कोइ उपसर्ग देवे या अन्य कोइ उपसर्ग आवे तो धैर्य धारण करके सम्यक् दृष्टी बन करके सब सहन करना. ॥ १ ॥ पूर्व, पश्चिम, दक्षिण, व उत्तर दिशा के स्थलों में रहे हुवे प्राणियों पर दया करके ज्ञानी मुनिको गृहस्थ धर्म तथा साधु धर्मके विभाग करके अलग ...

शब्दार्थ

अ० जन मू० व्रतविध्वंसक भ० होवे, अ० अथ मे० कितनेकको सि० श्लाघ पा० खराब भ० होवे, से० वे स० साधु भ० होकर स० भ्रष्टहोवे. ॥ ९ ॥ पा० देखो ए० कितनेक स० उग्रविहारीकेसाथ अ० शिथिलचारी, ण० विनिवके साथ, अ० अविनीत, द० व्रतीके साथ अ० अव्रति द० मोक्षार्थी के साथ अ० अमोक्षार्थी. ॥ १० ॥ अ० भावाके प० पण्डित मे० मेधावी णि० निवर्ती अर्थ वी० वीर आ० आगमसे स० सदा प० विचरे चि० ऐसा कहता हूं. ॥ ११ ॥

सूत्र

णे । वसट्टा कायरा य जणा लूसगा भवंति अहमेगेसिं सिलोए पावए भवति, से समणो भवित्ता समणविब्भंते ॥ ९ ॥ पासहेगे समन्नागएहिं असमन्नागए णममाणे हिं अणममाणे, विरतेहिं, अविरते, दविएहिं अदविए ॥ १० ॥ अभिसमेच्चा पण्डिए मेहावी णिट्ठियट्ठे वीरे आगमेणं सया परक्कमेज्जासि त्तिबेमि ॥ ११ ॥ इति धूताध्ययणस्स—चउत्थो देसो सम्मत्तं

भावार्थ

कितनेक पुण्यहीन उग्रविहारी के साथ रहकर भी प्रमादी बनजाते हैं व्रती की साथ रहकर भी अव्रती रहते हैं तथा पवित्र पुरुषों की साथ रहकर अपवित्र रहते हैं ॥ १० ॥ ऐसा समझके पण्डितों को विषय वांछा से मुक्त हो हिम्मतवान बन के उपदेशानुसार सदैव प्रवर्तना ऐसा मैं कहता हूं इति धूताख्य अध्ययन का चतुर्थ उद्देशा समाप्त हुवा. इस उद्देशा में तीन गर्व का त्याग करने का कहा जो गर्व रहित होगा वह उपसर्ग सहन करेगा इस लिये आगे उपसर्ग सहन करना और महिमा को नहीं वांछना सो बताते हैं.

शब्दार्थ

णो० नहीं प० परकी अ० असातना करे णो० नहीं अ० अन्य पा० प्राणी भू० भूत जी० जीव स० सत्व की आ० असातना करे से० वे अ० असातना नहीं करता हुवा अ० अन्य पास असातना नहीं कराता म० मरते हुवे पा० प्राणी भू० भूत जी० जीव स० सत्वका ज० जैसे दी० द्वीप अ० आश्रय भूत ए० ऐसा से० वे भ० होवे स० शरणभूत म० महामुनि. ॥ ५ ॥ ए० ऐसे से० वे उ० सावधान हुवा ठि० स्थिरात्मा अ० अस्नेही अ० अचल च० चलित अ० संजयमें स्थिर प० मर्ते सं० जाण पे०

सूत्र

अत्ताणं आसाइज्जा, णो परं आसाइज्जा, णो अन्नाइं पाणाइं, भूयाइं, जीवाइं, सत्ताइं आसाइज्जा. से अणासादए अणासादमाणे वज्झमाणाणं पाणाणं भूयाणं जीवाणं सत्ताणं जहासे दीवे असंदीणे एवं से भवति सरणं महामुणी ॥ ५ ॥ एवं से उट्ठिए ठियप्पा अणिहे अचले चले अबहिलेस्से परिव्वए, संखाय पेसलं धम्मं दिट्ठिमं परिणिव्वुडे ॥ ६ ॥ तम्हा संगं—ति पासह गंथेहिं गढिया णरा विसण्णा कामक्कंता तम्हा

भावार्थ

आत्मा का नुकसान करे, न किसी प्राण, भूत, जीव, सत्व को नुकसान करे, वे सब दुःखी प्राण, भूत, जीव, सत्व को समुद्र में द्वीपवत् आधारभूत बनजाते हैं ॥ ५ ॥ इस लिये साधु आत्मा को स्थिर कर, अस्नेही मन परिषहों से अचल रहकर, एक स्थानपर स्थिरवास नहीं करते हुवे संयम में ध्यान रखकर प्रवृत्ति करे क्यों कि जो पवित्र धर्म का पालन किया करनेवाले थे वे ही मोक्ष को प्राप्त हुवे हैं ॥ ६ ॥ इसलिये अहो मुनि! तुम प्रपंच में फसना नहीं क्यों कि धन वृद्धि लोकों

शब्दार्थ अ० अज्ञापना हुवे पु० पुनःबोलेतो प० कहे सं० दया नि० त्याग उ० उपशम नि० निर्वाण सो० शौच अ० सरलता म० निरभिमान ला० निष्परिग्रहता. अ० अतिक्रमे नहीं ॥ ३ ॥ स० सर्व पा० प्राणी भ० सर्व भू० भूतको स० सर्व जी० जीवको स० सर्व स० सत्वको अ० विचार कर भि० साधु ध० धर्म आ० कहे ॥ ४ ॥ अ० विचार कर भि० साधु ध० धर्म कहता हुवा णो० नहीं अ० आत्माकी अ० अशातना करे

सूत्र सुस्सूसमाणेसु पवेदए, संतिं विरतिं उवसमं णिव्वाणं सोयं अज्जवियं मद्दवियं लाघवियं अणइवातिय॥३॥सव्वेसिं पाणाणं, सव्वेसिं भूयाणं, सव्वेसिं जीवाणं, सव्वेसिं सत्ताणं अणुवीइ भिक्खू धम्म-माइक्खेज्जा ॥ ४ ॥ अणुवीइ भिक्खू धम्म—माइक्खमाणे णो

भावार्थ धर्म श्रवण करने की इच्छावाले दीक्षित साधु को तथा श्रावक को हिंसा, त्याग, क्षमा, वचनफल, पवित्रता, सरलपना, कोमलपना, और निष्परिग्रहीपना इन सबका स्वरूप यथार्थपने विस्तार से समजावे ॥ ३ ॥ एकेन्द्रिय * सर्व प्राणी, मुक्ति गमन योग्य भव्यभूत, संयम जीवितव्य ने जीने की वांच्छा करनेवाले सर्व जीव, देवता, मनुष्य तिर्यंच और सत्व संसार में कर्मानुसार भव रहे हैं उन को विचारकर उपकारार्थ साधु धर्मकथा कहे ॥ ४ ॥ पूर्वापर का विचार पूर्वक धर्म कहते हुवे सदा मुनि न अपनी आत्मा का नुकसान करे न पर-

* प्राणी श्वास लेने वाले और सत्व एक पंचेन्द्रिय अर्थ समझना.

शब्दार्थ

णो० नहीं प० परकी अ० अशातना करे णो० नहीं अ० अन्य पा० प्राणी भू० भूत जी० जीव स० सत्व की आ० अशातना करे से० वे अ० अशातना नहीं करता हुवा अ० अन्य पास अशातना नहीं कराता म० मरते हुवे पा० प्राणी भू० भूत जी० जीव स० सत्वका ज० जैसे दी० द्वीप अ० आश्रय भूत ए० ऐसा से० वे भ० होवे स० शरणभूत म० महामुनि. ॥ ५ ॥ ए० ऐसे से० वे उ० सावधान हुवा ठि० स्थिरात्मा अ० अस्नेही अ० अचल च० चलित अ० संजममें स्थिर प० प्रवर्ते सं० जाण पे०

सूत्र

अत्ताणं आसाइज्जा, णो परं आसाइज्जा, णो अन्नाइं पाणाइं, भूयाइं, जीवाइं, सत्ताइं आसादेज्जा. से अणासादए अणासादमाणे वज्झमाणाणं पाणाणं भूयाणं जीवाणं सत्ता णं जहासे दीवे असंदीणं एवं से भवति सरणं महामुणी ॥ ५ ॥ एवं से उट्ठिए ठियप्पा अणिहे अचले चले अबहिल्लेसे परिव्वए, संखाय पेसलं धम्मं दिट्ठिमं परिणिव्वुडे ॥ ६ ॥ तम्हा संगं-ति पासह गंथेहिं गढिया णरा विसण्णा कामक्कंता तम्हा

भावार्थ

आत्मा का नुकशान करे, न किसी प्राण, भूत, जीव, सत्व को नुकशान करे, वे सब दुःखी प्राण, भूत, जीव, सत्व को समुद्र में द्वीपवत् आधारभूत बनजाते हैं ॥ ५ ॥ इस लिये साधु आत्मा को स्थिर कर, अस्नेही बन परिषहों से अचल रहकर, एक स्थान पर स्थिरवास नहीं करते हुवे संयम में ध्यान रखकर प्रवृत्ति करे क्यों कि जो पवित्र धर्म को जाण क्रिया करनेवाले थे वे ही मोक्ष को प्राप्त हुवे हैं ॥ ६ ॥ इसलिये अहो मुनि! तुम प्रपंच में फसना नहीं क्यों कि धन वृद्धि लोकों

विमोक्ष नामक मष्टमध्ययनम्.

शब्दार्थ से० अब वे० मैं कहता हूं. स० अच्छे साधु को अ० शाक्यादि को अ० अन्न पा० पानी, खा० खादिम, सा० स्वादिम, व० वस्त्र प० पात्र, कं० कम्बल, पा० रजोहरण, णो० नहीं, पा० देवे णो० नहीं, [नि]मंत्रण करे णो० नहीं, कुंकरे वे० वैयावच्च प० परम आ० आदर पूर्वक त्ति० ऐसा वे० कहता हूं. ॥१॥ धु० को च० निश्चय में ए० यह जा० जाणो अ० अन्न जा० यावत् पा० रजोहरण, ल० मिले पा० पाणो० नहीं ल० मिले भु० भोगा णो० नहीं भोगा पं० रस्ता वि० आना उ० उल्लंघनकर वि० अलगरे ध० धर्म

सूत्र से बेमि—समणुन्नस्स वा असमणुन्नस्स वा असणं वा, पाणं वा, खाइमं वा, साइमं वा वत्थंवा, पडिग्गहं वा, कम्बलंवा, पायपुंछणंवा, णो पाएज्जा, णो णिमंतेज्जा णो कुज्जा वेयावडियं, परं आढायमाणे त्ति—बेमि ॥ १ ॥ "धुवं चेतं जाणेज्जा असणं वा, जाव पायपुंछणं वा, लभिया, णो लभिया, भुंजिया, णो भुंजिया, पंथं वियत्तुणवि उकम्म"

भावार्थ अब मैं कहता हूं कि अहो मुनि ! स्वमति पार्श्वस्थ साधु तथा असंयति को अति आदरपूर्वक आहार, पानी, मीठाइ, मेवा, मुखवास, कपडे, पात्रे कम्बल, रजोहरण, विगेरे कुच्छ भी वस्तु कदापि देना नहीं. आमंत्रण करना नहीं और उन की वैयावृत्त भी करनी नहीं ऐसा मैं कहता हूं ॥ १ ॥ कोइ असंयति शा-

शब्दार्थ हो० आचरता म० आते प० जाते पा० देते जि० आवेश्यकता हुई० ... को आ० आता ... मन्धी को दार रहना वि० ऐसा ये० कहता हूं ॥ २ ॥ इ० यहां ... लि० ... आ० आरंभार्थी, अ० कहते हैं इ० करो म० ... अ० ... नहीं सु० सुणे होवे म० होते ... मे० वे इ० यहां आ० आरंभार्थी, अ० अथवा अ० भिन्न दिशा मा० ... अ० ... प० धा० धान करते इ० धार्मिकों भी म० अच्छा जाने तो अ० अथवा अ० है. ... पा० नहीं ... वा० वचन से व० विविध प्रकार ... ने० वे न० यथा म० है. ...

सूत्र विसन्तं धम्मं ओसियमाणं समेमाणा, पलेमाणे पाणजाया, णिमंतेमाणा, कुज्जा वेयावडियं परं अणाढायमाणं त्ति—बेमि ॥ २ ॥ इह संगतिं आयारगोयरं णो सुणिसंतं भवति । ते इह आरंभट्ठी अणुवयमाणं "हणपाणे" धायमाणे, हणतो यावि समणुजाणमाणे अदुवा अदिन्नं माययंति अदुवा वायाओ विउज्जंति; तं जहा—अत्थिलोए, णत्थिलोए, धुवेलोए, अधुवेलोए, साइएलोए, अणाइएलोए; सपज्जवसितेलोए, अपज्जवसितेलोए

भावार्थ यथार्थिक कहे कि अहो साधु तुम ... कर मानता कि मन को ... विना होवे या नहीं सुने ... होवे या न होवे ... मन ... रहा आता. रस्ता ... होवे तो भी आ ... मार्ग ... भिन्न २ धर्म का आचरनेवाले धार्मिक साधु कभी आते जाते कुछ भी देवे, आमंत्रण करे, चाकरी करे, या सत्कार करे तो भी मुनि को कबूल नहीं करना. उन से ... अत्यन्त ... ऐसा मैं कहता हूं ॥ २ ॥ कितनेक पुरुषों को आचार (अंगीकार करने योग्य) गोचर (सेवन करने योग्य) को जानते नहीं होने से

शब्दार्थ ध्रुव लो० लोक अ० अध्रुव लो० लोक सा० आदिसहित लो० लोक अ० आदि रहित लो० लोक स० अन्तसहित लोक अ० अनन्त लोक, सु० अच्छाकिया दु० बुराकिया, क० धर्म काम, पा० पापकाम सा० साधु है. अ० असाधु है. सि० मुक्ति है अ० मुक्ति नहीं है, णि० नरक है. अ० नरक नहीं, ज० जो यह वि० विविध प्रकार बोलते मा० हमारा धर्म, प० प्रशंसा करते हुवे ए० यहां भी जा० जाणो अ० अकस्मात ए० ऐसे ते० उनका णो० नहीं सु० अच्छा अ० कहना सु० अच्छा परूपना ध० धर्म भ० होवे, से० वे ज० जिसतरह

सूत्र ए, सुकडेत्ति वा, दुक्कडेत्ति वा, कल्लाणेत्ति वा, पावेत्ति वा, साधूत्ति वा, असाधूत्ति वा, सिद्धीत्ति वा, असिद्धीत्ति वा, णिरएत्ति वा, अणिरएत्ति वा, जमिणं विप्पडिवन्ना, "मामगंधम्मं" पन्नवेमाणा, एत्थवि जाणह अकम्हा। एवं तेसिं णो सुअक्खाए सुपन्नतेधम्मे भवंति। से जहेतं भगवया पवेदिते आसुपण्णेण जाणया पासया अदुवा गुत्तीवउगोयरस्स-

भावार्थ वे आरंभ के अर्थी होकरके अन्यधर्मीयों के वचन की नकल करके जीवों को मारते हैं, दूसरे से मराते हैं, और जीवों को मारनेवाले को अच्छा मानते हैं प्रशंसा करते हैं, अदत्तादान ग्रहण करते हैं, और अनेक प्रकारके अयोग्य वचन बोलते हैं, सो कहते हैं:- एक कहे लोक है, दूसरा कहे लोक नहीं है, एक कहे लोक स्थिर है दूसरा कहे लोक अस्थिर है, एक कहे लोककी आदि है, अन्य कहे लोक अनादि है, एक कहे लोक का अंत है, दूसरा कहे अंत नहीं है, एक कहे अच्छा किया, दूसरा कहे यह बुरा किया, एक कहे इसमें धर्म है, दूसरा कहे इसमें पाप है,

शब्दार्थ भ० भगवन्तने प० फरमाया आ० दीर्घ मज्ञावंतने जा० जाना पा० देखा. अ० अथवा गु० गुप्तरहे गो० विचारके त्ति० ऐसा बे० कहता हूं. ॥ ३ ॥ स० सर्वत्र स० धर्म पा० पाप त० उसको उ० निवर्त ए० यह म० मेरा वि० विवेक (भिन्नता) वि० कहा ॥ ४ ॥ गा० ग्राम में अ० अथवा र० वन में, णे० नहीं

सूत्र —त्तिबेमि ॥ ३ ॥ सव्वत्थ सम्मयं पावं । तमेव उवातिकम्म. एस महं विवेगे वियाहिते ॥ ४ ॥ गामे अदुवा रण्णे, णेव गामे णेव रण्णे, धम्म मायाणह पवेदितं माहणेण

भावार्थ एक कहे यह साधु है, दूसरा कहे यह गृहस्थ है. एक कहे मुक्ति है, दूसरा कहे मुक्ति नहीं है. एक कहे नरक है, दूसरा कहे नरक नहीं है. ऐसे जगत् के मतान्तरों की कहांतक कथनी की जावे. सब भिन्न २ श्रद्धा के धारक होते हुवे अपना २ धर्म बतारहे हैं उन को उत्तर देने के लिये इतनाही जानना आवश्यक है कि, तुम्हारा यह कथन युक्ति सिद्ध नहीं है. इस तरह उन एकान्त वादियों के मत श्री वीरभगवान के मत जैसा निश्चयात्मक नहीं है क्यों कि वे किसी भी युक्ति करके सिद्ध नहीं होते हैं. इस लिये पंडित मुनियों को चाहिये कि उन को यथार्थ उत्तर देवे, स्वधर्मोन्नति करे, यदि जवाब देने में समर्थ कोइ साधु न होवे तो मौन रहे। अच्छा है ॥ ३ ॥ उन विवादियों को साधु संक्षिप्त से समझावे कि, सर्व धर्म में जो २ पाप कर्म बताये हैं. उन सब को मैंने छोडदिये हैं. यही मेरा तुम्हारे से विवेक [भिन्नपना] कहा गया है. ॥ ४ ॥ केवल ज्ञानी महा पुरुषों का फरमान है कि यदि विवेक होवे तो गाम में रहकरभी धर्म हो सकता है

पदार्थ

र० पतमें ध० धर्म आ० कहा प० फरमाया मा० महानने म० बुद्धिमानने. ॥ ५ ॥ जा० महाव्रत ति० तीन उ० कहे जे० जिसमें इ० ये आ० आर्य सं० समझकर स० सावधान हुवे ॥ ६ ॥ जे० जो णि० निवर्ते पा० पाप क० कर्म से अ० अनिदान से० वे वि० कहे. ॥ ७ ॥ उ० ऊंची अ० नीची ति० तिरछी दि० दिशामें स० सर्वथा स० सर्वप्रकार च० निश्चय प० प्रत्येक जी० जीवोंसे क० कर्म स० आरंभ ॥ ८ ॥

सूत्र

मईमया ॥ ५ ॥ जामा त्तिण्णि उदाहया, जेसु इमे आरिया संबुज्झमाणा समुट्ठिया. ॥ ६ ॥ जे णिव्वुता पावेहिं कम्मेहिं, अणियाणा ते वियाहिया ॥ ७ ॥ उड्ढं अहे तिरियं दिसासु सव्वतो सव्वावंति च णं पडियक्कं जीवेहिं कम्मसमारंभेणं ॥ ८ ॥ तं प

भावार्थ

और वन में रहकर भी धर्म हो सकता है. यदि विवेक न होवे तो गाम में भी धर्म नहीं होता है और जंगल में भी धर्म नहीं होता है ॥ ५ ॥ भगवन्तने महाव्रत के मुख्य तीन भेद कहे हैं अहिंसा, सत्य और निर्ममत्व × इन में आर्य पुरुष समझके सावधान होते हैं ॥ ६ ॥ जो क्रोधादि पापकर्म से निवर्ते हैं, वे ही नियाणा रहित कहा ये गये हैं ॥ ७ ॥ ऊंची, नीची, व तिर्यक् दिशा में या विदिशा में सर्व प्रकारसे अलग २ जीवों को कर्म समारंभ कराहता है. ॥ ८ ॥ ऐसा जान विद्वान पुरुषों किसी की भी घात नहीं

× चोरी, मैथुन व परिग्रह ये तीनों निर्ममत्व में आजाते हैं, क्यों कि ये तीनों ममत्वभाव से होते हैं.

शब्दार्थ

तं० उसे प० जानके मे० मेधावी णे० नहीं ... स्वयं ए० इतनी का० कायासे द० घात स० करे, ण० नहीं दूसरे से ए० इतनी का० कायासे दं० घात स० करावे, णे० नहीं दूसरा का० कायासे ए० इतनी दं० घात स० करते को स० अच्छा जा० जाने. ॥ ९ ॥ जे० जो दूसरे ए० इतनी का० कायासे दं० घात स० करते है. तं० उनसे भी व० हम ल० शरमाते हैं.॥१०॥ तं० उसे प० जानकर मे० मेधावी तं० उस वा० या दं० घात अ० दूसरा वा० या दं० घात णो० नहीं दं० दण्डसे दं० दंडाये सं० करे त्ति० ऐसा कहता हूं.

सूत्र

रिण्णाय मेहावी, णेव सयं एतेहिं काएहिं दंडं समारंभेज्जा, णेवण्णे एतेहिं काएहिं दंडं समारंभावेज्जा, णे वण्णे काएहिं एतेहिं दंडं समारंभंतेवि समणुजाणेज्जा ॥ ९ ॥ जेयण्णे एतेहिं काएहिं दंडं, समारंभंति तेसिंपि वयं लज्जामो ॥ १० ॥ तं परिण्णाय मेहावी तं वा दंडं अण्णं वा दंडं णो दंडभि दंडं समारंभज्जासि—त्तिबेमि ॥ ११ ॥

इति विमोक्खअज्झयणस्स पढमोद्देसो

भावार्थ

करते हैं और करने को अच्छा भी नहीं जानते हैं. ॥ ९ ॥ साधु ऐसी घात करनेवाले से शरमिन्दे होते हैं ॥ १० ॥ उन घातकों को जानकर मर्यादावन्त तथा पापारंभ से डरनेवाले साधु यह आरंभ तथा अन्य किसी भी आरंभ को कदापि करते नहीं हैं ऐसा मैं कहता हूं ॥ ११ ॥ यह आठवा अध्ययन का प्रथम उद्देशा पूर्ण हुवा. इस में अनाचार को छोडने का कहा. जो अनाचार से बचते हैं वे अकल्पनीय वस्तु का त्याग करते हैं वह आगे बताते हैं.

...वसे, कु० कुम्भारकी शालामें, कु० शाखादि बाहिर व० कहीं भी वि० विहार करते, ...ते स० पास आकर गा० गृहस्थ बु० बोले आ० आयुष्मान स० साधु ! अ० मैंने ...अ० अन्न, पा० पानी, खा० खादिम, सा० स्वादिम, व० वस्त्र प० पात्र क० कम्ब... ...० प्राणी, भू० भूत जी० जीव स० सत्त्वको स० आरंभकर स० उद्देशकर, की० मो-

भिक्खू परक्कमेज्ज वा चिट्ठेज्ज वा, णिसीएज्ज वा, तुयट्टेज्ज वा, सुसाणंसि वा, सुन्नागारं सि वा, गिरिगुहंसि वा, रूक्खमूलंसि वा, कुंभारायपाणंसि वा, हुरत्था वा कहिंचि विहरमा णं तं भिक्खुं उवसंकमित्तु गाहावती बूया-आउसंतो समणा! अहं खलु तव अट्ठाए असणं वा, पाणं वा, खाइमं वा, साइमं वा, वत्थं वा, पडिग्गहं वा, कंबलं वा, पायपुंछणं वा, पाणाइं भूयाइं, जीवाइं, सत्ताइं, समारब्भ समुद्दिस्स, कीयं, पामिच्चं, अच्छेज्जं, अणिस

...ह्वे स्मशान में, शून्य घर में, पर्वत की गुफा में, वृक्ष के मूल में, या कुंभार के घर में फिरता होवे, ...मत होवे, ऐसा होवे या बाहिर और स्थान विचरता होवे; उन को देखकर कोई गृहस्थ पास आकर कहे कि भो आयुष्मान् मुनि ! मैं तुम्हारे लिये अशन, पान, खादिम, स्वादिम, वस्त्र, पात्र, कम्बल, तथा पाद ...जीवों का आरंभ से बनाकर, मोल लेकर, या उधार लेकर, किसी की पास से बलात्कार से छीन

शब्दार्थ

ल० लेकर २ पा० उधार लेकर, अ० छीन लेकर ...
ऐसाकर दे० देता हूं वा० या आ० घर वा० या स० सुधारता हूं से० उसे भु० भोगवो व० निवासकरो आ० आयुष्यवन्त स० साधु! भि० साधु तं० उस गा० गृहस्थ स० सुमनसे स० सुवचन से सं० कहे. आ० आयुष्य मान् गा० गृहस्थ! णो० नहीं ख० निश्चय ते० तेरे व० वचन आ० आदरता हूं णो० नहीं ख० निश्चय ते० तेरे व० वचन प० अच्छेजानता हूं जो० जो तु० तुम म० मेरे अ० अर्थ अ० अश (४) चारों

सूत्र

हूं, अभिहडं, आहट्टु चेतेमि, आवसहंवा समुस्सिणामि, से भुंजह वसह. आउसंतो समणा! भिक्खू तं गाहावतिं समणसं सवयसं संपडियाइक्खे, आउसंतो गाहावइ! णो खलु ते वयणं आढाएमि, णो खलु ते वयणं परिजाणेमि, जो तुमं मम अट्ठाए असणं (४) वत्थं वा (४) पाणाइं वा(४)समारंभ समुद्दिस्स कीयं पामिच्चं अच्छेज्जं अणिसट्ठं

भावार्थ

कर धणी की आज्ञा बिना या मेरा घर से लाकर तुम को देता हूं, या तुम्हारे लिये मकान बनाता हूं या अच्छा करवाता हूं उसे तुम खाओ और रहो. उस मुनिने अपना जाणिता या मित्र गृहस्थ को ऐसा बोलना कि अहो आयुष्यमान गृहस्थ! मैं तेरा यह कथन स्वीकारता नहीं हूं, पालता नहीं हूं तू मेरे लिये आरंभादि करके क्यों खटपट करता है या मकान बनाता है? हे आयुष्यमान् गृहस्थ मैं ऐसा कार्य नहीं करने के लिये त्यागी बनाहुवा हूं ॥ २ ॥ मुनि स्मशानादिक में फिरता होवे या ग्रामानुग्राम विचरता होवे; उस को

शब्दार्थ

से० वे भि० साधु प० फिरतेहो चि० ऊभेहो, णि० बैठेहो, तु०सोतेहो सु०स्मशानमें, सु०सूनेघरमें गि० गिरी गुफामें, रु० वृक्षनीचे, कुं० कुम्भकारकी शालामें, हु० ग्रामादि बाहिर क० कहि भी वि० विहार करते, तं० उस भि० साधु को उ० पास आकर गा० गृहस्थ बू० बोले आ० आयुष्यमान स० साधु ! अ० मैंने तु० तुमारे अ० अर्थ अ० अन्न, पा० पानी, खा० खादिम, सा० स्वादिम, व० वस्त्र प० पात्र क० कम्बल पा० रजोहरण, पा० प्राणी, भू० भूत जी० जीव स० सत्वको स० आरंभकर स० उद्देशकर, की० मो-

सूत्र

से भिक्खू परक्कमेज्ज वा चिट्ठेज्ज वा, णिसीएज्ज वा, तुयट्टेज्ज वा, सुसाणंसि वा, सुन्नागारंसि वा, गिरिगुहंसि वा, रूक्खमूलंसि वा, कुंभारायणंसि वा, हुरत्था वा कहिंचि विहरमाणं तं भिक्खुं उवसंकमितु गाहावती बूया-आउसंतो समणा! अहं खलु तव अट्ठाए असणं वा, पाणं वा, खाइमं वा, साइमं वा, वत्थं वा, पडिग्गहं वा, कंबलं वा, पायपुंछणं वा, पाणाइं भूयाइं, जीवाइं, सत्ताइं; समारम्भ समुद्दिस्स, कीयं, पामिच्चं, अच्छेज्जं, अणिस

भावार्थ

मुनि स्मशान में, सूना घर में, पर्वत की गुफा में, झाड के मूल में, या कुंभार के घर में फिरता होवे, खडा होवे, सोता होवे या बाहिर कोइ स्थान विचरता होवे; उन को देखकर कोइ गृहस्थ पास आकर कहे कि अहो आयुष्यमान् मुनि! मैं तुम्हारे लिये अशन, पान, खादिम, स्वादिम, वस्त्र, पात्र, कम्बल, तथा पादपुंछन प्राणियों का आरंभ से बनाकर, मोल लेकर, या उधार लेकर, किसी की पास से बलात्कार से छीन

शब्दार्थ

ल० लेकर २ पा० उधार ... पा० या आ० घर पा० या स० सुधारता हूं से० उसे मु० मांगे ... आ० आयुष्य ऐसाकर दे० देता हूं पा० या आ० घर पा० या स० सुधारता हूं से० उसे सुखावचन से ठंडाकर, आ० आयुष्य आयुष्यवन्त म० साधु! भि० साधु तं० उस गा० गृहस्थ स० सुमनसे स० सुवचन से संकोरे. आ० आयुष्य मान् गा० गृहस्थ! णो० नहीं ख० निश्चय ते० तेरे व० वचन आ० आदरता हूं णो० नहीं ख० निश्चय ते० तेरे व० वचन प० अङ्गीकार करता हूं जो० जो तु० तुम म० मेरे अ० अर्थ अ० अन्न (४) चारों

सूत्र

हं, अभिहडं, आहट्टु चेतेमि, आवसहंवा समुस्सिणामि, से भुंजह वसह. आउसंतो समणा! भिक्खू तं गाहावतिं समणसं सवयसं संपडियाइक्खे, आउसंतो गाहावइ! णो खलु ते वयणं आढामि, णो खलु ते वयणं परिजाणामि, जो तुमं मम अट्ठाए असणं (४) वत्थं वा (४) पाणाइं वा(४)समारंभ समुद्दिस्स कीयं पामिच्चं अच्छेज्जं अणिसट्ठं

भावार्थ

कर धनी की आज्ञा बिना या मेरा घर से लाकर तुम को देता हूं, या तुम्हारे लिये मकान बनाता हूं या अच्छा करवाता हूं उसे तुम खाओ और रहो. उस मुनिने अपना जाणिता या भिन्न गृहस्थ को ऐसा बोलना कि अहो आयुष्यमान गृहस्थ! मैं तेरा यह कथन स्वीकारता नहीं हूं, पालता नहीं हूं तू मेरे लिये आरंभादि करके क्यों खटपट करता है या मकान बनाता है? हे आयुष्यमान् गृहस्थ मैं ऐसा कार्य नहीं करने को लिये त्यागी बनाहुवा हूं ॥ २ ॥ मुनि स्मशानादिक में फिरता होवे या ग्रामानुग्राम विचरता होवे; उस को

शब्दार्थ

आहार, व० वस्त्र (४) चारों उपधि, पा० प्राणी (४) चारों तरहके जीवोंका, स० आरंभकर स० उद्देश कर, की० मोल लेकर, अ० छीनकर, अ० आज्ञाबिना, अ० सन्मुखलाकर दे०देवे आ० ऐसाकर आ० घर स० सुधारकर से० उससे नि० निवर्ते आ० आयुष्यमान् गा० गृहपति ! ए० इस को अ० नहीं करताहूं ॥ १ ॥ से० वे भि० साधु प० फिरते हुवे जा० यावत् दु० ग्रामादि बाहिर क० कहींभी वि० विचरते से० [illegible] भि० साधु के उ० पास आकर गा० गृहपति आ० अभिप्राय छिपाकर पे० देखकर के अ० अन्न (४) चारों आहार व० वस्त्र (४) चारों उपकरण पा० प्राणी (४) चारों का स० आरंभ कर जा० यावत् आ० ऐसा कर दे० देवे आ० घर बा० अच्छाकरावे तं० उसे भी साधु प० भोगने

सूत्र

अभिहडं आहट्टु चेएसि, आवसहं वा समुस्सिणासि, से विरतो आउसो गाहावती! एयस्स अकरणयाए ॥ १ ॥ से भिक्खू परक्कमेज्ज वा जाव हुरत्था वा कहिंचि विहरमाणं तं भिक्खु उवसंकमि-तु गाहावती आयगयाए पेहाए असणं वा(४)वत्थं वा(४)पाणाइं वा (४)समारंभ जाव आहट्टु चेएति आवसहं वा समुस्सिणाति तं भिक्खू परिघासिउं तं

भावार्थ

देखकर के उस मुनि को जीमाने की इच्छा से वह गृहस्थ अपने मनमें आरंभादिक करके आहारादि बनावे या मकान तैयार करे. यदि उस मुनि को अपनी बुद्धिबल से या तीर्थंकर देवने बताया हुआ मार्ग से मालूम पडे या तो उस गृहस्थ के स्वजन संबंधी से मालूम पडे कि यह गृहस्थ मेरे लिये आहारादिक बनाकर

अर्थ

कोइक हं० उसे भि० साधु आ० आते स० स्वमतिसे प० दूसरे के कहने से, अ० दूसरे पास सो० सुनकर, अ० इस स० निश्चय गा० गृहपतिने म० मेरेलिये अ० अशनादि चार आहार, व० वस्त्रादि चारों उपकरण, पा प्राणी आदि चारों प्रकारके जीवों की स० घातकर बे० देताहै आ० घर स० अच्छा कराताहै तं० उसे भि० साधु सं० देखकर आ० जानकर अ० कहेकि अ० यह मेरे अंगीकार करने योग्य नहीं है भि० ऐसा कहताहै ॥ २ ॥ भि० साधु को स० निश्चय पु० पूछकर अ० बिनापूछे ले० ले हं० मारे इ० मारो स० लादो छि० छेदो द० दहन को इ० घर आ० स्वच्छकर गं० धन फु० स्पर्शे, से० वे इ० मारे इ० मारो

सूत्र

ध भिक्खू जाणेज्जा सह सम्मइयाए परवागरणेणं अण्णेसिं वा सोच्चा अयं खलु गाहवती ममट्ठाए असणं वा (४) वत्थं वा (४) पाणाइं (४) समारंभ जाव चेएति आवसहं वा समुस्सिणाति तं च भिक्खू संपडिलेहाए आगमेत्ता आणवेज्जा अणासेवणाए; त्तिबेमि ॥ २ ॥ भि क्खुं च खलु पुट्ठा वा अपुट्ठा वा जे इमे आहच्च गंथा फुसंति से हंता 'हणह; खणह

भावार्थ

उस बात को गुप्त रखना चाहता है या मकान बनाता है. ऐसा होने से मुनिको पूर्ण तलाश करना तथा ज्ञात होने पर मुझे कल्पता नहीं ऐसा कहना कि मैं यह आहार या मकान ग्रहण नहीं करूंगा ॥ १ ॥ कोइ गृहस्थ साधु जानकर उस को मनाई करना कि मैं यह आहार या मकान ग्रहण नहीं करूंगा ॥ २ ॥ कोइ गृहस्थ साधु को पूछे या बिना पूछे विशेष खर्च कर (बहुमूल्य) आहारादिक बनाकर साधु के सन्मुख रखे तो उसे साधु अग्राह्य मानकर ग्रहण नहीं करे. इस से गृहस्थ क्रोधित बन कर मारे या कहे कि इस साधु को मारो,

शब्दार्थ करो प० पचावो आ० कूटे वि० विशेष कूटे स० सहसात्कार करो वि० सर्व तरह संतापो ते० उस फ० स्पर्श से पु० स्पर्शाया हुवा धी० धीर अ० सहनकरे अ० अथवा आ० आचार गो० गोचर आ० कहे त० तर्ककरे म० अ पिन अ० अथवा व० वचन गुप्तिकरे गो० गोचरी में अ० अनुक्रमे स० बरोबर प० प्रतिलेखे, आ० आत्मगुप्त बु० तत्वज्ञने ब० यह प० कहा ॥ ३ ॥ से० वे स० सुसाधु अ० कुसाधुको अ०

मूल छिंदह, दहह, पयह, आलुंपह; विलुपह; सहसाकारह; विप्परामुसह । ते फासे पुट्ठो धीरो अहियासए अदुवा आयारगोयर माइक्खे, तक्कियाण मणेलिसं; अदुवा वइगुत्ती ओ गोयरस्स अणुपुव्वेण सम्मं पडिलेहए आयगुत्ते । बुद्धेहिं एयं पवेदितं ॥ ३ ॥ से समणुन्ने असमणुन्नस्स असणंवा(९) वत्थंवा(४) नो पाएज्जा नो निमंतेज्जा; नो कुज्जा वेयावडियं णो परं आढायमाणे त्तिबेमि ॥ ४ ॥ धम्म—मायाणह पवेइयं माहणेण मति

भावार्थ कूटे, लुंटे, निन्दा करो, संताप दो ऐसे कष्ट में मुनि को धैर्य धारन कर सर्व परिसह सहन करना, या यह पुरुष कोन है ऐसा जानकर उस को साधु का आचार बताना समझाना, समझाने का अवसर न होवे तो मौन रखना, और जैसी एषणा समिती में आहार की विधि बताआइ है उस मुजब इच्छित वस्तु ग्रहणकर निर्वाह करना ऐसा ज्ञानी का कथन है. ॥ ३ ॥ सदाचारी साधु आदर पूर्वक शिथिलाचारी को आहार वस्त्रादि कुच्छ भी देवे नहीं, आमंत्रणा करे नहीं, तथा उन की वैयावच्च भी करे नहीं ऐसा मैं कहता हूं ॥ ४ ॥

शब्दार्थ

अशनादि चार प्रकार का आहार या व० वस्त्रादि चार प्रकारकी उपाधि णो० नहीं पा० देवे णो० नहीं
णि० आमंत्रण करे. णो० नहीं कु करे वे० वैयावच्च णो० नहीं अ०सत्कार करे त्ति० ऐसा बे० मैं कहता हूं.
॥ ४ ॥ ध० धर्म आ० जानो प० फरमाया मा० महात्मा म० बुद्धिवन्त स० अच्छे साधु म० सच्चे साधु
को अ० आहार आदि व० वस्त्रादि चारों पा० देवे, णि० आमंत्र कु०करे वे०वैयावृत्य प० परम आ० आदर
पूर्वक त्ति० ऐसा बे० मैं कहता हूं. ॥ ५ ॥

सूत्र

म० मध्यम व० वयमें ए० कैसेक सं० प्रति बोधपा स० सावधान हुआ. ॥ १ ॥ सो० सुनके मे० मे-

समणुन्ने समणुन्नस्स असणं वा (४)वत्थं वा(४)गएज्जा णिमंतेज्जा कुज्जा वेयावडियं परं
आढायमाणं त्तिबेमि ॥ ५ ॥ इति-विमोक्खमज्झयणस्स—बीओ इसो
मज्झिमेणं वयसा; एगे संबुज्झमाणा समुट्ठिता ॥ १ ॥ सोच्चा मेधावी वयणं, पं

भावार्थ

भगवन्त महावीर प्रभूने फरमाये हुवे धर्म को समझो. शुद्धाचारी साधु शुद्धाचारी साधु को आहार वस्त्रा-
दिक देवे आमंत्रण देवे तथा आदर पूर्वक उन की वैयावच भी करे ऐसा मैं कहता हूं ॥ ५ ॥ यह विमोक्ष
नामक आठवा अध्ययन का द्वितीय उद्देशा पूर्ण हुआ इस उद्देशा में अकल्पनीय आहार ग्रहण करते साधु-का
की आगे स्वामी शंका निवारण करते हैं.

कितनेक पुरुष

शब्दार्थ करो प० परावो आ० लूंथे वि०विशेष लूंथे स० सहसात्कार करो वि०सर्व तरह संतापो ते० उस फ० स्पर्श मे पु० स्पर्शाया हुआ धी० धीर अ० सहनकरे अ०अथवा आ० आचार गो० गोचर आ० कहे ता० तर्ककरे म० अनोपन अ० अथवा व० वचन गुप्तिकरे गो० गोचरी में अ० अनुक्रमे स० बराबर प० प्रतिलेखे, आ० आत्मगुप्त बु० तत्त्वज्ञने ए० यह प० कहा ॥ २ ॥ से० वे स० सुसाधु अ० कुसाधुको अ०

मूल छिंदह, दहह, पयह, आलुंपह; विलुपह; सहसाकारह; विप्परामुसह । ते फासे पुट्ठो धीरो अहियासए अदुवा आयारगोयर माइक्खे, तक्कियाण मणेलिसं; अदुवा वइगुत्ती ओ गोयरस्स अणुपुव्वेण सम्मं पडिलेहाए आयगुत्ते । बुद्धेहिं एयं पवेदितं ॥ २ ॥ से समणुन्ने असमणुन्नस्स असणंवा(४) वत्थंवा(४) नो पाएज्जा नो निमंतेज्जा; नो कुज्जा वेयावाडियं णो परं आढायमाणे त्तिबेमि ॥ ४ ॥ धम्म–मायाणह पवेइयं माहणेण मति

भावार्थ लूंथे, लुंथे. निन्दा करो, संताप दो ऐसे कष्ट में मुनि को धैर्य धारन कर सर्व परिसह सहन करना, या यह पुरुष कोन है ऐसा जानकर उस को साधु का आचार बताना समझाना, समझाने का अवसर न होवे तो मौन रखना, और जैसी एषणा समिती में आहार की विधि बताआइ है उस मुजब इच्छित वस्तु ग्रहणकर निर्वाह करना ऐसा ज्ञानी का कथन है. ॥ २ ॥ सदाचारी साधु आदर पूर्वक शिथिलाचारी को आहार वस्त्रादि कुच्छ भी देवे नहीं, आमंत्रणा करे नहीं,तथा उन की वैयावच्च भी करे नहीं, ऐसा मैं कहता हूं॥ ४ ॥

पदार्थ — असनादि चार प्रकार का आहार या व० वस्त्रादि चार प्रकारकी उपाधि णो० नहीं पा० … उ० में करता हूं जि० आमंत्रणकर. णो० नहीं कु० करे वे० वैयावच्च णो० नहीं अत्यन्तकार कर जि० ऐसा प० में करता हूं ॥ ४ ॥ ध० धर्म जा० जाना प० फरमाया मा० महात्मा म० बुद्धिवन्त म० अच्छे साधु म० गच्छे साधु को अ० आहार आदि व० वस्त्रादि चारों पा० देवें, जि० आमंत्र कुर्वते वे० वैयावृत्य प० परम आ० आदर पूर्वक जि० ऐसा प० मैं करता हूं. ॥ ५ ॥

सूत्र — म० मध्यम व० वयमें प० पैंतक भं० भले बांधवा म० सावधान हुवा. ॥ १ ॥ सां० सुनके मे० मे-

समणुन्ना समणुन्नस्स असणं वा (४) वत्थं वा (४) णाणुन्ना णिमंतन्ना कुज्जा वेयावडियं परं आढायमाणं तिबेमि ॥ ५ ॥ इति—विमोक्खअज्झयणस्स—बीओ उद्देसो

मज्झिमेणं वयसा; एगे संबुज्झमाणा समुट्ठिता ॥ १ ॥ सोच्चा मेधावी वयणं, पं

भावार्थ — महावन्त महावीर प्रभुने फरमाये हुवे धर्म को समझ. शुद्धाचारी साधु शुद्धाचारी साधु को आहार वस्त्रादिक देवे आमंत्रण देवे तथा आदर पूर्वक उन की वैयावच्च भी करे ऐसा मैं करता हूं ॥ ५ ॥ यह विमोक्ष नामक आठवा अध्ययन का द्वितीय उद्देशा पूर्ण हुवा इस उद्देशा में अकल्पनीय आहार ग्रहण करने … की आगे चौथे उदेशा निरावंत को कहते हैं.

विसंक …

सूत्र

॥ १ ॥ भे० वे अ० नहीं चाहनेवाले अ० नहीं हिंसा करने वाले ... ऋषि भी वि० विहार करते
णो० नहीं प० परिग्रही है स० सर्व च० निश्चय लो० लोकमें णि० छोडकर दं० हिंसा पा० माणी पा० ...
अ० अकरते ए० यह म० मोटे अ० निर्ग्रंथी, वि० कहाये है. ओ० एकरूप जु० संयमका खे० खेदज्ञ उ०
उत्पात च० मरण प० जाण करके ॥ ४ ॥ आ० आहार से व० वृद्धि हुवा दे० शरीर प०

डियाणं निसामित्ता ॥ २ ॥ समयाए धम्मे आरिएहिं पवेदिते ॥ ३ ॥ से अणवकं
खमाणा अणतिवाएमाणा अपरिग्गहमाणा णो परिग्गहावंति; सव्वावंति च णं लो
गंसि णिहाय दंडं पाणेहिं पावं कम्मं अकुव्वेमाणे एस महं अगंथे वियाहिए ओए जु
तिमस्स खेयन्ने उववायं चवणं च णच्चा ॥ ४ ॥ आहारोवचया देहा; परिसह पभं-

भावार्थ

पंडितों का वचन श्रवण कर ममता धारन करना ॥ २ ॥ आर्य श्री तीर्थंकर भगवान ने समता में धर्म कहा
है ॥ ३ ॥ संयमी काम भोगों की इच्छा से निवृत्त हो करके न तो वे किसी जीवों की हिंसा करते हैं,
और न किसी प्रकार का परिग्रह रखते हैं इस लिये वे निष्परिग्रही कहलाते हैं, तथा किसी प्राणी को दुःख
न देने से और पापकर्म नहीं करने से महा निर्ग्रन्थ कहलाते है. ऐसे मुनि रागद्वेष का परित्याग करके शा-
स्वरूप बनते हैं. और संयम में निपुण हो करके जन्ममरण के ज्ञाता बन के पाप का परिहार करते हैं
॥ ४ ॥ इस शरीर की ... अनेक प्रकार का परिषह व कष्ट आने

अर्थ

गा०गृहस्थ बू० कहे आ०"आयुष्मान" स०साधु णो०नहीं ख० निश्चय ते० तुम को गा०इन्द्रियों के विषय उ०बाधादेते हैं. अ०आयुष्मान गा० गृहपति ! णो० नहीं ख० निश्चय अ० मेरेको गा० इन्द्रिय विषय उ० पीडाकरता है. सी० शीत फा० स्पर्श णो० नहीं ख० निश्चय अ० मैं स० समर्थ अ० सहने णो० नहीं ख० निश्चय मे० मुझ क० कल्पे अ० अग्निको उ० प्रज्वलित करना प० दीपाना. का० शरीर आ० तपाना प० विशेष तपाना. वा० या अ० दूसरे को व० कहना ॥ ७ ॥ सि० कदाचित् से० वे ए० ऐसा व० बोलते को

सूत्र

सीयफासपरिवेयमाणगायं उवसंकमित्तु गाहावई बूया-"आउसंतो समणा" णो खलु ते गाम धम्मा उब्बाहंति? आउसंतो गाहावई! णो खलु मम गामधम्मा उब्बाहंति, सीयफासं णो खलु अहं संचाएमि अहियासित्तए । णो खलु मे कप्पति अगणिकायं उज्जालेत्तए वा पज्जालेत्तए वा कायं आयावेत्तए वा पयावेत्तए वा अण्णेसिं वा वयणाए ॥ ७ ॥ सिया से एवं वदंतस्स; परो अगणिकायं उज्जालेत्ता पज्जालेत्ता कायं आ

भावार्थ

शरीर धूजता होवे और गृहस्थ शंकाशील होने से प्रश्न करे कि, अहो आयुष्यमान् साधु तुम को विषय पीडता तो नहीं है ? तब साधु उसे उत्तर देवे कि, आयुष्यमान् गृहस्थ मुझे विषय की किंचिन्मात्र बाधा नहीं है परंतु मैं शीतका परिषह सहन नहीं कर सकता हूं, जिस से मेरा शरीर कम्पता है. मुझे शीत निवारन के लिये अग्निकायका आरंभ करना तथा शरीर को तपाना या शरीर तपाने को दूसरे से कहना यह कल्पता नहीं है. इस तरह शंका का समाधान करे. ॥ ७ ॥ ऐसा साधु का

शब्दार्थ

प० अन्य गृहस्थ अ० अग्निको उ० उज्वाले प० प्रज्वाले का० शरीरको आ० तपावे प० विशेष तपावे । त० उस च० निश्चय भि० साधु प० देखके आ० जानकर आ० मनाकर अ० मैं इसका सेवन नहीं करूंगा ? त्ति० ऐसा ब्र० करता हूं. ॥ ८ ॥ * *

अ० जो भि० साधु नि० तीनवस्त्र प० रखते हैं. पा० पात्र च० चौथा त० उनको णो० नहीं. ए० ऐसा भ० होवे च० चौथा व० वस्त्र जा० याचूंगा से० वे अ० एषणीक व० वस्त्र जा० याचे अ० जैसा प०

सूत्र

यांवेज्जा वा पयावेज्जा वा तं च भिक्खू पडिलेहाए आगमेत्ता आणवेज्जा अणासेवणा ए त्तिबेमि ॥ ८ ॥ इति विमोक्खमज्झयणस्स—तइओद्देसो सम्मत्तो *

जे भिक्खू तिवत्थेहिं परिवुसिते पाय चउत्थेहिं तस्सणं णो एवं भवति चउत्थं व त्थं जाइस्सामि. से अहेसणिज्जाइं वत्थाइं जाएज्जा, अहापरिग्गहियाइं वत्थाइं धारेज्जा

भावार्थ

सुनकर और अन्य गृहस्थ अग्नि प्रज्वलित कर साधु का शरीर तपावे तो साधु उसे देखकर जानकर मनाकर देवे, और कहे कि मुझे अग्नि सेवन करना योग्य नहीं है ॥ ८ ॥ यह विमोक्ष नामक आठवा अध्ययन का तृतीय उद्देशा पूर्ण हुवा. इस उद्देशा में गृहस्थ का अशन संचय की निवृत्ति अर्थात् अग्नि स्त्री परिसह सहन न होवे तो साधु को वेहानसादि बालमरण करना. यह आगे बताते हैं.

जिस साधु को १एक पात्र और तीन वस्त्र रखना होवे उन को ऐसा विचार न होवे कि मुझे चौथा वस्त्र

१ जिन कल्पी या अभिग्रहधारी मुनि के लिये.

सूत्र

वर्णाद्या व० वस्त्र धा० रखे. धो० नहीं धो० धोवे धो० नहीं र० रंगे धो० नहीं धो० धोया र० रंगा व० वस्त्र धा० रखे अ० न छिपावे गा० ग्रामानुग्रामजाते ओ० हलके वस्त्र को, ए० ऐसे खु० निश्चय व० वस्त्र धा० धारीका सा० आचार है. ॥ १ ॥ अ० अथ पु० फिर ए० ऐसा जा० जाने उ० व्यतिक्रम ह० निश्चय हे० शीतकाल गि० ग्रीष्म प० प्रतिपन्न हुवा अ० आशापूरना व० वस्त्र प० न्हावकर अ० अथवा सं० अवशेषसु अ० अथवा ओ० हलकावस्त्र रखु अ० अथवा ए० एकरखुं अ० अथवा अ० नहीं रखुं

णो धोविज्जा, णो रएज्जा, णो धोयरत्ताइं वत्थाइं धारेज्जा, अपलिउंचमाणे गामंतरेसु, ओमचेलए। एयं खु वत्थधारिस्स सामग्गियं ॥ १ ॥ अह पुण एवं जाणेज्जा उवाइक्कंते खलु हेमंते गिम्हे पडिवन्ने अहापरिजुन्नाइं वत्थाइं परिट्ठविज्जा, अदुवा संतरुत्तरे, अदुवा ओमचेले, अदुवा एगसाडे, अदुवा अचेले, लाघवियं आगममाणे। तवे से

भावार्थ

धारिया. यदि तीन वस्त्र पूरे न होवे तो विशेष वस्त्र की याचना जहां मिले वहां करना. जैसे निर्दोष वस्त्र मिले वैसे ही ग्रहण करना परन्तु उस वस्त्र को धोना नहीं, रंगना नहीं, धोये हुवे रंगे हुवे वस्त्र को धारन करना नहीं. ग्रामानुग्राम विचरते वस्त्र को छिपाना नहीं (ऐसा हलका वस्त्र रखना कि चोरका डर ने छिपाना न पडे) यह वस्त्र धारी मुनि का आचार है ॥ १ ॥ अब साधु को विचार होवे कि, शीतकाल तो गया और ग्रीष्म ऋतु प्राप्त हुइ. इस लिये पुराने वस्त्र परठावे या सब स्वभाव से उष्णकाल में भी शीतका संभव

[illegible] तपस्वी को हु० निश्चय तं० वह मे० श्रेय जं० जो मे० [illegible] उन को का०काल पर्याय से०वेभी त० वहा त्रि० अन्त कर्ता इ० इस [illegible] सु० सुखकर स०योग्य णि०कर्म क्षयकर अ० साथ आनेवाला नि० [illegible] ॥ ३ ॥

* * *

[illegible] पारलकिये पा० पात्र वीसरा हो त० उसको णो० नहीं ए०

[illegible] विभांतिकारए, इच्चेतं विमोहायतणं, हियं, सुहं, खमं, [illegible] अणुगामिय—त्तिबेमि ॥ ३ ॥ इति—विमोक्खणामज्झयणस्स चउत्थो [illegible]

* *

[illegible] पाय तइएहिं तस्सणं णो एवं तन्नति वतियं

[illegible] मुक्ति को जाता है. इस तरह यह वेहानसादि मरण भी रहित पुरुषों [illegible] योग्य है, कर्तव्य करनेवाला है और उस का फल भी भवा- [illegible] ॥ ३ ॥ यह विमोक्ष नामक आठवा अध्ययन का चतुर्थ उद्देशा [illegible] प्राप्ति उत्पन्न होनेपर भक्त प्रत्याख्यान करते हैं.

[illegible]

भावी के० वेऽभी अ० अकार्य आ० आदरे त० तपस्वी को हु० निश्चय तं० वह मे० श्रेय जं० जो से० प० [illegible] न० वहाँ त० उन की का०काल पर्याय से०वेभी त० वहां वि० अन्त कर्ता इ० इस [illegible] स्थान हि०हितकर सु० सुखकर ख०योग्य णि०कर्म क्षयकर अ० साथ आनेवाला ति० [illegible] ॥ ३ ॥

* * *

सूत्र जे भिक्खू दो वत्थेहिं परिवुसिते पाय तइएहिं तस्सणं णो एवं तवति वातियं [illegible] कालपरियाए, सेवि तत्थ विअंतिकारए, इचेतं विमोहायतणं, हियं, सुहं, खमं, णिस्सेयसं आणुगामिय–त्तिबेमि ॥ ३ ॥ इति–विमोक्खणामज्झयणस्स चउत्थो उद्देसो सम्मत्तो

* *

भावार्थ [illegible] इस तरह मरण करने वाला मुक्ति को जाता है. इस तरह यह वेहानसादि मरण मोह रहित पुरुषों का [illegible] कर्ता है, सुख कर्ता है, योग्य है, कर्मक्षय करनेवाला है और उस का फल भी भवा-न्तर में साथ चलता है ऐसा मैं कहता हूं ॥ ३ ॥ यह विमोक्ष नामक आठवा अध्ययन का चतुर्थ उद्देशा पूर्ण हुवा. आगे मुनि को व्याधि उत्पन्न होनेपर भक्त प्रत्याख्यान कहते हैं.

किसी साधु को एक पात्र और दो वस्त्र रखने का नियम होवे तो उन को ऐसा विचार नहीं होता है

... तपस्वी का हु० निश्चय त० वह मे० श्रेय जं० मो मे०
... उन की का०काल पर्याय से०वेभी त० वहा त्रि० अन्त कर्ता इ० इन
... विमोक्षान्त स्थान हि०हितकर सु० सुखकर ख०योग्य णि०कर्म क्षयकर अ० साथ आनेवाला ति०
... ॥ ३ ॥

* * *

... धारनक्रिये पा० पात्र तीसरा हो त० उसको णो० नही ए०
... मोक्ष नत्थ विमोक्षिकारए, इच्चेतं विमोहायतणं, हियं, सुहं, खमं,
... आणुगामियं–निर्योम ॥ ३ ॥ इति–विमोक्खणामसज्झयणस्स चउत्थो

*

... पाय तइएहिं तस्सणं णो एवं तवति चाउयं

भावार्थ ... मरण करने वाला मुक्ति को जाता है. इस तरह यह वेहानसादि मरण मोह रहित पुरुषों
... कर्ता है. योग्य है, कर्मक्षय करनेवाला है और उस का फल भी भवा-
... है ॥ ३ ॥ यह विमोक्ष नामक आठवा अध्ययन का चतुर्थ उद्देशा
पूर्ण हुआ. ... उदय होनेपर ... प्रत्याख्यान करते है.
... मन को ऐसा विचार नहीं होता है

[illegible] न [illegible] व० वस्त्र जा० याचुंगा मे० वे अ० एषणिक व० वस्त्र जा० यावत् ए० ऐसे
य [illegible] माधुका मा० आचार है. ॥ १ ॥ देखो इसही अध्ययनका चतुर्थ उद्देशामें ॥ ७ ॥
[illegible] ऐसा भ० होवे पु० स्पर्श अ० निर्बल अ० मैं हूं न० नहीं समर्थ अ०मेहूं गि०

[illegible] से अहेसणिज्जाइं वत्थाइं जाएज्जा जाव एवं खलु तस्स भिक्खुस्स साम
[illegible] ॥ १ ॥ अह पुण एवं जाणेज्जा उवधांते खलु हेमंते गिम्हे पडिवन्ने अहा प
[illegible] वत्थाइं परिठ्ठवेज्जा. अदुवा संतरुत्तरे, अदुवा ओमचेलए, अदुवा एगसाडे
[illegible] आगममाणे तवे से अभिसमण्णागए भवति । जहेयं भग
[illegible] अभिसमेचा सव्वतो सव्वत्ताए सम्मत्तमेव अभिजाणिया ॥ २ ॥

[illegible] यदि इतने वस्त्र न होवे तो जैसा मिले वैसा शुद्ध निर्दोष वस्त्र याच कर धारन
[illegible] ॥ १ ॥ जब साधु को ऐसा जानने में आवे कि, शीतकाल व्यतीत हुआ
[illegible] इस लिये मेरी पास के दो वस्त्र में से खराब वस्त्र डाल देउं, और अच्छा
[illegible] या तो एक ही वस्त्र रखुं या वस्त्र रहित रहूं. ऐसा करने से लाघव
[illegible] यह तप कथाया गया है. इस लिये जैसा भगवानने फरमाया है वैसा जानकर वस्त्र रहितपनेमें
[illegible] रखना ॥ २ ॥ जिस किसी साधु को ऐसा होवे कि मैं रोगादि कारण

[illegible] एवं भ० पारस्परिक म० शान्त रि० विरति सु० अच्छी म० सम्यक् ले० लेश्या त० तथा [illegible] वा० बाल्यपर्याय से० वे म० सदा रि० अन्तहूर्त हु० ऐसी तरह इ० यह रि० त्रिगमोही [illegible] हि० हितकर सु० सुखकर ख० योग्य णि० कर्मक्षय करने वाला अ० भवान्तर में साथ [illegible] बतला है ॥ ५ ॥

÷ ÷

[illegible] (१) आहट्टु परिण्ण णो आणक्खेस्सामि, आहट्टु च णो मानिज्जि [illegible] (२) एवं से अहाकिट्टियमेव धम्मं समहिजाणमाणे संते विरते सुसमाहि [illegible] तत्थावि तस्स कालपरियाए से तत्थ विअंतिकारए, इच्चेतं विमोहायतन [illegible] पियं आणुगामियं त्ति-बेमि॥२॥ इति विमोक्ख मज्झयणस्स [illegible] समत्तो।

* *

[illegible] प्रकार का मानसा नियम धारण करे उसे पूर्णतया पालन करे. संकट प्राप्त होने [illegible] भयंकर दुःख प्राप्त होने पर अनशन कर देह का परित्याग करे [illegible] इस तरह अनशन करने को काल पर्याय है यह ही मुनि कर्मक्षय करनेवाला है [illegible] हित कर्त्ता है सुख कर्ता है, योग्य है, कर्मक्षय करनेवाला है, और [illegible] भी साथ आनेवाला है ॥ ५ ॥ यह विमोक्ष नामक अष्टम अध्ययन का पंचम [illegible] पूर्ण हुआ।

* * *

शब्दार्थ

जे॰ जो भि॰ साधु ए॰ एक व॰ वस्त्र प॰ धारन करे, पा॰ पात्र दूसरा त॰ उसको णो॰ नहीं ए॰ ऐसा भ॰ होवे बि॰ दूसरा व॰ वस्त्र जा॰ याचूंगा से॰ वे अ॰ शुद्ध वस्त्र जा॰ याचे अ॰ जैसा ग्रहण किया व॰ वस्त्र धा॰ रखवे जा॰ यावत गि॰ ग्रीष्म प॰ आये अ॰ प्रहाकुवाजीर्ण वस्त्र, प॰ रखावे अ॰ अथवा ए॰ एक सा॰ वस्त्र, भ॰ अथवा अ॰ वस्त्र रहित ला॰ हलकापणा आ॰ जानता जा॰ जहांतक स॰ सम्यक प्रकारे स॰ समजाणे ज॰ जिस भि॰ साधु को ए॰ ऐसे भ॰ होवे ए॰ एक अ॰ मैं हूं णो॰ नहीं मे॰ मेरा अ॰ है. को॰

सूत्र

जे भिक्खू एगेण वत्थेण परिवुसिते पायबितिएण, तस्स णो एवं भवइ बितियं वत्थं जाइस्सामि से अहेसणिज्जं वत्थं जाएज्जा, अहापरिग्गहियं वा वत्थं धारेज्जा, जाव गिम्हे पडिवन्ने अहापरिजुन्नं वत्थं परिट्ठवेज्जा, अदुवा एग साडे अदुवा अचेले लाघवियं आगममाणे, जाव सम्मत्तमेव समभिजाणिया, जस्सणं भिक्खुस्स एवं भवति एगो अहमंसि नो मे अत्थि कोइ नया अहमं वि कस्स एवं से एगागिणमेव अप्पा

भावार्थ

जिस साधु को एक पात्र के साथ एक ही वस्त्र रखने की प्रतिज्ञा होवे उन को ऐसी चिन्ता नहीं होवे कि मैं दूसरा वस्त्र रखूं. यदि वह वस्त्र न होवे तो शुद्ध वस्त्र की याचना करे. जैसा मिले वैसा पहिने. उष्ण ऋतु आने पर उस को परिठवे या तो एक वस्त्र से ही रहे या वस्त्ररहित रहे तथा विचार करे कि, मैं एकिला हूं, मेरा कोई नहीं है. ऐसी एकत्व भावना भावता हुआ अपना सदृश मय को जाने इस से लाघव

होए न० नहीं भ० मैं भी क० किसका ए० ऐसेतरह ए० एकाकी मे०में अ० आत्माको जा० जाने ला० हलकापना आ० करताहुआ त० तव से० वे अ० प्राप्त भ० होवे ज० जैसा भ० भगवन्तने प० फरमाया त० वैसाही अ० जानकर स० सर्वतः स० सरीखे स० सम जा० जाने ॥ १ ॥ से० वे भि० साधु भि० साध्वी अ० असनादि चारों आहार अ० भोगवते हुवे णो० नहीं वा० वायेगालमे द० दाक्षिण गालमें सं० चलावे, आ० स्वादलेने को द०दक्षीण गालने आ०वायेगाल में सं० चलावे आस्वादने कारिये ला०हलकापना आ०

णं समभिजाणिज्जा लाघवियं आगममाणं तवे से अभिसमन्नागए भवइ जहेयं भगवया पवेइयं तमेव अभिसमेच्चा सव्वओ सव्वत्ताए समत्तमेव समभिजाणिया ॥ १ ॥ से भिक्खू वा भिक्खुणी वा असणं वा (४) आहारेमाणे णो वामाओ हणुयाओ दाहिणं हणुयं संचारेज्जा आसाएमाणे दाहिणाओ वा हणुयाओ वामं हणुयं णो संचारेज्जा आसाएमाणे, से अणासायमाणे लाघवियं आगममाणे तवे से अभिसमन्नागए भवइ, जहेयं भगवता पवेइयं तमेव अभिसमेच्चा सव्वतो सव्वत्ताए समत्त-मेव

भाव की प्राप्ति होती है और इसी से तप होता है. इस लिये जैसा भगवानने कहा वैसा ही जानकर समभाव रखना. ॥ १ ॥ साधु और साध्वी आहारादि लेते समय स्वाद लेने के लिये ग्राम (कवल) एक गाल से दूसरे गाल में फिरावे नहीं. ऐसा करने से कर्म हलके होते हैं तप निपजता है. ऐसा किये बाद इस का आभि-

... अ० साधु न होवे ज० जो ... प्र० परतेन प० कायाया त० उसको अ० जानकर स० सर्व आ स० सर्वतः स० समभावसे स० समजाने. ॥ ८ ॥ ज० जिस भि० साधु को ए० ऐसे भ० होवे मे० अब गि० अशक्त हूं म० निश्चय अ० मैं इ० इस स० वक्त पो० नहीं न० समर्थ हूं इ० इस स० शरीर को अ० अनुक्रम से प० छोड़ने में अ० अनुक्रम में आ० आहार स० घटा करके क० कषाय प० पतले करके स० समाधिवंत होवे फ० काए परिचयन उ० सावधान होवे भि० साधु अ० संताप रहित अ० संथारा करे गा०

सूत्र — समाभिजाणिया॥ ९॥ जस्सणं भिक्खुस्स एवं भवति, से गिलाणामि खलु अहं इमंमि समए णो संचाएमि इमंसरीरगं अणुपुव्वेण परिवहित्तए, से अणुपुव्वेणं आहारं संवट्टेज्जा, आहारं अणुपुव्वेणं संवट्टित्ता कसाए पयणुकिच्चा समाहियच्चे फलगावयट्ठी उट्ठाय भिक्खू अभिनिव्वु

भावार्थ — पार नहीं करता समभाव से रहता ॥ ८ ॥ जिस मुनि को ऐसा मालूम होवे कि मेरा शरीर अतीव थक गया है संयम की क्रिया बराबर नहीं कर सकता हूं उस मुनि को अंतिम शुद्धारणा के लिये इस्ये आहार और भाव से कषाय को संलेखन पतला. काए के परिग्रह की मुवाफीक शरीर का ममत्व त्यागना. शि... रोग से सपदायाकुला जानकर उसी समय सावधान हो सर्व चिन्ता का त्याग करना. धैर्य धारण कर इंगित ... मरण ... संथारा ... की विधि यह है. ... यहां तक लोक ...

होवे न० नहीं अ० में भी क० किसका ए० ऐसीतरह ए० एकाकी मे०में अ० आत्माको जा० जाने ला० हलकापना आ० करमाइ्रा त० तप से० वे अ० प्राप्त भ० होवे ज० जैसा भ० भगवन्तने प० फरमाया त० तैसाही अ० जानकर स० सर्वतः स० सरीखे स० सम जा० जाने ॥ १ ॥ से० वे भि० साधु भि० साध्वी अ० अशनादि चारों महार अ० भोगवते हुवे णो० नहीं वा० बायेगालमें द० दाक्षिण गालमें सं० चलावे, आ० स्वादलेने को द० दक्षीण गालमें आ०बायेगाल में सं० चलावे आस्वादने केलिये ला०हलकापना आ०

सूत्र

ण समभिजाणिज्जा लाघवियं आगममाणं तवे से अभिसमन्नागए भवइ जहेयं भगव या पवेइयं तमेव अभिसमेच्चा सव्वओ सव्वत्ताए समत्तमेव समभिजाणिया ॥ १ ॥ से भिक्खू वा भिक्खुणी वा असणं वा (४) आहारेमाणे णो वामाओ हणुयाओ दाहिणं हणुयं संचारेज्जा आसाएमाणे दाहिणाओ वा हणुयाओ वामं हणुयं णो संचारेज्जा आसाएमाणे, से अणासायमाणे लाघवियं आगममाणे तवे से अभिसमन्नागए भवइ, जहेयं भगवता पवेइयं तमेव अभिसमेच्चा सव्वतो सव्वत्ताए समत्त-मेव

भावार्थ

र्थ की प्राप्ति होती है और इसी से तप होता है. इस लिये जैसा भगवानने कहा वैसा ही जानकर समभाव रखना ॥ १ ॥ साधु और साध्वी आहारादि लेते समय स्वाद लेने के लिये ग्रास (कवल) एक गाल से दूसरे गाल में लेवे नहीं. ऐसा करने से कर्म हलके होते हैं तप निपजता है. ऐसा किये बाद इस का अभि-

[illegible] प्राण न होवे ज० [illegible] प० फासाया त० उनको अ० जानकर म० सर्व [illegible] ॥ [illegible] मज्झत्थे ॥ ७ ॥ ज० जिस भि० साधु को ए० ऐसे म० होवे मे० अब [illegible] इ० इस म० वक्त णो० नहीं न० समर्थ हूं इ० इस म० शरीर को अ० [illegible] आ० आहार म० पास [illegible] क० कषाय प० पतली करके [illegible] इ० [illegible] भि० साधु भ० संताप रहित अ० संथारे मा०

समाहिआणिया ॥ ७ ॥ जस्सणं भिक्खुस्स एवं भवति से गिलामि च खलु अहं इमंसि समए णो संचाएमि इमं सरीरगं अणुपुव्वेण परिवहित्तए से अणुपुव्वेणं आहारं संवट्टेज्जा, आहारं अणुपुव्वेण संवट्टेत्ता कसाए पयणुए किच्चा समाहियच्चे फलगावयट्ठी उट्ठाय भिक्खू अभिनिव्वु

[illegible] ॥ ७ ॥ जिस मुनि को ऐसा मालूम होवे कि मेरा शरीर अतीव थक [illegible] कर सकता हूं [illegible] मुनि को अतिव सुधारणा के लिये द्रव्य आहार [illegible] काष्ट के पाटिये की मुताबिक शरीर का पतन्य त्यागना. [illegible] [illegible] सावधान हो नहीं चिन्ता का त्याग करना. धैर्य धारण कर इंगित [illegible] की विधि यह है. ९ नहां [illegible] ऐसा गाम में ७ नहां कर

ग्राममें न० नगर में खे० खेडे में, क० कवड में, म० मंडप में प० पाटन में, दो० द्रोणमुखमें, आ० आगर में, आ० आश्रम में, सं० सन्निवेश में, णि० निगम में, रा० राजधानीमें त० तृण जा० याचे त० तृण जा० याचकर मे० वे त० उमे मा० मात्रा मे ए० एकान्त ग० जाते ए० एकान्त म० जाकर अ० अल्प अण्डे अ० अल्प प्राणी, अ० अल्प बीज अ० अल्पहरी, अ० अल्प ओस, अ० अल्प पानी, अ० अल्प कीडी नगरे प फुइन म पानी म० मट्टी म० मकडे सं० इनके बचे पे० देखकर प० पूंजकर त०

सूत्र

इच्छ अणुवीयिमित्ता, गामं वा, नगरं वा, खेडं वा, कव्वडं वा, मडंबं वा, पट्टणं वा, दोणमुहं वा आगरं वा आसमं वा, सण्णिवेसंवा, णिगमं वा रायहाणिं वा, तणाइं जाएज्जा तणाइं जाइत्ता से तमायाए-एगंत मवक्कमिज्जा; एगंत मवक्कमित्ता अप्पंडे अप्पपाणे, अप्प बीए अप्पहरिए अप्पोसे, अप्पोदए, अप्पुत्तिंग पणग—दग—मट्टिय मक्कडा संताणए

भावार्थ

ग्राम जहां कर लेते होवे नगर में ३ मिट्टी का कोट होवे ऐसे खेड में ४ छोटी वसति होवे ऐसे कसबे में ५ बहुत ग्राम जिस में लगते होवे ऐसे मडंब में ६ जहां सब वस्तु मिले ऐसे पाटण में ७ जहां जलस्थल दोनों मार्ग हो ऐसे द्रोण मुख में ८ जहां धातु की खानों होवे ऐसा आगर में ९ जहां तापस रहते होवे ऐसा आश्रम में १० जहां सार्थवाह की वसति होवे ऐसा सन्निवेश में ११ जहां वैश्य की विशेष वसति होवे ऐसा निगम में १२ जहां राजा रहता होवे ऐसी राजधानी में इत्यादि स्थानों में तृण, घास (पराल)

[illegible] क० कवड मे, म० मडव मे प० पाटन मे, द्रो० द्रोणमुख, आ० आगर [illegible] नि० निगम मे, रा० राजधानि न० नृप जा० यावे न० नृप जा० [illegible] ए० एकान्त ज० जाव ए० एकान्त म० जाकर अ० अल्प अण्डे [illegible] अ० अल्पहरी, अ० अल्प ओस, अ० अल्प पानी, म० अल्प कीडी [illegible] म० मकडे [illegible] इनके वर्ज पे० देखकर प० पूंजकर न०

[illegible] गाम वा नगर वा खेड वा, कब्बड वा मडबं वा, पट्टणं वा, [illegible] आगम वा सन्निवेसवा, णिगम वा रायहाणि वा, नणाई जाएज्जा [illegible] गन मक्कमिज्जा, पगन मक्कमित्ता अप्पंडे अप्पपाणे, अप्प [illegible] अप्पुत्तिंग पणय—दग—मट्टिय मक्कडा संताणए

[illegible] होवे ऐसे कब्बड मे ४ जोसे बसति होवे ऐसे कब्बड मे [illegible] ६ जहां सर्व वस्तु मिले ऐसे पाटण मे ७ जहां जल स्थल [illegible] धन की खाणी होवे ऐसा आगर मे ९ जहां तापस रहते होवे ऐसा आश्रम मे [illegible] वसति होवे ऐसा सन्निवेस मे ११ जहां वैश्य की विशेष वसति होवे ऐसा निगम मे १२ जहां राजा रहता होवे ऐसी राजधानी मे इत्यादि स्थानों मे तृण, घास (पराल)

शब्दार्थ का० काल पर्याय से० वैसा त० तहां वि० अंतक्रिया करे इ० इसतरह ए० यह मृत्यु वि० मोह रहित स्थान हि० हितकर्ता सु० सुखकर्ता ख० योग्य नि० कर्मक्षय कर्त्ता अ० भवान्तर में अनुक्रम से होवे त्ति० ऐसा बे० मैं कहता हूं ॥४॥

भि० जो भि० साधु प० वस्त्र रहित रहा होवे त० उनको ए० ऐसा भ० होवे चा० समर्थ हूं मैं त० तृणस्पर्श अ० सहन करने को सी० शीतस्पर्श अ० सहन करने को ते० अग्नि स्पर्श, अ० सहन करने को दं०

मूल रथ मणुचिने तत्थवि तस्स कालपरियाए, सेवि तत्थ वियंतिकारए इच्चेतं, विमो हायणं, हियं, सुहं, खमं, णिस्सेयसं अणुगामियं–त्तिबेमि॥४॥ इति विमोक्खमज्झयण स्स छट्ठोउद्देसो सम्मत्तो • •

जे भिक्खू अचेले परिवुसिते तस्सणं एवं भवति चाएमि अहं तणफासं अहियासित्त ए सीयफासं अहियासित्तए, तेउफासं अहियासित्तए, दंसमसगफासं अहियासि

भावार्थ स्थान है, हित कर्त्ता है, सुख कर्त्ता है, योग्य है, कर्मक्षय करनेवाला है और भवान्तर में उस का फल साथ आता है ॥ ४ ॥ यह विमोक्ष अष्टम अध्ययन का छट्ठा उद्देशा पूर्ण हुवा. आगे पादोपगमन मरण की विधि कहते हैं. × × ×

जो साधु वस्त्र रहित है उस को ऐसा विचार होवे कि. मैं घास का, शीत का, ताप का, मच्छरों का,

शब्दार्थ का० काल पर्याय से० वेभी न० वहां वि० अंतक्रिया करे इ० इसतरह ए० यह मृत्यु वि० मोह रहित स्थान हि० हितकारी सु० सुखकर्ता ख० योग्य वि० कर्मक्षय कर्ता अ० भवान्तर में अनुक्रम से होवे नि० ऐसा वे० मैं कहता हूं ॥४॥ अ० जो भि० साधु ए० वस्त्र रहित रहा होवे त० उनको ए० ऐसा भ० होवे चा० समर्थ हूं मैं त० तृण-स्पर्श अ० सहन करने को सी० शीतस्पर्श अ० सहन करने को ते० अग्नि स्पर्श, अ० सहन करने को दं०

मूल ...स मणुचिले तत्थवि तस्स कालपरियाए, सेवि तत्थ वियंतिकारए इच्चेतं, विमो हायपण हिय, सुह, खम णिस्सेयस अणुगामियं-त्तिबेमि॥४॥ इति विमोक्खमज्झयण स्स छट्ठोद्देसो सम्मत्तो

* *

जे भिक्खू अचेले परिवुसिते तस्सणं एवं भवति चाएमि अहं तणफासं अहियासित्त ए सीयफासं अहियासित्तए तेउफासं अहियासित्तए. दंसमसगफासं अहियासि

भावार्थ स्थान है हित कर्ता है सुख कर्ता है, योग्य है, कर्मक्षय करनेवाला है और भवान्तर में उस का फल साथ आता है ॥४॥ यह विमोक्ष अष्टम अध्ययन का छट्ठा उद्देशा पूर्ण हुवा. आगे पादोपगमन मरण की विधि कहते हैं.

× × ×

जो साधु वस्त्र रहित है उन को ऐसा विचार होवे कि मैं ... का,

हुवे ह० मारे पु० पूर्व त० तहां दं० दण्डे से, लू० खेंचे पु० पूर्व अ० अपुण्य जीवों. ॥ ८ ॥ फ० कठीन दु० दुष्कर परिषह अ० उलंघकर मु० साधु प० जाते हुवे आ० कथा ण० नृत्य गी० गीत द० दंड युद्ध मु० मुष्टियुद्ध. ॥ ९ ॥ ग० गृद्ध मि० कामकथामें स० उसक्त णा० ज्ञातपुत्र वि० विषाद रहित अ० देखकर ए० इतने उ० प्रधान ग० जाते है णा० ज्ञातपुत्र अ० अशरण ॥ १० ॥ सा० अधिक दु०

सूत्र

तत्थ दंडेहि लूसियपुव्वो अपुण्णेहिं ॥ ८ ॥ फरुसाइं दुतितिक्खाइं, अतिअच्च मुणी परक्कममाणे, आघयणट्टगीताइं, दंडजुज्झाइं मुट्ठिजुज्झाइं ॥ ९ ॥ गढीए मिहो कहासु समयंमि णायपुत्ते विसोगे अदक्खू एताइं सो उरालाइं, गच्छति णायपुत्ते असरणाए ॥ १० ॥ अवि साहिए दुवासे सीतोदं अभोच्चा णिक्खंते, एगत्तगए पिहि

भावार्थ

देते तो भी उन पर क्रोध करते नहीं. सर्व परिषह समभाव से सहते थे. ऐसा वर्तन महा पुरुषों से ही होता है ॥ ८ ॥ भगवन्त अती कठीन और दुःसह परिषहों की बिलकूल ही दरकार नहीं करते थे, लोको में रहने पर भी नृत्य गीत आदि में मोहित नहीं होते थे, या दंड युद्ध, मुष्टि युद्ध इत्यादि युद्ध की कथा सुनकर उत्सुक नहीं होते थे. ॥ ९ ॥ किसी समय ज्ञातनन्दन भगवान स्त्रियों को कामकथा में लीन देखते तो मध्यस्थ भाव से रहते थे. ऐसे अनेक अनुकूल प्रतिकूल परिषहों की तरफ बेदरकार होते हुए संयमाश्रम में रमण करते थे. अन्य किसी का आश्रय नहीं चाहते थे. ॥ १० ॥ दीक्षा के दो वर्ष पहिले से ही भग-

प्र० प्रमाणयुक्त अ० अन्न पा० पानी ण० नहीं गृद्धिवने र० रसमें अ० अप्रतिज्ञी अ० आंखको णो नहीं प० पुंछे. णो० नहीं कं० कुचरे मु० मानु गा० गात्र ॥ २० ॥ अ० थोडे ति० तिरछे पे० देखते अ० अल्प पी० पीछे पे० देखते अ० थोडे बु० बोलने प० बोलाते हुवे को पं० रस्ता देखते च० चलते ज० यत्नासे. ॥ २१ ॥ सि० शीतऋतु अ० आधी हुइ सं० तर चो० छोडा व० वस्त्र म० साधु प० पसार के बा० बाहु प० चले णो० नहीं अ० पकडे ण० नहीं कं० स्कंधको. ॥ २२ ॥ ए० यह वि० विधी अ० आ-

सूत्र

रसेसु अपडिन्ने, अच्छिपि णो पमज्जिय, णो विय कंडूय ये मुणी गायं ॥ २० ॥ अप्पं तिरियं पेहाए अप्पं पिट्ठओ व पेहाए, अप्पं बुइए पडिभाणी, पंथपेही चरे जयमाणे ॥ २१ ॥ सिसिरंसि अद्ध पडिवन्ने, तं वोसज्ज वत्थ मणगारे, पसारितु बाहू परक्कमे, णो अवलंबिया ण कंधंसि ॥ २२ ॥ एस विही अणुक्कंतो, माहणेण

भावार्थ

हार भोगवते थे इतना ही नहीं परंतु आंख में पडे हुवे कचरे को भी नहीं निकालते थे. खुजली खुजालते भी नहीं थे. ॥ २० ॥ भगवन्त तिर्यक् दृष्टि से देखते नहीं थे पीछे को भी नहीं देखते थे. बोलाते हुवे बोलते भी नहीं थे. रास्ते में ईर्या समिति से देखते हुवे यत्नासे चले जाते थे. ॥ २१ ॥ भगवान दूसरे वर्ष में इन्द्र का दिया वस्त्र त्याग कर दोनों हस्त खुले रखकर विहार करते थे. स्कंध पकड कर नहीं बैठते थे ॥ २२ ॥ प्रबल बुद्धिवाले महात्मा श्री वीर प्रभु ने उक्त विधि से नियाणा रहित बनकर कर्मक्षय करने का

एकदावसे, ॥ २ ॥ आ० धर्मशाला में आ०बागमें, आ०घरों में, ण०शहर में ए०एकदावसे सु० स्मशानमें सु० शून्य घरमें रु० वृक्षके नीचे ए० एकदावसे ॥ ३ ॥ ए० इत्यादि मु० साधु स० स्थानमें स० श्रमण आ० हुवा प० तेरेमें वर्ष तक रा० रात्रि दि० दिन ज० यत्नायुक्त अ० अप्रमत्त से० समाधि सहित झा० ध्यान ध्याते ॥ ४ ॥ ? ॥ णि० निद्रा णो० नहीं प० प्रमादकर स० लेते भ० भगवंत उ० सावधान होते, ज०

सूत्र

एगलदेसम् एगदा वासो ॥२॥ आगंतारे आरामागारे, णगरे वि एगदा वासो; सुसाणे सुण्णगारे वा, रुक्खमूलेवि एगदा वासो ॥ ३ ॥ एतेहिं मुणी सयणेहिं समणे आसी पतेरस वासे, राइं दिवंपि जयमाणे अप्पमत्ते समाहिए झाति ॥ ४ ॥ ॥ २ ॥ णिद्दंपि णो पगामाए, सेवइ य भगवं उट्ठाए, जग्गावती य अप्पाणं, इसिंसाति य

भावार्थ

धर्मशाला में, बगीचा में, बंगले में, बडे शहर में, स्मशान में, शून्य घर में, और वृक्षतले, इत्यादि स्थान में साडीबारह वर्ष पंदरह दिन पर्यंत निवास किया. भगवान्ने किंचिन्मात्र प्रमाद नहीं किया; अहोरात्रि यत्नायुक्त समाधि से ध्यान ध्याया ॥ ? ॥ भगवानने दीक्षा लिये बाद कभी निद्रा १ नहीं ली अर्थात् सोने की भी निन्द्रा करने की इच्छा नहीं करते. निद्रा को कर्म बंध का कारण जान बैठे २

(१) द्वादश वर्ष में ...

घरा कु० कुकर्मी उ० उपद्रव करते गा० कोटवाल. स० शस्त्र सहित अ० अथवा गा० ग्रामधर्मआश्रित उ० उपसर्ग इ० स्त्री ए० एकदा पु० पुरुष वा० या॥८॥४॥ इ० इसलोक का प० परलोकका भी० रौद्र अ० अनेक रू० प्रकारके अ० अपि सु० सुगन्ध दु० दुर्गंध स० शब्द अ० अनेक प्रकारके ॥ ७ ॥ अ० सहन करते स० सदा स० समितियुक्त फा० स्पर्श वि० विविध प्रकार के, अ० शोक र० हर्ष अ० सन्मुखहो री० विचरते मा० श्रमण अ० थोडे बोलते ॥ १० ॥ ९ ॥ स० यह ज० मनुष्य से त० तहां पु० पुछाते हुवे ए०

पुरिसो वा ॥ ८ ॥ ४ ॥ इहलोइयाइं परलोइयाइं, भीमाइं अणेगरूवाइं; अवि सुब्भि दुब्भि गंधाइं सद्दाइं अणेगरूवाइं ॥ ९ ॥ अहियासए सया समिते, फासाइं विरूयरूवाइं. अरतिं रतिं अभिभूय, रीयति माहणे अबहुवाई ॥ १० ॥॥५॥

विषयासक्त स्त्रियों व्याकुल बन विषय भोगों की प्रार्थना करती, ऐसे पुरुषों भी दुःख देते. इन सब परिषहों को भगवान समभाव से सहते थे ॥ ४ ॥ उक्त प्रकार से मनुष्य, तिर्यंच व देवता की तरफसे प्राप्त होते अनेक प्रकार के भयंकर उपसर्ग व सुगन्धि, दुर्गन्धि, सुशब्द, दुःशब्द सर्व समतासे सहन करते. किसी का भी हर्ष शोक नहीं करते थे और किसी को कुच्छ कहते भी नहीं थे. ॥ ५ ॥ एकान्त स्थान में भगवान को सदा टहरा [illegible] रात्रि में जार पुरुष पूछते कि: तू कौन है? [illegible]

गृहस्थके घ० आ० यावत् प० प्रवेश करते हुए जे० जे अं० जो आ० माने अ० अशनादि चारो आहार व० बहुत स० श्रमणादि साधु मा० ब्राह्मण, अ० अतिथि कि० कृपण व० भिखारी प० गिन २ कर स० [illegible] पा० प्राण भू० भूत जी० जीव स० सत्व का स० आरंभकर आ० [illegible] कर वा० या अ० नहीं दिया हुवा अ० अप्रासुक अ० अनेषणीय आ० यावत् णो० नहीं प० लेवे. ॥ १२ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी, गा० गृहस्थके घर में प० प्रवेश करते हुए से० वे अ० जो आ० माने अ० अशनादि चारों प्रकार का आहार ब० बहुत स०

मूल

(२) गाहावइकुलं जाव पविसमाणे से जं पुण जाणेज्जा असणं वा (४) बहवे समण माहण अतिथि किवणवणीमए; पगणिय (२) समुद्दिस्स पाणाइं जाव सत्ताइं समारब्भ आसेविय वा अणासेवियं वा अफासुयं अणेसणिज्जंति मण्णमाणे लाभेसंते जाव णो पडिगाहेज्जा ॥ १२ ॥ से भिक्खु वा (२) गाहावइकुलं जाव पविसमाणे से जं पुण जाणेज्जा असणं वा (४) बहवे समणे माहणे अतिथि कि

भावार्थ

लिये प्राणी आदि की घात कर निपजाया होवे. उस आहार को इन्होंने भोगवा होवे या नहीं तो भी उसे अप्रासुक अनेषणीक आहार प्राप्त होने पर भी ग्रहण नहीं करना ॥ १२ ॥ यदि भोजन गृहस्थने स्वयं बहुत साधु, ब्राह्मण, अतिथि, दरिद्री, व भिखारी के लिये बनाया होवे और घर के बाहिर न निकाला होवे, अपने स्वाधीन न किया होवे, भोगवा न होवे तो ऐसा, अनेषणिक आहार साधु साध्वी ग्रहण

शब्दार्थ साधु पा० ब्राह्मण अ० अतिथि कि० कृपण व० भिखारीको स० उद्देशकर पा० प्राणादि जा० यावत आ० लाता दे० देवे तं० उसे त० तथा प्रकार अ० अशनादि चारों आहार को अ० स्वयं बनाया भ० घर बा- हिर नहीं नी० लाया अ० खुद अपनाया किया अ० भोगवा नहीं अ० सेवन नहीं किया अ० अप्रासुक अ० अनेषणिक णो० नहीं प० लेवे ॥ १४ ॥ अ० अथ पु० फिर ए० ऐसा जा० जाने पु० दूसरेने बनाया ब० बाहिर निकाला अ० अपनाकिया प० भोगवा आ० सेवन किया फा० प्रासुक ए० एषणिक जा० यावत् प० ग्रहण करे. ॥ १५ ॥ से० वे हि०

सूत्र वणवणीमए समुद्दिस्स पाणाइं (४) जाव आहट्टु चेतेति; तं तहप्पगारं असणं वा (४) अपुरिसंतरकडं अबहियाणीहडं अणत्तट्ठियं अपरिभुत्तं अणासेवितं अफासुयं अणेसणिज्जं जाव णो पडिग्गाहेज्जा ॥ १४ ॥ अह पुण एवं जाणेज्जा पुरिसंतरकडं बहियाणीहडं अत्तट्ठियं परिभुत्तं आसेवियं फासुयं एसणिज्जं जाव पडिग्गाहेज्जा ॥ १५ ॥ से भिक्खू वा (२) गाहावइ कुलं पिंडवायपडियाए पविसित्तुकामे, से जा

भावार्थ नहीं करे ॥ १४ ॥ यदि ऐसा जानने में आवे कि वह भोजन दूसरे के पास कराया है, बाहिर निकाला है, अपने निश्राय में किया है, भोगवा है; तो ऐसे प्रासुक निर्दोष आहार जानकर ग्रहण करना ॥ १५ ॥ जिस कुल में नित्य सदाव्रत दियाजाता होवे, भोजन में अग्रपिंड निकाला जाता होवे, भोजन दान दिया जाता

गृहस्थके घर में आ० यावत् प० प्रवेश करते हुवे से० वे जं० जो जा० जाने अ० अशनादि चारों आहार ब० बहुत स० श्रमण मा० ब्राह्मण, अ० अतिथि कि० कृपण व० भिखारी प० गिन २ कर स० उद्देशकर पा० प्राण जा० यावत स० सत्त्वका स० आरंभकर आ० सेवन्कर वा० या अ० नहीं सेवा हुवा अ० अप्रासुक अ० अनेषणीय जा० यावत णो० नहीं प० लेवे. ॥ १२ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी, गा० गृहस्थके घरमें प्रवेश करते हुवे से० वे जं० जो जा० जाने अ० अशनादि चारों प्रकार का आहार ब० बहुत स०

मूल

(४) गाहावइकुलं जाव पविट्ठेसमाणे से जं पुण जाणेज्जा असणं वा (४) बहवे समण माहण अतिथि किवणवणीमए; पगणिय (२) समुद्दिस्स पाणाइं जाव सत्ताइं समारम्भ आसेविय वा अणासेवियं वा अफासुयं अणेसणिज्जंति मण्णमाणे लाभेसंते जाव णो पडिग्गाहेज्जा ॥ १२ ॥ से भिक्खू वा (२) गाहावइकुलं जाव पविट्ठे समाणे से जं पुण जाणेज्जा असणं वा (४) बहवे समणे माहणे अतिथि कि…

भावार्थ

लिये प्राणी आदि की घात कर निपजाया होवे. उस आहार को उनोंने भोगवा होवे या नहीं तो भी उसे अप्रासुक अनेषणिक जानकर प्राप्त होने पर भी ग्रहण नहीं करना ॥ १२ ॥ यदि भोजन गृहस्थने स्वयं बहुत साधु, ब्राह्मण, अतिथि, दरिद्री, व भिखारी के लिये बनाया होवे और घर के बाहिर न निकाला होवे, अथवा देनेवाले ने स्वीकार किया होवे, भोगवा न होवे तो ऐसा, अनेषणिक आहार साधु साध्वी ग्रहण

शब्दार्थ

साधु मा० ब्राह्मण अ० अतिथि कि० कृपण व० भिखारीको स० उद्देशकर पा० माणादि जा० यावत् आ० लाकर दे० देवे तं० उसे त० तथा प्रकार अ० अशनादि चारों आहार को अ० स्वयं बनाया अ० घर बाहिर नहीं नी० लाया अ० उसे अपना न किया अ० भोगवा नहीं अ० सेवन नहीं किया अ० अफ़ासुक अ० अनेषणिक णो० नहीं प० लेवे ॥१४॥ अ० अथ पु० फिर ए० ऐसा जा० जाने पु० दूसरेने बनाया व० बाहिर निकाला अ० अपना किया प० भोगवा आ० सेवन किया फ० फ़ासुक ए० एषणिक जा० यावत् प० ग्रहण करे. ॥ १५ ॥ से० वे हिं०

सूत्र

वणवणीमए समुद्दिस्स पाणाइं (४) जाव आहट्टु चेतेति; तं तहप्पगारं असणं वा (४) अपुरिसंतरकडं अबहियाणीहडं अणत्तट्ठियं अपरिभुत्तं अणासेवितं अफासुयं अणेसणिज्जं जाव णो पडिग्गाहेज्जा ॥ १४ ॥ अह पुण एवं जाणेज्जा पुरिसंतरकडं बहियाणीहडं अत्तट्ठियं परिभुत्तं आसेवियं फासुयं एसणिज्ज जाव पडिग्गाहेज्जा ॥ १५ ॥ से भिक्खू वा (२) गाहावइ कुलं पिंडवायपडियाए पविसित्तुकामे, से जा

भावार्थ

नहीं करे ॥ १४ ॥ यदि ऐसा जाननेमें आवे कि यह भोजन दूसरे के पास कराया है, बाहिर निकाला है, अपनी नेश्राय में किया है, भोगवा है; तो ऐसे फासुक निर्दोष आहार जानकर ग्रहण करना ॥ १५ ॥ जिस कुलमें नित्य सदाव्रत दियाजाता होवे, प्रारंभ में अग्रपिंड निकाला जाता होवे, भोजन दान दिया जाता

शब्दार्थ

स्वताका बनाया जा० यावत णो० नहीं प० ग्रहणकरे ॥ अ० अथ पु० फिर ए० ऐसा जा० जाने दि० दे तथा तं० उनको दा० दिया अ० और त० तहां भुं० भोगवते पे० देखकरके गा० गृहपति की भा० भार्या गा० गृहपतिकी भ० भगिनी गा० गृहपति वा पु० पुत्र, गा० गृहस्थकी धू० पुत्री, सु० पुत्रवधू धा० धाय दा० दास दा० दासी क० नोकर क० नोकरनी से० वे पु० पहिले आ० देखकर आ० आयुष्मान् ! भ० बहिन ! दा० देओगे मे० मुझे इ० इसमें अ० कुछ भो० भोजन जात से० ऐसे व० कहते को प० दूसरा अ० अशनादि चारों आहार अ० लेकर द० देवे त० तथा प्रकार अ० अशनादि चारों

सूत्र

जमाणं पेहाए तहप्पगारं असणं वा (४) अपुरिसंतरकडं जाव णो पडिगाहेज्जा ॥ अह पुण एवं जाणेज्जा दिण्णं जं तेसि दायव्वं, अह तत्थ भुंजमाणे पेहाए गाहावति भारियं वा; गाहवति भगिणिं वा; गाहवति पुत्तं वा; गाहावति धूयं वा; सुण्हं वा; धातिं वा, दासं वा; दासिं वा; कम्मकरं वा; कम्मकरिं वा; से पुव्वामेव आलोएज्जा आउसो त्ति वा भगिणित्ति वा; दाहिसि मे इत्तो अन्नयरं भोयणजायं? सेवं वदंतस्स परो असणं वा (४) आहट्टु दलएज्जा तहप्पगारं असणं वा (४)

भावार्थ

जिसको देने का था उसको दिया होवे, भोगवने का होवे उनोंने भोगव लिया होवे, और कुटुम्बी जन भोगवते हों तो साधु गृहपति को, उन की स्त्री, पुत्र, पुत्री, दास, दासी, नोकर, नोकरनी को देखकर कहे कि आयुष्मान् ! इस भोजन में से मुझे कुछ देवोगे ! साधु का ऐसा वचन सुन के देवे तो उस को प्रासुक

न० इसलिये म० संयति नि० निग्रन्थ अ० अन्य त० तथा प्रकारकी पु० पहिले का सं० जेमन प० पीछेका
म० मरन स० जेमनके प० लिये णो० नहीं अ० धारेजाना. ॥ ७ ॥ ए० यह स० निश्चय त० उस भि०
साधुका भि० साध्वीका ए०यह सा०आचार जं०जिसको स०सर्वथा स०समिति सहित स०ज्ञानादि सहित स०
सदा ज० य०ना करे त्ति० ऐसा बे० कहताहूं ॥ ८ ॥

सूत्र

...जा, अदुवा वहि वा, उत्तनयस्स हरियाणि छिंदिय २ दालिय २ संथारगं सं
थारेज्जा एस विलुंगयामो सिज्जाए तम्हा से संजए णियंठे अण्णयरं वा तहप्पगारं
पुरे संखडिं वा पच्छासंखडिं वा संखडिपडियाए णो अभिसंधारेज्जा गमणाए ॥ ७ ॥
एयं खलु तस्स भिक्खुस्स वा भिक्खुणीए वा सामग्गियं जं सव्वट्ठेहिं समिते सहि
ते सयाजए त्तिबेमि ॥ ८ ॥ इति पिंडेसणाज्झयणस्स बीओद्देसो सम्मत्तो

भावार्थ

...करना, साधु का मांग, वैसे को पहले विछावेंगे. ऐसे अनेक दोषों का स्थान जेमनवार को मानकर पूर्व
संखडी (मनुष्य की मानुषी का) पच्छा संखडी (मनुष्य का मरण बाद का) में साधु को कदापि जा-
ना नहीं ॥ ७ ॥ साधु साध्वी का यह कर्तव्य है इस में सदैव समिति सहित ज्ञानादि सहित वर्तना ऐसा मैं
कहता हूं ॥ ८ ॥ यह पिंडेषणा नामक दशम अध्ययन का द्वितीय उद्देशा पूर्ण हुआ. आगे मुनि को जेमनवार में
जाने का नुकसान बताते हैं.

शब्दार्थ [illegible] एकदा [illegible] अन्यतर [illegible] जीमन का [illegible] पिये [illegible] वमनकरे [illegible] मुक्त [illegible] नहीं [illegible] परिणमे [illegible] अन्यतर [illegible] दुःख [illegible] [illegible] आ० आतंक [illegible] उत्पन्न होवे [illegible] केवलीने फरमाया आ० कर्म बन्ध का हेतु [illegible] ॥ १ ॥ [illegible] आ० [illegible] गृहपति गा० गृहपतिनी प० परिव्राजक प० परिव्राजिका [illegible] यहां [illegible] निश्चय [illegible] साधु गा० [illegible] उपाश्रय प० देखते हुवे णो० नहीं [illegible] भिक्षार्थ [illegible] [illegible]

सूत्र से एगया अण्णयरं संखडिं आसित्ता, पिबित्ता, छड्डेज्ज वा, वमेज्ज वा, भुत्ते वा से णो सम्मं परिणमेज्जा, अण्णयरे वा से दुक्खे रोयातंके समुप्पज्जेज्जा केवली बूया आयाणमेयं ॥ १ ॥ इह खलु भिक्खू गाहावईहिं, वा गाहावइणीहिं वा परिवायएहिं वा, परिवाइयाहिं वा एगज्झं सद्धिं सोंडं पाउं भो वा तिमिस्सं हुरत्था वा उवस्सयं पडिलेहमाणे णो लभेज्जा, तमेव

भावार्थ जीमनवार के भोजन में घृत, मिष्ट, व मसालेवाले पुद्गलों का सेवन करने से वमन, विसूचिकादि अनेक रोग उत्पन्न होते हैं. केवली भगवानने इस में आश्रवका कारण बतलाया है ॥ १ ॥ जीमनवार में बहुत स्त्री, पुरुषों, योगी, योगिनी से मिलकर आहार पानी के लिये कदापि मद्यपान भी करेगा, फिर नशे में बेभान बन के स्वस्थान नहीं पहुंचता मार्ग में ही गिरजायगा. यहां महोन्मत्त बन विषयासक्त होगा.

शब्दार्थ उ० मिले त० उस उ० उपाश्रयके सं० मिश्रभाव मा० अंगीकार करे अ० परस्पर वा० या से० वे न० उन्मत्तबने वि० विपरीत होवे इ० स्त्रीके शरीर का कि० नपुंसक के त० उस भि० साधु के उ० समीप आकर बू० कहे आ० आयुष्यवंत साधु ! अ० अब आ० बगीचेमें उ० उपाश्रयमें रा० रातको वि० सन्ध्या को गा० ग्राम धर्म से क० करेंगे र० एकान्तमें मे० मैथुन धर्म प० परिचारणा केलिये आ० प्रवर्तेंगे तं० उसको चे० कोइक सा० आदरेगा अ० अयोग्य चे० निश्चय ए० यह सं० जानकर ए० यह आ० कर्मबन्धके

सूत्र उवस्सयं संमिस्सिमाव मावेज्जा अण्णमण्णे वा से मते विप्परियासिय भूते इत्थिविग्गहे वा किलीवे वा तं भिक्खुं उवसंकमित्तु बूया "आउसंतो समणा अहे आरामंसि वा, अहे उवस्सयंसि वा, राओ वा, विपाले वा, गामधम्मणियंतियं कट्टु रहस्सियमेहुणधम्मपरियारणाए आउट्टामो," तं चेगतितो सातिज्जेज्जा । अकरणिज्जं चेयं संखाए । एते आयतणा संति संचिज्जमाणा पच्चावाया भवंति तम्हा से संजए णियंठे

भावार्थ ऐसे समय में कोइ व्याभिचारिणी स्त्री या नपुंसक साधु पे आसक्त होकर कहे कि अरे साधु ! इस बगीचे में या उपाश्रय में अपन रात्रि को रहेंगे और अमुक समये भोगविलास करेंगे. इस तरह उस साधु को लालच देकर वश में करेंगे. और वह साधु कामातुर हो कुकर्म करने से भ्रष्ट बन जायगा. इस लिये इस बात को अयोग्य जान जेपन में जाना नहीं क्यों की वहां जाने से पूर्वोक्त नुकशान होते हैं, इस लिये पूर्व

सहत नरमा। इ॰तवर॰क॰ पु॰बहुतम स॰अनेक घरा मा ए॰निदोष व॰विशुध्यानदोष पि॰आहार प॰ग्रहणकर आ॰आहार आ भोगवे. ॥१॥ से॰ वे भि॰साधु साध्वी से॰ वे जं॰जो पु॰और जा॰जाने गा॰ग्राममें जा॰ यावत् रा॰ राजधानी में इ॰ इस ख॰ निश्चय गा॰ ग्राममें जा॰ यावत् रा॰ राजधानी में सं॰ जेमन सि॰ स्यात् है॰ उस गा॰ ग्राम को रा॰ राजधानी को सं॰ जेमन प॰ लिये णो॰ नहीं अ॰ धार ग॰ जाने को के॰ केवलज्ञानी बु॰कहा आ॰कर्मबन्धका कारण ये॰ यह ॥ आ॰आकीर्ण सं॰ जेमन में अ॰ प्रवेश करते पा॰

सूत्र

नंतरहिं कुलेहिं सामुदाणियं एसियं वेसियं पिंडवायं पडिगाहित्ता आहारं आहारेज्जा ॥ २ ॥ से भिक्खू वा (२) से ज्जं पुण जाणिज्जा गामं वा, जाव रायहाणिं वा इमंसि खलु गामंसि वा जाव रायहाणिंसि वा संखडी सिया तंपिय गामं वा राय हाणिं वा संखडिपडियाए णो अभिसंधारेज्जा गमणाए, केवली बूया आयाण मेय ॥ आइण्णोवमाणं संखडिं अणुपविस्समाणस्स पाएण वा पाए अक्कंतपुव्वे भ॰

भावार्थ

को भान यहां कदापि जाना नहीं. परंतु भिक्षा समय बहुत घरों मे आधाकर्मादि दोष रहित आहार ग्रहण करके भोगवना ॥ १॥ ग्राम या नगर में जेमन होवे तो वहां जाने की इच्छा साधु को करना नहीं; क्योंकि केवल ज्ञानीने इस में कर्मबंध [redacted] कारण बताया है. जैसे कि वहां जिमने को बहुत मनुष्य एकत्रित होते हैं उस की भीड में गृहस्थों के पांवसे साधु के पांव, हाथ से हाथ, पात्र से पात्र, मस्तक से मस्तक,

शब्दार्थ

पगसेपग अ० अवदाना पु० पहिले भ० होवे. ह० हाथसे हाथ सं० संचालित पु० पहिले भ० होवे, पा० पात्र से पात्र अ० अस्फालन पु० पहिले भ० होवे, सी० मस्तकसे मस्तक सं० संघट्टा पु० पहिले भ० होवे, का० शरीर से शरीर सं० संक्षोभित पु० पहिले भ० होवे, दं० लकडीसे, अ० हड्डीसे, मु० मुष्टिसे, ले० पत्थरसे, क० कवेलूसे अ० मारपडे पु० पहिले भ० होवे. सी० सीतोदकसे उ० छींटना पु० पहिले भ० होवे, र० धूलसे प० भराना पु० पहिले भ० होवे अ० अनेषणिक प० भोगवना पु० पहिले भ० होवे, अ० दूसरे को दि०

सूत्र

वति, हत्थेण वा हत्थे संचालियपुव्वे भवति, पाएण वा पाए आवडियपुव्वे भवति सीसेण वा सीसे संघट्टिय पुव्वे भवति, काएण वा काए संखोभियपुव्वे भवति, दंडेण वा, अट्ठिणा वा, मुट्ठिणा वा, लेलुणा वा, कवालेण वा, अभिहय पुव्वे भवति, सीतोदएण वा उसीत्तपुव्वे भवति रयसा वा परघासियपुव्वे भवति. अणेसणिज्जेण वा परिभुत्तपुव्वे भवति, अण्णेसिं वा दिज्जमाणे पडिगाहितपुव्वे भवति, तम्हा से संजए णिग्गंथे तहप्पगारं आइण्णोमाणं संखडिं संखडिपडियाए णो अभिसंधारेज्जा गमणाए ४

भावार्थ

और शरीर से शरीर का संघटन होगा. यहां कोई क्रोधी साधु को लकडी से, अस्थि से, पत्थर से, कवेलू से ठीकरा जो मिलेगा उस से मारेगा. सचित्त जल का संघटा होगा, बहुत जनों के चलने से उडती हुई धूलि से साधु का शरीर खराब होगा. अशुद्ध आहार ग्रहण किया जायगा, अन्य को देने का आहार साधु मांगेगा, या गृहस्थ देगा, जिस से अंतराय लगेगा, ऐसे अनेक दोषों का स्थान संखडी को जान साधु को

देते हुवे प० लेना पु० पहिले म० होवे, स० इसलिये से० वे सं० साधु णि० निग्रन्थ त० तथा प्रकार आ० भीडवाले सं० जेमन में सं० जेमन केलिये णो० नहीं अ० याछे गं० जानेका ॥ ४ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० गृहस्थके घरमें पि० आहारलेने प० प्रवेशकरे तब से० वे जं० जो पु० और जा० जाने अ० चारों आहार ए० शुद्ध स्यात अ० अशुद्ध स्यात् वि० शंका स० युक्त अ० अपनेको अ० अशुद्ध लं० लेश्यामें त० तथा प्रकार का अ० अशनादि चारों आहार ला० मिलेतोभी णो० नहीं प० ग्रहणकरे. ॥५॥ से० वे भि०साधु साध्वी गा० गृहस्थके घरमें प० प्रवेश करने के का०अभिलाषी स० सर्व भं० उपकरण मा० मार्थलेकर गा० गृहस्थके घरमे पिं० आहार प० लेनेको प० प्रवेशकरे णि० निकले. ॥६॥ से० वे भि० साधु

मूल

से भिक्खू वा (२) गाहावइ कुलं पिंडवाय पडियाए पविट्ठसमाणे से उजं पुण जाणेज्जा असणं वा (४) एसणिज्जं सिया अणेसणिज्जं सिया वितिगिच्छसमावण्णेणं अप्पाणेणं असमाहडाए लेस्साए तहप्पगारं असणंवा (४) लाभेसंते णो पडिग्गाहेज्जा ॥ ५ ॥ से भिक्खू वा (२) गाहावतिकुलं पविसिउ कामे सव्वं भंडगमायाय गाहावति कुलं पिंडवाय पडियाए पविसेज्ज वा णिक्खमेज्ज वा ॥६॥ से भिक्खू

भावार्थ

तथा प्रकार का जेमन में जाना नहीं. ॥ ४ ॥ गृहस्थ के घर भिक्षार्थ गये मुनि को जो आहार सदोष के निर्दोष होने पर शंका युक्त मालुम परे सो वह आहार मलिनाशय से नहीं ग्रहण करना ॥ ५ ॥ साधु

शब्दार्थ साध्वी ब० बाहिर वि० स्वाध्याय स्थान वि० स्थंडिल स्थान णि० जाते हुवे प० प्रवेश करते हुवे स० सर्व भं० भंडग उकरण मा० साथले ब० बाहिर वि० स्वाध्याय स्थान वि० स्थंडिल स्थान प० प्रवेशकरे णि० निकले. ॥ ७ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० विहार करते स० सर्व भ० भंडोपकरण मा० साथले गा० ग्रामानु ग्राम दू० जावे. ॥ ८ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी अ० अथ पु० फिर ए० ऐसा

सूत्र वा [६] बहिया वियार भूमिं वा विहारभूमिं वा णिक्खम्ममाणे पविसमाणे स-व्वं भंडग मायाए बहिया वियारभूमिं वा विहारभूमिं वा णिक्खमेज्जा वा पविसेज्जा वा ॥ ७ ॥ से भिक्खू वा (२) गामाणुगामं दूइज्जमाणे सव्वं भंडग—मायाए गामाणुगामं दूइज्जेज्जा ॥ ८ ॥ से भिक्खू वा (२) अह पुण एवं जाणेज्जा ति

भावार्थ साध्वी गृहस्थ के घर भिक्षार्थ जाते अपना भंडोपकरण * साथ ले जावे. ॥ ६ ॥ साधु साध्वी स्वाध्याय भूमि या स्थंडिल भूमि में जाते समय अपना भंडोपकरण साथ लेकर जावे ॥ ७ ॥ पूर्वोक्त रीत्या साधु साध्वी ग्रामानुग्राम विचरते अपना सर्व भंडोपकरण साथ रखे ॥ ८ ॥ साधु साध्वी बहुत बारिस पडते धूंयर

* भंडोपकरण साथ ले जाने का मतलब यह है कि किसी के यहां वस्त्रपात्र विना अमर्यादित रीति से नहीं जाना.

आ० जाने ति० बहुत क्षेत्र व्यापक वा० वर्षा वा० वर्षता पे० देखकर ति० बहुत क्षेत्र व्यापक म० धूंवर स० पडती पे० देखकर म० महावायु मे र० रज स० उडती पे० देखकर ति० तिरछे सं० उडते वा० या त० त्रस पा० प्राणी मे एकत्रहो स० दगले होते पे० देखकर से० वे ए० ऐसे जा० जान णो० नहीं स० सर्व भ० भंडोपकरण मा० साथले गा० गृहपति केघर पिं० आहार के लिये प० प्रवेशकरे णि० निकले ब० बाहिर वि० स्वाध्याय स्थान वि० स्थंडिल स्थान में प० प्रवेशकरे णि० निकले गा० ग्रामानुग्राम दू० विहार करे. ॥ ९ ॥ से० वे

व्वंदेसियं वासं वासमाणं पेहाए, तिव्वंदेसियं महियं सण्णिवयमाणिं पेहाए, महावाएण वा रयं समुद्धुयं पेहाए, तिरिच्छसंपातिमा वा तसा पाणा संघडा सन्निवयमाणा पेहाए, से एवं णच्चा णो सव्वं भंडग मायाए गाहावइकुलं पिंडवाय पडियाए पविसेज्ज वा णिक्खमेज्ज वा बहिया विहारभूमिं वा वियारभूमिं वा पविसेज्ज वा णिक्खमेज्ज वा गामाणुगामं दूइज्जेज्ज वा ॥ ९ ॥ से भिक्खू वा (२) सेज्जाइं

) पडते, बहुत वायु चलते, बहुत धूल उडते, और बहुत पतंगीयादि जीव एकत्रित होकर गिरते हुवे [देख]कर धर्मोपकरण को साथ लेकर भिक्षा लेने को, या स्वाध्यायादि करने को, या ग्रामानुग्राम विचरने को जावे नहीं ॥ ९ ॥ चक्रवर्ती प्रमुख क्षत्रिय, सामान्य राजा, ठाकर, सिरदार, तथा और भी कोइ राज्यवंशी

शब्दार्थ साधु साध्वी से० वे जं० जो कु० कुल जा० जाने तं० ते यह ज०यथा ख०महाराजा रा०सामान्यराजा कु० ठाकर रा० प्रधानादि रा० राजा के वंश के अं० अंदर ब० बाहिर सं० नजीक बैठे ग० जाते णि० आमंत्रण देते अ०नहीं आमंत्रणदेते अ० चारों आहार ला० मिलतो णो० नहीं प० ले. ॥ १० ॥ +

से० वे भि० साधु साध्वी जा० यावत् प० प्रवेशकर से० वे जं० जो जा० जाने मं० मांसादिक प०

सूत्र पुण कुलाइं जाणेज्जा तं जहा—खत्तियाण वा, राईण वा, कुराईण वा, रायपेसियाण वा, रायवंसट्ठियाण वा, अंतो वा, बहिया वा संणिविट्ठाण वा, गच्छंताण वा, णिमंतमाणाण वा, अणिमंतमाणाण वा असणं वा (४] लाभेसंते णो पडिग्गाहेज्जासि त्तिबेमि ॥ १४ ॥ इति पिंडेसणाज्झयणस्स—तइओद्देसो सम्मत्तो *

से भिक्खू वा (२) जाव पविट्ठसमाणे से जं पुण जाणेज्जा, मंसाइयं वा म-

भावार्थ साधु को उपाश्रय में या उपाश्रय बाहिर मिले और आहार लेने को आमंत्रण करे तो साधु को राजपिण्ड आहार ग्रहण करने को जाना नहीं ऐसा मैं कहता हूं ॥ १० ॥ इति पिण्डैषणा नामक दशम अध्ययन का तृतीय उद्देशा पूर्ण हुवा. आगे और भी जमनवार में जाने का निषेध करते हैं. *

साधु को गोचरी गये बाद मालूम पडे कि उन के वहां मांस, मदिरा मधुपुन भोजन, लग भाजन

शब्दार्थ आ० जाने नि० बहुत क्षेत्र व्यापक वा० वर्षा वा० वर्षता पे० देखकर ति० बहुत क्षेत्र व्यापक म० धूंयर स० पडती पे० देखकर म० महावायु में र० रज म० उडती पे० देखकर ति० तिरछे सं० उडते वा० या त० त्रस पा० प्राणी म एकत्रित म० हगने होने पे० देखकर मे० वे ए० ऐसे ण० जान णो० नहीं स० सर्व भ० भंडोपकरण मा० माथले गा० गृहपति केघर पि० आहार के लिये प० प्रवेश करे णि० निकले प० बाहिर वि० स्वाध्याय स्थान वि० स्थंडिल स्थान में प० प्रवेश करे णि० निकले गा० ग्रामनुग्राम दू० विहार करे. ॥ १ ॥ से० वे

सूत्र व्वंदेसियं वासं वासमाणं पेहाए, निव्वंदेसियं महियं सण्णिवयमाणिं पेहाए, महावाएण वा रय समुद्धुयं पेहाए, तिरिच्छसंपातिमा वा तसा पाणा संघडा सन्निवयमाणा पेहाए, से एवं णच्चा णो सव्वं भंडग मायाय गाहावइकुलं पिंडवाय, पडियाए पविसेज्ज वा णिक्खमेज्ज वा बहिया विहारभूमिं वा वियारभूमिं वा पविसेज्ज वा णिक्खमेज्ज वा गामाणुगामं दूइज्जेज्ज वा ॥ १ ॥ से भिक्खू वा (२) सेज्जाइं

भावार्थ (दत्र) पडते, बहुत वायु चलने, बहुत धूल उडते, और बहुत पतांगीयादि जीव एकत्रित होकर गिरते हुवे देखकर धर्मोपकरण को साथ लेकर भिक्षा लेने को, या स्वाध्यायादि करने को, या ग्रामानुग्राम विचरने को जावे नहीं ॥ १ ॥ चक्रवर्ती प्रमुख क्षत्रिय, सामान्य राजा, ठाकुर, गिरदार, तथा और भी कोइ राज्यवंशी

शब्दार्थ

प० प्रवेश करना वा० वांचना पु० पूछना प० आवृत्तिदेना अ० अनुप्रेक्षा ध० धर्मकथानुयोगचिन्तन से० वे ए० ऐसे ण० जानकर त० तथा प्रकार पु० पहिला जेमन प० पीछेका जेमन सं० जेमन के लिये णो० नहीं अ० धार ग० जाना. ॥ १ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० गृहस्थके घर पिं० आहार के प० लिये प० प्रवेश करते से० वे जं० जो पु० और जा० जाने मं० मांस यावत् सं० प्रीति भोजन ही० लेजाते पे० देखकर अ० धान म० मार्ग में अ० अल्प अंडे जा० यावत् अ० अल्प सं०

सूत्र

चिंताए, सेवं णचा तहप्पगारं पुरेसंखडिं वा, पच्छासंखडिं वा, संखडिपडियाए णो अभिसंधारिज्ज गमणाए ॥ १ ॥ से भिक्खू वा (२) गाहावइकुलं पिंडवायपडियाए पविट्ठसमाणे से जं पुण जाणेज्जा मंसाइयं जाव संखडिं वा हीरमाणं पेहाए अंतरा से मग्गा अप्पंडा जाव अप्पसंताणगा, णो जत्थ बहवे समण माहणा जाव उवाग-

भावार्थ

व धर्मोपदेश या ध्यान मौन नहीं रखसके ऐसी जो पूर्व संखडी और पश्चात् संखडी में संखडी लेने के लिये साधु को विचार मात्र नहीं करना. ॥ १ ॥ परंतु यदि ऐसा मांस मत्स्य के मधु मधुर विवाह भोजन, मृतक भोजन, या प्रीति भोजन में मुनि को कोई ले जाते होवे और मार्ग में मुनि को वनस्पति, पानी के जंतु नहीं होवें, वैसे ही श्रमण ब्राह्मणादिक भी बहुत न होवे कि जिस से मुनि को जाना आना

अर्थ

गाले णो० नहीं ज० जहां ब० बहुत स० साधु मा० ब्राह्मण जा० यावत् उ० आनेवाले अ० थोडी आ० आकीर्ण वि० वृत्ति प० प्रज्ञावंत को णिं० निकलना प० प्रवेश करना प० प्रज्ञावंत को वा० वांचन पु० पृच्छा प० आवृत्तिदेना अ० चिन्तवन ध० धर्मकथानुयोग चिन्तवन से० ऐसा ण० जान स० तथा प्रकार पु० पहिला मं० जेमन प० पीछला मं० जेमन सं०आहार के प०लिये अ० धारे ग० जाना. ॥ २ ॥ से० वे भि० साधु सा०ध्वी गा० गृहस्थके घर जा० यावत् प० प्रवेश करने का० कामी से० वे जं० जो पु० फिर

सूत्र

मिस्संति अप्पाइण्णा वित्ती, पण्णस्स णिक्खमणपवेसाए पण्णस्स वायण पुच्छणप रियट्टणाणु पेहाए धम्माणुओगचिंताए, सेवं णच्चा तहप्पगारं पुरे संखडिं वा प० च्छासंखडिं वा मग्वडिपडियाए अभिसंधारेज्ज गमणाए ॥ २ ॥ से भिक्खू वा (२) गाहावइकुलं जाव पविसित्तु कामे से जं पुण जाणेज्जा खीरिणियाओ गावी

भावार्थ

सुलभ होवे और पठन पाठनादिक भी हो सकता होवे तो वैसे स्थान साधु को + (कारणयोगे) भिक्षार्थ जाना ॥ २ ॥ गृहस्थ के घर में प्रवेश करते गाय दोहाती होवे या भोजन बनता होवे या तैयार होने पर भी अन्य याचकों को दिया नहीं होवे तो मुनि को गृह में प्रवेश नहीं करना परंतु कोइ न देख सके

+ मुनि चलने से थकगया होवे, या बीमारी से उठा होवे. या दुर्भिक्ष होवे ऐसे कारणों से मासादिक का त्याग करने में समर्थ मुनि को वहां जाना ऐसा और ऐसे मोक्ष लेना टीकाकार लिखते हैं

शब्दार्थ

जा० जाने खी० दुधदेनेवाली गा० गायें खी० दुधनिकालते पे० देखकर अ० असनादि चारों आहार उ० निपजाते पे० देख पु० पहिले अ० नहीं दिया गं० ऐसा ण० जान णो० नहीं गा० गृहस्थके घरमें पि० आहार लेने प० प्रवेशकरे णि०निकले ॥ से० वे त०उसको आ०लेकर ए०एकान्त में अ०जावे अ०प्रान अ० कोइनदेखे वहां चि० ऊभारहे । अ० अथ पु० फिर ए० ऐसा जा० जाने खी० दुधदेने वाली गा० गायें खी० दुधनिकाला अ० असनादि चारों आहार, उ० निपज्या पे० देख पु० पहिले ए० दिया गं० वे ए० ऐसा ण० जान त० तब सं० संयति गा० गृहस्थके घर पि० आहार प० लिये प० प्रवेशकरे

सूत्र

ओ खीरिज्जमाणीओ पेहाए, असणं वा(४) उवसंखडिज्जमाणं पेहाए पुरा अप्प जूहिए सेवं णच्चा णो गाहावइकुलं पिंडवाय पडियाए णिक्खमेज्ज वा पविसेज्ज वा, ॥ से तमायाए एगंत मवक्कमेज्जा, अणावाय—मसंलोए; चिट्ठेज्जा—अह पुण एवं जाणेज्जा खिरिणीओ गावीओ खीरियाओ पेहाए, असणं वा (४) उवक्खडियं पेहाए, पुराएजूहिते, से एवं णच्चा ततो संजयामेव गाहावतिकुलं पिंडवायपडिया

भावार्थ

ऐसा एकान्त स्थान में जाकर खडा रहना. जब मालूम होवे कि गाय दोहाइ गइ है, भोजन तैयार होगया है, और अन्य याचकों को दियागया है तब उस गृहस्थ के घर जाकर यत्ना पूर्वक आहार लेने को जाना

भि० भिक्षु ॥ ३ ॥ भि० अहो भिक्षुक बे० कितनेक ए० ऐसा व० कहे स० स्थिरवासी व० कल्पवि-
हारी गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरते खु० छोटा स० निश्चय अ० इस ग्राम में भि० रोकाये हैं. णो० नहीं
म० बडा से० इसलिये हं० अहो भ० भयवंत्यलने वाले बा० बाहिर के गा० ग्राम में भि० भिक्षाचरी अर्थ व०
पधारो ॥ ४ ॥ स० है त० तहां ग० आनेवाले कोइ एक भि० साधुके पु० पहिले के सं० परिचित प० पश्चात् सं०
परिचित प० रहते हैं तं० वह ज० यथाः—गा० गृहस्थकी स्त्री गा० गृहस्थका पुत्र गा० गृहस्थकी पुत्री

सूत्र ए पहिमेत्र वा णिक्खमेत्र वा ॥ ३ ॥ भिक्खागा मेगे एवं माहंसु समाणे वा वस-
माणे वा गामाणुगाम दूइज्जमाणे खुड्डाए खलु अयं गामे, संणिरुद्धाए णो महालए,
से हंता—भयंतारो बाहिरगाणि गामाणि भिक्खायरियाए वयह ॥ ४ ॥ संति तत्थे गति-
यस्स भिक्खुस्स पुरेसंथुयावा पच्छासंथुयावा परिवसंति तं जहा गाहवती वा; गाहावतिणीओ

भावार्थ ॥ ३ ॥ वृद्धावस्था में स्थिरवास करनेवाले या ग्राम कल्पमें विचरनेवाले मुनि नये आनेवाले मुनि को ऐसा
कहे कि हे पूज्य मुनियो यह ग्राम बहुत छोटा है और बहुत से गृह रुकाये हुवे हैं; इसलिये आप भिक्षार्थ
अन्य ग्राम पधारो ऐसा सुन उन मुनियों को वहां से ग्रामान्तर चले जाना ॥ ४ ॥ किसी ग्राम में मुनि के
पूर्व परिचित तथा पश्चात परिचित स्वजन संबंधि होवे जैसे कि:—गृहस्थ गृहस्थ की स्त्री, गृहस्थ का पुत्र,
पुत्री, पुत्रवधू, दास, दासी, नौकर, नोकरनी, ऐसा ग्राम में मुनि ऐसा विचार करे कि ...

शब्दार्थ गा० गृहस्थकेपुत्र की स्त्री, धा० धाय, दा० दास, दा० दासी, क० नोकर क० नोकरनी त० तथा प्रकारके कु० कुलमें पु० पहिलेके सं० परिचित प० पीछेके सं० परिचित पु० पहिले के भि० भिक्षाचरी अर्थ अ० प्रवेश करूंगा अ० अपि इ० यहां ल० प्राप्त करूंगा पिं० आहार लो० सरसवस्तु खी० दूध द० दही न० मक्खन घ० घृत गु० गुड ते० तेल म० मधु म० मदिरा मं० मांस सं० तिलपापडी, फा० तिलपापडी, पू० मालपुवा,

सूत्र वा; गाहावतिपुत्ताचा, गाहावतिधूयाओ वा; गाहावतिसुण्हाओ वा, धाईओ वा; दासा वा, दासीओ वा, कम्मकरा वा, कम्मकरीओ वा, तहप्पगाराइं कुलाइं पुरे संथुयाणि वा, पच्छासंथुयाणि वा, पुव्वामेव भिक्खायरियाए अणुपविसिस्सामि, अविय इत्थ लभिस्सामि पिंडं वा, लोयं वा, खीरं वा, दधिं वा, नवणियं वा, घयं वा, गुलं वा, तेल्लं वा

भावार्थ स्वजन संबंधि में भिक्षार्थ जाउंगा और यहां अन्न, पान, दूध, दही, माखण, घी, गुड, तेल, मधु, मद्यमांस, १, तिलपापडी, गुड का पानी, बुंदि के श्रीखंड मिलेगा उन को मैं पहिले खाकर पात्रों साफ कर फिर अन्य

---

१. साधुको मद्यमांस वस्तु लेनेका आगम में निषेध किया है "अमज्जमंसासि मच्छरिया" इति आ-[redacted] वचनात् परंतु कोइ प्रमादी मांस गृद्धि साधु मद्यमांस की इच्छा करे इस लिये यहां लिया गया है, ऐसा टीकाकार बताते हैं.

पदार्थ

पि० निकले ॥ ३ ॥ भि० अहो भिक्षुक मे० कितनेक ए० ऐसा म० कहे स० स्थिरवासी व० कल्पवि- हारी गा० ग्रामानुग्राम दू० फिरते खु० छोटा ख० निश्चय अ० इस ग्राम में पि० रोकाये हैं. णो० नहीं म० बडा मे० इसलिये हं०अहो भ०भयकेटालने वाले बा० बाहिर के गा० ग्राम में भि० भिक्षाचरी अर्थ व० पधारो ॥ ४ ॥ सं० हैं त०तहां ग०जानेवाले कोइ एक भि०साधुके पु०पहिले के सं०परिचित प० पश्चात् सं० परिचित प० रहते हैं. तं० वह ज० यथाः—गा० गृहस्थकी स्त्री गा० गृहस्थका पुत्र गा० गृहस्थकी पुत्री

मूल

प पविसेज्ज वा णिक्खमेज्ज वा ॥ ३ ॥ भिक्खागा मेगे एवं माहंसु समाणे वा वस माणे वा गामाणुगामं दूइज्जमाणे खुड्डाए खलु अयं गामे, संणिरुद्धाए णो महालए, से हंता—भयंतारो बाहिरगाणि गामाणि भिक्खायरियाए वयह ॥ ४ ॥ संति तत्थे गति- यस्स भिक्खुस्स पुरेसंथुयावा पच्छासंथुयावा परिवसंति तं जहा गाहवती वा; गाहावतिणीओ

भावार्थ

॥ ३ ॥ वृद्धावस्था से स्थिरवास करनेवाले या मास कल्पसे विचरनेवाले मुनि नये आनेवाले मुनि को ऐसा कहे कि हे पूज्य मुनियों, यह ग्राम बहुत छोटा है और बहुत से गृह रुकाये हुवे हैं; इसलिये आप भिक्षार्थ अन्य ग्राम पधारो. ऐसा सुन उन मुनियों को वहां से ग्रामान्तर चले जाना ॥ ४ ॥ किसी ग्राम में मुनि के पूर्व परिचित तथा पश्चात् परिचित स्वजन संबंधि होवे जैसे कि:—गृहस्थ गृहस्थ की स्त्री, गृहस्थ का पुत्र, पुत्री, पुत्रवधू, दास, दासी, नोकर, नोकरनी, ऐसा ग्राम में मुनि ऐसा विचार करे कि मैं [illegible]

शब्दार्थ गा० गृहस्थकेपुत्र की स्त्री, धा० धाइ, दा० दास, दा० दासी, क० नोकर क० नोकरनी त० तथा प्रकारके कु० कुलमें पु० पहिलेके प० परिचित प०पीछेके सं० परिचित पु० पहिले के भि० भिक्षाचरी अर्थ अ०प्रवेश करूंगा अ० अपि इ० यहां ल०प्राप्त करूंगा पिं० आहार लो० सरसवस्तु खी० दूध द० दही न०मक्खन घ० घृत गु० गुड तें० तेल म० मधु म० मदिरा मं० मांस सं० तिल्लपापडी, फा० तिलपापडी, पू० मालपूवा,

सूत्र वा; गाहावतिपुत्ताओ वा, गाहावतिधूयाओ वा; गाहावतिसुण्हाओ वा, धाईओ वा; दासा वा, दासीओ वा, कम्मकरा वा, कम्मकरीओ वा, तहप्पगाराइं कुलाइं पुरे संथुयाणि वा, पच्छासंथुयाणि वा, पुव्वामेव भिक्खायरियाए अणुपविसिस्सामि, अविय इत्थ लभिस्सामि पिंडं वा, लोयं वा, खीरं वा, दधिं वा, नवणियं वा, घयं वा, गुलं वा, तेल्लं वा

भावार्थ स्वजन संबंधि में भिक्षार्थ जाऊंगा और यहां अन्न, पान, दूध, दही, मक्खण, घी, गुड, तेल, मधु, मद्यमांस, १, तिलपापडी, गुड का पानी, बुंदि के श्रीखंड मिलेगा उन को मैं पहिले खाकर पात्रां साफ कर फिर अन्य

१. साधुको मद्यमांस वस्तु लेनेका आगम में निषेध किया है "अमज्जमंसासि मच्छरिया" इति आगम वचनात् परंतु कोइ प्रमादी मांस गृद्धि साधु मद्यमांस की इच्छा करे इस लिये यहां लिया गया है, ऐसा टीकाकार बताते हैं.

सा० भि० भि० ॥ ३ ॥ भि० अहो भिक्षुक मे० कितनेक ए० ऐसा म० कहे म० स्थिरवासी व० कल्पवि-
हारी आ० ग्रामानुग्राम दू० फिरते खु० छोटा ख० निश्चय अ० इस ग्राम में भि० रोकाये हैं. णो० नहीं
म० बडा मे० इसलिये हे० अहो भ० भयवंतो बन्ने वाले बा० बाहिर के गा० ग्राम में भि० भिक्षाचरी अर्थ व०
पधारो ॥ ४ ॥ सं० है त० तहां म० आनेवाले कोइ एक भि० साधु के पु० पहिले के सं० परिचित प० पश्चात् सं०
परिचित व० रहते हैं वं० वह अ० यथा:—गा० गृहस्थकी स्त्री गा० गृहस्थका पुत्र गा० गृहस्थकी पुत्री

मूल ए परिसेज्ज वा णिक्खमेज्ज वा ॥ ३ ॥ भिक्खागा मेगे एवं माहंसु समाणे वा वसं
माणे वा गामाणुगाम दूइज्जमाणे खुड्डाए खलु अयं गामे, संणिरुद्धाए णो महालए,
से हंता—भयंतारो बाहिरगाणि गामाणि भिक्खायरियाए वयह ॥ ४ ॥ संति तत्थे गति-
यस्स भिक्खुस्स पुरेसंथुयावा पच्छासंथुयावा परिवसंति तं जहा गाहावती वा; गाहावतिणीओ

भावार्थ ॥ ३ ॥ वृद्धावस्था में स्थिरवास करनेवाले या ग्राम कल्पमें विचरनेवाले मुनि नये आनेवाले मुनि को ऐसा
कहे कि हे पूज्य मुनियो. यह ग्राम बहुत छोटा है और बहुत से गृह रुकाये हुवे हैं; इसलिये आप भिक्षार्थ
अन्य ग्राम पधारो ऐसा सुन उन मुनियों को वहां से ग्रामान्तर चले जाना ॥ ४ ॥ किसी ग्राम में मुनि के
पूर्व परिचित तथा पश्चात् परिचित स्वजन संबंधि होवे जैसे कि:—गृहस्थ गृहस्थ की स्त्री, गृहस्थ का पुत्र,
पुत्री, पुत्रवधू, दास, दासी, नोकर, नोकरनी, ऐसा घर में मुनि ऐसा विचार करे कि मैं प्रथम मेरे

शब्दार्थ

भि० साध्वी का० सो० आचार है. ॥ ६ ॥ * *

से० वे भि० साधु साध्वी जा० यावत् प० प्रवेशकर गवेषणा करते हुवे से० वे जं० जो जा० जाने अ० अग्रपिंड उ० निकालता पे० देखकर अ० अग्रपिंड णि० रखता हुवा पे० देखकर अ० अग्रपिंड ही० लेजाता पे० देखकर अ० अग्रपिंड प० विभाग करता पे० देखकर अ० अग्रपिंड प० भोगवता पे० देखकर अ० अग्रपिंड प० न्हाखता पे० देखकर पु० पहिले अ० भोगवलिया अ० स्वस्थान लेगया ज० जहां अन्य स० साधु मा०

मूल

ढेसणा ज्झयणस्स चउत्थोद्देसो सम्मत्तो * *

से भिक्खू वा(२)जाव पविट्ठे समाणे से जं पुण जाणेज्जा अग्गपिंडं उक्खिप्पमाणं पेहाए, अग्गपिंडं णिक्खिप्पमाणं पेहाए, अग्गपिंडं हीरमाणं पेहाए अग्गपिंडं परिभाइज्जमाणं पेहाए; अग्गपिंडं परिभुज्जमाणं पेहाए; अग्गपिंडं परिट्ठविज्जमाणं पेहाए; पुरा असिणाति वा; अवहारा

भावार्थ

धार है ॥ ६ ॥ यह पिण्डैपणा नामक दशम अध्ययन का चतुर्थ उद्देशा पूर्ण हुवा. आगे साधु को आहार लेने की विधि बताते हैं. + +

गृहस्थ के घर में तैयार बनाहुवा भोजन में से प्रारंभ में देवता को नैवेद्य देने निमित्त निकाला हुवा आहार को निकालते समय, फेंकते समय, लेजाते समय, बांटते समय, खाते समय, या देवालय के आसपास डालते समय; बहुत शाक्यादि साधु, ब्राह्मण, भिखारी, वगैरह पहिले खाया हुवा है. इस लिये इस को

नि० भिक्षु भोजन के० उसे पु० पहिले भु० भोगवकर पे० पीछे प० पात्र सं० पूंछ प० पूंछकर स० समारक्ष प० बाद भि० साधुओंसाथ गा० गृहस्थके घर पि० आहार प० लेने प० प्रवेश करुंगा णि० निकलूंगा मा० "मायास्थान से० स्पर्शे" णो० नहीं ए० ऐसे क० करे से० वे त० वहां भि० साधु साथ का० समयपर अ० प्रवेशकर त० वहां अ० भिन्न २ कु० कुलसे सा० बहुत घरों की ए० निर्दोष वे० विशेष विशेष रहित पि० आहार प० लेवे आ० आहार आ० भोगवे ॥५॥ए० यह स० निश्चय त० उन भि० साधुका

सूत्र

महुं वा, मज्जं वा, मंसं वा, संकुलिं वा, फाणियं वा, पूयं वा, सिहरिणिं वा, तं पुव्वामेव भुच्चा पेच्चा पडिग्गहं संलिहिय सपमज्जियं, ततो पच्छा भिक्खूहिं सद्धिं गाहावतिकुलं पिंडवायपडियाए पविसिस्सामि णिक्खमिस्सामि वा, माइट्ठाणं संफासे। णो एवं करेज्जा,। से तत्थ भिक्खूहिं सद्धिं कालेण अणुपविसित्ता तत्थियरेयरेहिं कुलेहिं सामुदाणियं एसियं वेसियं पिंडवायं पडिगाहेत्ता आहारं आहारेज्जा ॥ ५ ॥ एयं खलु तस्स भिक्खुस्स वा भिक्खुणीए वा सामग्गियं ॥ ६ ॥ इति पिं

भावार्थ

मुनियों के साथ भिक्षार्थ जाउंगा, तो वह मुनि दोष पात्र है. इस लिये मुनि को ऐसा नहीं करना. किन्तु अन्य मुनियों के साथ योग्य समयपर भिन्न २ कुलों में भिक्षा निमित्त जाकर मिलाहुवा निर्दोष आहार ग्रहण कर उपयोग में लेना. ॥ ५ ॥ उक्त प्रकार से शुद्ध आहार ग्रहण करना भोगवना यह साधु का आ-

शब्दार्थ भि० साध्वी का० सां० आचार है. ॥ ६ ॥ * *

से० वे भि० साधु साध्वी जा० यावत् प० प्रवेशकर गवेषणा करते हुवे से० वं जं० जो जा० जाने अ० अग्रपिंड उ० निकालता पे०देखकर अ० अग्रपिंड णि० रखता हुवा पे०देखकर अ० अग्रपिंड ही० लेजाता पे०देखकर अ०अग्रपिंड प०विभाग करता पे०देखकर अ०अग्रपिंड प०भोगवता पे०देखकर अ० अग्रपिंड प० न्हाखता पे० देखकर पु० पहिले अ० भोगवलिया अ० स्वस्थान लेगया ज० जहां अन्य स० साधु मा०

सूत्र डेसणा ज्झयणस्स चउत्थोद्देसो सम्मत्तो * *

से भिक्खू वा(२)जाव पविट्ठे समाणे से जं पुण जाणेज्जा अग्गपिंडं उक्खिप्पमाणं पेहाए, अग्गपिंडं णिक्खिप्पमाणं पेहाए, अग्गपिंडं हीरमाणं पेहाए अग्गपिंडं परिभाइज्जमाणं पेहाए; अग्गपिंडं परिभुञ्जमाणं पेहाए; अग्गपिंडं परिठवेज्जमाणं पेहाए; पुरा असिणाति वा; अवहारा

भावार्थ घार है ॥ ६ ॥ यह पिण्डैषणा नामक दशम अध्ययन का चतुर्थ उद्देशा पूर्ण हुवा. आगे साधु को आहार लेने की विधि बताते हैं. + +

गृहस्थ के घर में तैयार बनाहुवा भोजन में से प्रारंभ में देवता को नैवेद्य देने निमित्त निकाला हुवा आहार को निकालते समय, फेंकते समय, लेजाते समय, बाँटते समय, खाते समय, या देवालय के आसपास डालते समय; बहुत शाक्यादि साधु, ब्राह्मण, भिखारी, वगैरेने पहिले खाया हुवा है. इस लिये इस को

शब्दार्थ ब्राह्मण अ० अतिथि कि० कृपण व० भिखारी ख० शीघ्र २ उ० जाते हैं. से० वे अ० मैं भी ख० शीघ्र उ० जावु मा० मायाका स्थान सं० स्पर्शे णो० नहीं ए० ऐसा क० करे. ॥ १ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० पावन प० प्रवेशकर एषणा करता हुवा अ० बीचमें व० गड फ० खाइ पा० कोट तो० तोरन अ० भर्गल अ० भर्गल पा० देखता प० उल्लंघे सं० साधु प० जावे णो० नहीं उ० सरल ग० जावे के० केवलीने वु० कहा आ० यह पाप स्थान ॥ २ ॥ से० वे त० तहां प० जाते हुवे प० पाँव आगे पीछेपडे प०

सूत्र

ति वा पुग जत्थन्ने समण माहण—अतिहि—किवण—वणीमगा खद्धं खद्धं उवसंक मंति, से हंता अहमवि खद्धं उवसंकमामि माइट्ठाणं संफासे. णो एवं करेज्जा ॥ १ ॥ से भिक्खू वा (२) जाव पविट्ठे समाणे अंतरासे वप्पाणि वा, फलहाणि वा, पागाराणि वा, तोरणाणि वा, अग्गलाणि वा; अग्गलपासगाणि वा, सति परक्कमे संजया मेव परकमेज्जा णो उज्जुयं गच्छेज्जा, केवली बूया आयाणमेयं ॥ २ ॥ से तत्थ पर

भावार्थ फिर लेने को जाते हुए देखकर मुनि भी ऐसा विचार करे कि मैं भी वहां जाऊं तो वह मुनि भी पापस्थान स्पर्शनेवाला है. इस लिये साधु को ऐसा विचार मात्र भी नहीं करना ॥ १ ॥ साधु भिक्षार्थ जाते मार्ग में गड, खाइ, कोट, तोरन, अर्गल, वगैरे आवे और दूसरा अच्छा मार्ग होवे तो उस विषे रास्ते से नहीं जावे, क्यों कि ऐसे मार्ग मे जाने में केवली ने पाप का कारण बताया है सो कहते हैं. ॥ २ ॥ ऐसे मार्ग से यदि साधु

शब्दार्थ माह्मण अ० अतिथि कि० कृपण व० भिखारी स० शीघ्र २ उ० जाते हैं. से० वे अ० मैं भी ख० शीघ्र उ० जावू मा० मायाका स्थान सं० स्पर्शे णो० नहीं ए० ऐसा क० करे. ॥ १ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० यावत प० प्रवेशकर एषणा करता हुवा अ० बीचमें व० गड फ० खाइ पा० कोट तो० तोरन अ० अर्गल अ० अर्गल पा० देखता प० उल्लंघे सं० साधु प० जावे णो० नहीं उ० सरल ग० जावे के० केवलीने बु० कहा आ० यह पाप स्थान ॥ २ ॥ से० वे त० तहां प० जाते हुवे प० पाँव आगे पीछेपडे प०

सूत्र ति या पुरा जत्थन्ने समण माहण–अतिहि–किवण–वणीमगा खद्धं खद्धं उवसंकमंति, से हंता अहमवि खद्धं उवसंकमामि माइट्ठाणं संफासे. णो एवं करेज्जा ॥ १ ॥ से भिक्खू वा (२) जाव पविट्ठे समाणे अंतरासे वप्पाणि वा, फलिहाणि वा, पागाराणि वा, तोरणाणि वा, अग्गलाणि वा; अग्गलपासगाणि वा, सति परक्कमे संजयामेव परकमेज्जा णो उज्जुयं गच्छेज्जा, केवली बूया आयणमेयं ॥ २ ॥ से तत्थ पर

भावार्थ फिर लेने को जाते हुए देखकर मुनि भी ऐसा विचार करे कि मैं भी वहां जाऊं, तो वह मुनि भी पापस्थान स्पर्शनेवाला है. इस लिये साधु को ऐसा विचार मात्र भी नहीं करना ॥ १ ॥ साधु भिक्षार्थ जाते मार्ग में गड, खाइ, कोट, तोरन, अर्गल, वगैरे आवे और दूसरा अच्छा मार्ग होवे तो उस सिधे रास्ते मे नहीं जावे, क्यों कि ऐसे मार्ग से जाने में केवली ने पाप का कारण बताया है सो कहते हैं. ॥ २ ॥ ऐसे मार्ग से पाँव साध

[illegible] नहीं प० पड़ता हुआ प० ग्रहण करता. वा० या त० तहां से० इसका का० शरीर उ०
[illegible] पु० मुक्त. [illegible] नि० [illegible] वं० वमन से लि० लिपने पु० पावने सु० [illegible] गां० [illegible]
[illegible] शरीर णो० नहीं अ० नजीक में रही पु० पृथ्वी पे णो० नहीं म० भींजी
[illegible] णो० नहीं [illegible] णो० नहीं [illegible]
[illegible] अंड सहित स० प्राणी सहित जा० यावत मं० मान्हे
[illegible] नहीं प० पुंज सं० घसे लि० [illegible] विशयवे. उ० पुछ उ० मसले, भ०
[illegible] वा, से तत्थपरक्कममाणे वा, पयडेमाणे वा, तत्थ से
[illegible] वा, [illegible] वा [illegible] वा, चंनेण वा, [illegible] वा,
[illegible] वा, उवलिंत सिया, । तहप्पगारं कायं णो अणंत-
[illegible] पुढविए, णो ससरक्खाए पुढविए, णो चित्तमंता
[illegible] वा, दारुए जीव पतिट्ठिए स
[illegible] होगा. [illegible] शरीर का [illegible] होगा और नीचे गिराहुवा
[illegible] और [illegible] शरीर अशुद्ध होगा. ऐसे समय पर साधु को
[illegible] पानी [illegible] शरीर शुद्ध नहीं करना; परंतु सूका घास,

शब्दार्थ प.पथ अ० आगादि कि० कृपण व० भिक्षार्थ ख० शीघ्र र उ० जाते है. मं० हे अ० मैं भी ख० शीघ्र जा० जाऊं पा० आपका स्थान सं० स्पर्श णो० नहीं ए० ऐसा कु० करे. ॥ १ ॥ मे० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्राम में प्रवेश कर एपणा करता हुआ अ० वीचमें व० गड फ० खाई पा० कोट तो० तोरन अ० अर्गल अ० अर्गल पा० देखना प० उल्लंघे मं० साधु प० जावे णो० नहीं उ० सरल ग० मार्गे के० केवली बू० कहा आ० यह पाप स्थान ॥ २ ॥ मे० वे त० तहां प० जाते हुवे प० पॉव आगे पीछपडे प०

मूल नि वा पग जत्थते समण माहण—अतिहि—किवण—वणीमगा खड्ड खड्ड उवसंकमन्ति से हंता अहमवि खड्डं उवसंकमामि माइट्ठाणं संफासे. णो एवं करेज्जा ॥ १ ॥ स भिक्खू वा (२) जाव पविट्ठे समाणे अंतराले वप्पाणि वा, फलहाणि वा, पागाराणि वा तोरणाणि वा, अग्गलाणि वा; अग्गलपासगाणि वा, सति परक्कमे संजया मेव परक्कमेज्जा णो उज्जुयं गच्छेज्जा, केवली बूया आयणमेयं ॥ २ ॥ से तत्थ पर

भावार्थ दिन वैसे को जाता देखकर मुनि भी ऐसा विचार करे कि मैं भी वहां जाऊं तो वह मुनि भी पापस्थान स्पर्शनेवाला है इस लिये साधु को ऐसा विचार मात्र भी नहीं करना ॥ १ ॥ साधु भिक्षार्थ जाते मार्ग में गड, खाई, कोट, तोरन, अर्गल, वगैरह आवे और दूसरा अच्छा मार्ग होवे तो उस विषे रास्ते से नहीं जावे, क्यों कि ऐसे मार्ग से जाने से केवली ने पाप का कारण बताया है सो कहते हैं. ॥ ३ ॥ ऐसे मार्ग में ...

शब्दार्थ म.स्पष्ट अ० भोजार्थ कि० कृपण व० भिखारी स० शीघ्र २ उ०. जाते हैं. मे० वे अ० मैं भी स० शीघ्र उ० जाऊं पा० मायाका स्थान सं० स्पर्शे णो० नहीं ए० ऐसा क० करे. ॥ १ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० पाथर प० प्रवेशकर एषणा करता हुवा अ० बीचमें व० गढ फ० खाइ पा० कोट तो० तोरन अ० भोगल अ० भोगल पा० देखना प० उल्लंघे मं० साधु प० जावे णो० नहीं उ० सरल ग० जावे के० केवलीने वृ० कहा आ० यह पाप स्थान ॥ २ ॥ से० वे त० तहां प० जाते हुवे प० पाँव आगे पीछपडे प०

सूत्र नि या पुग जत्थतं समण माहण–अतिहि–किवण–वणीमगा खद्धं खद्धं उवसंक मति, से हता अहमवि खद्धं उवसंकमामि माइट्ठाणं संफासे, णो एवं करेज्जा ॥ १ ॥ से भिक्खू वा (२) जाव पविट्ठे समाणे अन्तरासे वप्पाणि वा, फलहाणि वा, पा गाराणि वा, तोरणाणि वा, अग्गलाणि वा, अग्गलपासगाणि वा, सति परक्कमे संजया मेव परक्कमेज्जा णो उज्जुयं गच्छेज्जा, केवली बूया आयणमेयं ॥ २ ॥ से तत्थ पर

भावार्थ फिर उसे वो जाते हुए देखकर मुनि भी ऐसा विचार करे कि मैं भी वहां जाऊं; तो वह मुनि भी पापस्थान स्पर्शनेवाला है इस लिये साधु को ऐसा विचार मात्र भी नहीं करना ॥ १ ॥ साधु भिक्षार्थ जाते मार्ग में गढ,खाइ,कोट,तोरन, भोगल, वगैरे आवे और दूसरा अच्छा मार्ग होवे तो उस मिथे रास्ते मे नहीं जावे, क्यों कि ऐसे मार्ग मे जाने में केवली ने पाप का कारण बताया है सो कहते हैं. ॥ २ ॥ ऐसे मार्ग मे यदि साधु

शब्दार्थ

प्र.श्रमण अ० अतिथि कि० कृपण व० भिखारी स० शीघ्र २ उ० जाते हैं. से० वे अ० मैं भी स० शीघ्र उ० जाउं पा० याचका स्थान स० स्पर्शे णो० नहीं ए० ऐसा कु० करे. ॥ १ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्राम प० प्रवेशकर एषणा करता हुवा अ० बीचमें व० फ० खाइ पा० कोट तो० तोरन अ० अर्गल अ० अर्गल पा० देखना प० उल्लंघे सं० साधु प० जावे णो० नहीं उ० सरल ग० जावे के० केवलीने बू० कहा आ० यह पाप स्थान ॥ २ ॥ से० वे स० तहां प० जाते हुवे प० पाँव आगे पीछेपडे प०

मूल

नि वा पग। जत्थते समण माहण—अनिहि—किवण—वणीमगा खद्धं खद्धं उवसंकमंति से हता अहमवि खद्धं उवसंकमामि माइट्ठाणं संफासे. णो एवं करेज्जा ॥ १ ॥ से भिक्खू वा (२) जाव पविट्ठे समाणे अंतरासे वप्पाणि वा, फलिहाणि वा, पागाराणि वा, तोरणाणि वा, अग्गलाणि वा, अग्गलपासगाणि वा, सति परक्कमे संजया मेव परक्कमेज्जा णो उज्जुयं गच्छेज्जा, केवली बूया आयाणमेयं ॥ २ ॥ से तत्थ पर

भावार्थ

जिस मार्ग में देखकर मुनि भी ऐसा विचार करे मैं भी वहां जाऊं; तो वह मुनि भी पापस्थान स्पर्श करता है इस लिये साधु को ऐसा विचार मात्र भी नहीं करना ॥ १ ॥ साधु भिक्षार्थ जाते मार्ग में खाइ, कोट, तोरन अर्गल, वगैरे आवे और दूसरा अच्छा मार्ग होवे तो उस सिधे रास्ते से नहीं जावे, क्यों कि ऐसे मार्ग में जाने में केवली ने पाप का कारण बताया है सो कहते हैं. ॥ २ ॥ ऐसे मार्ग में यदि साधु

शब्दार्थ ब्राह्मण अ० अतिथि कि० कृपण व०. भिखारी ख० शीघ्र २ उ० जाते हैं. से० वे अ० मैं भी ख० शीघ्र उ० जावू मा० मायाका स्थान सं० स्पर्शे णो० नहीं ए० ऐसा क० करे. ॥ १ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी जा० यावत् प० प्रवेशकर एषणा करता हुवा अ० बीचमें व० गढ फ० खाइ पा० कोट तो० तोरन अ० अर्गल, अ० अर्गल पा० देखता प० उल्लंघे सं०, साधु प० जावे णो० नहीं उ० सरल ग० जावे. के० केवलीने बू० कहा आ० यह पाप स्थान ॥ २ ॥ से० वे त० तहां प० जाते हुवे प० पाँव आगे पीछेपडे प०

सूत्र ति वा पुरा जत्थन्ने समण माहण—अतिहि—किवण—वणीमगा खद्धं खद्धं उवसंकमंति, से हंता अहमवि खद्धं उवसंकमामि माइट्ठाणं संफासे. णो एवं करेज्जा ॥ १ ॥ से भिक्खू वा (२) जाव पविट्ठे समाणे अंतरासे वप्पाणि वा, फलिहाणि वा, पागाराणि वा, तोरणाणि वा, अग्गलाणि वा; अग्गलपासगाणि वा, सति परक्कमे संजया मेव परक्कमेज्जा णो उज्जुयं गच्छेज्जा, केवली बूया आयाणमेयं ॥ २ ॥ से तत्थ पर

भावार्थ फिर लेने को जाते हुवे देखकर मुनि भी ऐसा विचार करे कि मैं भी वहां जाऊं; तो वह मुनि भी पापस्थान स्पर्शनेवाला है. इस लिये साधु को ऐसा विचार मात्र भी नहीं करना ॥ १ ॥ साधु भिक्षार्थ जाते मार्ग में गढ,खाइ,कोट,तोरन,अर्गल, वगैरे आवे और दूसरा अच्छा मार्ग होवे तो उस सिधे रास्ते से नहीं जावे, क्यों कि ऐसे मार्ग से जाने में केवली ने पाप का कारण बताया है सो कहते हैं. ॥ २ ॥ ऐसे मार्ग से यदि साधु

[illegible] पहला हुवा प० गयाहुवा. था० या न० नहीं गं० इगका का० शरीर उ० [illegible] श्लेष्मसे वं० वमन से पि० पित्तसे पु० राधसे सु० वीर्यसे सो० रक्तसे [illegible] शरीर णो० नहीं अ० नजीक में रही पु० पृथ्वीसे णो० नहीं स० भींजी [illegible] णो० नहीं नि० सचित्त नि० शिलासे णो० नहीं नि० सचित्त ले० पत्थरसे [illegible] मो० अंडे सहित स० प्राणी सहित जा० यावत मं० जाले [illegible] पूं० पूंज मं० घसे णि० विशेषघसे, उ० पूछ उ० घसे, अ०

[illegible] वा, से तत्थयपत्तेमाणं वा, पवट्टमाणं वा, तत्थ से [illegible] वा, पिच्छणेण वा, सिंघाणेण वा, वंतेण वा, पित्तेण वा, [illegible] वा, उवलित्ते सिया, । तहप्पगारं कायं णो अणंत- [illegible] पुढविए, णो ससरक्खाए पुढविए, णो चित्तमंता [illegible] कोल्लावासंसि वा, दारुए जीव पतिट्ठिए स

[illegible] होगा. जिन से इस के शरीर का भंग होगा और नीचे गिरा हुवा [illegible] पित्त, रक्त, राध और वीर्य से शरीर अशुद्ध होगा. ऐसे समय पर साधु को [illegible] पत्थर, घास, पानी वगैर से शरीर शुद्ध नहीं करना; परंतु सूका घास,

शब्दार्थ ब्राह्मण अ० अतिथि कि० कृपण व० भिखारी ख० शीघ्र २ उ० जाते हैं. से० वे अ० मैं भी ख० शीघ्र उ० जावू मा० मायाका स्थान सं० स्पर्शे णो० नहीं ए० ऐसा क०-करे. ॥ १ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी जा० यावत् प० प्रवेशकर एषणा करता हुवा अ० बीचमें व० गढ फ० खाइ पा० कोट तो० तोरन अ० अर्गल अ० अर्गल पा० देखता प० उल्लंघे सं० साधु प० जावे णो० नहीं उ० सरल ग० जावे के० केवलीने वु० कहा आ० यह पाप स्थान ॥ २ ॥ से० वे त० तहां प० जाते हुवे प० पाँव आगे पीछेपडे प०

सूत्र ति वा पुग जत्थन्ने समण माहण—अतिहि—किवण—वणीमगा खद्धं खद्धं उवसंकमंति, से हंता अहमवि खद्धं उवसंकमामि माइट्ठाणं संफासे. णो एवं करेज्जा ॥ १ ॥ से भिक्खू वा (२) जाव पविट्ठे समाणे अंतरासे वप्पाणि वा, फलिहाणि वा, पागाराणि वा, तोरणाणि वा, अग्गलाणि वा; अग्गलपासगाणि वा, सति परक्कमे संजया मेव परक्कमेज्जा णो उज्जुयं गच्छेज्जा, केवली बूया आयाणमेयं ॥ २ ॥ से तत्थ पर

भावार्थ फिर लेने को जाते हुए देखकर मुनि भी ऐसा विचार करे कि मैं भी वहां जाऊं तो वह मुनि भी पापस्थान स्पर्शनेवाला है इस लिये साधु को ऐसा विचार मात्र भी नहीं करना ॥ १ ॥ साधु भिक्षार्थ जाते मार्ग में गढ,खाइ,कोट,तोरन, अर्गल, वगैरे आवे और दूसरा अच्छा मार्ग होवे तो उस सिधे रास्ते से नहीं जावे, क्यों कि ऐसे मार्ग में जाने में केवली ने पाप का कारण बताया है सो कहते हैं. ॥ २ ॥ ऐसे मार्ग से यदि साधु

शब्दार्थ

प्र.प्राण भ० भावार्थ कि० कृपण व० भिखारी स० शीघ्र २ उ० जाते हैं. से० वे अ० में भी स० शीघ्र उ० जाऊं मा० मायाका स्थान स० स्पर्शे णो० नहीं ए० ऐसा क० करे. ॥ १ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्राम प० प्रवेशकर एषणा करता हुवा अ० बीचमें व० गढ फ० खाइ पा० कोट तो० तोरन अ० अर्गल अ० अर्गल पा० रखना प० उल्लंघे सं० साधु प० जावे णो० नहीं उ० सरल ग० जावे के० केवलीने वु० कहा आ० यह पाप स्थान ॥ २ ॥ से० वे त० तहां प० जाते हुवे प० पाँव आगे पीछेपरे प०

सूत्र

नि वा पगा जत्थसे समण माहण-अतिहि-किवण-वणीमगा खद्धं खद्धं उवसंकमति से हता अहमवि खद्धं उवसंकमामि माइट्ठाणं संफासे. णो एवं करेज्जा ॥ १ ॥ से भिक्खू वा (२) जाव पविट्ठे समाणे अंतरासे वप्पाणि वा, फलहाणि वा, पागारणि वा तोरणाणि वा, अग्गलाणि वा, अग्गलपासगाणि वा, सति परकमे संजया मेव परक्कमेज्जा णो उज्जुयं गच्छेज्जा, केवली बूया आयाणमेयं ॥ २ ॥ से तत्थ पर

भावार्थ

फिर उन्हें को जाते हुए देखकर मुनि भी ऐसा विचार करे कि मैं भी वहां जाऊं; तो वह मुनि भी पापस्थान स्पर्शनेवाला है. इस लिये साधु को ऐसा विचार मात्र भी नहीं करना ॥ १ ॥ साधु भिक्षार्थ जाते मार्ग में गढ,खाइ,कोट,तोरन, अर्गल, वगैरे आवे और दूसरा अच्छा मार्ग होवे तो उस सिधे रास्ते से नहीं जावे, क्यों कि ऐसे मार्ग से जाने में केवली ने पाप का कारण बताया है सो कहते हैं. ॥ २ ॥ ऐसे मार्ग से यदि साधु

तपावे प० विशेषतपावे, से० वे पु० पहिले अ० अचित्त त० तृणप० पत्र क० काष्ट सं० कंकर जा० याचे जा० याचाहुवा से० वे आ० ग्रहण कर ए० एकान्त में जावे, ए० एकान्त मे जाकर अ० नीचे झा० जला हुवा ठं० स्थान थं० थंडिल जा० यावत् अ० दूसरा त० तथा प्रकार का प० देखे देखकर के प० पूंजे, प० पूंजकर के त० फिर सं० साधु अ० मशले जा० यावत् प० विशेष सुकावे. ॥ ३ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी भा० यावत् प० प्रवेशकर एषणाकरते हुवे से० वे जं० जो पु० और जा० जाणे गो० बैल, वि०

सूत्र

अंडे, स पाणे, जाव ससंताणए, णो आमज्जेज्ज वा, णो पमज्जेज्ज वा, संलिहज्ज वा, णिल्लिहेज्जवा; उव्वलेज्जवा उव्वट्टेज्ज वा, आयावेज्ज वा, पयावेज्ज वा, से पुव्वमेव अप्पस-सरक्खं तणं वा, पत्तं वा कट्ठं वा, सक्करं वा जाएज्जा; जाइत्ता सेतमायाए, एगंतमवक्कमेज्जा, एगंतमवक्कमित्ता अहे झामथंडिलंसि वा, जाव अण्णयरंसि वा, तहप्पगारंसि पडिलेहिय २ प मज्जिय, २ ततो संजयामेव आमज्जेज्ज वा, जाव पयावेज्ज वा ॥ ३ ॥ से भिक्खू वा २ जाव पविट्ठे समाणे से ज्जं पुण जाणेज्जा, गोणं वियालं पडिपहे पेहाए, महिसं विया-

भावार्थ

पत्ता, काष्ट का टुकडा कंकर पडा होवे उसे गृहस्थ की आज्ञा से ग्रहण कर एकान्त जाकर शरीर को शुद्ध करना ॥ ३ ॥ भिक्षार्थ जाता साधु को मार्ग में विकराल बैल, महिष, मनुष्य, अश्व, हस्ती, सिंह, व्याघ्र, रीछ, शरभ (अष्टापद) सियाल, बिल्ली, कुत्ता, आदि जंगली जानवरों खडे होवे और जाने को

शब्दार्थ

त० वहां ग० जावे ग०जाकर से० वे पु० पहिले की आ० कहे आ०आयुष्यमान् स०साधु इ०यह भो० अहो अ०अशनादि चारों आहार स०सर्व जनोंकी णि०नेश्राय में तं०इसे भुं०खाओ प०विभागकरो से०वे ए०ऐसा व० बोलातेको प०दूसरा व०कहे आ० आयुष्यमान् तु०तुम निश्चय प० विभाग करो. से० वे त० तहां प० विभाग करते णो० नहीं अ० अपनीतर्फ ख० अधिक २ डा० स्वादिष्ट २ ऊ० उत्तम २ र० रसिक २ म० मनोज्ञ २ णि० स्निग्ध २ लु० लूखा २ से० वे त० तहां अ० अमूर्च्छित अ० अगृद्ध अ० अनासक्त भ० एकाग्र चित्त रहित ब० बहुत स० बराबर प०विभाग करे, से०वे प० विभाग करता प० अन्य व० कहे

सूत्र

संकामे, णो एवं करेज्जा। से न मायाए तत्थ गच्छेज्जा(२)से पुव्वामेव आलोएज्जा आउसंतो समणा इमे भो असणे वा (४) सव्वजणाए निसिट्ठे तं भुंजह च णं परिभाएह च णं. सेवं वदंतं परोवएज्जा आउसंतो समणा तुमं चेव णं परिभाएहि से तत्थ परिभाएमाणे णो अप्पणो खद्धं २ डायं २ ऊसडं २ रसियं २ मणुन्नं २ णिद्धं २ लुक्खं २ से तत्थ अमुच्छिते, अगिद्धे, अगाढिए, अणज्झोववण्णे, बहुसममेव, परिभाए

भावार्थ

तो वह मायास्थान स्पर्शता है. इस लिये ऐसा विचार नहीं करना. किन्तु गृहस्थ ने दिया हुवा आहार को ग्रहण कर दूसरे साधुओं के पास आकर कहे कि यह आहार अपने सब के लिये मिला है. यदि इच्छा होवे तो एकत्र मिलकर भोगवे या इच्छा न होवे तो विभाग कर लेवे. यदि इनमें से कोइ साधु कहे कि

शब्दार्थ

सबे अ॰आगे ए॰एकान्त अ॰आकर अ॰मौन अ॰देखाव नहीं देता चि॰ ऊभारहे. ॥७॥ से॰ वह प॰गृहस्थ अ॰ धोनस्थ अ॰ आह चि॰ ऊभेरहे को अ॰ अशनादि चारों आहार आ॰ लाकर द॰ देवे से॰ वह ए॰ पौं व॰ बोले आ॰ आयुष्यमान् न॰ साधु इ॰ यह अ॰ अशनादि चारों आहार स॰ सर्व जनोंको नि॰ दिया है भुं॰ तुम भुंः खाओ प॰ विभागकरो, तं॰ उसे चे॰ कोइ प॰ लेकर तु॰ मौनस्थ ओ॰ विचारे, अ॰ और ए॰ पा म॰ मेरे निजका, ए॰ पो मा॰ दापस्थान मं॰ स्पर्शे णो॰ नहीं ए॰ ऐसा क॰ करे से॰ वे त॰ उसे मा॰ ग्रहणकर

सूत्र

एगंत मवक्कमिज्जा अणावाय मसंलोए चिट्ठेज्जा ॥ ७ ॥ से परो अणावाय मसंलोए चि ट्ठेमाणस्स असणं वा (४) आहट्टु दलएज्जा सेवं वदेज्जा आउसंतो समणा, इमे भो असणं वा (४) सव्वजणाए निसिट्ठे, तं भुंजह चणं. परिभाएह व णं, तं चे गतिओ पडिगाहेत्ता तुसिणीओ ओहेज्जा. अवियाइ एयं ममभेव सिया, एवं माइट्ठाण

भावार्थ

एकान्त स्थान में जाकर खड़ा रहना ॥ ७ ॥ उक्त प्रकार से एकान्त खड़े रहे हुए साधु को देख उन की पास कोइ गृहस्थ आकर अशनादि चारों प्रकार का आहार देवे, और कहे कि अहो आयुष्यमान साधु, तुम सब साधुओं के लिये यह आहार दिने दिया है अब इन तुम खाओ या तो परस्पर विभाग कर लेवो. ऐसा वचन सुनकर यदि साधु मौनपने ऐसा विचार करे कि यह आहार तो मात्र मेरा पेट भराय इतना ही है.

शब्दार्थ

त० वहां ग० जाके ग०जाकर से० वे पु० पहिले आ० कहे आ०आयुष्मान स०साधु इ०यह भो० अहो अ०अशनादि चारों आहार स०सर्व जनोंको ल०नेश्राय में तं०इन भुं०खावो प०विभागकरो से०वे ए०ऐसा व० बोलातेको प०दूसरा व०कहे आ० आयुष्मान तु०तुम निश्चय प० विभाग करो. से० वे त० तहां प० विभाग करते णो० नहीं अ० अपनीतर्फ म० अधिक २ ह० स्वादिष्ट २ ऊ० उत्तम २ र० रसिक २ म० मनोज्ञ २ णि० स्निग्ध २ लु० लूखा २ से० वे त० तहां अ० अमूर्च्छित अ० अगृद्ध अ० अनासक्त अ० एकाग्र चित्त रहित ब० बहुत स० बराबर प०विभाग करे, से०वे प० विभाग करता प० अन्य व० कहे

सूत्र

संकामे, णो एवं करेज्जा। से त मायाए तत्थ गच्छेज्जा(२)ते पुव्वामेव आलोएज्जा आउसंतो समणा इमे भो अमणं वा (४) सव्वजणाए निसिट्ठे तं भुंजह च णं परिभाएह च णं. सेवं वदंतं परोवएज्जा आउसंतो समणा तुमं चेव णं परिभाएहि से तत्थ परिभाएमाणे णो अप्पणो खद्धं २ डायं २ ऊसढं २ रसियं २ मणुन्नं २ णिद्धं २ लुक्खं २ से तत्थ अमुच्छिते, अगिद्धे, अगढिए, अणज्झोववण्णे, बहुसमंमेव, परिभाए

भावार्थ

तो वह मायास्थान स्पर्शता है. इस लिये ऐसा विचार नहीं करना. किन्तु गृहस्थ ने दिया हुवा आहार को ग्रहण कर दूसरे साधुओं के पास आकर कहे कि यह आहार अपने सब के लिये मिला है. यदि इच्छा होवे तो एकत्र मिलकर भोगवे या इच्छा न होवे तो विभाग कर लेवे. यदि उनमें से कोइ साधु कहे कि

से० वे भि० साधु साध्वी जा०यावत् प्रवेशकरे से० वे ज्जं० जो पु० फिर जा० जाने र०रसके ए० लुब्ध, व०बहुत पा० प्राणी घा० आहार गवेषके सं०रसलेनेको सं० आयेहुवे पे० देखकर तं० वे ज०यथा-कु०मुर्गेकी जात मु० सूअरकी जात अ० अग्रपिंड व० काग सं० समुह सं० आये पे० देखकर स० होनेपर प० दू- सरा मार्ग स० साधु णो० नहीं उ० सरलमार्ग ग० जावे. ॥ १ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी जा० यावत् प० प्रवेशकरने णो० नहीं गा० गृहस्थ कु० घरके दु० द्वारशाखा अ० पकड २ चि० ऊभारहे णो०

सूत्र

से भिक्खू वा (२) जाव समाणे से ज्जं पुण जाणेज्जा, रसेसिणो बहवे पाणा घा- सेसणाए संघडे संणिवातिए पेहाए, तंजहा, कुक्कुडजातियं वा, सूयरजातियं वा, अ- ग्गपिंडांसि वा, वायसा संघडा संणिवडिया पेहाए, सति परक्कमे संजयामेव नो उज्जुयं गच्छेज्जा ॥ १ ॥ से भिक्खू वा (२) जाव पविट्ठेसमाणे णो गाहावतिकुलस्स दुवारसाहं अवलंबिय २ चिट्ठेज्जा, नो गाहावति कुलस्स द-

भावार्थ

साधु साध्वी को भिक्षार्थ जाते मार्ग में रसलुब्ध जीवों जैसे कि:-मुर्गे, सूअर, या अग्रपिंड को भक्षण करनेवाले काग प्रमुख एकत्रित हुवे होवे और जाने का अन्य मार्ग होवे तो उस रास्ते से जाना नहीं ॥ १ ॥ साधु साध्वी जिस गृहस्थ के यहां भिक्षार्थ गये होवे उस के घर के द्वार को, कपाट को पकडकर खडा रहना

शब्दार्थ — [illegible]

सूत्र — [illegible] चिट्ठेज्जा । [illegible] सिया, [illegible]
[illegible] वा [illegible] वा [illegible] सिया, [illegible]
[illegible] वा, [illegible] वा, [illegible] वा, [illegible] वा, [illegible] अंगु
[illegible] वा [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]
[illegible] [illegible] आपूज्जा, [illegible]

भावार्थ — [illegible]

मे० वे भि० साधु साध्वी जा०यावत् प्रवेशकरे से० वे जं० जो पु० फिर जा० जाने र०रसके ए० लुब्ध, ब०बहुत पा० प्राणी घा० आहार गवेषके सं०रसलेनेको सं० आयेहुवे पे० देखकर तं० वे ज०यथा-कु०मुर्गेकी जात सू० सूअरकी जात अ० अग्रपिंड व० काग सं० समुह सं० आये पे० देखकर स० होनेपर प० दूसरा रास्ता स० साधु णो० नहीं उ० सरलमार्ग ग० जावे. ॥ १ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी जा० यावत् प० प्रवेशकरते णो० नहीं गा० गृहस्थ कु० घरके दु० द्वारशाला अ० पकड २ चि० ऊभारहे णो०

सूत्र

से भिक्खू वा (२) जाव समाणे से जं पुण जाणेज्जा, रसेसिणो बहवे पाणा घासेसणाए संघडे संणिवतिए पेहाए, तंजहा, कुक्कुडजातियं वा, सूयरजातियं वा, अग्गपिंडंसि वा, वायसा संघडा संणिवडिया पेहाए, सति परघामे संजयामेव नो उज्जुयं गच्छेज्जा ॥ १ ॥ से भिक्खू वा (२) जाव पविट्ठेसमाणे णो गाहावतिकुलस्स दुवारसाहं अवलंबिय २ चिट्ठेज्जा, नो गाहावति कुलस्स द-

भावार्थ

साधु साध्वी को भिक्षार्थ जाते मार्ग में रसलुब्ध जीवों जैसे कि:—मुर्गे, सूअर, या अग्रपिंड को भक्षण करनेवाले काग प्रमुख एकत्रित हुवे होवे और जाने का अन्य मार्ग होवे तो उस रास्ते से जाना नहीं ॥ १ ॥ साधु साध्वी जिस गृहस्थ के यहां भिक्षार्थ गये होवे उस के घर के द्वार को, कपाट को झूमकर खडा रहना

शब्दार्थ — नहीं गा० गृहस्थके घरके द० पानी फेंकने के स्थान चि० खड़ा रहे, णो० नहीं गा० गृहस्थके घर के आचमन लेने के स्थान चि० खड़ा रहे, णो० नहीं गा० गृहस्थके सि० स्नान करने के व० मलमूत्र करने के स्थान संलोए देखता हुआ स० प्रतिद्वार में चि० खड़ा रहे, णो० नहीं गा० गृहस्थके घरके आ० गोख थि० थिग्गल सं० संधि, द० द्वार व० पानीघर बा० हाथ प० फैलाकर २ अं० अंगुली, उ० उद्देश २ ओ० नीचा झुक २ उ० ऊंचा होकर २ णि० देखे, णो० नहीं गा० गृहस्थको अं० अंगुली उ० उद्देश २ जा० याचना करे, णो० नहीं गा० गृहस्थको अं० अंगुली चा० चला २ कर जा० याचना करे, णो० नहीं गा०

मूल — दगच्छड्डणमत्तए चिट्ठेजा । णो गाहावइकुलस्स चंदणिउयए चिट्ठेजा, णो गाहावइकुलस्स सिणाणस्स वा, वच्चस्स वा संलोए सपडिदुवारे चिट्ठेजा, णो गाहावइकुलस्स आलोयं वा, थिग्गलं वा, संधिं वा, दगभवणं वा, बाहाउ पगिज्झिय २ अंगुलियाए वा उद्दिसिय २ ओणमिय २ उण्णमिय २ णिज्झाएजा, णो गाहावइं अंगुलियाए उद्दिसिय २ जाएजा, णो गाहावइं अंगुलियाए चालिय २ जाएजा, णो गा-

भावार्थ — नहीं, हाथ पांव धोने का, स्नान करने का, पेशाब करने का, स्थान को देखता हुआ खड़ा रहे नहीं. आला, जाला, खिड़की, कोना, खोखरा, इत्यादि को अंगुली से दूसरे को बतावे नहीं, आगाी ऊंचा नीचा होवे नहीं. गृहस्थ की वस्तुओं अंगुली से बताकर याचना करे नहीं, गृहस्थ के शरीर को अंगुली लगाकर,

पदार्थ

उ० भीगा त० तथा प्रकार उदकालीन भीगा ह० हाथ आदि(४), अ० अशनादि(४) अ० अप्रासुक अ० अनेषणिक जा० जानकर णो० नहीं प० ग्रहण करे। अ० अथ पु० और ए० ऐसा जा० जाने उ० उदक उ० भीगा स० स्निग्ध स० शेष स० वैसा ए० ऐसे म० जलभीगा उ० उदक के उ० भीगापने म० मिट्टी म० मिट्टी ऊ० भोन ह० हरताल, हिं० हिंगलू म० मनःशील अं० अंजन लो० लूण गे० गेरू व० पीली मट्टी से० सफेद मट्टी सो० सोरठी मट्टी पि० आटा कु० फोतरे स० भरा अ० अथ ए० ऐसा जा० जाने णो० नहीं अ० अन्यप्रकार त० तथा प्रकार भ० भरे हुवे ह० हाथ आदि से अ० अशनादि चारों आहार फा० प्रासुक

मूल

णो पडिगाहेज्जा । अह पुण एवं जाणेज्जा णो पुरेकम्मकएणं उदउल्लेणं तहप्पगारेणं उदउल्लेण हत्थेण वा (४) असणं वा (४) अफासुयं अणेसणिज्जं जाव णो पडिगाहेज्जा । अह पुण एवं जाणेज्जा उदउल्लेण ससणिद्धेणं सेसं तं चेव एवं ससरक्खे उदउल्ले ससणिद्धे मट्टिया, ऊसे, हरियाले, हिंगुलए, मणोसिला, अंजणे, लोणे, गेरुय, वण्णिय, सेडिय, सोरिट्ठिय, पिठ, कुक्कुस, उक्कुट्ठ, संसट्ठेणं, अह पुण एवं जाणेज्जा णो असंसट्ठे तहप्पगारेण संसट्ठेण हत्थेण वा (४) असणं वा (४)

भावार्थ

सचित्त पानी में भीजे हुवे होवे तो उन में भी नहीं लेना. वे भाजन सचित्त पानी, पृथ्वी, क्षार, हरताल आदि से भरे हुवे होवे तो उन में भी नहीं लेना. और ऐसा जानने में आवे कि इस गृहस्थ का हाथ, व आहार देने का भाजन, कुडछी चिंगरा; जो वस्तु देना चाहता है- उसी वस्तु से भरे हुवे हैं और

भावार्थ — जा० यावत प० ग्रहण क०. ॥ २ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे जं० जो पु० और जा० जाने पि० धाणी द० फूली जा० यावत चा० चांवल के कुसुर. अ० गृहस्थने भि० साधु के लिये पि० सचित्त मि० मिश्रीत जा० यावत म करीसेंके, सं० जाणि कां० कुटाई कां० कूटना है कां० कूटेगा. उ० उफणाई उफ- णाते उफणेगा त० तथा प्रकारके पि० धाणी जा० जावत चा० मुमुर अ० अप्रासुक जा० यावत णो० ग्रहण नहीं क०. ॥ ३ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी जा० यावत न० मंडलकार सं० वे जाणे थि० बीहलूण

सूत्र — फासुयं जाव पडिगाहिज्जा ॥ २ ॥ से भिक्खु वा (२) से जं पुण जाणेज्जा पि हुयं वा बहुयं वा जाव चाउलपलंबं वा असंजए भिक्खुपडियाए चित्तमंताए सिलाए जाव मक्कडासंताणाए कोट्टिंसु वा कोट्टिंति वा, कोट्टिस्संति वा, उप्फणिंसु वा (३) तहप्पगारं पिहुयं वा जाव चाउलपलंबं वा अफासुयं जाव णो पडिगा हिज्जा ॥ ३ ॥ से भिक्खु वा (२) जाव समाणे से जं पुण जाणेज्जा बिलं वा लो-

भावार्थ — उन से ऐसा देखे तो उन को प्रासुक तथा एषणिक जानकर ग्रहण करना. ॥ २ ॥ साधु के लिये कोई असंयति धाणी, मुरमुरे, शिला सचित्त शिलापर कूटकर तैयार करते हो, या करेंगे, हवामें उफणते हैं, या उफणेंगे तो उनको असुद्ध जानकर ग्रहण नहीं करना ॥ ३ ॥ साधु साध्वी के लिये बीड लवण सिंधा लवण,

उ० समुद्रका लूण अ० असंयति भि० साधु केलिये चि० सचित सि० सिलापर जा० यावत् मं० जालासे भि० भेदा, भेदता, है भेदेगा. रु० पीसा, पीसताहै पीसेगा, बि० बीडलूण उ० समुद्रका लूण जा० यावत् अ० अफ्रासुक जा० यावत् णो० नहीं प० लेवे. ॥ ४ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे जो० जाने अ० अशनादि चारों आहार अ० अग्निपर णि० रखा त० तथा प्रकार अ० अशनादि चारों आहार अ० अफ्रासुक ला० मिलतां णो० नहीं प० लेवे के० केवलीने फरमाया आ० कर्मबन्ध का हेतु ए० यह अ० असंयति भि०

सूत्र

णं, उब्भियं वा, लोणं असंजए भिक्खुपडियाए चित्तमंताए सिलाए जाव संताणाए भिंदिसु वा भिंदिंति वा भिंदिस्संति वा, रुचिंसु वा (३) बिलं वा लोणं, उब्भियं वा लोणं, अफासुयं जाव णो पडिगाहेज्जा ॥ ४ ॥ से भिक्खू वा (२) जाव समाणे से जं पुण जाणेज्जा असणं वा (४) अगणिणिक्खित्तं तहप्पगारं असण-

भावार्थ

समुद्र की खारी सचित शिलापर फोड़, तोड़, घोट, पीस कर असंयतिने तैयार किया होवे और वे उन को देवे तो उस को अफ्रासुक मानकर ग्रहण नहीं करे. ॥ ४ ॥ साधु साध्वी गृहस्थके घर जाते अशनादि अग्नि पर रखा हुवा देखे तो उसे लेवे नहीं क्यों कि केवलीने ऐसा आहार लेने में आदान कहा है. साधु के लिये उस आहार को भाजन में निकालने, पीछा डालने, भाजन को उठाते रखते, अग्नि काय के जीवों की हिंसा होती है. साधु को ऐसी प्रतिज्ञा है, ऐसा नियम है, और ऐसा ही उपदेश है कि हिंसा नहीं करना

शब्दार्थ साधु अर्थ उ० ऐसे भि० साधुको आ० आप करते प० पूर्वमें भो० बताये उ० उपदेश अ० अग्निकाय के जीव की हिं० हिंसाकरे अ० अब भि० साधुको पु० पहिले कहा प० यह प्रतिज्ञा प० यह हेतु प० यह कारण प० यह उपदेश जं० जो त० तथा प्रकार, अ० अशनादि चारों आहार, अ० अग्निपर रखा अ० अप्रासुक अ० अनेषणिक ला० मिलतो णो० नहीं प० लेवे. ॥ ५ ॥ ए० यह ख० निश्चय त० उस भि० साधु भि० साध्वी की सा० समाचारी. ॥ ६ ॥ × * ×

सूत्र णं वा (४) अफासुयं लाभेसंते णो पडिगाहिज्जा, । केवली बूया "आयाणमेयं" । अ संजए भिक्खुपडियाए उस्सिंचमाणे वा निस्सिंचमाणे वा, आमज्जमाणे वा, पम- ज्जमाणे वा, ओयारेमाणे वा, उव्वत्तमाणे वा, अगणिजीवे हिंसिज्जा. अह भिक्खूणं पुव्वोवदिट्ठा एस पइण्णा, एस हेऊ, एस कारणे, एसुवएसे, जं तहप्पगारं असणं वा (४) अगणि णिक्खित्तं अफासुयं अणेसणिज्जं लाभेसंते णो पडिगाहिज्जा ॥ ५ ॥ एयं खलु तस्स भिक्खुस्स वा भिक्खुणीए वा सामग्गियं ॥ ६ ॥ इति पिंडेसणाज्झय णस्स छट्ठो उद्देसो सम्मत्तो। * *

भावार्थ इस लिये अग्नि पर रखा आहार नहीं लेवे ॥ ५ ॥ साधु साध्वी का यही आचार है ॥ ६ ॥ यह पिंडे- षणा नामक दशम अध्ययन का षष्ठ उद्देश पूर्ण हुआ आगे आहार ग्रहण करने की विधि कहते हैं.

ते० वे भि० साधु साध्वी जा० यावत् ग० गृहस्थके घर जाकर से० वे ज्जं० जो पुन० जाने अ० अशनादि चारों आहार खं० भित्तिपर थं० स्तम्भपर, मं० खाटपर, मा० माले पर पा० प्रासादपर ह० हवेलीपर अ० अन्य भी त० तथा प्रकारके अं० ऊंच स्थान में उ० रक्खा हो, त० तथा प्रकारके मा० मालोहड दोष युक्त, अ० अशनादि चारों आहार जा० यावत् अ० अप्रासुक णो० नहीं प० ग्रहणकरे के० केवलीने क० कहा आ० कर्मबन्ध स्थान यह। अ० असंयति भि० साधु केलिये पी० बाजोट फ० पाटीया णि० निसरणी

सूत्र

से भिक्खू वा (२) जाव समाणे से ज्जं पुण जाणेज्जा असणं वा(४) खंधासि वा, थंभंसि वा, मंचंसि वा, मालंसि वा, पासायंसि वा, हम्मियतलंसि वा, अण्णयरंसि वा तहप्पगारंसि अंतलिक्खजायंसि उवणिक्खित्ते सिया, तहप्पगारं मालोहडं असणं वा (४) जाव अफासुयं णो पडिगाहेज्जा, केवली बूया "आयाणमेयं" असंजए भिक्खुपडियाए पीढं वा, फलगं वा, णिस्सेणिं वा, उदूहलं वा आहट्ट उस्स-

भावार्थ

साधु गृहस्थके यहां भिक्षार्थ गये मालूम पडे कि अशनादि, भिंत, स्तम्भ, खाट, माला, और भी इसी प्रकार के ऊंच स्थान पर पड़ा है और गृहस्थ वहां से उतारदे तो साधु उसे ग्रहण नहीं करे क्यों कि केवल ज्ञानी ने इस में आरम्भ कहा है:—यदि अशनादि साधु के लिये लाने को पाट, बाजोट, निसरणी, ऊखल

शब्दार्थ

उ० ऊखल आ० लाकर उ० लगाकर दु० चढे से० वह त० तहां दु० चढता हुवा प० आघरे प० पडे से० वह त० तहां प० अपडाता प० पडता ह० हाथ पा० पाँव बा० बाँह, उ० छाती उ० पेट सी० मस्तक अ० और भी का० शरीर में इं० इन्द्रियजाति लू० रगडावे पा० प्राणी जा० यावत् स० सत्व अ० मरे व० वस्तीहोवे ले० मसलावे से० भेलेहोवे सं० संघट्टाहोवे प० परिताप उपजे कि० किलामना पावे टा० एकस्थान से ग० दूसरे स्थान मं०जावे त० तथा प्रकार मा० मालोहड दोष युक्त अ०अशनादि चारों आहार ला० मिलेतो

सूत्र

विय दुरुहेज्जा. से तत्थ दुरुहमाणे पयलेज्ज वा पवडेज्ज वा. से तत्थ पयलेमाणे वा पवडेमाणे वा, हत्थं वा, पायं वा, बाहुं वा, ऊरूं वा, उदरं वा, सीसं वा, अण्णयरं वा कायंसि इंदियजायं लूसेज्ज वा, पाणाणि वा जाव सत्ताणि वा, अभिहणेज्ज वा, वत्तेज्ज वा, लेसेज्ज वा, संघएज्ज वा, संघट्टेज्ज वा, परियावेज्ज वा, किलामेज्ज वा, ठाणाओ ठाणं संकामेज्ज वा, तं तहप्पगारं मालोहडं असणं वा (४)

भावार्थ

आदि लगाकर गृहस्थ चढेगा और वह गृहस्थ कदाचित् वहां से रपटकर गिरजावे तो उस का हाथ, पाँव, बाँआदि शरीर का अंग भंग होवे, और वस्तु का भी नाश होवे, नीचे रहे हुवे सूक्ष्म बादर जीवों का भी विनाश होवे. इस लिये उच्चस्थान पर रहा हुवा आहार को ऐसा पाप का कारण जान उस को ग्रहण

णो० ग्रहण नहीं करे. ॥ १ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी जा० गृहस्थके घर में से० वे जा० जाने अ० अशनादि चारों आहार को० कोठीमेंसे को० कोठेमेंसे अ० असंजति भि० साधु केलिये उ० ऊंचाहो अ० नीचा नम औ० वाँकाहो आ० निकाल द० देवे त० वैसा अ० अशनादि मा० मालोहडदोष युक्त ण० जान कर ला० प्राप्त होतो णो० नहीं प० ग्रहण करे. ॥ २ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी जा० यावत् भंगकर से० वे जा० जाणे अ० अशनादि चारों आहार म० मिट्टि से बंधकिया त० तथा प्रकारका अ० अशनादि आ-

सूत्र

लाभसंते णो पडिगाहेज्जा ॥ १ ॥ से भिक्खू वा [२] जाव समाणे से जं पुण जाणेज्जा असणं वा (४) कोट्ठियातो वा, कोलेज्जातो वा असंजए भिक्खु पडियाए उक्कुज्जिया, अवउज्जिया, ओहरिया, आहट्टु दलएज्जा, तहप्पगारं असणं वा (४) मालोहडंति णच्चा लाभसंते णो पडिगाहेज्जा ॥ २ ॥ से भिक्खू वा (२) जाव समाणे से जं पुण जाणेज्जा, असणं वा (४) मट्टिओलित्तं तहप्पगारं अ-

भावार्थ

नहीं करना. ॥ १ ॥ यदि गृहस्थ साधु साध्वी के लिये कोठी में से, कोठला में से, ऊंचा नीचा झुककर आहार लाकर देवे तो उसे ग्रहण नहीं करना ॥ २ ॥ जो आहार मृत्तिका मिट्टि से लिपकर बंधकर रक्खा होवे, वह आहार मुनि को नहीं लेना. केवली भगवानने इस में दोष बतायें, क्योंकि

शब्दार्थ

हा० ना० यावत् न्या० माम दोनो णो०
अ०अंगवति भिक्खु साधि म०भिट्टी
अ० आलिप्त न० वैसी आ० पानी
म० मकरी पृ० पुनरपि ओ० बन्ध करते प० पश्चात् ...
ओलिता जा० यावत् जे० जो त० तथा प्रकार म० मिट्टी से बन्ध किया अ० अशनादि आदि ... त
दोनो णो० नहीं प० ग्रहण करे ॥ ३ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी जा० यावत् प० प्रवेशकर से० वे जा०

मूल

णं वा (४) जाव लाभसंते णो पडिगाहेज्जा, केवली बूया "आयाणमेयं" असंज ए भिक्खुपडियाए मट्टिओलित्तं असणं (४) उब्भिदमाणे पुढविकायं समारंभे ज्जा तहा आउ–तेउ–वाउ–वणस्सति–तसकायं समारंभेज्जा. पुणरवि ओलिंपमाणे प- च्छाकम्मं करेज्जा, अह भिक्खूणं पुव्वोवदिट्ठा जाव जं तहप्पगारं मट्टिओलित्तं अ- सणं वा (४) लाभसंते णो पडिगाहेज्जा ॥ ३ ॥ से भिक्खू वा (२) जाव

भावार्थ

गृहस्थ साधु के लिये आहार निकाले और इस को फिर बंध करते पृथ्वी, पानी, अग्नि, हवा, वनस्पति और त्रस यों छ ही काय जीवों की घात करे, इस लिये मिट्टी से बंध किया हुआ आहार लेवे नहीं ॥ ३ ॥ साधु

भावे अ० असनादि, पु० पृथ्वी कायपर व० रक्खा, त० तैसा अ० असनादि अ० सदोष जा० यावत णो० नहीं प० ग्रहणकरे. ॥ ४ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे आ० जाणे अ० असनादि चारों आ-हार आ० पानीपर प० रक्खा त० तैसे घे० निश्चय ए० ऐसे अ० अग्निपर प० रक्खा स्ता० मासहोतो णो० नहीं प० ग्रहण करे के० केवलीने बु० फरमाया आ० कर्मबन्ध कारण अ०असंयति भि०साधुकेलिये अ० अग्निको उ० उज्वालकरके णि० बुझा बुझाकर ओ० निकाल निकालकर आ० ऐसाकर द० देवे अ०

मूल

पविट्ठे समाणे से ज्जं पुण जाणेज्जा असणं वा (४) पुढवीकायपतिट्ठियं-तहप्पगारं असणं वा (४) अफासुयं जाव णो पडिगाहेज्जा ॥ ५ ॥ से भिक्खू वा (२) से ज्जं पुण जाणेज्जा असण वा (४) आउकाय पतिट्ठियं; तह चेव एवं अगणिकाय पतिट्ठियं; लाभेसंते णो पडिगाहेज्जा, केवली बूया "आयाणमेयं" असंजए भिक्खुपडियाए अगणिं उस्सक्किय २, णिस्सक्किय २, आहट्ट दलएज्जा अह भिक्खूणं पुव्वोव-

भावार्थ

साध्वी को सचित्त पृथ्वी काय पर रहाहुवा आहारादि अयोग्य जानकर ग्रहण नहीं करना ॥ ५ ॥ ऐसे ही सचित्त पानी व अग्नि पर रहाहुवा आहार नहीं लेना. केवलज्ञानी ने इस में आदान कहा है; क्यों कि असंयति गृहस्थ मुनि के लिये अग्नि को विशेष प्रज्वालेंगे, कम करेंगे या भाजन को आघुपाछु करेंगे; इस

शब्दार्थ साधु पु० पहिले कहा पां० नहीं प० लेवे. ॥ ५ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी जा० यावत प्रवेश कर से० वे जा० जाणे अ० अशनादि चारों आहार अ० अग्निकरण अ० अंगपाति भि० साधु के लिये सू० सूपसे वि० पंखेसे सा० सूपडपंखेसे प० पत्तेसे प० पत्ते के टुकडेसे, सा० शाखासे सा० शाखाके टुकडे से वि० पीछीसे पि० पीछा हाथपंखकसे चे० वस्त्र से चे० वस्त्र के टुकडे से ह० हाथसे मु० मुखसे फु० फूंके वी० वींजे से० वे पु० पहिलेही आ० कहे आ० आयुष्यमंत भ० बहिन मा० मत ए० यह तु० तुम अ० अशनादि आहार

सूत्र दिन्ना जाव णो पडिगाहेज्जा ॥ ५ ॥ से भिक्खू वा (२) जाव पविट्ठे समाणे से जं पुण जाणेज्जा असणं वा (४) अच्चुसिणं अस्संजए भिक्खुपडियाए सूवेण वा, विहुवणेण वा, तालियंटेण वा, पत्तेण वा, पत्तभंगेण वा, साहाए वा, साहाभंगेण वा, पिहुणेण वा, पिहुणहत्थेण वा चेलेण वा, चेलकण्णेण वा, हत्थेण वा, मुहेण वा, फुमेज्ज वा, वीएज्ज वा, से पुव्वामेव आलोएज्जा आउसोत्ति वा, भगिणि-

भावार्थ लिये मुनि को पूर्वोक्त भगवान उपदेश है कि अग्नि व पानी पर रहाहुवा आहार ग्रहण नहीं करना. ॥ ५ ॥ आहार, पानी अति उष्ण होने से गृहस्थ उस को मुनि के लिये सूपडा से, पंखा से, मोरपींछ का पिंजणा से, विंजणासे, शाखा से, शाखा का टुकडासे, मोर पींछ से, कपडा से, कपडा की किनार से, हाथ से, व मुंह से हवा डालकर ठंडा करने लगे तो मुनि को प्रारंभ में ही कहदेना कि हे आयुष्यमान, या बहिन,

शब्दार्थ

वि० बहुत वक्त हुवा अ० स्वाद पलटा, व० वर्ण पलटा प० रस परगमा त्रि० शस्त्र परिणत हुवा फा० फ्रा-सुक जा० यावत प० ग्रहण करे. ॥ ९ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी जा० यावत प्रवेशकर से० वे पु० फिर पा० पानीकी जात जा० जाने जं० वह ज० यथा—ति० ४ तिलोदक; तु० ५ तुसोदक ज० ६ जवोदक, आ० ७ मांड सो० ८ आच्छ सु० ९ शुद्ध उष्ण पानी अ० और भी त० तथा प्रकारका पा० पानीकी जात पु० पहिले की तरह आ० कहे आ० आयुष्यमान ! दा० देवोगे मे० मुझे ए० इसमें का पा०

सूत्र

विद्धत्थं फासुयं, जाव पडिगाहेज्जा ॥ ९ ॥ से भिक्खू वा (२) जाव पविट्ठे समाणे से जं पुण पाणगजातं जाणेज्जा, तंजहा तिलोदगं वा, तुसोदगं वा, जवोदगं वा, आयामं वा, सोविरं वा, सुद्धवियडं वा, अण्णतरं वा तहप्पगारं पाणगजातं पुव्वामेव आलोएज्जा आउसोत्ति वा भगिणित्ति वा दाहिसि मे एत्तो अन्नतरं पाणगजातं से सेवं वदंतं परो वएज्जा आउसंतो समणा तुमं चेवेदं पाणगजातं पडिग्गहेण वा उस्सिं

भावार्थ

रस, स्पर्श बदला होवे, शस्त्र परगम कर फासुक हुवा होवे, तो उसे ग्रहण करना॥९॥ मुनिको ४ तिल ५ तुष ६ यव से अचित किया हुवा पानी, ७ ओसामनका पानी, ८ छाछकी आछ, ९ उष्ण पानी तथा ऐसा अन्य पानी की जात देख कर उस के मालिकको कहना कि हे आयुष्यन् या बहिन इस जल में से "मुझे देवोगे" जब वह परस्पर ऐसा कहे कि हे आयुष्यमान श्रमण ...

शब्दार्थ

पाणीकी जात ! से० मे से० ऐसे प० गृहस्थ व० बोले आ० आयुष्यमान स० साधु ! तु० तुमही स्वयं पानी की जात प० पात्रसे उ० उठाकर ओ० ऊंधाकर ग० ग्रहण करो; त० तथा प्रकार पा० पानीकी जात स० स्वयं वा० या गि० ग्रहण करे प० गृहस्थ दि० देवे, फा० प्रासुक ला० मिलेतो प० ग्रहण करे. ॥ १० ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे जा० जाने पा० पानीकी जात अ० लगाहुवा पु० पृथ्वी कायसे जा० यावत् मं० मकडीके जालसे ओ० उसपे नि० रक्खाहो, उस अ० असंयति भि० साधु केलिये उ० पाणी से भीना या० या स० स्निग्ध क० अर्थ भीना म० भाजन सी० सचित्तपाणी सं० मेला आ०

सूत्र

चियाणं ओयात्तियाणं गिण्हाहि तहप्पगारं पाणगजातं सयं वा गिण्हिज्जा परो वा से दिज्जा फासुयं लाभेसंते पडिगाहेज्जा ॥ १० ॥ से भिक्खु वा [२] से जं पुण पाणगं जाणेज्जा अणंतरहियाए पुढवीए जाव संताणए, ओहट्टु निक्खित्ते सिया असंजए, भिक्खुपडियाए उदउल्लेण वा ससिणिद्धेण वा, सकसाएण वा मत्तेण सीओदएणं वा, संभोएत्ता, आहट्टु दलएज्जा तहप्पगारं पाणगजातं अफासुयं लाभे-

भावार्थ

उस भाजन में से पानी ले तब वह मुनि को लेना और अन्य देवे तो भी ग्रहण करना ॥ १० ॥ जो पानी सचित्त मिट्टि, हरी यावत् जीवजंतु वाली जगापर रक्खा हुवा होवे और असंयति गृहस्थ उस को सचित्त पानी, या मिट्टि मे भरे हुवे हाथों से या ऐसे पात्रों से या अचित्त में सचित्त मिलाकर देवे तो

शब्दार्थ [illegible] अ० अपक्वमु० अचित्त नहीं लेवे. ॥ ११ ॥ दशवाँ पिंडेषणा उद्देशा. ॥ १२ ॥

[illegible] पावन प० प्रवेशकर से० वे जं० जो पु० फिर पा० पाणी की जात

[illegible] यथा—अं० ११ आमका धोवण अ० १२ अंबाडेका धोवण, क० १३

[illegible] बीजोरेका धोवण, मु० १५ द्राक्षका धोवण, दा० १६ अनारका धोवण, ख०

[illegible] नालेरका धोवण, क० १९ केरका धोवण, को० २० बेरका धोवण, आ०

मूल [illegible] ॥ ११ ॥ एयं खलु तस्स भिक्खुस्स भिक्खुणीए वा सामग्गि

[illegible] सामग्गियं सयाजए त्तिबेमि ॥ १२ ॥ इति पिंडेसणाज्झयणस्स सत्त

[illegible]

* *

[illegible] जाव पविट्ठसमाणे से ज्जं पुण पाणगजातं जाणेज्जा, तंज-

[illegible] अंबाडग पाणगं वा, कविट्ठ पाणगं वा; मातुलिंग पाणगं वा,

भावार्थ [illegible] ॥ ११ ॥ यह साधु साध्वी की समाचारी है इस में सदैव समता और यत्ना

[illegible] ऐसा मैं कहता हूं ॥ १२ ॥ यह पिंडेषणा नामक दशम अध्ययन का

[illegible] आगे पश्चात् या पश्चात्कृत आहार ग्रहण करने की विधि कहते हैं.

[illegible] का पानी, १३ कविठ का पानी [illegible]

शब्दार्थ पेसे न० नहीं प्रकार पा० अ० अप्रासुक ०णीन नहीं लेने. ॥ ११ ॥सातवा पहिला उद्देशा. ॥ १२ ॥
भ० से भि० साधु साध्वी जा० यावत् प० प्रवेशकर से० वे जं० जो पु० फिर पा० पानी की जात जा० जाणे:—तं० वह ज० यथा—अं० ११ आंबका धोवण अं० १२ अबाडेका धोवण, क० १३ कबीठका धोवण, मा० १४ बीजोरेका धोवण, मु० १५ द्राक्षका धोवण, दा० १६ अनारका धोवण, ख० १७ खारकका धोवण, णा० १८ नालेरका धोवण, क० १९ केरका धोवण, को० २० बेरका धोवण, आ०

सूत्र संत णो पडिगाहेज्जा ॥ ११ ॥ एयं खलु तस्स भिक्खुस्स भिक्खुणीए वा सामग्गियं जं सव्वट्ठेहिं समिएहिं सयाजए त्तिबेमि ॥ १२ ॥ इति पिंडेसणाज्झयणस्स सत्तमोद्देसो समत्तो

* *

से भिक्खू वा (२) जाव पविट्ठेसमाणे से ज्जं पुण पाणगजातं जाणेज्जा, तंजहा अंब पाणगं वा, अंबाडग पाणगं वा, कविट्ठ पाणगं वा; मातुलिंग पाणगं वा,

भावार्थ मुनि को ग्रहण नहीं करना ॥ ११ ॥ यह साधु साध्वी की समाचारी है इस में सदैव समता और यत्ना सहित प्रवृत्ति करके सर्व अर्थ साधना ऐसा मैं कहता हूं. ॥ १२ ॥ यह पिंडेषणा नामक दशम अध्ययन का सातवा उद्देशा संपूर्ण हुवा आगे फलफूल या परचूरण आहार ग्रहण करने की विधि कहते हैं.
११ आम्रका पानी, १२ अंबाडा का पानी, १३ कविठ का पानी ...

शब्दार्थ २१ आ० आमलेका धोवण, चिं० २२ इमलीका धोवण, अ० और भी त० तैसा पा० पानी स० गुठली युक्त, स० छाल्युक्त, स० बीजयुक्त, अ० गृहस्थ भि० साधु के लिये छ० छाबमें दू० वस्त्र में० वा० चलनीमें, आ० छाणकर प० विशेष छानकर प० शुद्धकर आ० यों द० देवे त० तैसा पा० पानी अ० सदोष ला० मिलता णो० नलेवे ॥ १ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी जा० यावत् प० प्रवेशकरे से० वे आ० सरायमें, आ० बगीचे में

सूत्र मुद्दिया पाणगं वा, दाडिम पाणगं वा, खज्जूर पाणगं वा, णालिएर पाणगं वा, करीर पाणगं वा, कोलपाणगं वा, आमलगपाणगं वा, चिंचापाणगं वा, अण्णतरं वा तहप्पगारं पाणगजातं सअट्ठियं, सकणुयं, सबीयगं, असंजए भिक्खुपडियाए छब्बेण वा, दूसेण वा, वालगेण वा, आवीलियाण, पवीलियाण, परिसाइयाण आहट्टु दलएज्जा, तहप्पगारं पाणगजातं अफासुयं लाभसंते णो पडिगाहिज्जा ॥ १ ॥ से भि-

भावार्थ पानी, १६ अनार का पानी, १७ खारक का पानी, १८ नालियर का पानी, १९ केर का पानी, २० बेर का पानी, २१ आंवला का पानी, २२ इमली का पानी और अन्य भी इसी तरह का पानी होवे, उस में गुठली, छाल के बीज रहा होवे और गृहस्थ साधु के लिये वस्त्र से या चालनी से छाणकर देवे तो उस को अप्रासुक जानकर मुनि को ग्रहण नहीं करना ॥ १ ॥ मुनि को गोचरी जाते मार्ग में, मुसाफिरखाना में,

सूत्र

गा० गृहस्थके घरमें, प० तापसों के स्थान में अ० आहार की सुगन्ध पा० पानीकी सुगन्ध, सु० सुरभिगंध, अ०सूंघकर से०वे त०तहां आ०आस्वाद के लिये मु० मूर्छित गि०गृद्धि अ०वावलाहो अ०अहोगंध२ गं०गंधका स्वादले नहीं. ॥ २ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी जा० यावत् प० प्रवेशकर से० वे जा० जाणे सा० जलकंद वि० स्थलकंद सा० सर्षपकंदली, अ० और भी त० वैसा आ० कच्चे अ० अशस्त्र परिणत अ० सदोष जा० यावत् णो० नहीं प० ग्रहण करे. ॥ ३ ॥ से० वे साधु साध्वी जा० यावत् प० प्रवेशकर से० वे जा०

क्खू वा (२) जाव पविट्ठे समाणे से आगंतारेसुवा, आरामागारेसुवा, गाहावति-कुलेसुवा, परियावसहेसुवा, अन्नगंधाणि वा, पाणगंधाणि वा, सुरभिगंधाणि वा, अ-ग्घाय २ से तत्थ आसायवडियाए, मुच्छिए, गिद्धे, गढिए, अज्झोववन्ने, "अहो गं-धो २" णो गंध मासाएज्जा ॥ २ ॥ से भिक्खू वा (२) जाव समाणे से जं पुण जा सालुयं वा, विरालियं वा, सासवणालियं वा, अण्णतरं वा तहप्पगारं आ-असत्थपरिणयं अफासुयं जाव लाभेसंते णो पडिगाहेज्जा ॥ ३ ॥ से भिक्खू

गला में, गृहस्थ के घरों में या भिक्षुकादि के मठ में अन्न पानी की सुगंधी सूंघ कर वैसा अहारपानी खाने पीने के लिये उस में आसक्त बनकर "वाहासुगंध२" ऐसा विचार कर सुगंध लेना नहीं ॥ २ ॥ अप-नहीं भेदाये हुवे सालुक नामक जलकंद, विरालिका नामक स्थलकंद, तथा सर्षप कंदली को ग्रहण नहीं करना ॥ ३ ॥ वैसे ही पीपल ...

अ० अनेषणिक णो० नहीं लेवे. ॥ ५ ॥ से० वे नि० साधु साध्वी ना० यावत् से० वे जा० जाने प० प्रवाल जात मं० यह ज० यथा—आ० पिंपलकी कूंपल ण० बडकी कूंपल पि० फेफरकी कूंपल णी० नंदीवृक्षकी कूंपल स० शालकी की कूंपल अ० और भी त० तथा प्रकारकी प० कूंपलकी जात अ० कची अ० अशस्त्र परिणत अ० अप्रासुक अ० अनेषणिक जा० यावत् णो० नहीं प० ग्रहण करे. ॥ ६ ॥ से०

णेसणिज्जं जाव लाभेसंते णो पडिगाहेज्जा ॥ ५ ॥ से भिक्खू वा (२) जाव पवि-
ट्ठे समाणे से ज्जं पुण पवालजातं जाणेज्जा तंजहा—आसोत्थपवालं वा, णग्गोहपवा
लं वा, पिलंक्खुपवालं वा, णीयूरपवालं वा, सल्लइपवालं वा, अण्णतरं वा तहप्प
गारं पवालजातं आमगं असत्थपरिणयं अफासुयं अणेसणिज्जं जाव णो पडिगाहे
ज्जा ॥ ६ ॥ से भिक्खू वा (२) जाव समाणे से ज्जं पुण सरडुयजायं जाणेज्जा

से भेदाये हुवे अप्रासुक जानकर ग्रहण नहीं करे ॥ ५ ॥ पिपल की कूंपल, बडकी कूंपल, फॅफर की कूंपल, नंदी वृक्ष की कूंपल, शालकी के कूंपल, अपक्व तथा शस्त्र से नहीं भेदाए [redacted] अप्रासुक जानकर ग्रहण नहीं करना ॥ ६ ॥ ऐसे ही आमकी मंजरी, कवीठ की मंजरी, दाडिम की मंजरी, बील की मंजरी, तथा और भी इस प्रकार की कभी कची व शस्त्र से नहीं भेदाए हुए अप्रासुक जानकर ग्रहण नहीं करना.

शब्दार्थ से साधु साध्वी जा० यावत प्रवेशकर स० वे स० सरडुयजातको जा० जाने, तं० यह ज० यथा-अं० आमकी
छोटी क० कविठकी छोटी, दा० दाडिमकी छोटी बि० बिल्वकी छोटी अ० और भी त० तथा प्रकारकी
स० सरडी की जाति आ० कच्ची अ० शस्त्र परिणत न हुवी अ० अप्रासुक जा० यावत् णो० नहीं प० ग्रहण
करे. ॥ ७ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी जा० प्रवेशकर सं० वे मं० चूर्ण की जाति जा० जाने तं० यह ज०
यथा—उं० उम्बरका चूर्ण ण० वटवृक्षका चूर्ण, पि० पिंपलवृक्षका चूर्ण, आ० पीपलवृक्षका चूर्ण, अ० और
त० तथा प्रकारका आ० कच्चा दु० थोडापीसा सा० सबीज सहित अ० अप्रासुक जा० यावत् णो० नहीं लेवे.

सूत्र तंजहा—अंबसरडुयं वा, कविट्ठसरडुयं वा, दाडिमसरडुयं वा, बिल्लसरडुयं वा, अं-
ण्णतरं वा तहप्पगारं सरडुयजातं आमगं असत्थपरिणतं अफासुयं जाव णो पडि
गाहेज्जा ॥७॥ से भिक्खू वा (२) जाव पविट्ठे समाणे सेज्जं पुण मंथुजातं जाणेज्जा तं
जहा—उंबरमंथुं वा, णग्गोहमंथुं वा, पिलक्खुमंथुं वा, आसोत्थमंथुं वा; अण्णतरं वा

भावार्थ ॥ ७ ॥ गूलर का चूर्ण, वड का चूर्ण, पिलखन का चूर्ण, पीपल का चूर्ण, तथा और भी ऐसा अन्य प्रकार
का भी चूर्ण कच्चा, कम पिसा हुआ तथा सबीज मालूम पडे तो अप्रासुक जानकर ग्रहण नहीं करना ॥८॥
मुनि को भाजी आदि अधपकी हुई शाकभाजी नहीं लेना. वैसे ही सडा हुआ खल, पुराणा मधु, तथा
मदिरा, पुराणा घृत, और पुराणा मदिरा के नीचे बैठा हुआ कचरा मुनि को नहीं लेना अर्थात जो वस्तु

शब्दार्थ

प्रवेशकर से॰ वे जा॰ जाने अ॰ अग्रबीज वाली मू॰ मूलबीज वाली, खं॰ स्कन्द बीजवाली, पो॰ गंठी बीजवाली; अ॰ अग्रजाति मू॰ मूलजाति खं॰ स्कन्धजाति, पो॰ गांठजाति, ण॰ यह विशेष त॰ केलेकागर्भ त॰ केलेका गुच्छा, णा॰ नाल्यिरका मस्तक ख॰ खजूरका मस्तक ता॰ ताडका मस्तक अ॰ और भी त॰ इसतरह आ॰ कच्चे अ॰ सचित्त जा॰ यावत् णो॰ नहीं प॰ ग्रहण करे. ॥ १२ ॥ से॰ वे भि॰ साधु साध्वी जा॰ प्रवेशकर उ॰ इक्षु का॰ छिद्रपडे अं॰ वर्णफिरा स॰ मिश्ररही वि॰ पशुने बिगाडी वे॰ बेंत

सूत्र

णे से जं पुण जाणेज्जा अग्गबीयाणि वा, मूलबीयाणि वा, खंधबीयाणि वा, पोरबीयाणि वा; अग्गजाताणि वा, मूलजाताणि वा, खंधजाताणि वा, पोरजाताणि वा णण्णत्थ, तक्कलिमत्थएण वा, तक्कलिसीसेण वा; णालिएरमत्थएण वा, खज्जूरमत्थएण वा, तालमत्थएण वा; अण्णतरं वा तहप्पगारं आमगं असत्थपरिणयं जाव णो पडिगाहेज्जा ॥ १२ ॥ से भिक्खू वा (२) जाव समाणे से जं पुण जाणेज्जा उच्छुं वा; काणगं अंगारियं सम्मिस्सं विगदूसितं वेत्तग्गं वा, कन्दलिऊसयं वा, 'अ-

भावार्थ

नकर ग्रहण नहीं करना ॥ १२ ॥ इक्षु, बेर, केलगर्भ तथा और भी इसी तरह का कोइ बिगडकर, वर्ण पलट गया होवे, या शृगालादि पशुने खाया होवे, ऐसा होने से अचित्त न हुवा होवे तो साधु को लेना नहीं

प० प्रलम्ब अ० और भी तरह आ० कचा अ० सचित्त जा० यावत् णो० नहीं प० लेवे ॥१३॥ से० वे भि० साधु साध्वी जा० ग्रहवकर से० वे जा० जाने ल० लसन ल० लसनपत्र ल० लसन डाली, ल० लसणकंद ल० लसण छाल अ० और भी त० वैसा आ० कचा अ० सचित्त जा० यावत णो० नहीं प० ग्रहणकरे. ॥ १४ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी जा० ग्रहवकर से० वे जा० जाणे अ० अस्थिकफल कुं० कुंभ पकाया. ति० तिंदुकफल वे० बिल्वफल प० पलासफल का० श्रीपर्णीफल अ० और भी अ० कचे अ०

लणगं वा तहप्पगारं आमगं असत्थपरिणयं जाव णो पडिगाहेज्जा ॥ १३ ॥ से भिक्खू वा (२) जाव समाणे से जं पुण जाणेज्जा लसुणं वा, लसुणपत्तं वा, लसुणनालं वा, लसुणकंदं वा, लसुणचोयं वा, अण्णयरं वा तहप्पगारं आमं असत्थपरिणयं जाव णो पडिगाहेज्जा ॥ १४ ॥ से भिक्खू वा (२) जाव समाणे से जं पुण जाणेज्जा अच्छियं वा, कुंभिपक्कं, तिंदुगं वा, बिल्लुयं वा, पलगं वा, का-

॥ १३ ॥ साधु को लसण, लसण का पान, लसण की डाली, लसणका कंद, लसण का फल, लसणकी छाल तथा और भी ऐसा अन्य कंद अपक्व तथा शस्त्र से भेदाया हुवा न होवे तो ग्रहण नहीं करना ॥१४॥ साधु को अस्थिक के फल, टिंबरू के फल, बिल्व के फल, पलास के फल, श्री पर्णी के फल, तथा और भी ऐसे सदृश अन्य फल घर में पका, हाथ से पकाये होवे और अपक्व तथा शस्त्र से भेदाये हुवे न होवे तो

शब्दार्थ

सचित्त जा० यावत् णो० नहीं प० ग्रहण करे. ॥ १५ ॥ स० वे भि० साधु साध्वी जा० यावत् स० प्रवेशकर से० वे जा०जाने क० दाने क० धान्यकातूस, क० दाने युक्त रोटी चा० चांवल चा० चांवलका आटा, ति० तिलकी खल, ति० तिलकी पापडी अ० और भी ऐसा आ० कच्ची अ० अशस्त्र परिणत जा० यावत् णो० नहीं प० ग्रहणकरे. ॥ १६ ॥ पूर्ववत्. ॥ १७ ॥

*

सूत्र

सवणालियं वा, अण्णतरं वा आमं असत्थपरिणयं जाव णो पडिगाहेज्जा ॥ १५ ॥ से भिक्खू वा (२) जाव समाणे से ज्जं पुण जाणेज्जा कणं वा, कणकुंडगं वा, कणपूयलिं वा, चाउलं वा, चाउलपिट्ठं वा, तिलं वा तिलपिट्ठं वा, तिलपप्पडगं वा, अन्नतरं वा तहप्पगारं आमं असत्थपरिणतं णो पडिगाहेज्जा ॥ १६ ॥ एस खलु तस्स भिक्खुस्स भिक्खुणीए वा सामग्गियं ॥ १७ ॥ इति पिंडेसणाज्झयणस्स अट्ठमोद्देसो सम्मत्तो

* *

भावार्थ

अप्रासुक जानकर ग्रहण नहीं करना. ॥ १५ ॥ साधु साध्वी को धान्य के दानें, दानेवाले फूसके, दाने वाली रोटी, चावल चांवल का आटा, तिल, तिल का आटा, तिलपापडी तथा अन्य भी ऐसी जात की वस्तु कच्ची तथा शस्त्र से नहीं भेदाइ हुइ हुवे तो ग्रहण नहीं करना ॥ १६ ॥ मुनि और आर्या का यह सत्र आचार है ॥ १७ ॥ यह पिण्डैषणा नामक दशम अध्ययन का अष्टम उद्देशा संपूर्ण हुवा. आगे कैसा आहार लेना और कैसा न लेना सो कहते हैं.

* *

शब्दार्थ इ० यहां ख० निश्चय पा० पूर्व में प० पश्चिम में दा० दक्षिण में, उ० उत्तर में सं० कितनेक स० श्रावक भ० होते है, गा० गृहस्थ जा० यावत् क० नोकरनी, ते० उन में ए० यह वु० बातों पु० पहिले भ० होवे जे० जो इ० ये भ० होते हैं स० साधु भ० ज्ञानवंत सी० आचारवान, व० व्रतवान, गु० गुणवान, सं० संयमी, सं० संवृत्त, बं० ब्रह्मचारी, उ० निवर्ते मे० मैथुन ध० धर्मसे णो० नहीं ख० निश्चय ए० इनको क० कल्पे आ० आधाकर्मी अ० अशनादि चारों आहार, भो० खाने के लिये पा० पीने कोलिये से० वे जं० जो पु० फिर इ० यह अ० हमारे अ० अर्थ णि० लाया तं० वह ज० यथा अ० अशनादि चारों आहार स०

सूत्र इह खलु पाईणं वा, पडीणं वा, दाहिणं वा, उदीणं वा, संतेगतिया सड्ढा भवंति गाहावती वा जाव कम्मकरी वा, तेसिं च णं एवं वुत्तपुव्वं भवंति—जे इमे भवंति समणा, भगवंतो, सीलमंता, वयमंता, गुणमंता, संजता, संवुडा, बंभचारी, उवरया मेहुणाओ धम्माओ णो खलु एतेसिं कप्पति आहाकम्मिए असणं वा (४) भोइत्तए वा, पाइत्तए वा, से जं पुण इमं अम्हं अट्ठाए णिट्ठितं तंजहा असणं वा

भावार्थ इस जगत के चारों दिशा में कितनेक श्रद्धावंत गृहस्थ, गृहस्थ की स्त्री, पुत्र, पुत्री, बहिन, दास, दासी, नोकर, नोकरनी, रहते हैं. वे ऐसा बोलते हैं कि, "जो मुनि ज्ञानवंत, आचारवंत, व्रतवंत, गुणवंत, संयमवंत, संवरवंत, ब्रह्मचारी, तथा मैथुन का त्याग करनेवाले होते हैं वे आधाकर्मिक आहार पानी बिलकुल [illegible] लिये जो अपने लिये किया वह सब उन को दे देवेंगे और पुनः अपने लिये बनावेंगे.

निष्कारण ए० इस प्रकारका णि० वचन सो० सुनकर णि० अवधारकर त० तथा प्रकारका अ० अशनादि चारों आहार अ० अप्रासुक अ० अनेषणिक ला० मिलते णो० नहीं प० लेवे. ॥ १ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी जा० यावत् स० एकस्थान रमते व० कल्पविहारी गा० ग्रामानुग्राम दू० फि-रते से० वे ज्जं० जो जा० जाणे. गा० ग्रामको जा० यावत् रा० राजधानीको इ० इस ख० निश्चय गा०

(४)सइयमेयं समणाणं णिसिरामो, अवियाइं वयं पच्छावि अप्पणो सअट्ठाए असणं वा (४) चेतिस्सामो एयप्पगारं णिग्घोसं सोच्चा णिसम्म तहप्पगारं असणं वा (४) अफासुयं अणेसणिज्जं लाभेसंते णो पडिगाहेज्जा. ॥ १ ॥ से भिक्खू वा (२) जाव समाणे वसमाणे वा गामाणुगामं दूइज्जमाणे से ज्जं पुण जाणेज्जा गामं वा जाव रायहाणिं वा इमंसि खलु गमंसि वा जाव रायहाणिंसि वा संतेगतियस्स

ऐसा वाक्यों सुनकर उस आहार को अनेषणिक जानकर साधु को ग्रहण नहीं करना. ॥ १ ॥ एक स्थान रहनेवाले या ग्रामानुग्राम विहार करनेवाले मुनि को ऐसा जानने में आवे कि इस ग्राम में या राजधानी में अमुक साधु के संबंधि रहते हैं उन संबंधियों के घर भिक्षाकाल पहिले आहार पानी के लिये नहीं जाना ऐसा करने में भगवानने दोष कहा है. जैसे कि वे अपना संबंधि साधु को

शब्दार्थ

ग्राम में जा० यावत् रा० राजधानीमें सं० कितनेक भि० साधुके पु० पहिले के सं० परिचय वाले ... क० नोकरनी प० पीछेके सं० परिचय वाले प० रहते हैं. तं० वह जं० यथा गा० गृहस्थ जा० यावत् क० नोकरनी त० तथा प्रकारके कु० घरोंमें णो० नहीं पु० पहिले भ० आहार अर्थ पा० पानी अर्थ णि० निकले प० प्रवेश करे, के० केवलीने बू० फरमाया आ० कर्मबन्ध मे० यह! पु० पहले पे० देखके त० उसके प० गृहस्थ अ० अर्थ अ० अशनादि चारों आहार उ० करे, उ० निपजावे, अ० अथ भि० साधुने पु० पहिले कहा यावत् उपदेशा, जं० जो णो० नहीं त० तथा प्रकारके कु० कुलमें पु० पहिले भ० आहारार्थ पा० पानी के-

सूत्र

भिक्खुस्स पुरेसंथुया वा, पच्छासंथुया वा परिवसंति तंजहा गाहावती वा जाव कम्मकरी वा तहप्पगाराइं कुलाइं णो पुव्वामेव भत्ताए वा पाणाए वा णिक्खमेज्ज वा पविसेज्ज वा, केवली बूया "आयाणमेयं," पुरा पेहाए तस्स परो अट्ठाए असणं वा (४) उवकरेज्ज वा, उवक्खडेज्ज वा, अह भिक्खूणं पुव्वोवदिट्ठा (४) जं णो तहप्पगाराइं कुलाइं पुव्वामेव भत्ताए वा पाणाए वा पविसेज्ज वा णिक्खमेज्ज वा,

भावार्थ

लिये अच्छे भोजन, पानी, उपकरण, बनावेंगे. इस लिये भिक्षाकाल पहिले जाना नहीं कदाचित् कारण प्रसंग पहिले आने का होवे और आहारादि का समय न हुवा होवे तो तुर्त वहां से पीछा फिर जाना और एकान्त में कोइ न देखे ऐसे स्थान खडे रह. बाद भिक्षाकाल होवे तब भिन्न २ घरों में से निर्दोष आहार

पदार्थ

म० [illegible] णि० देवेंगु अ० अपि प० फिर व० अपने प० पाछिसे अ०अपनेलिये अ० अशा- नादि च० निपजावेंगे ए० इस प्रकारका णि० वचन सो० सुनकर णि० अवधारकर त० तथा प्रकारका अ० अशनादि चारो आहार अ० अप्रासुक अ० अनेषणिक ला० मिलेतो णो० नहीं प० लेवे. ॥ १ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी जा० यावत् स० एकस्थान रहने व० कल्पविहारी गा० ग्रामानुग्राम दू० फि- रते से० वे ज० जो जा० जाणे. गा० ग्रामको जा० यावत् रा० राजधानीको इ० इस ख० निश्चय गा०

सूत्र

(४)गरंगेय समणाणं णिसिरामो, अवियाइं वयं पच्छावि अप्पणो सअट्ठाए असणं वा (४) चेतिस्सामो एयप्पगारं णिग्घोसं सोच्चा णिसम्म तहप्पगारं असणं वा (४) अफासुय अणेसणिज्ज लाभेसंते णो पडिगाहेज्जा. ॥ १ ॥ से भिक्खू वा (२) जाव समाणे वसमाणे वा गामाणुगामं दूइज्जमाणे से ज्जं पुण जाणेज्जा गामं वा जाव रायहाणिं वा इमंसि खलु गमंसि वा जाव रायहाणींसि वा संतेगतियस्स

भावार्थ

ऐसा वाक्यों सुनकर उस आहार को अनेषणिक जानकर साधु को ग्रहण नहीं करना ॥ १ ॥ एक स्थान रहनेवाले या ग्रामानुग्राम विहार करनेवाले मुनि को ऐसा जानने में आवे कि इस ग्राम में या राजधानी में अमुक साधु के संबंधि रहते हैं उन संबंधियों के घर भिक्षाकाल पहिले आहार पानी के लिये नहीं जाना. ऐसा करने में केवली भगवानने दोष कहा है. जैसे कि वे अपना संबंधि साधु को आये हुवे देख उन के

ग्राम में जा० यावत् रा० राजधानीमें सं० कितनेक भि० साधुके पु० पहिले के सं० परिचय वाले वा० या प० पीछेके सं० परिचय वाले प० रहते हैं. तं० यह ज० यथा गा० गृहस्थ जा० यावत् क० नोकरनी त० तथा प्रकारके कु० घरोंमें णो० नहीं पु० पहिले भ० आहार अर्थ पा० पानी अर्थ णि० निकले प० प्रवेश करे, के० केवलीने बु० फरमाया आ० कर्मबन्ध मे० यह ! पु० पहले पे० देसके त० उसके प० गृहस्थ अ० अर्थ अ० अशनादि चारों आहार उ० करे, उ० निपजावे, अ० अथ भि० साधुने पु० पहिले कहा यावत् उपदेशा, जं० जो णो० नहीं त० तथा प्रकारके कु० कुलमें पु० पहिले भ० आहारार्थ पा० पानी के-

सूत्र

भिक्खुस्स पुरेसंथुया वा, पच्छासंथुया वा परिवसंति तंजहा गाहावती वा जाव कम्मकरी वा तहप्पगाराइं कुलाइं णो पुव्वामेव भत्ताए वा पाणाए वा णिक्खमेज्ज वा पविसेज्ज वा, केवली बूया "आयाणमेयं," पुरा पेहाए तस्स परो अट्ठाए असणं वा (४) उवकरेज्ज वा, उवक्खडेज्ज वा, अह भिक्खूणं पुव्वोवदिट्ठा (४) जं णो तहप्पगाराइं कुलाइं पुव्वामेव भत्ताए वा पाणाए वा पविसेज्ज वा णिक्खमेज्ज वा,

भावार्थ

लिये अच्छे भोजन, पानी, उपकरण, बनावेंगे. इस लिये भिक्षाकाल पहिले जाना नहीं कदाचित् कारण प्रसंग पहिले आने का होवे और आहारादि का समय न हुवा होवे तो तुर्त वहां से पीछा फिर जाना और एकान्त में कोइ न देखे ऐसे स्थान रहे २८. बाद भिक्षाकाल होवे तब भिन्न २ घरों में से निर्दोष आहार

लिये प० प्रवेशकरे पि० निकले, से० वे अं० उसे सा० आश्रयकर ए० एकान्त में अ० आकर अ० मौनसे म० अहए चि० उभारहे ॥ से० वे त० वहां का० वक्तपर अ० प्रवेशकरे प्रवेशकर त० वहां इ० तरह २ के कु० कुलों में सा० सामुदानिक ए० उद्गमन दोष रहित वे० उत्पाददोष रहित पिं० आहार ए० गवेषकर आ० आहार करे ॥ सि० कदाचित से० वे प० गृहस्थ का० वक्तपर अ० प्रवेश करते आ० आधाकर्मी अ० अशनादि चारों आहार उ० करे उ० निपजावे तं० उसे ए० कोइ साधु तु० मौन उ० रहे, आ० लानेपर प० ना कहूंगा मा० माया स्थान सं० स्पर्शे णो० नहीं ए० ऐसा क० करे ॥ से० वे पु० पहिले आ० कहे आ० आयुष्मन् भ० बहिन णो०

सूत्र

से त मायाए एगंत—मवक्कमित्ता अणावाय मसंलोए चिट्ठेज्जा, से तत्थ कालेणं अणुपविसेज्जा (३) तत्थितेरतरेहिं कुलेहिं सामुदाणियं एसियं वेसियं पिंडवायं एसित्ता आहारं आहारेज्जा ॥ सिया से परो कालेण अणुपविट्ठस्स आधाकम्मियं असणं वा (४) उवकरेज्ज वा उवक्खडेज्ज वा तं चेगतिओ तूसणीओ उवेहेज्जा आहडमेव पच्चाइक्खिस्सामि माइद्वाणं संफासे णो एवं करेज्जा से पुव्वामेव आलोएज्जा

भावार्थ

सना. मुनि वस्ती में भिक्षार्थ आते उन के संबंधी आहार व उपकरण बनावे और मुनि उन को अपने लिये बनाते देखकर तभी सत्य न बोलते विचारे कि जब मुझे देवेंगे तब ना कहूंगा तो वह मुनि दोषपात्र है. इस लिये ऐसा नहीं करना. परंतु प्रारंभ में ही गृहस्थ को बताना कि आयुष्यमान् या बहिन मुझे मेरे लिये

शब्दार्थ नहीं ख० निश्चय मे० मुझे क० कल्पे आ० आधाकर्मी अ० अशनादि चारों आहार, भो० खानेको पा० पीनेको मा० मत उ० करो मा० मत उ० बनावो, से० वे से० ऐसे व० बोलते को प० गृहस्थ आ० आधाकर्मी अ०अशनादि चारों आहार उ०बनाकर आ०ला द०देवे त०तथा प्रकारका अ०अशन अ०अप्रासुक णो० नहीं लेवे. ॥ २ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी जा० यावत् प० प्रवेशकर से० वे जा० जाने मं० मांस (गिर) म० मच्छ (वनस्पति) भ० भूंजता पे० देखे ते० तेलकीपुडी आ० माहुणे केलिये उ० बनाते पे०

सूत्र आउसोत्ति वा भगिणित्ति वा णो खलु मे कप्पति आहाकम्मियं असणं वा [४] भोत्तए वा पायए वा, मा उवकरिज्जा, मा उवक्खडेहि. से सेवं वदंतरस परो आहाकम्मियं असणं वा (४) उवक्खडेत्ता आहट्टु दलएज्जा तहप्पगारं असणं वा (४) अफासुयं जाव णो पडिगाहेज्जा ॥ २ ॥ से भिक्खू वा (२) जाव समाणे से जं पुण जाणेज्जा—मंसं वा, मच्छं वा, भज्जिज्जमाणं पेहाए तेल्लपू-

भावार्थ बनाया हुवा आहार पानी कल्पता नहीं है इस लिये मेरेलिये बनाना नहीं. इतना कहने पर भी गृहस्थ आधाकर्मादि आहार पानी बनाकर देवे तो मुनि को ग्रहण नहीं करना ॥ २ ॥ मांस (गिर) मत्स्य नामक वनस्पति विशेष भुंजाते हुवे देख और माहुणा के लिये पूरीयां तेल में तलाती हुइ देख गृहस्थ के वहां उसे

... जाव २ उ० आकर आ०मांगे, ण०नहीं अ०अन्यत्र गि०रोगीके णी०नेश्राय. ॥३॥ से० वे भि० साधु साध्वी जा० यावत् प्रवेशकर अ० किसी प्रकार का भो० भोजन प० ग्रहणकर सु० अच्छा २ भो० खावे, दु० खराब २ प० न्हाखे मा० पापस्थान सं० स्पर्शे णो० नहीं ए० ऐसा करे सु० अच्छा वा० या दु० बुरा न० नहीं छ० छोडे णो० नहीं किं० किंचित् प० परिठवे. ॥ ४ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी जा० प्रवेशकर अ० किसी प्रकारका पा० पानी प० ग्रहणकर पु० अच्छा आ० पीजावे क०

सूत्र

यं वा आएसाए उवक्खडिज्जमाणं पेहाए, णो खद्धं २ उवसंकमित्तु ओभासेज्जा णण्णत्थ गिलाणणीसाए ॥ ३ ॥ से भिक्खू वा (२) जाव समाणे अण्णतरं भोयणजायं पडिगाहेत्ता सुब्भि२ भोच्चा, दुब्भि २ परिट्ठवेति माइट्ठाणं संफासे, णो एवं करेज्जा सुब्भि वा दुब्भि वा सव्वं भुंजे णो छड्डए, णो किंचि परिट्ठविये ॥ ४ ॥ से भिक्खू वा (२) जाव समाणे अण्णतरं वा पाणय जायं पडिगाहेत्ता पुप्फं २ आ-

भावार्थ

लेने को जल्दी २ जाकर वस्तु की याचना करनी नहीं. अपितु रोगी साधु के लिये (गरम पूरीयां) की जरूरत होवे तो लेवे ॥ ३ ॥ साधु साध्वी किसी प्रकार का भोजन खाये बाद उसमें से सुगंधि२ खाकर दुर्गंधि २ परठदेवे तो वह दोष पाप है. इस लिये ऐसा नहीं करना ...

शब्दार्थ | बुरा २ प० परठावे पा० पापस्थान सं० स्पर्शे णो० नहीं ए० ऐसे क० करे पु० अच्छा २ क० बुरा २ स० सब भुं० भोगवे णो० नहीं कि० जरा प० परठावे ॥५॥ से० वह भि० साधु साध्वी ब० बहुत प० स्वपने भो० भोजन प० लेआया. ब० बहुत सा० साधु त० वहां व० रहते हैं. सं० संभोगी स० शुद्धाचारी अ० आहरने योग्य. अ० नजीकमें ते० उनको अ० बिनपूछे, अ० बिन आमंत्रे प० परठावे पा० पापस्थान सं० स्पर्शे. णो० नहीं ए० ऐसे क० करे से० वे सं० उसे पा० लेकर त० वहां ग० जावे से० वे पु० पहिलेसे आ० कहे

सूत्र | साइच्चा, बच्चायं २ परिट्ठवेंति, माइट्ठाणं संफासे, णो एवं करेज्जा पुप्फं पुप्फंत्ति वा कसाय कसायंत्ति वा सव्वमेयं भुंजेज्जा णो किंचिवि परिट्ठवेज्जा ॥ ५ ॥ से भिक्खू वा (२) बहुपरियावण्णं भोयणजायं पडिगाहित्ता बहवे साहम्मिया तत्थ व- संति संभोइया, समणुन्ना, अपरिहारिया, अदूरगया, तेसिं अणालोइया, अणामंतिया परिट्ठवेंति माइट्ठाणं संफासे णो एवं करेज्जा से त मादाय तत्थ गच्छेज्जा २ से पु

भावार्थ | उक्त प्रकार के पानी में से अच्छा २ पीजावे और खराब २ डाल देवे तो वह भी दोष पात्र है. इस लिये ऐसा न करे जैसा आवे वैसा सब पीजावे ॥ ५ ॥ यदि साधु अपनी जरूरत से विशेष आहार ले आया होवे और अपनी पास में अन्य समान धर्मी मुनि रहते होवें तो उन को बिना बताये और बिना आमंत्रण किये परठवे नहीं. यदि परठावेंगे तो वह दोष पात्र है. इस लिये ऐसा नहीं करना किन्तु उस आहारको लेकर

पद

आ० आयुष्यमान स० श्रमण ! इ० ये मे० मेरे अ० अशनादि ब० बहुत बडा तं० उसे भुं० भोगवो से० वे से० ऐसे व० कहते को प०दूसरे व० कहें आ०आयुष्यमान् स०साधु ! अ० आहार मे०यह अ०अशनादि जा० जितना २ पा० खाया जायगा ता० उतना २ भो० खावेंगे, पा० पीवेंगे स० सर्व प० खासकेतो स० सब हम भो० खावेंगे पा० पीवेंगे. ॥ ६ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे जा० जाने अ० अशनादि चारों आहार प० दूसरे को स० उद्देशकर बा० बाहिर णी० लेजावे तं० वहां प० दूसरे को अ०

सूत्र

व्वामेव आलोएज्जा " आउसंतो समणा इमे मे असणं वा (४) बहुपरियावण्णे तं भुंजह च णं" से सेवं वदंतं परो वदेज्जा "आउसंतो समणा, आहारमेतं असणं वा(४) जावतियं २ परिसडति तावतियं २ भोक्खामो वा, पाहामो वा, सव्वमेयं परिसडइ सव्वमेयं भोक्खामो वा पाहामो वा ॥ ६ ॥ से भिक्खू वा" (२) से जं पु जाणेज्जा असणं वा (४) परं समुद्दिस्स बहिया णीहडं तं परेहिं असमणुण्णातं

भावार्थ

मुनि को उन साधर्मिक मुनियों की पास जाकर कहना कि अहो आयुष्यमान मुनियों यह आहार मुझे ज्यादा है सो आप इस को भोगवो. ऐसे कहनेवाले मुनि को वे मुनि ऐसे बोले कि जितना हम को चाहियेगा इतना काममें लेवेंगे या वो सब काम में लेवेंगे ॥ ६ ॥ साधु अन्य के लिये ले जाता हुवा आहार मैसे

शब्दार्थ

अपनेआप अ० पालक की आज्ञाविना अ० अफासुक जा० यावत णो० नहीं प० ग्रहणकरे तं० वह प० दूसरे स० अच्छा सं० पालक की आज्ञायुत फा० फासुक ला० मिलतो प० ग्रहण करे. ॥ ८ ॥ इति ॥

से० वे ए० कितनेक साधु सा० साधारण वा० या पिं० आहार प० ग्रहण करके ते० वे सा० स्वधर्मियों को अ० विनपूछे जा० जिसको २ इ० चाहे त० उसको २ ख० शीघ्र २ द० देवे मा० पापस्थान सं० स्पर्शे णो० नहीं ए० ऐसा क० करे ! से० वे त० तब मा० लेकर के त० तहां ग० जावे, जाकर पु० पहिले

सूत्र

अणिसिट्ठं अफासुयं जाव णो पडिगाहेज्जा. तं परेहिं समणुण्णातं संणिसिट्ठं फासुयं लाभेसंते जाव पडिगाहेज्जा ॥ ७ ॥ एयं खलु तस्स भिक्खुस्स भिक्खुणीए वा सामग्गियं ॥ ८ ॥ इति पिंडेसणाज्झयणस्स नवमोद्देसो सम्मत्तो *

से एगतिओ साधारणं वा पिंडवायं पडिगाहेत्ता ते साहम्मिए अणापुच्छित्ता जस्स २ इच्छइ तस्स २ खद्धं २ दलाति, माइट्ठाणं संफासे, नो एवं करेज्जा, से त-

भावार्थ

उस की आज्ञा विना ग्रहण नहीं करना. यदि वह आज्ञा देवे तो या स्वयं देवे तो ग्रहण करना॥ ७ ॥ उक्त प्रकार से साधु साध्वी की समाचारी है ॥ ८ ॥ यह पिण्डैषणा दशम अध्ययन का नवम उद्देशा पूर्ण हुवा आगे आहार पानी लाने की विधि बताते हैं.

\+ \+

कोई भी साधु सब साधुओं के लिये साधारण आहार लाया होवे और उन में से उन को विनापूछे अपनी इच्छानुसार चाहा उसे शीघ्र २ देवे वह दोषपात्र होता है; इसलिये ऐसा नहीं करना. परंतु ऐसा

शब्दार्थ आ० आयुष्यमान स० श्रमण ! इ० ये मे० मेरे अ० अशनादि ब० बहुत बढा तं० उसे भुं० भोगवो से० वे से० ऐसे व० कहते को प० दूसरे व० कहे आ० आयुष्यमान् स० साधु ! अ० आहार मे० यह अ० अशनादि जा० जितना २ प० खाया जायगा ता० उतना २ भो० खावेंगे, पा० पीवेंगे. स० सर्व प० खासकेतो स० सब हम भो० खावेंगे पा० पीवेंगे. ॥ ६ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे जा० जाने, अ० अशनादि चारों आहार प० दूसरे को स० उद्देशकर वा० बाहिर णी० लेजावे तं० वहां प० दूसरे को अ०

सूत्र व्वामेव आलोएज्जा " आउसंतो समणा इमे मे असणं वा (४) बहुपरियावण्णे तं भुंजह च णं" से सेवं वदंतं परो वदेज्जा "आउसंतो समणा, आहारमेतं असणं वा(४) जावतियं २ परिसडति तावतियं २ भोक्खामो वा, पाहामो वा, सव्वमेयं परिसडइ सव्वमेयं भोक्खामो वा पाहामो वा ॥ ६ ॥ से भिक्खू वा" (२) से जं पु जाणेज्जा असणं वा (४) परं समुद्दिस्स बहिया णीहडं तं परेहिं असमणुण्णातं

भावार्थ मुनि को उन साधर्मिक मुनियों की पास जाकर कहना कि अहो आयुष्यमान मुनियों यह आहार मुझे ज्यादा है तो आप इस को भोगवो. ऐसे कहनेवाले मुनि को वे मुनि ऐसे बोले कि जितना हम को चाहियेगा इतना काममें लेवेंगे या तो सब काम में लेवेंगे ॥ ६ ॥ साधु अन्य के लिये ले जाता हुवा आहार मेरे

शब्दार्थ

भमनाम अ० मालक की आज्ञाविना भ० अप्रासुक जा० यावत् णो० नहीं प० ग्रहणकरे तं० वह प० दू-
गरे म० अच्छा मं० मालक की आज्ञायुत फा० फासुक ला० मिलतो प० ग्रहणकरे. ॥ ८ ॥ इति ॥
से० वे ए० कितनेक साधु सा० साधारण वा० या पिं० आहार प० ग्रहण करके से० वे सा० स्वधर्मी
यों को अ० बिनपूछे जा०जिसको २ इ० वांछे तं० उसको २ ख० शीघ्र २ द० देवे मा० पापस्थान सं०
स्थमें णो० नहीं ए० ऐसा क० करे ! से० वे त० तब मा० लेकर के त० तहां ग० जावे, जाकर पु० पहिले

सूत्र

अणिसिट्ठ अफासुयं जाव णो पडिगाहेज्जा. तं परेहिं समणुण्णातं संणिसिट्ठं फा-
सुयं लाभेसंते जाव पडिगाहेज्जा ॥ ७ ॥ एयं खलु तस्स भिक्खुस्स भिक्खुणीए
वा सामग्गियं ॥ ८ ॥ इति पिंडेसणाज्झयणस्स नवमोद्देसो सम्मत्तो *
से एगतिओ साधारणं वा पिंडवायं पडिगाहित्ता ते साहम्मिए अणापुच्छित्ता जस्स
२ इच्छइ तस्स २ खद्धं २ दलाति, माइट्ठाणं संफासे, णो एवं करेज्जा, से त-

भावार्थ

उन की आज्ञा विना ग्रहण नहीं करना. यदि वह आज्ञा देवे तो या स्वयं देवे तो ग्रहण करना॥ ७ ॥ उक्त
प्रकार से साधु साध्वी की समाचारी है ॥ ८ ॥ यह पिण्डैषणा दशम अध्ययन का नवम उद्देशा पूर्ण हुवा
आगे आहार पानी लाने की विधि बताते हैं.
+ +
कोई भी साधु सब साधुओं के लिये साधारण आहार लाया होवे और उन में से उन को बिनापूछे
अपनी इच्छानुसार चाहा उसे शीघ्र २ देवे वह दोषपात्र होता है; इसलिये ऐसा नहीं करना. परंतु वैसा

आयुष्मान् स० साधु ! सं० हे पु० मेरे पु० पहिले के सं० परिचयवाले प० पीछेके सं० परिचयवाले, तं०वे ज०यथा—आ०आचार्य उ०उपाध्याय प०प्रवर्तक थे०स्थविर ग० गणी ग० गणधर ग० गणा वच्छेदक, अ० इत्यादि ए० इनको स० शीघ्र २ दा० देवुं से० वे ण० ऐसे व० बोलते को, प० दूसरा व० कहे, का० इच्छा आ० आयुष्मान ! अ० यथा प० पर्याप्तम् णि० देवो जा० जितना २

सूत्र

मायाए तत्थ गच्छेज्जा तत्थ गच्छित्ता पुव्वामेव आलोएज्जा आउसंतो समणा, संति मम पुरे संथुया वा पच्छासंथुया वा, तंजहा आयरिएवा उवज्झाए वा, पवत्ती वा, थेरे वा, गणी वा, गणहरे वा, गणावच्छेइए वा, अवियाइं एतेसिं खद्दं २ दाहामि, से सेवं वयंतं परो वएज्जा कामं खलु आउसो अहापज्जतं णिसराहि जावइयं २ परो वदति तावइयं २ णिसिरेज्जा. सव्वमेयं परो वदति सव्वमेव णिसिरेज्जा

भावार्थ

आहार लाकर ज्येष्ठ आचार्य के सन्मुख आवे और कहेकि आयुष्यमान् पूज्य! मेरे पूर्वपरिचित तथा पश्चात् परिचित आचार्य, (गुरु) उपाध्याय, (ज्ञानदाता) प्रवर्तक, (न्यायमें चलानेवाले) स्थविर (वृद्ध) गणी, (गच्छपति) गणधर (गच्छविभागपति) गणावच्छेदक (गच्छ की चिन्ता करने वाले) को को मैं आहार देआवुं. ऐसा सुन यदि आचार्य कहे कि अयुष्मन् साधु! उनको जितना चाहिये इतना दो. ऐसे आचार्य की अनुज्ञा लेकर जितना आचार्य देने का कहे उतना देवे; या आचार्य सब देने का कहे तो सब देवे

शब्दार्थ

प० दूसरे क० करे ता० उतना २ णि० देवे स० सबदेवो प० दूसरा कोई स० सबही णि० देवे. ॥ १ ॥ से० वे ए० कितनेक साधु म० मनोज्ञ भो० भोजन प० लाकर पं० प्रान्त भो० भोजन से प० छिपाके मा० रखे मे० यह दा० देखावूंगातो से० वे तं० उसे द० देखकर स० स्वयं मा० लेलेवेंगे आ० आचार्य जा० यावत् ग० गणावच्छेदक णो० नहीं ख० निश्चय मे० मुझे क० किसीकोभी किं० किंचित दा० देवूंगा, सि० कदाचित् मा० पापस्थान सं० स्पर्शे णो० नहीं ए० ऐसा क० करे से० वे त० उसको आ० लेकर त० तहां ग० जाकर पु०

सूत्र

॥ १ ॥ से एगतिओ मणुन्नं भोयणजायं पडिगाहित्ता पंतेण भोयणेण पलिच्छाए-ति मामेतं दाइयं; संतं दहूणं सय माइए आयरिए वा जाव गणावच्छेइए वा, णो खलु मे कस्सवि किंचि दायव्वं सिया माइट्ठाणं संफासे णो एवं करेज्जा । से त मायाए तत्थ गच्छेज्जा (२) पुव्वामेव उत्ताणए हत्थे पडिग्गहं कट्टु इमं खलु २ त्ति आलोएज्जा णो किंचिवि णिगूहेज्जा, सेएगतिओ अण्णतरं भोयणजायं पडि-

भावार्थ

आचार्य की इच्छानुसार करे परंतु अपने छांदे से किसी कोकुच्छ न देवे ॥ १ ॥ जो कोई साधु आहार लाकर मन में ऐसा विचार करे कि जो यह आहार मैं खुल्ला बतावूंगा तो आचार्य, उपाध्याय यावत् गणावच्छेदक ले लेवेंगे और मेरे तो किसी को देना नहीं है. ऐसा विचार कर अच्छे आहार को खराब आहार से ढककर फिर आचार्यादिक को बतावे तो वह दोष पात्र है. इस लिये ऐसा नहीं करना. परंतु जैसा

आ० कहे आ० आयुष्यमान् स० साधु! सं० हे म० मेरे पु० पहिले के सं० परिचयवाले प० पीछेके सं० परिचयवाले, तं०वे ज०यथा—आ०आचार्य उ०उपाध्याय प०प्रवर्तक थे०स्थविर ग० गणी ग० गणधर ग० गणा वच्छेदक, अ० इत्यादि ए० इनको ख० शीघ्र २ दा० देवुं से० वे ण० ऐसे व० बोलते को, प० दूसरा व० कहे, का० इच्छा आ० आयुष्यमान! अ० यथा प० पर्याप्त णि० देवो जा० जितना २

सूत्र

मायाए तत्थ गच्छेज्जा तत्थ गच्छित्ता पुव्वामेव आलोएज्जा आउसंतो समणा, संति मम पुरे संथुया वा पच्छासंथुया वा, तंजहा आयरिएवा उवज्झाए वा, पवत्ती वा, थेरे वा, गणी वा, गणहरे वा, गणावच्छेइए वा, अवियाइं एतेसिं खद्धं २ दाहामि, से सेवं वयंतं परो वएज्जा कामं खलु आउसो अहापज्जतं णिसराहि जावइयं २ परो वदति तावइयं २ णिसिरेज्जा. सव्वमेयं परो वदाति सव्वमेव णिसिरेज्जा

भावार्थ

आहार लाकर ज्येष्ठ आचार्य के सन्मुख आवे और कहेकि आयुष्यमान् पूज्य! मेरे पूर्वपरिचित तथा पश्चात् परिचित आचार्य, (गुरु) उपाध्याय, (ज्ञानदाता) प्रवर्तक, (न्यायमें चलानेवाले) स्थविर (वृद्ध) गणी, (गच्छपति) गणधर (गच्छविभागपति) गणावच्छेदक (गच्छ की चिन्ता करने वाले) को को मैं आहार देआवुं. ऐसा सुन यदि आचार्य कहे कि अयुष्मन् साधु! उनको जितना चाहिये इतना दो. ऐसे आचार्य की अनुज्ञा लेकर जितना आचार्य देने का कहे उतना देवे; या आचार्य सब देने का कहे तो सब देवे.

पदार्थ

अ० इक्षुमध्य जा० यावत् सि० तिल आदिकी फली अ० अप्रासुक जा० यावत् णो० नहीं लेवे. ॥ ३ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे जा० जाने व० बहुत अ० गुटली वाला मं० फलकागिर म० मच्छाकार वनस्पति व० बहुत कांटे अ० इस प०पात्रमें अ०खानाथोडा व०नाखना बहुत त० तथा प्रकार व०बहुत अ० गुटली मं० फलकागिर, म० मच्छाकार वनस्पति ला० मिलेतो जा० यावत् णो० नहीं प० ग्रहणकरे. ॥४॥ से० वे भि० साधु साध्वी जा० प्रवेशकर सि० कदाचित् प० दूसरा ब० बहुत अ० गुटली वाला मं० गिर

सूत्र

उज्झियधम्मए—तहप्पगारं अंतरुच्छुयं जाव सिंबलिथालगं वा अफासुयं जाव णो पडिगाहेज्जा ॥ ३ ॥ से भिक्खू वा (२) से ज्जं पुण जाणेज्जा बहुअट्ठियं, मंसं वा, मच्छं वा, बहुकंटगं अस्सि खलु पडिगाहितंसि अप्पे सिया भोयणजाए बहुउज्झियधम्मिए तहप्पगारं बहुअट्ठियं मंसं मच्छं वा बहुकंटगं लाभेसंते जाव णो-पडिगाहेज्जा ॥ ४ ॥ से भिक्खू वा (२) जाव समाणे सिया णं परो बहु अट्ठिए

भावार्थ

खाना थोडा और फेंकना बहुत ऐसा अप्रासुक अनेषणिक जानकर ग्रहण नहीं करना ॥ ३ ॥ साधु साध्वी को बहुत बीजवाले फलों का गिर, बहुत कंटक युक्त मत्स्य नामक वनस्पति कि जिस में खाना थोडा और फेंकना बहुत होवे ऐसे ग्रहण करना नहीं. ॥ ४ ॥ कदाचित् मुनि को कोइ आमंत्रण करे कि अहो आयुष्यमान् श्रमण बहुत गुटली युक्त फल लेवोगे ? ऐसा सुनकर तुरत ही उत्तर देना कि अहो आयुष्यमान् पा

पहिले उ० लम्बेहाथ से प० पात्र लेकर इ० यह अमुकहै २ चि० ऐसा आ० कहे, णो० नहीं किं० किंचित मात्र णि० छिपावे, से० वे ए० कोइक साधु अ० तरह २ के भो० आहार प० लावे भ० अच्छा २ भो० खावे वि० खराब २ स० गुरुके पासलावे मा० पापस्थान स० स्पर्शे णो० नहीं ए० ऐसा क० करे. ॥ २ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० व जं० जाने अ० इक्षुमध्य उ० इक्षुके छेद, उ० इक्षुछाल, उ० इक्षुअग्र उ० इक्षुशाखा, उ० इक्षुमदेश, सिं० मूंगफली, सिं० तिल आदिकीफली अ० इनको ख० निश्चय प० ग्रहण कर अ० थोडाखाना ब० बहुत न्हाखना त० तथा प्रकार

सूत्र

गाहेज्जा भद्दयं २ भोच्चा, विवन्नं २ समाहरति माइट्ठाणं संफासे, णो एवं करेज्जा ॥ २ ॥ से भिक्खू वा (२) से ज्जं पुण जाणेज्जा, अंतरुच्छुयं वा, उच्छुगंडियं वा, उच्छुचोयगं वा उच्छुमेरगं वा, उच्छुसालगं वा, उच्छुडालगं वा, सिंवलिं वा, सिंवलियालगं वा, अस्सि खलु पडिग्गाहियंसि अप्पे सिया भोयण जाए बहु

भावार्थ

लाया होवे वैसा ही सब आहार अलग २ करके बताना किं " यह यह है, यह यह है." ऐसे खुल्ला बताना यदि कोइ साधु अच्छा २ आहार भोगवेगा और बुरा २ आचार्य सन्मुख लावेगा तो यह साधु दोष पात्र होगा इस. लिये ऐसा करना नहीं ॥ २ ॥ साधुको इक्षु और मुंग, तुअर आदि की फली कि जिस में

जा० यावत् णो० नहीं लेवे. ॥ ३ ॥

शब्दार्थ — अ० इसप्रथम जा० यावत् ति० तिल आदिकी फली अ० अप्रासुक जा० यावत् णो० नहीं लेवे. ॥ ३ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे जा० जाने व० बहुत अ० गुटली वाला मं० फलकागिर म० मच्छाकार वनस्पति व० बहुत कांटे अ० इस प०पात्रमें अ०खानाथोडा व०न्हाखना बहुत त० तथा प्रकार व०बहुत अ० गुटली मं० फलकागिर, म० मच्छाकार वनस्पति ला० मिलेतो जा० यावत् णो० नहीं प० ग्रहणकरे. ॥४॥ से० वे भि० साधु साध्वी जा० यावत् मि० कदाचित प० दूसरा व० बहुत अ० गुटली वाला मं० गिर

सूत्र — उज्झियधम्मए-तहप्पगारं अंतरच्छुयं जाव सिंबलिथालगं वा अफासुयं जाव णो पडिगाहेज्जा ॥ ३ ॥ से भिक्खू वा (२) से ज्जं पुण जाणेज्जा बहुअट्ठियं, मंसं वा, मच्छं वा, बहुकंटगं अस्सिं खलु पडिगाहितंसि अप्पे सिया भोयणजाए बहुउज्झियधम्मिए तहप्पगारं बहुअट्ठियं मंसं मच्छं वा बहुकंटगं लाभेसंते जाव णो पडिगाहेज्जा ॥ ४ ॥ से भिक्खू वा (२) जाव समाणे सिया णं परो बहु अट्ठिए

भावार्थ — जानकर ग्रहण नहीं करना ॥ ३ ॥ साधु साध्वी खाना थोडा और फेंकना बहुत ऐसा अप्रासुक अनेषणिक जानकर ग्रहण नहीं करना ॥ ३ ॥ साधु साध्वी को बहुत बीजवाले फलों का गिर, बहुत कंटक युक्त मत्स्य नामक वनस्पति कि जिस में खाना थोडा और फेंकना बहुत होवे ऐसे ग्रहण करना नहीं. ॥ ४ ॥ कदाचित् मुनि को कोइ आमंत्रण करे कि अहो आयुष्यमान श्रमण बहुत गुटली युक्त फल लेवोगे ? ऐसा सुनकर तुरत ही उत्तर देना कि अहो आयुष्यमान् या

शब्दार्थ म० मच्छवनस्पति उ० आमंत्रे अ० आयुष्यमान श्रमण ! अ० वांछतेहो ब० बहुत अ० गुठलीवाला मं० गिर प० लेना ? ए० इसप्रकारका णि० शब्द सो० सुनकरणि० अवधारकर पु० पहिलेही आ० कहे आ० आयुष्यमान गृहस्थ भ० रहिन णो० नहीं स० निश्चय मे० मुझे क० कल्पे से० वे ब० बहुत अ० गुठलीवाला मं० गिर प० ग्रहण करना. अ० वांछो मे० मुझे दा० देना जा० जितने ता० उतने पो० पुद्गल द० देवो मा० मत अ० गुठली से० वे ए० ऐसे व० बोलतेको प० दूसरा अ० लाकर अं० अन्दर प० पात्रके ब० बहुत

सूत्र ण मंसेण मच्छेण उवणिमंतेज्जा आउसंतो समणा अभिकंखसि बहुअट्ठियं मंसं पडिगाहेत्तए ? एयप्पगारं णिग्घोसं सोच्चा, णिसम्म, से पुव्वामेव आलोएज्जा आउसोत्ति वा भइणित्ति वा णो खलु मे कप्पइ से बहुअट्ठियं मंसं पडिगाहेत्तए, अभिकंखसि मे दाउं, जावइयं तावइयं पोग्गलं दलयाहि मा अट्ठियाइं, से सेवं वदंतस्स परो अभिहट्टु अंतो पडिग्गहगंसि बहुअट्ठियं मंसं परिभाएत्ता णिहट्टु दलएज्जा तं-

भावार्थ रहित मुझे बहुत गुठली युक्त फल की जरूरत नहीं है. यदि तुम मुझे देना चाहते हो तो जितना २ गर्भ है इतना ही दो गुठली मत दो. ऐसा कहने पर भी गृहस्थ बहुत गुठली युक्त फल देवे तो उस को अप्रासुक तथा अनेषणिक जानकर ग्रहण नहीं करना. यदि गृहस्थ मुनि का पात्र में डाल देवे तो मुनि को कुच्छ भी

शब्दार्थ

गु० गुठली पं० गिरे प० अलगकर. णि० लाकर दे०देवे. त०तथा प्रकार प० पात्रमें प० दूसरे के हाथमें प० अथवा प० दूसरे के पात्रमें अ० अप्रासुक अ० अनेषणिक ला० मिलेतो णो०नहीं प० लेवे. ॥ से० वे आ० अथवा प० ग्रहण करे सि० कदाचित तं० उसे णो० नहीं हि०अच्छा व०कहे णो०नहीं अ०चुरा व०कहे ॥ से०वे त०तत्र मा० ग्रहणकर ए० एकान्त म० जावे, जाकर अ० नीचे आ० बगीचेमें अ० नीचे उ० उपाश्रय में, अ० अल्प अंडे जा० यावत अ० अल्प मकडीके जाले में० गिरे २. म० मच्छ वनस्पति भो० खाकर अ० गुठली कं० कांटे ग० ग्रहणकर से० वे त० उसे लेकर ए० एकान्त म० जावे अ० नीचे ज्झा० दग्धजमीन को जा० यावत प० पूंजकर प० परिठावे. ॥ ५ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी जा० यावत प्रवेशकर सि० कदा-

सूत्र

जा० यावत ... लोमसंतं

हृथ्यगारं पडिग्गहगं परहत्थंसि वा, परपायंसि वा, अफासुयं अणेसणिज्जं लाभसंते णो पडिगाहेज्जा॥से आहच्च पडिगाहिए सिया तं णो "हि"त्ति वएज्जा, णो अ-जाव णो पडिगाहेज्जा॥से आहच्च पडिगाहिए सिया तं णो "हि"त्ति वएज्जा, णो अ-णहि त्ति वएज्जा, से त मायाए एगंत मवक्कमेज्जा (२) अहे आरामंसि वा, अहे उवस्सयंसि वा; अप्पंडे जाव अप्पसंताणए मंसगं मच्छगं भोच्चा; अट्ठियाइं कंटए गहाय, से त मायाए एगंत मवक्कमेज्जा अहे ज्झामथंडिलंसि वा, जाव पमज्जिय २, परिट्ठवेज्जा ॥ ५ ॥ से भिक्खू वा (२) जाव समाणे सिया से परो अभिहट्टु

भावार्थ

नहीं बोलना. परंतु उस आहार को लेकर एकान्त स्थल में जाकर जीव जंतु रहित उपाश्रय या बाग में बैठकर उस को खाना तथा गुठली और कांटे यत्ना से निर्जीव स्थंडिल में परठाना ॥ ५ ॥ गृहस्थ के यहां

१ ... वे ए० कुमा अ० आकर अ० पांव प० ठहर सि० कदाचित्, उ० खांडयुक्त, प० देना भाव जि० (दान क० द० देवे, त० तथा प्रकार प० पात्रको प० दूसरेके हाथमें प० परपात्रमें अ० अ- प्रासुक जा० यावत् णो० नहीं प० ग्रहणकरे ॥ से० वे आ० अथवा प० ग्रहण किया सि० कदाचित् तं० उसे ण० निश्चय णा० नजीक के आ० जाने से० वे त० उसे पा० लेकर त० वहां ग० जावे जाकर पु० पहिले आ० कहे आ० आयुष्यमान अ० बहीन इ० यह ते० तुमने कि० क्या जा० जानके दि० दिया अ०

अंतो पडिग्गहए, बिलं वा लोणं, उब्भियं वा लोणं, परिभाएत्ता णीहट्टु दलएज्जा तहप्पगारं पडिग्गहगं परहत्थंसि वा, परपायंसि वा, अफासुयं जाव णो पडिग्गाहे- ज्जा ॥ से आहच्च पडिग्गाहिते सिया, तं च णातिदूरगए जाणेज्जा से त मायाए त- त्थ गच्छेज्जा (२) पुव्वामेव आलोएज्जा आउसोत्ति वा भइणित्ति वा, इमं ते किं जाणता दिन्नं उदाहु अजाणता ? सो य भणेज्जा णो खलु मे जाणता दिन्नं, अजाणता दिन्नं कामं खलु

निकाले और कोई नीमक या समुद्र की खारी देवे तो उसे ग्रहण नहीं करना. उस के पात्र में या उस के हाथमें ही रख देवे. परंतु अजानते लेकर आजावे और गृहस्थ बहुत दूर न होवे तो तुर्त ही उस के वहां जाकर मुनिको कहना कि अहो आयुष्यमान! या बहिन! " तुमने यह जानकर दिया है या बिना जाने ? " वह गृहस्थ बोले कि मैं ने यह जानकर नहीं दिया है किन्तु अजानपने से दिया है; अब मैं यह ... को देता हूं. मुन

शब्दार्थ — कहो भ० भगवान में ? गो० वह भ० वही णो० नहीं स० निश्चय पं० पैन मा० जानके दि० दिया भ० भगवान में दि० देवागया, भा० धोड़ना स० निश्चय आ० आयुष्यमान इ० यह लि० देवाई गं० तुम को धं० मांगवा. प० विभागकरो सं० उनको प० दूसरेने स० आहारादि प० मय लि० रत्नादि पाद भ० मय तं० साधु भुं० खावे पी० पीवे, अं० जो भ० निश्चय णो० नहीं तं० सपव औ० स्थान पा० पीने भा० स्वधर्मी स० सहा भ० मनोज्ञ सं० संभोगी स० अके भ० ग्रहण करने योग्य अ० नजीक त० उनको भ० इसे लि० कदाचित णो० नहीं ग० जहां सा० स्वधर्मी ज० जो भ० बहुत भ० मात हुवा सी० करनेका

सूत्र — आहच्च हु एयाणि णिसिरामि तं भुंजह व णं, परिभाएह व णं, तं परिहिं समणुन्ना थं समणुन्निं मनो संजयामेव भुंजेज्ज वा पाएज्ज वा, जं च णो संचाएति भोत्तए वा पायए वा, साहम्मिया तत्थ वसंति संभोइया, समणुन्ना, अपरिहारिया, अदूरगया, तेसिं अणुप्पदायव्वं, सिया णो जत्थ साहम्मिया जहेव बहुपरियावन्नं कीरति तहेव

भावार्थ — जन को खाओ या दूसरेका विभाग करो इस तरह यदि गृहस्थ देता होवे तो, यतना पूर्वक इस (आहार) ग्रहण करे ख़ाना. और विशेष होने से स्वतः न खासके तो नजीक में रहनेवाले अन्य स्वधर्मी मुनियों को देना और दूसरे मुनि न होवे तो अब आहार परठने कि विधि बतलाते हैं पैन परिठाना ॥ ६ ॥ साधु साध्वी का यह

स० मन का० क.र. ॥ ६ ॥ अर्थ पूर्ववत् ॥ ७ ॥ इति ॥

भि० साधु ए० कितनेक ए० ऐसा भा० कहे स० स्थिरवासी व० कल्पविहारी गा० ग्रामानु
[illegible] दृ० फिरते म० मनोज्ञ भो० आहार ल० प्राप्त करके से० वे भि० साधु गि० रोगी से० इसलिये हं०
ये द० देवे त० उन ह० लाओ से० वह भि० साधु णो० न भुं० भोगवे तु० तुम चे० निश्चय भुं० भोगव-
ना ते० वे ए० कोइक भो० खाउं त्ति० ऐसा क० करके प० छिपा क० कर आ० कहे तं०

सूत्र

फायव्वं सिया ॥ ६ ॥ एयं खलु तस्स भिक्खुस्स भिक्खुणीए वा सामग्गियं ॥ ७ ॥
इति पिंडेसणाऽझयणस्स दसमोद्देसो सम्मत्तो ॥

भिक्खागा णामेगे एव माहंसु, समाणे वा, वसमाणे वा, गामाणुगामं दूइज्जमाणं, म-
णुण्णं भोयणजातं लभित्ता, से भिक्खू गिलाई सेहं दह णं तस्साहरह से य भि-
क्खू णो भुंजेज्जा तुमं चेव णं भुंजेज्जासि से गतितो भोक्खामित्ति कट्टु पलिउंचिय २

भावार्थ

भाषार है ॥ ७ ॥ यह पिण्डेषणा नामक दशम अध्ययन का दशम उद्देशा पूर्ण हुआ. आगे माल आहार की
विशिष्टता कहते हैं:—

भिक्षार्थी मुनि अपना संभोगी, या वहां रमनेवाले, या ग्रामानुग्राम फिरनेवाले मुनि को ऐसा कहे कि
भवन में अमुक मुनि बिमार है: इस लिये उन के लिये अच्छा भोजन मिले तो ला देना. और उन को

[illegible] इ० यह पिण्डाहार इ०यह लूखा, इ०यह खारा इ०यह कडुवा, इ०यह कषायला इ०यह खट्टा, यह भ० यथा इ० यह [illegible] निश्चय ए० इसमें [illegible] किंचित [illegible] मे० यह [illegible]. भा० [illegible] इ० यह [illegible] नहीं म० निश्चय ए० इसमें [illegible] ॥ [illegible] उन आ० [illegible] उन गि० रोगी [illegible] नहीं ए० [illegible] ॥ [illegible] कडुवेको कडुवा, क० कषायले को कषायला [illegible] यथा लि० [illegible] ॥ १ ॥ भि० साधु ए० [illegible] स्थिर [illegible]

आलोएज्जा [illegible]—इमे पित्ते, इमे लोए, इमे तित्तए, इमे कडुए, इमे कसाए, इमे अंबिले, इमे महुरे, णो खलु एत्तो किंचि गिलाणस्स सदृतित्ति; माइट्ठाणं सं-फासे, णो एवं करेज्जा। तहेव तं आलोएज्जा, जहेव तं गिलाणस्स सयति तंजहा, तित्तयं तित्तएत्ति वा, कडुयं कडुएत्ति वा, कसायं कसाएत्ति वा, अंबिलं अंबिलेत्ति वा, महुरं महुरेत्ति वा ॥ १ ॥ भिक्खागा णामेगे एव माहंसु समाणे वा, वसमाणे वा,

[illegible] उस समय वह भिक्षा लानेवाला साधु स्वयं उस आहार को खाने की [illegible] गुप्त [illegible]. [illegible] रोगी साधु को [illegible] यह आहार [illegible], कषायला, खट्टा, कडुक, मिष्ट है, दुःखप्रद [illegible]. ऐसा करनेवाला साधु दोषपात्र है. इस लिये साधु को जैसा आहार होवे वैसा कहना. पथ्यको पथ्य और अपथ्य को अपथ्य कहना. ॥ १ ॥ भिक्षार्थी मुनि अपना संभोगी, एकस्थान रहनेवाला या ग्रामानु-

सूत्र

गामाणुगामं दूइज्जमाणे मणुन्नं भोयणजातं लभित्ता से भिक्खू गिलाईसे हंदह णं तस्साहरह से य भिक्खू णो भुंजेज्जा, आहरेज्जासि णं, णो खलु मे अंतराए आहरिस्सामि इच्चेयाइं आयतणाइं उवातिकम्म ॥ २ ॥ अह भिक्खू जाणेज्जा सत्त पिंडेसणाओ सत्त पाणेसणाओ ॥ ३ ॥ तत्थ खलु इमा पढमा पिंडेसणा—अ-

भावार्थ

ग्राम विहार करते हुवा, साधु को ऐसा कहे कि अपने में अमुक साधु बीमार हैं उन के लिये पथ्य आहार ला देना. यदि वह न खाय तो मेरी पास लाना. ऐसा सुन वह आहार लानेवाला साधु कहे कि—मुझे मार्ग में किसी प्रकार का विघ्न न होगा तो ला देऊंगा. ऐसा करके वह आहार लाकर रोगी साधु को बतावे और वह न खावे तो स्वयं भोगवनेकी इच्छा से यदि अन्य को न बतावे तो वह दोष पात्र है इस लिये ऐसा नहीं करना. ॥ २ ॥ अब आगे सात प्रकार से आहार लेने की और सात प्रकार से पानी लेने की विधि कहते हैं ॥ ३ ॥ आहार लेने को साधु सात प्रकार से अभिग्रह धारण करते हैं स्वच्छ हाथ और स्वच्छ

शब्दार्थ नहीं भरा हा० हाथ अ० नहीं भरा म० पात्रत० तथा प्रकार अ० स्वच्छ हा० हाथ म० पात्र में अ० अशनादि आहार स० स्वयं जा० याचे प० दूसरा दि० देवे फा० प्रासुक जा० यावत् प० ग्रहणकरे इ० यह प० प्रथम पिं० आहारेषणा ॥१॥ आ० अथ अपर दो० दूसरी पि० आहारेषणा स० भरा हुवे ह० हाथ स० भरे म० पात्र न० तैसे ही दो० दूसरी पि० पिंडषणा इ० यह दो० दूसरी पिं० पिंडेषणा ॥ २ ॥ आ० अथ अपर त० तीसरी पिं० आहारेषणा, इ० यहां ख० निश्चय पा० पूर्व में प० पश्चिम मे, दा० दक्षिण में, उ० उत्तर में सं० कि-

सूत्र संसट्ठे हत्थे असंसट्ठे मत्ते, तहप्पगारेणं असंसट्ठेण हत्थेण वा, मत्तेण वा, असणं वा (४) सयं वा णं जाएज्जा, परो वा से दिज्जा, फासुयं जाव पडिगाहिज्जा, इति प्रथमा पिंडेसणा ॥ १ ॥ अहावरा दोच्चा पिंडेसणा—संसट्ठे हत्थे, संसट्ठे मत्तए तहेव दोच्चा पिंडेसणा इति दोच्चा पिंडेसणा ॥ २ ॥ अहावरा तच्चा पिंडेसणा—इह खलु पाईणं वा पडीणं वा, दाहिणं वा, उदीणं वा, संतेगतिया सड्ढा भवंति—गाहावती

भावार्थ पात्र. स्वच्छ हाथ से और स्वच्छ पात्र से मिलता हुवा आहार में याचकर लेवूंगा, या अन्य देवे तो ग्रहण करूंगा यह प्रथमा पिण्डैषणा. ॥१॥ भरे हाथ से या भरे पात्र से देवे तो लेवूंगा. यह द्वितीया पिंडैषणा ॥२॥ इस पृथ्वी पर पूर्व पश्चिमादि दिशाओं में गृहस्थ यावत् नोकरणी बहुत श्रद्धालु होते हैं. इन के वहां गाय,

शब्दार्थ

अ० अथ अ० अपर पं० पंचमी पिं० आहारैषणा से० वे भि० साधु साध्वी जा० प्रवेशकर उ० ग्रहाहुवा भो० भोजन जा० जाणे सं० यह ज० यथा स० सरावलामें डि० कांसीका पात्रमें को० कलशमें ज० अथ पु० फिर ए० ऐसे जा० जाणे ब० बहुत प० वापरा पा० हाथमें उ० पानीकालेप त० तथा प्रकारका अ० अन्नादि चारों आहार सं० स्वयं जा० याचे जा० यावत् प० ग्रहणकरे प० पांचवी पिं० पिंडैषणा ॥ ५ ॥ अ० अथ अपर छ० छठी पिं० आहार एषणा से० वे भि० साधु साध्वी, उ० ग्रहण क्रियाहुवा भो० भोजन जात जा० जाने जं० जिसे स० जिनकेलिये प० ग्रहणकिया, जं० जिसे प० दूसरेकेलिये प० ग्रहण किया, तं० उसे पा० पात्र प० खुला पा० हाथमें प० खुला फा० फासुक जा० यावत् प० ग्रहणकरे ॥ छ० छठी पिंडैषणा ॥ ६ ॥ अ० अथ अपर सा०

सूत्र

क्खू वा भिक्खुणी वा जाव समाणे, उग्गहितमेव भोयणजातं जाणेज्जा तंजहा— सरावंसि वा, डिंडिमंसि वा, कोसगंसि वा, अह पुण एवं जाणेज्जा बहुपरियावन्ने पाणिसु उदगलेवे तहप्पगारं असणं वा (४) सयं [illegible] णं जाएज्जा जाव पडिगाहेज्जा पंचमा पिंडेसणा ॥ ५ ॥ अहावरा छट्ठा पिंडेसणा से भिक्खू वा भिक्खुणी वा, उग्गहियमेव भोयणजायं जाणेज्जा जं च सयट्ठाए पग्गहियं जं च परट्ठाए पग्गहियं, तं च पाय परियावन्नं तं च पाणिपरियावन्नं, फासुयं जाव पडिगाहेज्जा.

भावार्थ

भाजनमें रखा होवे और गृहस्थ का हाथ भी भिनाश सूकगर होवे तो ग्रहण करना यह पांचवी पिंडैषणा (५) गृहस्थ ने अन्य को देने के लिये भोजन पात्र में खुला रखा हुवा मालूम पडे तो साधु साध्वी उसे लेना

शब्दार्थ

गाम्ही पि० आहार एषणा म० वे भि० साधु साध्वी जा० यावत् प्रवेश करके उ० न्हाखनेका ध० धर्म जिसका भो० आहार जाति जा० जाने जं० जिसे अ० अन्य व० बहुत दु० द्विपद च० चतुष्पद स० साधु मा० ब्राह्मण अ० अतिथि, कि० कृपण व० भिख्यारी णा० नहीं चाँहे त० तथा प्रकारका उ० न्हाखनेका ध० धर्म वाला भो० भोजन जात स० स्वयं जा० याचना करे, प० गृहस्थादि देवे जा० यावत् फा० प्रासुक प० ग्रहण करे.॥ स० सा तवी पि० पिंडैषणा ॥ ७ ॥ इ० इतनी स० सात पि० पिंडैषणा. ॥ ४ ॥ अ० अथ अपर स० सात पा०

मूल

छट्ठा पिंडेसणा ॥ ६ ॥ अहावरा सत्तमा पिंडेसणा से भिक्खू वा (२) समाणं उज्झियधम्मियं भोयणजायं जाणेज्जा जं च ण्णे बहवे दुपय-चउप्पय-समण-माहण—अतिहि—किवण—वणीमगा णावकंखंति तहप्पगारं उज्झियधम्मियं, भोयणजायं सयं वा णं जाएज्जा परो वा से दिज्जा जाव फासुयं पडिगाहेज्जा सत्तमा पिंडेसणा ॥ ७ ॥ इच्चेयाओ सत्त पिंडेसणाओ ॥ ४ ॥ अहावरा सत्त पाणेसणाओ तत्थ.

भावार्थ

छट्ठी पिंडैषणा (६) जो भोजन फेंकने योग्य मालूम पडे और अन्य मनुष्य, पशु या श्रमण ब्राह्मणादिक भी लेने की न इच्छते होवे सो वैसा भोजन साधु साध्वी लेवे यह सातवीं पिंडैषणा (७). इस तरह सात पिंडैषणा जानना. ॥ ४ ॥ अब सात पाणैषणा कहते हैं जिस में पहिली पाणैषणा हाथ स्वच्छ और पात्र

शब्दार्थ पानी का ए० एषणा स० इसमें ख० निश्चय इ० यह प० पांचवी प० पानी की एषणा अ० स्वच्छ हाथ से० पूर्वोक्त प्रकार भा० कहदेना न० न अपर च० चौथीमें पा० जान्यत्र से० वे भि० साधु साध्वी जा० संयमाकर से० वे पा० पानी की जा० जात जा० जाने से० वह ज० यथा ति० तिलोंका धोवन तु० तुषोंका धोवन ज० जवोंका धोवन, आ० ओसामन सो० कांजी आछ सु० उष्ण पानी अ० इसे ख० निश्चय प० पात्रमें अ० अल्प प० पश्चात्कर्म त० तैसेही प० लेवूंगा. ॥ ५ ॥ इ० इस तरह स० सात पिं० आहार एषणा स० सात पा० पानी की एषणा अ० अन्यतर प० प्रतिमा प० अङ्गीकार कर णो० नहीं ए० ऐसे व०

सूत्र खलु इमा पञ्चमा पाणेसणा असंसट्टे हत्थे तं चेव भाणियव्वं नवरं चउत्थाए णाण. स से भिक्खू वा (२) जाव समाणे से जं पुण पाणगजायं जाणेज्जा, तंजहा तिलोदगं वा, तुसोदगं वा, जवोदगं वा, आयामं वा, सोवीरं वा, सुद्धवियडं वा, अ सिंस खलु पडिग्गाहियंसि अप्पे पच्छाकम्मे तहेव पडिगाहेज्जा ॥ ५ ॥ इच्चेतासिं सत्तण्हं पिंडेसणाणं सत्तण्हं पाणेसणाणं अण्णतरं पडिमं पडिवज्जमाणे णो एवं वदे

भावार्थ ना ऐसे सब कथन सातों आहार एषणा में कहे उस मुजब कह देना. मात्र चौथी पानीषणा इस प्रकार करना. तिल का, तुष का, जव का धोवन, ओसामन, छास [illegible] उष्ण पानी ग्रहण करे और सातवीं में कोइ लेनेके बाद पश्चात्कर्म लगे वैसा पानी ग्रहण करे इस तरह सात पाणेषणा जानना. ॥ ५ ॥ इस तरह

...भ०भयवमन करने वाला अ०म एकहा ... बोले मि० खोट प०अंगीकारकी ख०निश्चय ए० इतने भ०भयको वमन करनेवाले ए०यह प०प्रतिज्ञा प०अङ्गीकारकरके वि०विचरतेहं. अङ्गीकार की जे० जो ए० यह प० प्रतिज्ञा प० अङ्गीकार कर वि० विचरता हूं स० सर्व ते० वे जि० जो० जो अ० मैं भी ए० यह प० प्रतिज्ञा प० अङ्गीकार कर वि० विचरते हैं. ॥ ६ ॥ पूर्ववत् ॥ ७ ॥ जिनाज्ञा में उ० सावधान अ० परस्पर में स० सहायक ए० ऐसे वि० विचरते हैं.

जे एते भयवंताजा मिच्छा पडिवन्ना खलु एते भयंवतारो अहमेगे सम्मं पडिवन्ने जे एते भयवंता-रो एयाओ पडिमाओ पडिवाज्जिताणं विहरंति, जो व अहंमसि एवं पडिमं पडिवाज्जि ताणं विहरामि सव्वे ते जिणाणाए उवट्ठिता अन्नोन्नससाहीए एवं च णं विहरं-ति ॥ ६ ॥ एयं खलु तस्स भिक्खुस्स भिक्खुणीए वा सामग्गियं ॥ ७ ॥ इति पिंडेसणाऽज्झयणस्स एकादसमोद्देसो ॥ इति पिंडेसणा णामं दसममज्झयणं सम्मत्तं ॥

मान आहार की एषणा और मान पानी की एषणा में से यथा शक्ति किसी भी एक दो प्रतिज्ञा अंगीकार करनेवाले साधु को ऐसा कदापि नहीं बोलना कि; मैं एकिला ही शुद्ध प्रतिज्ञा धारक हूं. अन्य की प्रतिज्ञा अशुद्ध है. परंतु ऐसा बोलना कि दूसरे साधु प्रतिज्ञा धारन कर विचरते हैं और मैं भी प्रतिज्ञा धारण कर विचरता हूं. इस सब जिनाज्ञा के पालक परस्पर समान हैं ॥ ६ ॥ उक्त प्रकार से साधु साध्वी का आचार है ॥ ७ ॥ यह पिंडैषणा नामक दशम अध्ययन का एकादश उद्देशा समाप्त हुवा और पिंडैषणा नामक दशम अध्ययन समाप्त हुवा. आगे शय्या की शुद्धि के लिये शय्याख्य एकादश अध्ययन कहते हैं.

शब्दार्थ पानी की ए० एषणा त० उसमें ख० निश्चय इ० यह प० पहिली प० पानीकी एषणा अ० स्वच्छ हाथ मं० पूर्वोक्त प्रकार भा० कहदेना न० न अपर च० चौथीमें णा० नान्यत्र से० वे भि० साधु साध्वी जा० प्रवेशकर मे० वे पा० पानीकी जा० जात जा० जाने तं० वह ज० यथा ति० तिलोंका धोवन तु० तुसोंका धोवन ज० जवोंका धोवन, आ० ओसामन सो० कांजी आछ सु० ऊष्ण पानी अ० इसे ख० निश्चय प० पात्रमें अ० अल्प प० पश्चात्कर्म त० तैसेही प० लेवुंगा. ॥ ५ ॥ इ० इस तरह स० सात पिं० आहारै पणा म० सात पा० पानीकी एषण अ० अन्यतर प० प्रतिमा प० अङ्गीकार कर णो० नहीं ए० ऐसे व०

सूत्र खलु इमा पढमा पाणेसणा असंसट्ठे हत्थे तं चेव भाणियव्वं नवरं चउत्थाए पाणे. चं से भिक्खू वा (२) जाव समाणे से ज्जं पुण पाणगजायं जाणेज्जा, तंजहा तिलोदगं वा, तुसोदगं वा, जवोदगं वा, आयामं वा, सोवीरं वा, सुद्धावियडं वा, अ स्सिं खलु पडिग्गाहियंसि अप्पे पच्छाकम्मे तहेव पडिगाहेज्जा ॥ ५ ॥ इच्चेतासिं सत्तण्हं पिंडसणाणं सत्तण्हं पाणेसणाणं अण्णतरं पडिमं पडिवज्जमाणे णो एवं वदे

भावार्थ भरा ऐसे सब कथन सातों आहार एषणा में कहे उस मुजब कह देना. मात्र चौथी पानीषणा इस प्रकार कहना, तिल का, तुष का, जव का धोवन, ओसामन, छास या ऊष्ण पानी ग्रहण करे और सातवीं में कोर पीसके नहीं न्हाखनेभावे ऐसा पानी ग्रहण करे इस तरह सात पाणेषणा जानना. ॥ ५ ॥ इस तरह

[illegible] ॥ १ ॥ [illegible] ॥ २ ॥

मूल

[illegible] ॥ ३ ॥ [illegible] ॥ इति [illegible] ॥

भावार्थ

[illegible] ॥ १ ॥ [illegible] ॥ २ ॥ [illegible]

° साधु साध्वी अ० वांच्छे उ० उपाश्रय ए० गवेषना से० वे अ० प्रवेशकरे गा० गाम में जा० १ ... रा० राजधानी में. ॥ १ ॥ से० वे जं० जो पु० फिर उ० उपाश्रय जा० जाने स० अण्डे युक्त स० प्राणीयों युक्त जा० यावत् सं० मकडीके जाले युक्त त० तथा प्रकारका उ० उपाश्रयमें णो० नहीं ठा० कायोत्सर्ग, से० सयन नि० स्वाध्याय चे० करे. ॥ २ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे जं० जो पु० फिर उ० उपाश्रय जा० जाने अ०अल्प अण्डे अ०अल्प प्राणी जा०यावत् अ०अल्प मकडीके

जे भिक्खू वा (२) अभिकंखेज्जा उवस्सयं एसित्तए, से अणुपविसे गामं वा जाव रायहाणिं वा ॥ १ ॥ से ज्जं पुण उवस्सयं जाणेज्जा सअंडं, सपाणं, जाव ससंताणयं, तहप्पगारे उवस्सए णो ठाणं वा, सेज्जं वा, निसीहियं वा, चेतेज्जा ॥२॥ से भिक्खू वा (२) से ज्जं पुण उवस्सयं जाणेज्जा । अप्पंडं अप्पपाणं जाव अ-

साधु साध्वी को उपाश्रय में रहने की इच्छा होवे तब ग्राम, नगर, यावत् राजधानी में जावे. ॥ १ ॥ जिस मकान में जीवों के अंडे, किटिकादि प्राणी यावत् के मकडी के जाले होवे वहां मुनि कायोत्सर्ग, शयन, व स्वाध्याय नहीं करे ॥ २ ॥ जिस मकान में अण्डे, प्राणी, जीवों व मकडी के जाले [illegible] होवे उस मकान

शब्दार्थ जाले त० तथा प्रकार उ० उपाश्रय प० देखकर प० पूंजकर त० फिर सं० साधु ठा० कायोत्सर्ग, स० शयन नि० सज्झाय चे० करे. ॥ २ ॥ से० वे जं०जो उ० उपाश्रय जा० जाने अ० इसकेलिये ए० एक सा० साधु को स० उद्देशकर पा० प्राणी भू० भूत जी० जीव स० सत्व का स० आरंभकर स० उद्देशकर की० मोलले पा० उधारले अ० छीनकरले अ० मालीक की आज्ञाविनाले, अ० सन्मुखला, आ० योंकर दे० देवे त० तथा प्रकार उ० उपाश्रय पु० दूसरे का बनाया अ० दातार का बनाया, जा० यावत् आ० सेवित

सूत्र एप संताणयं, तहप्पगारे उवस्सए पडिलेहित्ता पमज्जित्ता ततो संजयामेव ठाणं वा सेज्जं वा निसीहियं वा चेतेज्जा ॥ २ ॥ से जं पुण उवस्सयं जाणेज्जा अस्सिं पडियाए, एगं साहम्मियं समुद्दिस्स पाणाइं भूयाइं जीवाइं सत्ताइं समारब्भ समुद्दिस्स कीयं, पामिच्चं, अच्छेज्जं, अणिसट्ठं; अभिहडं, आहट्टु चेएति, तहप्पगारे उवस्सए पुरिसंतरकडे वा, अपुरिसंतरकडे वा, जाव अणासेवित वा, णो ठाणं वा, सेज्जं वा,

भावार्थ को दृष्टि से देखकर रजोहरण से पूंजकर फिर कायोत्सर्ग, शयन, व स्वाध्याय करे ॥ २ ॥ जो उपाश्रय स्वाम साधु के लिये प्राण, भूत, जीव और सत्व का विनाश करके बनाया होवे, मोल लिया होवे, किराये पर लिया होवे, अदलाबदला करके लिया होवे, निर्बल की पास से बलात्कार से छीन लिया होवे, मालिक की रजा विना लिया होवे, साधु को सन्मुख जाकर देवे उस उपाश्रय को दातारने किया होवे या अन्य

...र सं० साधु जा० यावत चे० करे.
... पु० फिर उ० उपाश्रय जा० जाने अ० असंयति भि० साधु
... पु० छोटे दु० द्वार म० बड़े कु० किये जा० यावत् जैसे पिं० पिंडैषणा में जा०
... मं० बिछौना सं० बिछावे व० बाहिर णि० निकाले त० तथा प्रकारका उ० उपाश्रय अ० स्वयं
... म० अंगीकृत णो० नहीं ठा० कायोत्सर्ग सं० शयन नि० स्वाध्याय चे० करे। अ० अथ पु०

...वा चेतेज्जा ॥ अह पुण एवं जाणेज्जा पुरिसंतरगडे जाव आसेविते, पडिले
...ट्टिता ततो संजयामेव जाव चेतेज्जा ॥ ६ ॥ से भिक्खू वा (२) से०
...उवस्सयं जाणेज्जा अस्संजए भिक्खुपडियाए खुड्डियाओ दुवारिआओ महल्लि
आओ कुज्जा, जहा पिंडेसणा, जाव संथारगं संथरेज्जा बहिया णिणक्खु तहप्पगारे
उवस्सए अपुरिसंतरकडे जाव अणासेवित्ति णो ठाणं वा सेज्जं वा निसीहियं वा चे-

...की आज्ञा मे उसे देखकर, पूंजकर कायोत्सर्ग, शयन व स्वाध्याय नहीं करे ॥ ६ ॥ असंयति
... साधु के लिये जिस मकान का द्वार छोटा का बड़ा, बड़ा का छोटा किया होवे, जमिन समकी
..., इत्यादि किये होवे वगैरहत्यादि फेरी होवे और गृहस्थ ने नहीं भोगवा होवे तो वहां साधु कायोत्सर्ग

[illegible] प० पता ना० पु० दूसरे ने बनाया आ० भोगा लिया प० देखकर प० पूछकर त० तब सं० साधु वा पायत प० कर ॥ ७ ॥ से वे नि० साधु साध्वी सं० वे पु० और उ० उपाश्रय जा० जाने अ० अस्संजत [illegible] साधु के प० लिये उ० पानी मयून कं० कन्द मू० मूल प० पत्र पु० फूल फ० फल [illegible] हरी वा० स्थान से अन्य स्थान मा० लेजाय प० बाहिर णि० निकाले त० तथा [illegible] उपाश्रय [illegible] ना० पायत णो० नहीं ठा० कायोत्सर्ग सं० शयन णि० स्वाध्याय

[illegible] ॥ अह पुण एवं जाणेज्जा पुरिसंतरकडे जाव आसेविते पडिलेहित्ता पमज्जित्ता [illegible] जाव चेतेज्जा ॥ ७ ॥ से भिक्खू वा (२) से जं पुण उवस्सयं जाणेज्जा [illegible] निक्खुवट्ठयाए उदगपसूयाणि कंदाणि वा, मूलाणि वा, पत्ता णि वा, पुप्फाणि वा, फलाणि वा, बीयाणि वा, हरियाणि वा, ठाणातो ठाणं सा हरंति, बहिया वा णिणक्खु तहप्पगारे उवस्सए अपुरिसंतरकडे जाव णो ठाणं वा

आदि नहीं करे. और अन्य ने बनाया होवे गृहस्थ ने भोगवा होवे तो साधु वहां कायोत्सर्गादि करे ॥ ७ ॥ [illegible] गृहस्थ साधु साध्वी के लिये उपाश्रय में से मूल, कंद, पान, फूल, फल, हरी वनस्पति, अनाज, [illegible] वनस्पति निकालकर अन्य स्थान ले गया होवे और गृहस्थ ने उसे न भोगवा होवे तो उस

शब्दार्थ

शरीर अवयव के० केवली बू० फरमाया आ० आदान मे० यह. से० तहां उ० ऊंचेसे प० रपटे प० पडे से० वे त० तहां प० रपटता प० पडता ह० हाथ जा० यावत् सी० मस्तक अ० अन्य का० शरीरकी इं० इन्द्रियों लू० रगडावे पा० प्राणीयों अ० हिंसाहोवे जा० यावत् व० विराधना होवे अ० अथ भि० साधु ने पु० पहिले उपदेशाया ए० यह प० प्रतिज्ञा जा० यावत् जं० जो त० तथा प्रकार उ० उपाश्रय अं० ऊंचस्थान णो० नहीं ठा० कायोत्सर्ग से० शयन णि० सज्झाय चे० करे. ॥ १० ॥ से० वे भि० साधु साध्वी

सूत्र

पूतिं वा, सोणियं वा, अन्नतरं वा सरीरावयवं, केवली बूया "आयाणमेयं," से तत्थ ऊसढं पगरेमाणे पयलेज्ज वा; पवडेज्ज वा, से तत्थ पयलेमाणे पवडेमाणे वा, हत्थं-वा जाव सीसं वा, अण्णतरं वा कायंसि इंदियजातं लूसेज्जा, पाणाणि वा (४) अभिहणेज्ज वा, जाव ववरोवेज्ज वा. अह भिक्खूणं पुव्वोवदिट्ठा एस पइन्ना जाव जं तहप्पगारं उवस्सए अंतलिक्खजाते णो ठाणं वा, सेज्जं वा, णिसीहियं वा चेतेज्जा ॥ १० ॥ से भिक्खू वा (२) से ज्जं पुण उवस्सयं जाणेज्जा—सइत्थियं; सखुड्डं

भावार्थ

प्रक्षालन करना नहीं. बडीनीत, लघुनीत करे नहीं. श्लेष्म, वमन, पित्त, रक्त, राध विगैरा फेंके नहीं ऐसा करने में केवलज्ञानी ने पाप कहा है. वहां रहने से साधु रपट पडे या उक्त वस्तु परठते नीचे गिरजाय तो नीचे रहे हुवे प्राणीयों की घात होवे ऐसे दोषों जानकर ऊंचा मकान में साधु रहे नहीं ॥ १० ॥ जिस

२० ५ आ उ० उपाश्रय जा० जान स० स्त्री युक्त स० बालक युक्त क्षुद्रपशु युक्त, स० पशुयुक्त भ० आहार पाणी युक्त त० तथा प्रकार सा० गृहस्थके उ० उपाश्रय में णो० नहीं ठा० कायोत्सर्ग से० शयन णि० सज्झाय चे० करे। अ० पाप स्थान में० यह। भि० साधु को गा० गृहपतिके कु० घरके स० साथ सं० रहते हुयेको अ० बन्धनहो वि० विसूची कादो छ० शर्दहो उ० व्याधी होवे अ० दूसरे से० वे दुः० दुख रो० रोग आ० आतंक स० उत्पन्नहो अ० असंयति क० करूणा से तं० ते भि० साधुके गा० शरीर को त० तलसे घ० घीसे ण० मक्खन से व० चरबी से अ० लगावे प० मसले सि० स्नान से क० पीठीसे

सूत्र

सपसु; भत्तपाणं तहप्पगारे सागारिए उवस्सए णो ठाणं वा, सेज्जं वा, णिसीहियं वा चेतेज्जा आयाण मेयं ॥ भिक्खुस्स गाहवतिकुलेण सद्धिं संवसमाणस्स; अलसए वा, विसूइया वा, छड्डिवाणं, उव्वाहिज्जा, अण्णतरे वा से दुक्खे रोयातंके समुप्पज्जेज्जा असंजए कलुणवडियाए, तं भिक्खुस्सगातं तेल्लेण वा, घएण वा, णवणीतेण वा, वसाए वा अब्भंगेज्ज वा मक्खिज्ज वा, सिणाणेण वा, कक्केण वा लोद्दे

भावार्थ

मकान में गृहस्थ के बालक क्षुद्र जंतु या गौमहिषादि पशुओं रहते होवें और उन के खानपान के पदार्थ भी वहां ही होवें, ऐसे गृहस्थ के परिचयवाले मकान में रहना नहीं ऐसे स्थान में रहने से अनेक दोषों उत्पन्न होते हैं जैसे कि वहां रहने साधु को कदाचित् सोजन, वमन, शूलादि रोग उत्पन्न हो जायातो

शब्दार्थ अवपर के० केवली भू० फरमाया आ० आदान मे० यह. से० तहां उ० ऊंचेसे प० रपटे प० पडे से० वे स० सहा प० रपटता प० पडता ह० हाथ जा० यावत् सी० मस्तक अ० अन्य का० शरीरकी इं० इन्द्रियों ल० लगावे पा० प्राणीयों अ० हिंसाहोवे जा० यावत् व० विराधना होवे अ० अथ भि० साधु ने पु० पहिले उपदेशाया ए० यह प० प्रतिज्ञा जा० यावत् जं० जो त० तथा प्रकार उ० उपाश्रय अं० ऊपस्थान णो० नही ठा० कायोत्सर्ग से० शयन णि० सज्झाय चे० करे. ॥ १० ॥ से० वे भि० साधु साध्वी

सूत्र पूतिं वा, सोणियं वा, अन्नतरं वा सरीरावयवं, केवली बूया "आयाणमेयं," से तत्थ ऊसढं पगरेमाणे पयलेज्ज वा; पवडेज्ज वा, से तत्थ पयलेमाणे पवडेमाणे वा, हत्थं-या जाव सीसं वा, अण्णतरं वा कायंसि इंदियजातं लूसेज्जा, पाणाणि वा (४) अभिहणेज्ज वा, जाव ववरोवेज्ज वा. अह भिक्खूणं पुव्वोवदिट्ठा एस पइन्ना जाव जं तहप्पगारं उवस्सए अंतलिक्खजाते णो ठाणं वा, सेज्जं वा, णिसीहियं वा चेतेज्जा ॥ १० ॥ से भिक्खू वा (२) से ज्जं पुण उवस्सयं जाणेज्जा—सइत्थियं; सखुड्डं

भावार्थ प्रक्षालन करना नहीं परीनीत, लघुनीत करे नहीं. श्लेष्म, वमन, पित्त, रक्त, राध विगेरा फेंके नहीं ऐसा करने में केवलज्ञानी ने पाप कहा है. वहां रहने से साधु रपट पडे या उक्त वस्तु परठते नीचे गिरजाय तो नीचे रहे हुवे प्राणीयों की घात होवे ऐसे दोषों जानकर ऊंचा मकान में साधु रहे नहीं ॥ १० ॥ जिस

व० वर्षा से भी० भीजा हुआ स० स्निग्ध से अ० अल्प स० विशेष धोवे उ० उजार उ० विशेष साफ
करे बा० बारम्बार धोवे प० मसलकर मि० मारकर नि०
मार करे प० पानी पीवे सा० लकड़ से द० लकड़ के सम्पर्क को० करे अ० अग्नि उ० उज्वाले प०
विशेष उ० उजार कर सा० शरीर से अ० आतापे प० विशेष आतापे अ० अप भि० साधु को पु०
पीवे को प० पट प० मांड़ा त० वैसा सा० गृहस्थ पुरुष उ० उपाश्रय पो० नहीं कायोत्सर्ग

न वा; वप्पोज वा, चुनेण वा, पउमेण वा, आयंसेज्ञ वा, पघंसेज्ञ वा, उव्वलेज्ञ वा,
उव्वट्टेज्ञ वा, सीओदगवियडेण वा, उसिणोदगवियडेण वा, उच्छोलेज्ञ वा, पच्छोले-
ज्ञ वा पधोएज्ञ वा, सिणाविज्ञ वा, सिंचेज्ञ वा, दारुणा वा, दारुपरिणामं कट्टु अग-
णिकायं उज्जालेज्ञ पज्जालेज्ञ वा, उज्जालित्ताकायं, आयावेज्ञ वा, पयावेज्ञ वा, अह भि-

…न साधु के करना स्वतः उन के शरीर पे औषधोपचार के लिये तेल, घृत, मक्खन, चर्बी इत्यादिका
मर्दन करेगा, सुगंधि द्रव्य से तैयार किया हुवा कल्क, लोध्र आदि का चूर्ण, पुष्पादि, आदि लगावेगा, ठण्डे
या उष्ण पानी से धोवेगा, स्नान करावेगा, सींचेगा, लकड़ से लकड़ घीसकर अग्नि प्रज्वलित करके शरीर
को तपावेगा, ऐसी सावद्य क्रिया उत्पन्न होने का कारण जान गृहस्थ के साथ निवास नहीं करना ॥१२॥

शब्दार्थ स॰ शय्या। पा॰ स्वाध्याय च॰ कर. ॥ १०॥ आ॰ पाप म॰ यह भि॰ साधु को। सा॰ गृहस्थके उ॰ उपाश्रय में व॰ रहते को इ॰ यहां ख॰ निश्चय गा॰ गृहस्थ वा॰ या जा॰ यावत् क॰ नोकरनी अ॰ आपस में अ॰ क्रोधकरे व॰ कुवचन बोले रुं॰ रोके उ॰ उपद्रवकरे अ॰ अथ भि॰ साधु उ॰ ऊंचा म॰ मन णि॰ करे ए॰ यह अ॰ परस्पर उ॰ लडो वा॰ या॰ मा॰ मत उ॰ लडो, मा॰ मत उ॰ उद्वेगपामो, अ॰ अथ भि॰ साधु पु॰ पहिले कहा ए॰ यह प॰ प्रतिज्ञा जा॰ यावत् त॰ तथा प्रकारके

सूत्र लु गाहवती वा जाव कम्मकरी वा अन्नमन्नं अक्कोसंति वा, वयंति वा, रुंभंति वा, उद्दवंति वा, अह भिक्खू उच्चावयं मणं णियच्छेज्जा एते खलु अन्नमन्नं उक्कोसंतु वा, मा वा उक्कोसंतु वा, जाव मा वा उद्दवंतु । अह भिक्खूणं पुव्वोवदिट्ठा क्खूणं पुव्वोवदिट्ठा एस पतिन्ना जं तहप्पगारे सागारिए उवस्सए णो ठाणं वा, सेज्जं वा, णिसीहियं वा, चेतेज्जा ॥११॥ आयाणमेयं भिक्खुस्स सागारिए उवस्सए वसमाणस्स इह ख-

भावार्थ और गृहस्थवाले मकान में रहने से दूसरा दोष यह उत्पन्न होता है जैसे गृहस्थ उन की स्त्री यावत् नोकरनी परस्पर में लडेंगे उन को देखकर साधु के मन में उद्वेग उत्पन्न होगा और विचार भी उत्पन्न होगा कि लडो या मत लडो यावत् मत उपद्रव होवो. ऐसे दोषों का स्थान गृहस्थ का सहवास जानकर वहां

० बहुत प्रासुक से० शय्या सं० बिछोना सं० करे. ॥ २३ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी ब० बहुत फा० प्रासुक से० शय्या सं० बिछोना सं० बिछाकर अ० वांछे ब० बहुत प्रासुक से० बीछोना सं० संथारापे दु० बैठे॥२४॥ ०वे भि० साधु साध्वी ब० बहुत प्रासुक से० शय्या सं० बिछोनापे दु० बैठते हुवे से० वे पु० पहिले स० शिरसे का० शरीरको पा० पाँवतक प० पूंज पूंजकर त० फिर स० साधु ब० बहुत निर्दोष से० शय्या बिछोने में दु० बैठे दु० बैठके त० फिर सं० साधु ब० बहुत निर्दोष से० शय्या बिछोने में स० सोवे. ॥ २५ ॥ से० वे भि० साधु

ज्जा संथारगं संथरेज्जा ॥ २३ ॥ से भिक्खू वा (२) बहुफासुयं सेज्जा संथारगं संथरित्ता अभिकंखेज्जा बहुफासुए सेज्जासंथारए दुरुहित्तए ॥ २४ ॥ से भिक्खू वा (२) बहुफासुए सेज्जा संथारए दुरुहमाणे से पुव्वामेव ससीसोवरियं कायं पाए य पमज्जिय २ ततो संजयामेव बहुफासुए सेज्जासंथारगे दुरुहिज्जा दुरुहित्ता तओ संजयामेव बहुफासुए सेज्जासंथारए सएज्जा ॥ २५ ॥ से भिक्खू वा (२)

भावार्थ

॥ २३ ॥ उपर्युक्त विधि अनुसार संथारा संथार कर उसमें यतना पूर्वक शयन करना ॥ २४ ॥ साधु साध्वी बिछोने में सोते पहिले मस्तक से लगाकर पाँव तक सब शरीर रजोहरण से पूंजकर फिर निर्दोष बिछाने में शयन करे ॥ २५ ॥ निर्दोष बिछाने में उक्त विधि से शयन किये बाद अपना हस्त, पाँव, शरीर,

शब्दार्थ दा- से॰ शय्या भ॰ होवे, प॰ वायुवाली वे॰ एकदा से॰ शय्या भ॰ होवे, णि॰ हवारहितवाली वे॰ एकदा से॰ शय्या भ॰ होवे, स॰ कचरेवाली वे॰ एकदा से॰ शय्या भ॰ होवे, अ॰ थोडे स॰ कचरे वाली वे॰ एकदा से॰ शय्या भ॰ होवे, म॰ डांस मच्छरवाली वे॰ एकदा से॰ शय्या भ॰ होवे, अ॰ अल्प दं॰ मच्छरवाली वे॰ एकदा से॰ शय्या भ॰ होवे, स॰ पडीहुइ वे॰ एकदा से॰ शय्या भ॰ होवे, अ॰ विनापडी वे॰ एकदा से॰ शय्या भ॰ होवे, स॰ उपसर्ग वाली वे॰ एकदा से॰ शय्या भ॰ होवे, णि॰ उपसर्ग विना की वे॰ एकदा से॰ शय्या भ॰ होवे, त॰ तथा प्रकारकी से॰ शय्या स॰ प्राप्त

सूत्र भवेज्जा, विसमा वेगया सेज्जा भवेज्जा, पवाता वेगया सेज्जा भवेज्जा, णिवाता वेगया सेज्जा भवेज्जा, ससरक्खा वेगया सेज्जा भवेज्जा, अप्पससरक्खा वेगया सेज्जा भवेज्जा ससदसमसगा वेगया सेज्जा भवेज्जा, अप्पदसमसगा वेगया सेज्जा भवेज्जा, सपरिसाडा वेगया सेज्जा भवेज्जा, अपरिसाडा वेगया सेज्जा भवेज्जा, सउवसग्गा वेगया सेज्जा भवेज्जा, णिरुवसग्गा वेगया सेज्जा भवेज्जा, तहप्पगाराहिं सेज्जाहिं सविज्जमाणाहिं पग्ग-

भावार्थ हवावाली मिले तो कभी हवारहित मिले, कभी कचरावाली मिले तो कभी स्वच्छ मिले, कभी डांस, मच्छरवाली मिले तो कभी डांस मच्छर रहित मिले, कभी गिरीहुइ मिले तो कभी रमणिक मिले, कभी भयवाली मिले तो कभी भय रहित मिले, ऐसी विचित्र प्रकारकी भूमि मिलते साधु साध्वी

इयारव्य द्वादश मध्ययनम्.

अ० अथ इस नि० निश्चय वा० वर्षाऋतु अ० पानीवर्षा ब० बहुत पा० प्राणी अ० उत्पन्न हुवे ब० बहुत बी० बीज अ० अंकुर मग० हुए, अं० बीच म० मार्गके ब० बहुत पा० प्राणी ब० बहुत बी० बीज जा० यावत् म० जाल अ० अत्यहत प० रस्ता णो० नहीं वि० जाणाजाय म० रस्ता, से० ऐसा ण० जान णो० नहीं गा० ग्रामानुग्राम दू० फिर त० तब स० साधु वा० चौमासा उ० निवासकरे. ॥ १ ॥ से० वे भि० साधु सा० साध्वी भ० वे अ० जो जा० जाने गा० ग्राम से जा० यावत् रा० राजधानी में, इ० इस स० निश्चय गा०

अब्भुवगए खलु वासावासे अभिपवुट्टे बहवे पाणा अभिसंभूया, बहवे बीया अहुणुब्भिन्ना अंतरा से मग्गा बहुपाणा, बहुबीया, जाव संताणगा, अण्णोक्कंता पंथा णो विण्णाया मग्गा सेव णच्चा णो गामाणुगामं दूइज्जेज्जा तओ संजयामेव वासावासं उवल्लिएज्जा ॥ १ ॥ से भिक्खू वा (२) से ज्जं पुण जाणेज्जा गामं वा जाव रा-

साधु साध्वी ऐसा जाने कि वर्षाऋतु प्रारंभ हुइ, वर्षा वरसनेसे बहुत जीवोंकी उत्पत्ति हुइ, वनस्पति के अंकूरोंसे मार्ग आच्छादित होगया और लोकों का आना जाना कम होने से मार्ग भी अच्छी तरह दिखता नहीं है तो विहार करने बंध रहकर एक स्थान वर्षाकाल (चातुर्मास) निवास करना ॥ १ ॥ जिस स्थान में

शब्दार्थ रा० राग्निकल्प प० कहे अं० बीचरस्तेमें अ० अल्प अंडे जा० यावत् मं० जाले ब० बहुत ज० जहां म० साधु ज गरत उ० आते हैं से० ऐसा ण० जान त० तब सं० साधु गा० ग्रामानुग्राम दू० विहार करे. ॥ ५ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरता, पु० पहिले जु० धुसरे प्रमाण पे० देखता द० देख के त० त्रस प्राणी उ० आगे पा० पग री० रखे, सा० पीछे पा० पग री० रखे, उ० उठाके पा० पग री० रखे ति० तिर्छा क० कर पा० पग री० रखे, स० होनेपर प० रस्ता सं० साधु प० जावे. करे णो० नहीं उ०

सूत्र प्पे परिवुसिए अंतरासे मग्गा अप्पंडा जाव संताणगा बहवे जत्थ समण जाव उवागमिस्संति य सेवं णच्चा ततो संजयामेव गामाणुगाम दूइज्जेज्जा ॥ ५ ॥ से भिक्खू वा (२) गामाणुगामं दूइज्जमाणे पुरओ जुगमायं पेहमाणे दहुणं तसे पाणे उदट्टु पायं रीएज्जा साहट्टु पायं रीएज्जा उक्खिप्प पायं रीएज्जा, तिरिच्छं वा कट्टु पादं रीएज्जा सति परक्कमे संजतामेव परक्कमेज्जा णो उज्जुयं गच्छेज्जा तओ संजयामे-

भावार्थ लगा होवे तो मुनि को यतना पूर्वक विहार करना. ॥ ५ ॥ साधु साध्वी चलते समय आगे चार हाथ भूमि देखकर चले. जिस रास्ते में जीवोत्पत्ति देखने में आवे और अन्य रास्ता होवे तो उस सीधे रास्ते से नहीं जावे. यदि अन्य रास्ता न होवे और उसी रास्ते से जाना पडे तो बहुत सावधानीसे जावे और जीवोंको

शब्दार्थ

सीधा ग० जावे न० तब से० साधु गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरे. ॥ ६ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरनाहुवा अं० रस्तेमें पा० प्राणी बी० बीज ह० हरी उ० पानी म० मट्टि अ० सजीव न० होवे प० मार्ग णो० नहीं उ० सीधा ग० जावे त० तब सं० साधु गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरे. ॥७॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरते अं० रस्तेमें वि० विविध प्रकारके प० देशकी सीमामें द० चोरका स्थान मि० म्लेच्छ के स्थान दू० दुष्प्राप्ती के स्थान दु० दुर्लभ बोधि के स्थान, अ० अकालचारी अ० अकालभक्षी, स० होवे ला० अच्छा वि० विहार योग्य सं० होते

सूत्र

च गामाणुगामं दूइज्जेज्जा ॥ ६ ॥ से भिक्खू वा (२) गामाणुगामं दूइज्जमाणे अंतरासे पाणाणि वा, बीयाणि वा, हरियाणि वा, उदए वा, मट्टिया वा, अविद्धत्थे, सइ परक्कमे णो उज्जुयं गच्छेज्जा, तओ संजयामेव गामाणुगामं दूइज्जेज्जा ॥७॥ से भिक्खू वा (२) गामाणुगामं दूइज्जमाणे, अंतरासे विरूवरूवाणि पच्चंतिकाणि दस्सुगायतणाणि; मिलक्खूणि दुस्सन्नप्पाणि; दुप्पण्णवणिज्जाणि अकालपडिबोहीणि

भावार्थ

देखकर आगे, पीछे, या एक बाजु पाँव रखता हुआ आगे निकले ॥ ६ ॥ रास्ते में प्राणी, बीज, वनस्पति, पानी, मिट्टि, होवे और दूसरा रास्ता होवे तो उस सीधे रास्ते से नहीं जावे ॥ ७ ॥ जिस रास्ते में चोरों, म्लेच्छों, अनार्यों अकालमें फिरनेवाले, अभक्ष्य खानेवाले और लूटारे व जड़ लोकों के विभाग में

शब्दार्थ
अंदर ग० गामविरुल्यपञ्चहि अं० बीचरस्तेमें अ० अल्प अहे आ० यावत् मं० जाले ब० बहुत ज० भरा म० साधु ✽ सू ✽ अ० जनपद में णो० नहीं वि० विहारके लिये प० मार्ग ग० जानेको के० केवलीने बू० कहा आ० पापस्थान मे० पर, ते० वे बा० अज्ञानी अ० यह ते० चोर, अ० यह उ० चौकसी, अ० यह त० वहांसे आ० आया ऐसा क० करके, सं० उस भि० साधु को अ० आक्रोशकरे जा० यावत् उ० उपद्रवकरे, व० वस्त्र प० पात्र कं० कंबल पा० रजोहरण अ० छेदे अ० भेदे अ० लूंटे प० फाडे अ० अथ भि० साधुने पु० पहिले उपदेश, प० प्रतिज्ञा जा० यावत णो० नहीं स० तथा प्रकार के वि० विविध तरह के प० देशकीहदपे द० चोर के स्थान जा० यावत वि० विहार व० वृत्ति णो० नहीं प० मार्ग ग० जाना, त० तब सं० साधु

मूल
अकालपरिभोईणि मनि लाढे वियाराए संथरमाणेहिं जणवएहिं णो विहारवत्तियाए पवज्जेज्जा गमणाए केवली बूया "आयाणमेयं" ते णं बाला "अयं तेणे अयं उवचरए, अयं तओ आगए" त्तिकट्टु तं भिक्खुं अक्कोसेज्ज वा जाव उद्दवेज्ज वा, वत्थं, पडिग्गहं, कंबलं, पायपुच्छणं, अच्छिंदेज्ज वा अभिंदेज्ज वा अवहरेज्ज वा परिभवेज्ज वा अह भिक्खूणं पुव्वोवदिट्ठा पतिण्णा जाव जं णो तहप्पगाराणि विरूवरूवाणि पच्चंतियाणि, दस्सुगायतणाणि, जाव विहारवत्तियाए णो पवज्जेज्जा गमणाए, तओ संजया

भावार्थ
अन्य अच्छा देश विषे तो विहार नहीं करना. केवल ज्ञानी ने इस में पापका कारण कहा है. क्यों कि वह

शब्दार्थ

गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरे ॥ ८ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम [illegible] होत्था, [illegible] आर्यदेश [illegible] [illegible] राजा. दो० दोराज्यहो, [illegible] बाल्ययुवक राजा. दो० होते हुवे ज० जनपद [illegible] विरुद्धराज्यहो म० [illegible] होवे अ० अन्यो वि० विहार कल्पते [illegible] [illegible] नाना [illegible] [illegible] विहार के लिये [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

सूत्र

[illegible] गामाणुगामं दूइज्जमाणे अन्तरा से अरायाणि वा, जुवरायाणि वा, दोरज्जाणि वा, वेरज्जाणि वा, विरुद्धरज्जाणि वा, सति लाढे विहाराए संथरमाणेहिं [illegible] णो विहारवत्तियाए पवज्जेज्जा गमणाए केवली बूया "आयाण [illegible] [illegible] णो विहारवत्तियाए पवज्जेज्जा [illegible] ते चेव जाव णो विहारवत्तियाए पवज्जेज्जा [illegible] [illegible] ॥ ९ ॥ से भिक्खू वा, [illegible] गामाणुगामं दूइज्जेज्जा गमणाए [illegible]

भावार्थ

पांचवें प्र० [illegible] ऐसा जान साधु साध्वी को उस रास्ते में जाना नहीं ॥ ८ ॥ जिस मार्ग में राजा न हो या बहुत राजा बन बैठे होवे, युवराज का राज्य होवे, दो राजा राज्य करते होवे, [illegible] परस्पर विरोध होवे, ऐसे मार्ग में जाना नहीं. जाने तो केवलज्ञानी ने इस में पाप का कारण कहा है क्योंकि वे साधु को चोरली या चोर देखकर अनेक परिषह उपसर्ग देवे इस लिये ऐसे [illegible] रहित देश में विहार करना ॥ ९ ॥ ग्रामानुग्राम विहार करते मुनि या

न्दर रा० रात्रिकल्प प० कहे अं० बीचरस्तेमें अ० अल्प अंडे जा० यावत् सं० जाले ब० बहुत ज० जहां म० साधु ॰जनपद में णो० नहीं वि० विहारके लिये प० प्रवर्ते ग० जानेको के० केवलीने वू० कहा आ० पापस्थान ये० यह, ते० ये या० अज्ञानी अ० यह ते० चोर, अ० यह उ० चौकसी, अ० यह त० वहांसे आ० आया त्ति० ऐसा क० करके, तं० उस भि० साधु को अ० आक्रोशकरे जा० यावत् उ० उपद्रवकरे, व० वस्त्र प० पात्र कं० कंबल पा० रजोहरण अ० छेदे अ० भेदे अ० लूटे प० फाडे अ० अथ भि० साधुने पु० पहिले उपदेशा, प० प्रतिज्ञा जा० यावत णो० नहीं त० तथा प्रकार के वि० विविध तरह के प० देशकीहदपे द० चोर के स्थान जा० यावत वि० विहार व० वृत्ति णो० नहीं प० प्रवर्ते ग० जाना, त० तब सं० साधु

सूत्र

अकालपरिभोईणि सनि लाढे वियाराए संथरमाणेहिं जणवएहिं णो विहारवत्तियाए पवज्जेज्जा गमणाए केवली वूया "आयाणमेयं" ते णं वाला "अयं तेणे अयं उवचरए, अयं तओ आगए" त्तिकट्टु तं भिक्खुं अक्कोसेज्ज वा जाव उद्दवेज्ज वा, वत्थं, पडिग्गहं, कंबलं, पायपुंच्छणं, अच्छिदेज्जवा अभिदेज्ज वा अवहरेज्ज वा परिभवेज्ज वा अह भिक्खूण पुव्वोवदिट्ठा पतिण्णा जाव जं णो तहप्पगाराणि विरूवरूवाणि पच्चंतियाणि, दस्सुगायतणाणि, जाव विहारवत्तियाए णो पवज्जेज्जा गमणाए, तओ संजया २

भावार्थ

अन्य अच्छा देश मिले तो विहार नहीं करना. केवल ज्ञानी ने इस में पापका कारण कहा है, क्यों कि वह

शब्दार्थ गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरे. ॥ ८ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम ... दो० दोराज्यहो, ... वीचमें अ० विनाराजा का राष्ट्र ग० बहुत राजावन बैठे जु० बालवयका राजा, दो० दोराज्यहो, वे० वैरहो, वि० विरुद्धराज्यहो स० होते हुवे ज० जनपद, आर्यदेश वैरहो, वि० विरुद्धराज्यहो स० होने ला० अच्छा वि० विहार केलिये सं० होते हुवे ज० जनपद ... णो० नहीं वि० विहारकेलिये प० प्रवर्तन ग० जाना के० केवलज्ञानीने वु० फरमाया आ० पाप स्थान ... गा० ग्रामानु- अ० यह ते० चोर ते० उन से० निश्चय णो० नहीं वि० विहार के लिये प० प्रवर्तन ग० जाना त० तब सं० ... ग्राम दू० विचरे ॥ ... साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरे ...

सूत्र से भिक्खू वा (२) गामाणुगामं दूइज्जमाणे अंतरासे अरायाणि वा, गणरायाणि वा, जुवरायाणि वा, दोरज्जाणि वा, वेरज्जाणि वा, विरुद्धरज्जाणि वा, सति लाढे विहाराए संथरमाणेहिं जणवएहिं णो विहारवत्तियाए पवज्जेज्जा गमणाए केवली बूया "आयाण मेयं" ते णं बाला "अयं तेणं" तं चेव जाव णो विहारवत्तियाए पवज्जेज्जा गमणाए, तओ संजयामेव गामाणुगामं दूइज्जेज्जा ॥ ९ ॥ से भिक्खू वा,

भावार्थ ... ॥ ८ ॥ जिस प्रान्त में पाखंडि फांद, चोर, ... ऐसा जान साधु साध्वी को उस रास्ते से जाना नहीं ॥ ८ ॥ जिस प्रान्त में कोइ राजा न हो या बहुत राजा बन बैठे होवें, लघुवय का बाल राजा होवे, दो राजा राज्य करते होवें, राजा राजा में वैर होवे, परस्पर युद्ध होता हो, ऐसे प्रान्त में जाना नहीं. जावे तो केवलज्ञानी ने इस में पाप का कारण कहा है क्योंकि वे साधु को चोकसी या चोर ठहराकर अनेक परिषह उपजावेंगे इस लिये ऐसे ... को छोडकर अन्य उपद्रव रहित देश में विहार करना ॥ ९ ॥ ग्रामानुग्राम विहार करते मुनि या

सूत्र

गाथार्थ

...विहारकालय प० प्रवर्तं ग० जानेको के० केवलीने बू० कहा आ० पापस्थान मे० यह. ते० ये पा० अज्ञानी अ० यह ते० चोर, अ० यह उ० चौकसी, अ० यह त० वहांसे आ० आया त्ति० ऐसा क० करके, तं० उस भि० साधु को अ० आक्रोशकरे जा० यावत् उ० उपद्रवकरे, व० वस्त्र प० पात्र कं० कम्बल पा० रजोहरण अ० छेदे अ० भेदे अ० लूंटे प० फाडे अ० अथ भि० साधुने पु० पहिले उपदेशा. प० प्रतिज्ञा जा० यावत णो० नहीं त० तथा प्रकार के वि० विविध तरह के प० देशकी हद पे द० चोर के स्थान जा० यावत वि० विहार व० वृत्ति णो० नहीं प० प्रवर्ते ग० जाना, त० तब सं० साधु

अकालपरिभोईणि सति लाढे विहाराए संथरमाणेहिं जणवएहिं णो विहारवत्तियाए पवज्जेज्जा गमणाए केवली बूया "आयाणमेयं" ते णं बाला "अयं तेणे अयं उवचरं ए, अयं तओ आगए" त्तिकट्टु तं भिक्खुं अक्कोसेज्ज वा जाव उद्दवेज्ज वा, वत्थं, पडिग्गहं, कंबलं, पायपुंच्छणं, अच्छिदेज्जवा अभिंदेज्ज वा अवहरेज्ज वा परिभवेज्ज वा अह भिक्खूण पुव्वोवदिट्ठा पतिण्णा जाव जं णो तहप्पगाराणि विरूवरूवाणि पच्चंतियाणि, दस्सुगायतणाणि, जाव विहारवत्तियाए णो पवज्जेज्जा गमणाए, तओ संजया

अन्य अच्छा देश मिले तो विहार नहीं करना. केवल ज्ञानी ने इस में पापका कारण कहा है. क्यों कि दुष्ट लोकों साधु को देखकर उसे चोर या उस का सहायक या जासूस देखकर अनेक उपद्रव करें, मारें, वस्त्र

शब्दार्थ

गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरे. ॥ ८ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम [illegible] करना अं० दो० दो राज्य [illegible] वीचमें अ० विनाराजा का राज्य ग० बहुत राजावन बैठे जु० बालवयका राजा, दो० दोराज्यहो, वे० गज्य आपसमें वैरहो, वि० विरुद्धराज्यहो स० होवे त्या० अच्छा वि० विहार कलिंग से० होने दूंय न० जनपद, आर्यदेश णो० नहीं वि० विहारके लिये प० प्रवर्ते ग० जाना के० केवलज्ञानीने वृ० फरमाया आ० पाप [illegible] अ० यह ते० चोर तं० उस चे० निश्चय णो० नहीं वि० विहारके लिये प० प्रवर्ते ग० जाना [illegible] ग्राम दू० विचरे ॥ [illegible] ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरते अं० [illegible]

सूत्र

सेव गामाणुगामं दूइज्जेज्जा ॥ ८ ॥ से भिक्खू वा (२) गामाणुगामं दूइज्जमाणे अंतरासे अरायाणि वा, गणरायाणि वा, जुवरायाणि वा, दोरज्जाणि वा, वेरज्जाणि वा, विरुद्धरज्जाणि वा, सति लाढे विहाराए संथरमाणेहिं जणवएहिं णो विहारवत्तियाए पवज्जेज्जा गमणाए केवली बूया "आयाण मेयं" ते णं बाला "अयं तेणं" तं चेव जाव णो विहारवत्तियाए पवज्जेज्जा गमणाए ततो संजयामेव गामाणुगामं दूइज्जेज्जा ॥ ९ ॥ से भिक्खू वा,

भावार्थ

पात्रादि फोडे, तोडे, लूटे. ऐसा जान साधु साध्वी को उस रास्ते में जाना नहीं ॥ ८ ॥ जिस मार्ग में कोई राजा न हो या बहुत राजा बन बैठे होवें, न्यूनवय का बाल राजा होवे, दो राजा राज्य करते होवें, राजा राजा में वैर होवे, परस्पर युद्ध होता हो, ऐसे मार्ग में जाना नहीं. जाने तो केवलज्ञानी ने इस में पाप का कारण कहा है. क्योंकि वे साधु को चोरकी या चोर ठहराकर अनेक परिषह उपजावें इस लिये ऐसे देश को छोडकर अन्य उपद्रव रहित देश में विहार करना ॥ ९ ॥ ग्रामानुग्राम विहार करते मुनि या

शब्दार्थ

ज॰ जनपद में णो॰ नहीं वि॰ विहारके लिये प॰ प्रवर्ते ग॰ जानेको के॰ केवलीने वू॰ कहा आ॰ पापस्थान ये॰ यह, ते॰ वे बा॰ अज्ञानी अ॰ यह ते॰ चोर, अ॰ यह उ॰ चौकसी, अ॰ यह त॰ वहांसे आ॰ आया त्ति॰ ऐसा क॰ करके, तं॰ उस भि॰ साधु को अ॰ आक्रोशकरे जा॰ यावत् उ॰ उपद्रवकरे, व॰ वस्त्र प॰ पात्र कं॰ कंबल पा॰ रजोहरण अ॰ छेदे अ॰ भेदे अ॰ लूटे प॰ फाडे अ॰ अथ भि॰ साधुने पु॰ पहिले उपदेशा, प॰ प्रतिज्ञा जा॰ यावत णो॰ नहीं त॰ तथा प्रकार के वि॰ विविध तरह के प॰ देशकीहदपे द॰ चोर के स्थान जा॰ यावत वि॰ विहार व॰ वृत्ति णो॰ नहीं प॰ प्रवर्ते ग॰ जाना, त॰ तब सं॰ साधु

सूत्र

अकालपरिभोईणि सति लाढे वियाराए संथरमाणेहिं जणवएहिं णो विहारवत्तियाए पवज्जेज्जा गमणाए केवली बूया "आयाणमेयं" ते णं वाला "अयं तेणे अयं उवचरं ए, अयं तओ आगए" त्तिकट्टु तं भिक्खुं अक्कोसेज्ज वा जाव उद्दवेज्ज वा, वत्थं, पडिग्गहं, कंबलं, पायपुंच्छणं, अच्छिंदेज्जवा अभिंदेज्ज वा अवहरेज्ज वा परिभवेज्ज वा अह भिक्खूणं पुव्वोवदिट्ठा पतिण्णा जाव जं णो तहप्पगाराणि विरूवरूवाणि पचंतियाणि, दस्सुगायतणाणि, जाव विहारवत्तियाए णो पवज्जेज्जा गमणाए, तओ संजया २

भावार्थ

अन्य अच्छा देश मिले तो विहार नहीं करना. केवल ज्ञानी ने इस में पापका कारण कहा है. क्यों कि दुष्ट लोकों साधु को देखकर चोर या उस का सहायक या जासुस ठहराकर अनेक उपद्रव करें, मारें [illegible]

गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरे. ॥ ८ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० विहार करता अं०
ग्रामानुग्राम दू० विचरे. ॥ ८ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० विहार करता अं० [illegible] अ० बिनाराजा का राष्ट्र ग० बहुत राजावन बैठे जु० बालवयका राजा, दो० दोराज्यहो, वे०राज्यमें वैरहो, वि० विरुद्धराज्यहो स० होने स्या० अच्छा वि० विहार करने को सं० होने हुवे ज० जनपद, आर्यदेश में [illegible] णो० नहीं वि० विहार करने प० प्रवर्ते ग० जाना के० केवलज्ञानीने वु० फरमाया आ० पाप [illegible] णो० नहीं वि० विहार के लिये प० प्रवर्ते ग० जाना [illegible] अ० [illegible] णो० नहीं वि० विहार के लिये प० प्रवर्ते ग० जाना [illegible] साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरे [illegible] ग्राम दू० विचरे. ॥ ९ ॥ [illegible]

से भिक्खू वा (२) गामाणुगामं दूइज्जमाणे अंतरासे अरायाणि वा, गणरायाणि वा, जुवरायाणि वा, दोरज्जाणि वा, वेरज्जाणि वा, विरुद्धरज्जाणि वा, सति लाढे मेव गामाणुगामं दूइज्जेज्जा ॥ ८ ॥ से भिक्खू वा विहाराए संथरमाणेहिं जणवएहिं णो विहारवत्तियाए पवज्जेज्जा गमणाए केवली बूया "आयाण मेयं" ते णं बाला "अयं तेणं" तं चेव जाव णो विहारवत्तियाए पवज्जेज्जा गमणाए, तओ संजयामेव गामाणुगामं दूइज्जेज्जा ॥ ९ ॥ से भिक्खू वा,

भावार्थ—जिस मार्ग में चोरादि पापी, अनार्य, म्लेच्छ, ऐसा जान साधु साध्वी को उस रास्ते में जाना नहीं ॥ ८ ॥ जिस मार्ग में [illegible] राजा न हो या बहुत राजा बन बैठे होवें, अनुभव का बाल राजा होवे, दो राजा राज्य करते होवें, राजा राजा में वैर होवे, परस्पर युद्ध होता हो, ऐसे मार्ग में जाना नहीं. जाने तो केवलज्ञानी ने इस में पाप का कारण कहा है. क्योंकि वे साधु को चोर या चोर देखकर अनेक परिषह उपजावेंगे इस लिये ऐसे देश को छोडकर अन्य उपद्रव रहित देश में विहार करना ॥ ९ ॥ ग्रामानुग्राम विहार करते मुनि या

शब्दार्थ

भ० जनपद में णो० नहीं वि० विहार के लिये प० प्रवर्ते ग० जाने को के० केवलीने बू० कहा आ० पापस्थान से० पर. ते० वे बा० अज्ञानी अ० यह ते० चोर, अ० यह उ० चौकसी, अ० यह त० वहांसे आ० आया त्ति० ऐसा क० करके, तं० उस भि० साधु को अ० आक्रोशकरे जा० यावत् उ० उपद्रवकरे, व० वस्त्र प० पात्र कं० कम्बल पा० रजोहरण अ० छेदे अ० भेदे अ० लूटे प० फाडे अ० अथ भि० साधुने पु० पहिले उपदेशा. प० प्रतिज्ञा जा० यावत णो० नहीं त० तथा प्रकार के वि० विविध तरह के प० देशकीहद्दपे द० चोर के स्थान जा० यावत् वि० विहार व० वृत्ति णो० नहीं प० प्रवर्ते ग० जाना, त० तब सं० साधु

सूत्र

अकालपरिभोईणि सति लाढे विहाराए संथरमाणेहिं जणवएहिं णो विहारवत्तियाए पवज्जेज्जा गमणाए केवली बूया "आयाणमेयं" ते णं बाला "अयं तेणं अयं उवचरए, अयं तओ आगए" त्तिकट्टु तं भिक्खुं अक्कोसेज्ज वा जाव उद्दवेज्ज वा, वत्थं, पडिग्गहं, कंबलं, पायपुंच्छणं, अच्छिंदेज्जवा अभिंदेज्ज वा अवहरेज्ज वा परिभवेज्ज वा अह भिक्खूणं पुव्वोवदिट्ठा पतिण्णा जाव जं णो तहप्पगाराणि विरूवरूवाणि पच्चंतियाणि, दस्सुगायतणाणि, जाव विहारवत्तियाए णो पवज्जेज्जा गमणाए, तओ संजया

२

भावार्थ

अन्य अच्छा देश मिले तो विहार नहीं करना. केवल ज्ञानी ने इस में पापका कारण कहा है. क्यों कि दुष्ट लोकों साधु [illegible] देखकर ऐसे चोर या उस [illegible] मारापक या जासुस देखकर अनेक उपद्रव करें, मारें, वस्त्र

दार्थ

गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरे. ॥ ८ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० विहार करता अं० बीचमें अ० विनाराजा का राष्ट्र ग० बहुत राजावन बैठे जु० बालवयका राजा, दो० दोराज्यहो, वे०राज्यमें वैरहो, वि० विरुद्धराज्यहो म० होते ला० अच्छा वि० विहार केलिये सं० होते हुवे ज० जनपद, आर्यदेश णो०नहीं वि०विहारकेलिये प०प्रवर्ते ग०जाना के०केवलज्ञानीने बू०फरमाया आ०पाप स्थान से०यह ते०वे बा०मूर्ख अ०यह ते०चोर तं०उसे चे०निश्चय णो०नहीं वि०विहार के लिये प०प्रवर्ते ग०जाना त० तब सं०साधु गा०ग्रामानु- ग्राम दू०विचरे.॥९॥से०वे भि०साधु साध्वी गा०ग्रामानुग्राम दू०विचरते अं०बीचमें वि०अटवी [illegible]

सूत्र

मेव गामाणुगामं दूइज्जेज्जा ॥ ८ ॥ से भिक्खू वा (२) गामाणुगामं दूइज्जमाणे अंतराले अरायाणि वा, गणरायाणि वा, जुवरायाणि वा, दोरज्जाणि वा, वेरज्जाणि वा, विरुद्धरज्जाणि वा, सति लाढे विहाराए संथरमाणेहिं जणवएहिं णो विहारवत्तियाए पवज्जेज्जा गमणाए केवली बूया "आयाणमेयं" ते णं बाला "अयं तेणं" तं चेव जाव णो विहारवत्तियाए पवज्जेज्जा गमणाए तओ संजयामेव गामाणुगामं दूइज्जेज्जा ॥ ९ ॥ से भिक्खू वा,

भावार्थ

पात्रादि फोडें, तोडें, लूटें. ऐसा जान साधु साध्वी को उस रास्ते से जाना नहीं ॥ ८ ॥ जिस प्रान्त में कोइ राजा न हो या बहुत राजा बन बैठे होवें, लघुवय का बाल राजा होवे, दो राजा राज्य करते होवें, राजा राजा में वैर होवे, परस्पर युद्ध होता हो, ऐसे प्रान्त में जाना नहीं. जावे तो केवलज्ञानी ने इस में पाप का कारण कहा है. क्योंकि वे साधु को चोकसी या चोर ठहराकर अनेक परिषह उपजावेंगे इस लिये ऐसे देश को छोडकर अन्य उपद्रव रहित देश में विहार करना ॥ ९ ॥ ग्रामानुग्राम विहार करते मुनि या

शब्दार्थ

ज० जनपद में णो० नहीं वि० विहारके लिये प० प्रवर्तें ग० जानेको के० केवलीने बू० कहा आ० पापस्थान ए० यह, ते० वे था० अज्ञानी अ० यह ते० चोर, अ० यह उ० चौकसी, अ० यह त० वहांसे आ० आया त्ति० ऐसा क० करके, तं० उस भि० साधु को अ० आक्रोशकरे जा० यावत् उ० उपद्रवकरे, व० वस्त्र प० पात्र कं० कम्बल पा० रजोहरण अ० छेदे अ० भेदे अ० लूंटे प० फाडे अ० अथ भि० साधुने पु० पहिले उपदेशा, प० प्रतिज्ञा जा० यावत् णो० नहीं त० तथा प्रकार के वि० विविध तरह के प० देशकीहदपे द० चोरके स्थान जा० यावत् वि० विहार व० वृत्ति णो० नहीं प० प्रवर्तें ग० जाना, त० तब सं० साधु

सूत्र

अकालपरिभोईणि मनि लाढे वियाराए संथरमाणेहिं जणवएहिं णो विहारवत्तियाए पवज्जेज्जा गमणाए केवली बूया "आयाणमेयं" ते णं बाला "अयं तेणे अयं उवचरए, अयं तओ आगए" त्तिकट्टु तं भिक्खुं अक्कोसेज्ज वा जाव उद्दवेज्ज वा, वत्थं, पडिग्गहं, कंबलं, पायपुंछणं, अच्छिंदेज्जवा अभिंदेज्ज वा अवहरेज्ज वा परिभवेज्ज वा अह भिक्खूणं पुव्वोवदिट्ठा पतिण्णा जाव जं णो तहप्पगाराणि विरूवरूवाणि पच्चंतियाणि, दस्सुगायतणाणि, जाव विहारवत्तियाए णो पवज्जेज्जा गमणाए, तओ संजया

भावार्थ

अन्य अच्छा देश मिले तो विहार नहीं करना. केवल ज्ञानी ने इस में पापका कारण कहा है. क्यों कि दुष्ट लोकों साधु को देखकर चोर चोर या उस का साहायक या जासूस देखकर अनेक उपद्रव करें, मारें, वस्त्र

पदार्थ

गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरे. ॥ ८ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० विहार करता [illegible] अ० बिनाराजा का राष्ट्र ग० बहुत राजावन बैठे जु० बालवयका राजा, दो० दोराज्यहो, वे० राज्यमें बीचमें वैरहो, वि० विरुद्धराज्यहो स० होते ला० अच्छा वि० विहार कल्पिये सं० होते हुवे ज० जनपद, आर्यदेश णो० नहीं वि० विहारकल्पिये प० मवर्ते ग० जाना के० केवलज्ञानीने वू० फरमाया आ० पाप [illegible] अ० यह ते० चोर सं० उस से० निश्चय णो० नहीं वि० विहार के लिये प० प्रवर्ते ग० जाना [illegible] ग्राम दू० विचरे. ॥ ९ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरते [illegible]

मेव गामाणुगामं दूइज्जेज्जा ॥ ८ ॥ से भिक्खु वा (२) गामाणुगामं दूइज्जमाणे अंतरासे अरायाणि वा, गणरायाणि वा, जुवरायाणि वा, दोरज्जाणि वा, वेरज्जाणि वा, विरुद्धरज्जाणि वा, सतिलाढे विहाराए संथरमाणेहिं जणवएहिं णो विहारवत्तियाए पवज्जेज्जा गमणाए केवली बूया "आयाण मेयं" ते णं बाला "अयं तेणं" तं चेव जाव णो विहारवत्तियाए पवज्जेज्जा गमणाए तओ संजयामेव गामाणुगामं दूइज्जेज्जा ॥ ९ ॥ से भिक्खू वा,

भावार्थ

पाखाडि फांदे, तांदे, [illegible] ऐसा जान साधु साध्वी को उस रास्ते से जाना नहीं ॥ ८ ॥ जिस मार्ग में कोइ राजा न हो या बहुत राजा बन बैठे होवे, लघुवय का बाल राजा होवे, दो राजा राज्य करते होवे, राजा राजा में वैर होवे, परस्पर युद्ध होता हो, ऐसे मार्ग में जाना नहीं. जाने तो केवलज्ञानी ने इस में पाप का कारण कहा है, क्योंकि वे साधु को चोकसी या चोर ठेराकर अनेक परिषह उपजावेंगे इस लिये ऐसे देश को छोडकर अन्य उपद्रव रहित देश में विहार करना ॥ ९ ॥ ग्रामानुग्राम विहार करते मुनि या

पदार्थ

म० जनपद में णो० नहीं वि० विहार के लिये प० प्रवर्ते ग० जाने को के० केवलीने वू० कहा आ० पापस्थान मे० यह, ते० ये पा० अज्ञानी अ० यह ते० चोर, अ० यह उ० चौकसी, अ० यह त० वहां से आ० आया ति० ऐसा क० करके, तं० उस भि० साधु को अ० आक्रोश करे जा० यावत् उ० उपद्रव करे, व० वस्त्र प० पात्र कं० कंबल पा० रजोहरण अ० छेदे अ० भेदे अ० लूटे प० फाडे अ० अथ भि० साधुने पु० पहिले उपदेशा, प० प्रतिज्ञा जा० यावत णो० नहीं त० तथा प्रकार के वि० विविध तरह के प० देशकी हद पे द० चोर के स्थान जा० यावत वि० विहार व० वृत्ति णो० नहीं प० प्रवर्ते ग० जाना, त० तब सं० साधु

मूल

२ अकालपरिभोईणि सति लाढे विहाराए संथरमाणेहिं जणवएहिं णो विहारवत्तियाए पवज्जेज्जा गमणाए केवली बूया "आयाणमेयं" ते णं बाला "अयं तेणं अयं उवचरए, अयं तओ आगए" त्तिकट्टु तं भिक्खुं अक्कोसेज्ज वा जाव उद्दवेज्ज वा, वत्थं, पडिग्गहं, कंबलं, पायपुच्छणं, अच्छिदेज्ज वा अभिंदेज्ज वा अवहरेज्ज वा परिभवेज्ज वा अह भिक्खूणं पुव्वोवदिट्ठा पतिण्णा जाव जं णो तहप्पगाराणि विरूवरूवाणि पच्चंतियाणि, दस्सुगायतणाणि, जाव विहारवत्तियाए णो पवज्जेज्जा गमणाए, तओ संजया

भावार्थ

अन्य अच्छा देश मिले तो विहार नहीं करना. केवल ज्ञानी ने इस में पापका कारण कहा है. क्यों कि दुष्ट लोकों साधु को देखकर उसे चोर या उस का सहायक या जासुस देखकर अनेक उपद्रव करें, मारें, वस्त्र

शब्दार्थ

गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरे. ॥ ८ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० विहार करता अ० बीचमें अ० विनाराजा का राज्य ग० बहुत राजावन बैठे जु० बाल्यवयका राजा, दो० दोराज्यहो, वे० राज्यमें वैरहो, वि० विरुद्धराज्यहो स० होते स्ता० अच्छा वि० विहार केलिये सं० होते हुवे ज० जनपद, आर्यदेश णो० नहीं वि० विहारकेलिये प० प्रवर्ते ग० जाना के० केवलज्ञानीने बु० फरमाया आ० पाप स्थान से० यह ते० वे बा० मूर्ख अ० यह ते० चोर सं० उस चे० निश्चय णो० नहीं वि० विहार के लिये प० प्रवर्ते ग० जाना त० तब सं० करता गा० ग्रामानु ग्राम दू० विचरे. ॥ ९ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरते अं० बीचमें वि० अटवी दि० बहुत दिनों की तं० वे

मूल

मेव गामाणुगामं दूइज्जेज्जा ॥ ८ ॥ से भिक्खू वा (२) गामाणुगामं दूइज्जमाणे अंतरासे अरायाणि वा, गणरायाणि वा, जुवरायाणि वा, दोरज्जाणि वा, वेरज्जाणि वा, विरुद्धरज्जाणि वा, सति लाढे विहाराए संथरमाणेहिं जणवएहिं णो विहारवत्तियाए पवज्जेज्जा गमणाए केवली बूया "आयाणमेयं" ते णं बाला "अयं तेणं" तं चेव जाव णो विहारवत्तियाए पवज्जेज्जा गमणाए, तओ संजयामेव गामाणुगामं दूइज्जेज्जा ॥ ९ ॥ से भिक्खू वा,

भावार्थ

पाषाणादि कांटे, ताड, वृक्ष, ऐसा जान साधु साध्वी को उस रास्ते से जाना नहीं ॥ ८ ॥ जिस मार्ग में कोइ राजा न हो या बहुत राजा बन बैठे होवे, लघुवय का बाल राजा होवे, दो राजा राज्य करते होवें, सामा राजा में वैर होवे, परस्पर युद्ध होता हो, ऐसे मार्ग में जाना नहीं. जाते तो केवलज्ञानी ने इस में पाप का कारण कहा है. क्योंकि वे साधु को चोपटी या चोर देखकर अनेक परिषह उपजावेंगे इस लिये ऐसे देश को छोडकर अन्य उपद्रव रहित देश में विहार करना ॥ ९ ॥ ग्रामानुग्राम विहार करते मुनि या

पन्दरे ग०गाभिकल्प प०बहे अं०बीचरस्तेमें अ०अल्प अंडे जा०यावत् मं०जाले बं०बहुत ज०जहां म०साधु जा०यावत् उ० आते हैं से० ऐसा ण० जान स० तब सं० साधु गा० ग्रामानुग्राम दू० विहार करे. ॥ ५ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा०ग्रामानुग्राम दू० विचरता, पु० पहिले जु० धूसरे प्रमाण पे० देखता द० देख के त० त्रस प्राणी उ०आगे पा० पग री० रखे, सा० पीछे पा०पग री० रखे, उ०उठाके पा० पग री० रखे ति० तिर्छा क० कर पा० पग री० रखे, स० होनेपर प० रस्ता सं० साधु प० जावे करे णो० नहीं उ०

सूत्र

त्ये पविचुग्गिए अंतरासे मग्गा अप्पंडा जाव संताणगा बहवे जत्थ समण जाव उ-वागमिस्संति य सेवं णच्चा ततो संजयामेव गामाणुगाम दूइज्जेज्जा ॥ ५ ॥ से भि-क्खू वा (२) गामाणुगामं दूइज्जमाणे पुरओ जुगमायं पेहमाणे दहुणं तसे पाणे उदहु पायं रीएज्जा साहटु पायं रीएज्जा उक्खिप्प पायं रीएज्जा, तिरिच्छं वा कहु पादं रीएज्जा सति परक्कमे संजतामेव परक्कमेज्जा णो उज्जुयं गच्छेज्जा तओ संजयामे-

भावार्थ

लगा होवे तो मुनि को यतना पूर्वक विहार करना. ॥ ५ ॥ साधु साध्वी चलते समय आगे चार हाथ भूमि देखकर चले. जिस रास्ते में जीवोत्पत्ति देखने में आवे और अन्य रास्ता होवे तो उस सीधे रास्ते से नहीं जावे. यदि अन्य रास्ता न होवे और उसी रास्ते से जाना पडे तो बहुत सावधानीसे जावे और जीवोंको

पदार्थ — नहीं प० दूसरे को उ० पासगाकर प०ऐसा बृ० कहे आ० आयुष्यमान गा० गृहस्थ ! ए० इस णा० नावमें उ० पानी उ० छिद्रकर आ०आताहै, उ०ऊपरा ऊपरी णा० नाव क० दूबती है ए०इस तरह म०मनको वा० वचनको णो०नहीं पु०आगे क०कर वि०विचरे. अ०अनुत्सुक अ०व्याक्षिप्त चित्त रहित, ए०रागद्वेष रहित आ० आत्मा को वि० प्रवर्ते स० समाधि सहित त० तब सं० साधु णा० नावसे पारहोता उ० पानी को अ०पारहोने री० विचरे. ॥ १९ ॥ पूर्ववत ॥ २० ॥ * * *

सूत्र — परं उवसंकमित्तु एवं बूया आउसंतो गाहावइ एयं ते णावाए उदयं उत्तिंगेणं आ सवति उवरुवरिं वा णावा कज्जलावेति एतप्पगारं मणं वा वायं वा णो पुरओ क ट्टु विहरेज्जा अप्पुस्सुए अबहिल्लेसे एगंतिगएणं अप्पाणं वियोसेज्ज समाहीए तओ संजयामेव णावा संतारिमे उदए अहारियं रीएज्जा ॥ १९ ॥ एयं खलु तस्स भि क्खुस्स भिक्खुणीए वा सामग्गियं जं सव्वट्ठेहिं सहिते सदाजए त्ति बेमि॥२०॥ इति इरिया ज्झयणस्स पढमोद्देसो सम्मत्तो। * *

भावार्थ — समताद्वारा एकान्त प्रदेश में रहकर समाधिस्थ रहना. इस तरह नावसे पार होनेका जलमार्ग में यथाशुद्ध तारे प्रवर्तना ॥ १९ ॥ यह ही साधु साध्वी के आचार की संपूर्णता है कि उन्होंने सब वातों में संभालसे वर्तना ॥ २० ॥ इतिईर्याख्य द्वादश अध्ययन का प्रथम उद्देशा पूर्ण हुवा आगे नावारूढ हो गमन करने की विधि बताते हैं. * * *

शब्दार्थ ए० यह तु० तुम णा० नाव उ० छिद्र हा० हाथसे पा० पांवसे बा० बाहुसे उ० छातीसे उ० पेटसे सी० मस्तकसे का० शरीर से णा० णावाके उलीचनेमे चे० कपडेसे, म० मट्टीसे, कु० कमलपत्रसे, कु० घांससे पि० ढको णो० नहीं मे० उसे प० अच्छा जा० जाने. ॥ १८ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी णा० नावके उ० छिद्रकर उ०पानी आ० आतेको पे०देखकर उ०ऊपरा ऊपरी णा० नाव कु० डूबती पे० देखकर णो०

सूत्र

स्सिचेणण वा, उस्सिचाहि णो सेयं परिण्णं परिजाणेज्जा तुसिणीओ उवेहेज्जा ॥ १७ ॥ से णं परो णावागतो णावागतं वएज्जा आउसंतो समणा एयं तो तुमं णावाए उत्तिंग हत्थेण वा, पाएण वा, बाहुणा वा, ऊरुणा वा, उदरेण वा, सीसेण वा, काएण वा, णावाउस्सिचणेण वा, चेलेण वा, मट्टियाए वा, कुसपत्तएण वा, कुरुविंदेण वा, पिहेहि णो से यं परिण्णं परिजाणेज्जा ॥ १८ ॥ से भिक्खू वा (२) णावाए उत्तिंगणं उदयं आसवमाणं पेहाए उवरुवरि णावं कज्जलावेमाणं पेहाए णो

भावार्थ

नाव में बैठनेवाले अन्य लोक कहे कि अहो आयुष्यमान साधु इस में छिद्र से पानी भरा रहा है, उस को तुम हस्त, पाद, भुजा, उरु, उदर शरीर इत्यादि तुमारा शरीर के किसी अवयवसे, या इस में पानी उलीचने का बरतन पड़ा है इस से या कपडा, घास का पत्ता से शीघ्र ढको. ऐसा सुन साधु को मौन रहना. ॥१८॥ नावारूढ साधु साध्वीको नावा में छिद्रसे पानी भराता हुवा देख तथा नावा डूबती हुइ देख यह बात अन्यको कहना नहीं और स्वतः को भी मन में संकल्प विकल्प करना नहीं. किन्तु शान्तपने से स्वस्वरूप में

पदार्थ

नहीं प० दूसरे को उ०पासजाकर प०ऐसा बू० कहे आ० आयुष्यमान गा० गृहस्थ ! ए० इस णा० नावमें उ० पानी उ० छिद्रकर आ०आगहाँ है, उ०ऊपर ऊपरी णा० नाव क० डूबती है ए०इस तरह म०मनको वा० वचनको णो०नहीं पु०आगे क०कर वि०विचरे, अ०अनुत्सुक अ०बाहिर चित्त रहित, ए०रागद्वेष रहित आ० आत्मा को वि० सर्वसे म० समाधि सहित त० तब सं० साधु णा० नावमें पाणहोता उ० पानी को अ०पारहोते री० विचरे. ॥ १९. ॥ पूर्ववत ॥ २० ॥ * * *

सूत्र

यं उवसंकमित्तु एवं बूया आउसन्तो गाहावइ एयं ते णावाए उदयं उत्तिंगेणं आ सवति उवरुवरि वा णावा कज्जलावेति एतप्पगारं मणं वा वायं वा णो पुरओ क ट्टु विहरेज्जा अप्पुस्सुए अबहिल्लेसे एगंतिगएणं अप्पाणं वियोसेज्ज समाहिए तओ संजयामेव णावा संतारिमे उदए अहारियं रीएज्जा ॥ १९ ॥ एयं खलु तस्स भि क्खुस्स भिक्खुणीए वा सामग्गियं जं सव्वट्ठेहिं सहिते सहाजए ज्जासि त्तिबेमि॥२०॥ इति इरिया ज्झयणस्स पढमोद्देसो सम्मत्तो। * *

भावार्थ

स्वतन्त्रता एकान्त प्रदेश में रहकर समाधिस्थ रहना. इस तरह नावासे पार होनेका जलमार्ग में यथासुंदर रीति प्रवर्तना ॥ १९. ॥ यह ही साधु साध्वी के आचार की संपूर्णता है कि उनोंने सब बाबतों में संभालसे वर्तना ॥ २० ॥ इतिईर्याख्य द्वादश अध्ययन का प्रथम उद्देशा पूर्ण हुवा आगे नावारूढ हो गमन करने की विधि बताते हैं. * * *

सूत्र

... दूसरा णा० नावागत णा० नावागतको व० कहे आ० आयुष्यमान स० साधु! ए० यह
छत्र छ० छत्र जा० यावत् च० चर्म छेदनकर गि० ग्रहण करो. ए० यह तु० तुम वि० अनेक तरहके स०
शस्त्र धा० धारणकरो ए० यह तु० तुम दा० बालक दा० बालिका को प० पीलाओ, णो० नहीं से० वे तं०
उस प० प्रार्थना प० धारे तु० चुप चाप उ० रहे. ॥१॥ से० वे प० दूसरा णा० नावारूढ णा० नावारूढ को व० कहे
ए० यह स० साधु णा० नावमें भं० पत्थरमा भा० भार भूत भ० होते हैं, से० वे बा० हाथ से ग० लेकर

से णं परो णावागओ णावागयं वदेज्जा आउसंतो समणा एयं ता तुमं छत्तगं वा जाय चम्मछेयणगं वा गिण्हाहि एयाणि तुमं विरूवरूवाणि सत्थजायाणि धारेहि एयं ता तुमं दारगं वा, दारिगं वा, पज्जेहि णो सेतं परिण्णं परिजाणेज्जा, तुसिणीओ उवेहेज्जा ॥ १ ॥ से ण परो णावागओ णावागयं वदेज्जा एस णं समणे णावाए भंडभारिए भवति से ण बाहाए गहाय णावाओ उदगंसि पक्खिवह एतप्पगारं णिग्घो-

अर्थ

नावा पर रहे हुए लोकों साधु को कहे कि हे आयुष्यमान् श्रमण ! यह छत्र चर्म छेदने का
हथीआर या अन्य हथीआरों को पकडकर रखलो या बच्चा बच्ची को दुध पीलाओ इत्यादि आज्ञा
का साधु स्वीकार करे नहीं मौन रहे ॥ २ ॥ नावा पर रहे हुवे लोकों साधु को कहे कि यह साधु नावापर
बोज बोजारूप है. इस लिये इस को हाथ से पकड कर पानी में फेंक दो. ऐसा वचन सुनकर वस्त्रधारी मुनि

शब्दार्थ

णा० नावमें उ० पाणीमें प० डाले, ए० इस तरह का णि० कहना सो० सुन णि० अवधारकर गा० य चां० वस्त्रधारी सि० कदाचित खि० शीघ्र ची० वस्त्र उ० ढके णि० मजबूतढके उ० मस्तकको क० बांधे ॥ १ ॥ अ० अथ पु० फिर ए० ऐसा जा० जाने अ० प्याप्त है जिसको कू० क्रूरकर्म स० निश्चय बा० अज्ञानी वा० हाथ ग० पकडकर ना० नावमें उ० पाणीमें प० न्हांखे से० वे पु० पहिलेही व० कहे आ० आयुष्य- मान गा० गृहस्थ ! मा० मत मे० मुझ ए० यहांसे तो० तुम बा० हाथ ग० पकड ना० नावसे उ० पानी में प० न्हांखो स० स्वयं चे० निश्चय अ० मैं णा० नावासे उ० पानी में ओ० उतरुंगा से० वे णं० ऐसा व० बोलते प० दूसरे

सूत्र

मं मोच्चा णिसम्म से य चीवरधारी सिया खिप्पामेव चीवराणि उव्वेढेज्ज वा णिव्वे- ढेज्ज वा उप्फेसं वा करेज्जा ॥ २ ॥ अह पुण एवं जाणेज्जा अभिकंतकूरकम्मा खलु बाला बाहाहिं गहाय नावाओ उदगंसि पक्खिवेज्जा, से पुव्वामेव वएज्जा आउ संतो गाहावती मा मेत्तो बाहाए गहाय णावाओ उदगंसि पक्खिवह सयं चेव णं

भावार्थ

को अपना वस्त्रों निकालकर दूसरा हल्का वस्त्र धारण करना तथा शिरपरभी कपडा बांधना ॥ २ ॥ इतने में वह क्रूरकर्मी साधु को हाथ से पकडकर पानी में धकलने को तैयार होवे तो मुनि को पहिले से ही कह- देना कि अहो आयुष्यमान तुम मुझे पानी में मत डालो. मैं स्वयं ही पानी में उतर जाता हूं. इतना कहने पर भी वह बाहुसे पकडकर साधु को पानी में डाल देवे तो मुनि को उसपर राग, द्वेष होना नहीं ऐसे ही

शब्दार्थ

सं० वे प० दूसरा णा० नावागत णा० नावागतको व० कहे आ० आयुष्यमान स० साधु ! ए० यह तु० तुम छ० छत्र जा० यावत च०चर्म छेदनकर गि०ग्रहण करो. ए० यह तु० तुम वि० अनेक तरहके स० शस्त्र धा० धारणकरो ए० यह तु० तुम दा० बालक दा० बालिका को प० पीलाओ, णो० नहीं से० वे तं० उस प० प्रार्थना प०धारे तु०चुप चाप उ०रहे. ॥१॥ से०वे प०दूसरा णा०नावारूढ णा० नावारूढ को व०कहे ए० यह स० साधु णा० नावमें भं० पत्थरसा भा० भार भूत भ० होते है, से० वे बा० हाथ से ग० लेकर

सूत्र

से णं परो णावागओ णावागयं वदेज्जा आउसंतो समणा एयं ता तुमं छत्तगं वा जाव चम्मछेयणगं वा गिण्हाहि एयाणि तुमं विरूवरूवाणि सत्थजायाणि धारेहि एयं ता तुमं दारगं वा, दारिगं वा, पज्जेहि णो सेतं परिण्णं परिजाणेज्जा, तुसिणीओ उवेहेज्जा ॥ १ ॥ से णं परो णावागओ णावागयं वदेज्जा एस णं समणे णावाए भंडभारिए भवति से णं बाहाए गहाय णावाओ उदगंसि पक्खिवह एतप्पगारं णिग्घो-

भावार्थ

नावा पर रहे हुए लोकों साधु को कहे कि हे आयुष्यमान् श्रमण ! यह छत्र चर्म छेदने का हथीआर या अन्य हथीआरों को पकडकर रक्खो या बच्चा बच्ची को दुध पीलाओ इत्यादि आज्ञा का साधु स्वीकार करे नहीं मौन रहे ॥ १ ॥ नावा पर रहे हुवे लोकों साधु को कहे कि यह साधु नावापर घहोत बोजारूप है. इस लिये इस को हाथ से पकड कर पानी में फेंक दो. ऐसा वचन सुनकर वस्त्रधारी मुनि

शब्दार्थ

से० वे भि० साधु साध्वी उ० पानी में प० वहता हुवा णो० नहीं उ० ऊंचा नीचा होना क० करे मा० मत पु० यह उ० पानी क० कान में अ० आंख में ण० नाक में मु० मुख में प० प्रवेश करे त० तब से० साधु उ० पानी में प० वहता रहे. ॥ ६ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी उ० पानी में प० वहते दो० श्रम पा० जाने खि० शीघ्र उ० उपधि वि० छोडदे वि० ममत्व नहीं करे णो० नहीं चे० निश्चय मा० मूर्छा करे, अ० अथ पु० फिर ए० ऐसा जा० जाने पा० पारहुवा उ० पानी से ती० तीर पा० प्राप्त हुवा, त० तब से० साधु

सूत्र

पवमाणे णो उम्मग्गणिमग्गियं करेज्जा मामेयं उदगं कण्णेसु वा, अच्छीसु वा, णक्कंसि वा, मुहंसि वा परियावज्जेज्जा तओ संजयामेव उदगंसि पवेज्जा ॥ ५ ॥ से भिक्खू वा (२) उदगंसि पवमाणे दोब्बलियं पाउणेज्जा खिप्पामेव उवधिं विगिंचेज्ज वा, विसोहेज्ज वा णो चेव णं सातिज्जेज्जा अह पुण एवं जाणेज्जा पारए सिया उदगाओ तीरं पाउणित्तए तओ संजयामेव उदउल्लेण वा ससिणिद्धेण वा का-

भावार्थ

पर इस साधु तथा आर्या को डुबकी मारना नहीं; कि जिस से कान, आंख, नाक तथा मुख में पानी जाकर मृत्यु न होवे. ॥ ६ ॥ मुनि तथा आर्या पानी में तीरते २ थक जावे तब उपाधि की ममता छोड देना. उस समय वस्त्रों पर मूर्च्छित रहना नहीं. और जब किनारा आजावे तब जबलग

स०सहसाकार से, व० बलात्कार से बा०हाथमे गा०ग्रहणकर, उ०पानी में प०प्रक्षेपे तं०उसवक्त णो०नहीं सु० अच्छामन करे, णो०नहीं दु०दुर्मन णो०नहीं उ०ऊंचा मन णि० करे णो० नहीं ते० उस बा० अज्ञानी की घा०घात व०वध के लिये स०उठे अ० अल्पोत्सुक स०समाधियुक्त त०तब सं०साधु उ०पानी में प०प्रवेशकरे. ॥ ३ ॥ से०वे भि०साधु साध्वी उ पानीमें प०वहता हुवा णो०नहीं ह० हाथसे हाथ, पा० पांवसे, पांव का० शरीरसे शरीर, आ० अडाव मे०वे अ०विना अडावे अ०विना अडाता त०फिर सं०साधु उ०पानीमें प०वहतारहे.।४।

सूत्र

अहं णायानो उदगांसि ओगाहिस्सामि से णेवं वयंतं परो सहसा बलसा बाहाहिं गहाय उदगंसि पक्खिवेज्जा तं णो सुमणे सिया णो दुम्मणे सिया णो उच्चावयंमणं णियच्छेज्जा णो तेसिं बालाणं घाताए वहाए समुट्ठेज्जा अप्पुस्सुए जाव समाहीए तंतो संजयामेव उदगंसि पवज्जेज्जा ॥ ३ ॥ से भिक्खू वा (२) उदगंसि पवमाणे णो हत्थेण हत्थं, पाएण पायं काएण कायं, आसाएज्जा से अणासादए अणासायमाणे तओ संजयामेव उदगंसि पवज्जेज्जा ॥ ४ ॥ से भिक्खू वा (२) उदगंसि

भावार्थ

संकल्प विकल्प करना नहीं. वैसे ही अज्ञान पुरुषों का नाश करने को कदापि ऊठना नहीं शांत भाव से पानी में जाकर पडना ॥ ३ ॥ साधु या आर्या ने पानी में पडता हाथसे हाथ, पाँव से पाँव तथा शरीर का अन्य कोइ भी अवयव से दूसरा अवयव लगाना नहीं यत्ना पूर्वक पानी में पडते रहना ॥ ४ ॥ पानी में

शब्दार्थ/ से० वे भिक्षुक पानी ...

शब्दार्थ
सं० वे भि० साधु साध्वी उ० पानी में प० वहता हुवा णो० नहीं उ० ऊंचा नीचा होना क० करे मा० मत ए० यह उ० पानी क० कानमें अ० आंखमें णा० नाक में मु० मुखमें प० प्रवेशकरे त० तब सं० साधु उ० पानी में प० वहता रहे. ॥ ४ ॥ सं० वे भि० साधु साध्वी उ० पानी में प० वहते हो० अथ पा० जावे खि० शीघ्र उ० उपधि वि० छोड़दे वि० ममत्व नहीं करे णो० नहीं च० निश्चय मा० मूर्च्छा करे, अ० अथ पु० फिर ए० ऐसा जा० जाने पा० पारहुवा उ० पानी में तीo तीर पा० प्राप्त हुवा, त० तब सं० साधु

सूत्र
पवमाणे णो उम्मग्गणिमग्गियं करेज्जा मामेयं उदगं कण्णेसु वा, अच्छीसु वा, णक्कंसि वा, मुहंसि वा परियावज्जेज्जा तओ संजयामेव उदगंसि पवेज्जा ॥ ५ ॥ से भिक्खू वा (२) उदगंसि पवमाणे दोब्बलियं पाउणेज्जा खिप्पामेव उवधिं विगिंचेज्ज वा, विसोहेज्ज वा णो चेव णं सातिज्जेज्जा अह पुण एवं जाणेज्जा पारए सिया उदगाओ तीरं पाउणित्तए तओ संजयामेव उदउल्लेण वा ससिणिद्धेण वा का-

भावार्थ
पंद हुवे साधु तथा आर्या को डुबकी मारना नहीं; कि जिस से कान, आंख, नाक तथा मुख में पानी जाकर मृत्यु न होवे. ॥ ४ ॥ मुनि तथा आर्या पानी में तीरते २ थक जावे तब उपाधि की ममता छोड भारी वस्त्रको छोडदेना. उस समय वस्त्रों पर मूर्च्छित रहना नहीं. और जब किनारा आजावे तब जबतक

शब्दार्थ

उ० पानी से भींजा स० आला का० शरीरसे उ० पानी के कीनारे चिं० रहैं. ॥ ६ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी उ० पानीसे उ० भींजा स० चीगटा का० शरीरको णो० नहीं आ० मसले प० पूंजे, सं० पूंछे णि० विशेष पूंछे, उ० घसे उ० विशेषघसे आ० आतापदे प० विशेष तपावे, अ० अथ पु० फिर ए० ऐसा जाने वि० सूकगया मे० मेरा का० शरीर वो० विच्छेदगया सि० भिनापना, त० तैसा का० शरीर को आ० मसले जा० यावत् प० विशेष तपावे त० फिर सं० साधु गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरे. ॥ ७ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम फिरते णो० नहीं प० दूसरे साथ प० वार्ता करता २

सूत्र

एण उदगतीरे चिट्ठेज्जा ॥ ६ ॥ से भिक्खू वा (२) उदउल्लं वा ससिणिद्धं वा कायं णो आमज्जेज्ज वा पमज्जेज्ज वा संलिहेज्ज वा णिल्लेहेज्ज वा, उव्वलेज्ज वा, उवट्टेज्ज वा, आयावेज्ज वा, पयावेज्ज वा अह पुण एवं जाणेज्जा विगतोदए मे काए वोच्छिण्णसिणेहे तहप्पगारं कायं आमज्जेज्ज वा जाव पयावेज्ज वा तओ संजयामेव गामाणुगामं दूइज्जेज्जा ॥ ७ ॥ से भिक्खू वा (२) गामाणुगामं दूइज्जमाणे णो

भावार्थ

शरीर भीना रहे वहांलग किनारे पर बैठा रहना ॥ ६ ॥ पानी से भींजा हुवा शरीर को साधु, साध्वी ने दाबना नहीं, घसना नहीं, वैसे ही तपाना नहीं (किन्तु पानी को गिरने देना.) जब शरीर की भीनाश [illegible] मसले, और तपावे फिर बाद में विहार करे. ॥ ७ ॥ साधु साध्वी को मार्ग

[illegible]

सूत्र

[illegible] गामाणुगामं दूइज्जेज्जा नओ संजयामेव गामाणुगामं दूइ-
[illegible] ॥ ८ ॥ से भिक्खू वा (२) गामाणुगामं दूइज्जमाणे अंतरा [illegible]
[illegible] से पुव्वामेव [illegible] पम-
[illegible] नओ संजयामेव [illegible]
[illegible] ॥ ९ ॥ से भिक्खू वा (२) [illegible]
[illegible]

भावार्थ

[illegible]

णो॰ नहीं ह॰ हाथसे हाथ पा॰ पांवसे पांव, का॰ कायासे काया आ॰ लगावे, से॰ वे अ॰ बिना लगाये अ॰ बिना लगाता हुवा त॰ तब सं॰ साधु ज॰ जंघा प्रमाण उ॰ पानी में री॰ जावे. ॥ १० ॥ से॰ वे भि॰ साधु साध्वी जं॰ जंघा प्रमाण उ॰ पानीमें अ॰ यत्नासे री॰ उतरते णो॰ नहीं सा॰ साता केलिये णो॰ नहीं प॰ दाह निवारने म॰ महा म॰ ऊंडा उ॰ पानी में का॰ शरीर वि॰ भींजोवे, त॰ तब सं॰ साधु जं॰ जंघा प्रमाण उ॰ पानी में अ॰ यथोक्तरीति री॰ चले, अ॰ अथ पु॰ फिर ए॰ ऐसा जा॰ जाने पा॰ पार सि॰ कदाचित उ॰ पानी के ती॰ तीर पा॰ प्राप्त हुवा त॰ तब सं॰ साधु उ॰ पानी से भींजा

सूत्र

मे उदगे अहारियं रीयमाणे णो हत्थेण वा हत्थं, पादेण वा पादं, काएण वा कायं आसाएज्जा से अणासादए अणासादमाणे, तओ संजयामेव जंघासंतारिमे उदए अहारियं रीएज्जा ॥ १० ॥ से भिक्खू वा (२) जंघासंतारिमे उदए अहारियं रीएमाणे णो सायावडियाए णो परिदाहवडियाए, महति, महालयंसि उदगंसि कायं वित्तोसेज्जा तओ संजयामेव जंघासंतारिमे उदए अहारियं रीएज्जा. अह पुण एवं जाणेज्जा पारए सिया उदगाओ तीरं पाउणित्तए तओ संजयामेव उदउल्लेण वा ससिणिद्धेण

भावार्थ

लगाना नहीं ॥ १० ॥ साधु या आर्या को जंघा प्रमाण पानी पसार करते शीतलताके लिये या दाह मिटाने लिये जंघा से अधिक शरीर को पानी में भींजोना नहीं. और किनारे आये बाद जबलग शरीर भींजा

शब्दार्थ

स० अच्छा का० शरीर उ० पानीसे ती० किनारे चि० ठहरे. ॥ ११ ॥ से० वह भि० साधु
सा० आला का० शरीर उ० पानीसे भीगा हुआ का० शरीर स० स्निग्ध आला का० शरीर णो० नहीं आ० मसले प० विशेष मसले
साध्वी उ० पानीसे भीगा का० शरीर स० स्निग्ध आला का० शरीर णो० नहीं आ० मसले प० विशेष मसले
अ० अब पु० फिर ए० ऐसा जा० जाने वि० सूखगया शरीर छि० स्नेहरहित छिन्नापना, त०
तैसे का० शरीर को आ० मसले प० विशेष मसले त० फिर सं० साधु गा० ग्रामानुग्राम दू० विहार करे
॥ १२ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरते णो० नहीं म० कीचडवाले
पा० पांव ह० हरीकाय छि० छेद २ करके वि० एकत्र कर २ वि० विदार २ कर उ० उन्मार्ग

सूत्र

वा काएण उदगतीरे चिट्ठेज्जा ॥ ११ ॥ से भिक्खू वा (२) उदउल्लं वा का-
यं ससिणिद्धं वा कायं णो आमज्जेज्ज वा, पमज्जेज्ज वा, अह पुण एवं जाणेज्जा विग
ओदए मे काए छिण्णसिणेहे तहप्पगारं कायं आमज्जेज्ज वा जाव पयावेज्ज वा तओ
संजयामेव गामाणुगामं दूइज्जेज्जा ॥ १२ ॥ से भिक्खू वा (२) गामाणुगामं दू-
इज्जमाणे णो मट्टियागएहिं पाएहिं हरियाणि छिंदिय २ विकुज्जिय २ विफालिय २

भावार्थ

रहे यहां तक वहां ही खड़ा रहना ॥ ११ ॥ उक्त प्रकारसे नदी के किनारे रह करके पानी से भीगे शरीर को
पूंछे नहीं, मसले नहीं जब शरीर सूखजाय बाद में मसले, साफ करे और ग्रामानुग्राम विहार करे ॥ १२ ॥
साधु साध्वी के पांव ग्राम चलते कीचड से लगगये होवें और उन्हें साफ करने के लिये उन्मार्ग जाकर

वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० विहार करते अं०बीचमे ज०अनाजके बजार, स०गाडीयों, र० रथ स० स्वचक्री प० परचक्री से० सेना, त्रिं० विविध प्रकारके सं० सेनाके पडाव पे० देखकर स० होते प० रस्ता मं० साधु णो० नहीं उ० अच्छे ग० जावे. ॥ १८ ॥ से० वे प० दूसरा से० सेनाका व० कहे आ० आयुष्यमंतो ए० यह म० साधु से०सेनाका अ चौकस क०करता है से० इसलिये बा०हाथ पकड आ० निकालो, से० वे प० दूसरे बा० हाथ पकड आ० निकाले तं० सब णो०नहीं सु० सुमन सि० कदाचित जा०

सूत्र

क्खु वा [२] गामाणुगामं दूइज्जमाणे अंतरासे जवसाणि वा, सगडाणि वा, रहाणि वा सचक्काणि वा परचक्काणि वा सेणं वा विरूवरूवं संणिविट्ठं पेहाए सति परक्कमे संजयामेव णो उज्जुयं गच्छेज्जा ॥ १५ ॥ से णं परो सेणागतो वदेज्जा आउसंतो एसणं समणो सेणाए अभिनिवारियं करेइ से णं बाहाए गहाय आगंसह सेणं परो बाहाहिं गहाय आगंसज्जा तं णो सुमणे सिया जाव समाहीए तओ संजयामेव

भावार्थ

साधु साध्वी को ग्रामानुग्राम फिरते बीच में धान्य की बजार, रथ, गाडी, लश्कर व अलग २ सेना का पडाव होवे और अन्य अच्छा रास्ता होवे तो उस रास्ते मे जाना नहीं ॥ १८ ॥ कदाचित् अन्य रास्ता न मिले और उसी रास्ता से जाने का होवे, ऐसे समय सैन्य का कोई आदमी ऐसा बोले कि अहो आयुष्यमान सैनिकों ! यह साधु अपना सैन्य की भ्याल करने के लिये गुप्त भेद प्रनकर के आया है इस लिये

शब्दार्थ

भावक स० समाधियुक्त न० सब सं० साधुको गा० ग्रामानुग्राम दू० फिरना ॥ १९ ॥ सं० वे० भि० साधु साध्वी का अं० रस्तामें पा० पंथीजन उ० आतादे तं० वे पा० पंथीजन ए० ऐसा कहे अ० आयुष्यमान स० श्रमण! कं० कैसाक ए० इसगाम रा० राजधानी क० कितनेक ए० यहाँ आ० अश्व ह० हाथी गा० भिक्षाचरी म० मनुष्य प० रहते हैं. ! सं० वे च० बहुत भ० भोजन ब० बहुत उ० पानी ब० बहुत म० मनुष्य ब० बहुत धनाज ? सं० वे अ० अल्प उ० पानी अ० अल्प स० आहार अ० अल्प मनुष्य अ० थोडा

सूत्र

गामाणुगामं दूइज्जेज्जा ॥ २९ ॥ से भिक्खू वा (२) अंतरासे पाडिपहिया उवागच्छेज्जा ते णं पाडिपहिया एवं वदेज्जा आउसंतो समणा केवतिए एस गामे रायहाणी वा ? केवइया एत्थ आसा, हत्थी, गामपिंडोलगा मणुस्सा परिवसंति से बहुभत्ते, बहुउदए, बहुजणे, बहुजवसे ? से अप्पुदए, अप्पभत्ते, अप्पजणे, अप्पजवसे? एयप्पगाराणि पसिणाणि पुट्ठो णो आइक्खेज्जा एतप्पगाराणि पसिणाणि णो पु-

भावार्थ

उन को पकड मारकर निकाल दो. यदी पकड मारने लगजावें तो साधु को समता धारन करना. ॥ १९ ॥ साधु साध्वी को गमन करते कोइ पथिक जन पूछे कि, हे आयुष्यमान् श्रमण ! यह गांव कितना बडा है ? यहां कितने घोडे, हाथी, मनुष्य रहते हैं ? ऐसा प्रश्नों सुनकर कुछ भी उत्तर देवे नहीं वैसे ही मुनि

शब्दार्थ क० कहां से ए० आतेहो ? क० कहां ग० जातेहो ? जे० जो त० तहां आ० आचार्य उ० उपाध्याय से० वे भा० पांछे वि० उत्तरदे आ० आचार्य उ० उपाध्याय भा० बोलते वि० उत्तर देते णो० नहीं अं० बीचमें भा० वात क० करे म० तब सं० साधु अ० यों रा० वडोंके साथ दू० विचरे. ॥ ४ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी अ० वडेसाधुके साथ गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरते णो० नहीं अ० वडे साधुके ह० हाथसे हाथ जा० यावत अ० असातना नहीं करता त० तब सं० साधु अ० वडे साधु साथ गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरे. ॥ ५ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी अ० वडेसाधु साथ दू० चलते अं० बीचमें पा० पंथीजन उ० आवे

सूत्र यरिए उवज्झाए वा से भासेज्जा वा वियागरेज्जा वा आयरियोवज्झायस्स भासमाणस्स वा वियागरेमाणस्स वा णो अंतराभासं करेज्जा तओ संजयामेव अहारातिणियाए दूइज्जेज्जा ।४।से भिक्खू वा(२)अहारातिणियं गामाणुगामं दूइज्जमाणे णो अहारातिणियस्स हत्थेणहत्थं जाव अणासायमाणे तते संजयामेव अहारातिणियं गामाणुगामं दूइज्जेज्जा॥५॥ से भि-

भावार्थ प्रश्नों का उत्तर आचार्यादि देवे. साधु को बीच में बोलना नहीं किन्तु विनय पूर्वक बडे के साथ रहना ॥ ४ ॥ वैसे ही बडे साधु की साथ विहार करते उन को हाथ पाँव लगाना नहीं ॥ ५ ॥ बडे साधु की साथ

शब्दार्थ

ते० वह पा० पंथीक ए० ऐसा व० कहे आ० आयुष्यमान स० साधु ! के० कौन तु० तुम ? क० कहांसे ए० आये ? क० कहां ग० जाते हो ? जे० जो त० तहां स० सबसे बडे से० वे भा० बोले वा० उत्तर दे अ० बडे साधु भा० बोलते वि० उत्तर देते णो० नहीं अं० बीचमें बोलना भा० बोले त० तब स० साधु गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरे. ॥ ६ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० चलते अं० बीच पा० पंथिक

सूत्र

क्खू वा (२) अहारानिणियं दूइज्जमाणे अंतरासे पाडिपहिया उवागच्छेज्जा तेणं पाडिपहिया एवं वदेज्जा "आउसंतो समणा के तुब्भे? कओ वा एह? कहिं वा गच्छिहिह?" जे तत्थ सव्वरातिणिए से भासेज्जा वा वागरेज्जा वा अहारातिणियस्स भासमाणस्स वियागरमाणस्स वा णो अंतराभासं भासेज्जा ततो संजयामेव गामाणुगामं दूइज्जेज्जा ॥ ६ ॥ से भिक्खू वा [२] गामाणुगामं दूइज्जमाणे अंतरासे पाडिप-

भावार्थ

विहार करते कोई प्रश्न पूछे तो इस का उत्तर बडे साधु ही देवे दूसरे को बीच में बोलना नहीं ॥ ६ ॥ रस्ते चलते कोई पथिक पूछे कि अहो आयुष्यमान् साधु ! तुमने इस रस्ते से मनुष्य, बैल, भैंसा, पक्षी, सर्प, मच्छ इत्यादि देखे होवे तो कहो या बतावो. उस समय साधु को मौन रहना. * या ज्ञान होने पर

* "जाणं वा णो जाणंति वएज्जा" इस का कितनेक यह अर्थ करते हैं कि जानता हुवा मैं नहीं जानता हूं ऐसा बोले. इस अर्थ में मृषावाद दोष लगता है और तीर्थंकर कदापि मृषा बोलने का उपदेश

आ० आवे ते० वे पा० पंथिक ए०ऐसा व०कहे, आ०आयुष्यमान स०साधु। अ०संभावना ए० यहांसे प० स्तेमें पा० देखा, त० वह ज० यथा—म० मनुष्य, गो० बैल, म० भैंसा, प० पशु प० पक्षी, सि० सर्प सी० सिंह, ज० जलचर आ० कहो दं० दर्शावो, तं० उसे णो० नहीं आ० कहे. णो० नहीं दं० दर्शावे, णो० नहीं ते० उस प० परिज्ञा प० जाने तु० मौनस्थ उ० रहे, जा० ज्ञान णो० हमको जा० ज्ञान व० कहे त० तत्र सं० साधु गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरे ॥ ७ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० फिरते अं० बीचमें प० पंथिक आ०

मूल

हिया आगच्छेज्जा ते णं पाडिपहिया एवं वदेज्जा, आउसंतो समणा अवियाइं एत्तो पडिपहे पासह तंजहा मणुस्सं वा, गोणं वा, महिसं वा, पसुं वा, पक्खि वा, सिरीसिवं वा, सीहं वा, जलयरं वा, आइक्खह दंसेह तं णो आइक्खेज्जा, णो दंसेज्जा, णो तंसि तं परिण्णं परिजाणेज्जा तुसिणीओ उवेहेज्जा, जाणं वा णो जाणंति वएज्जा. ततो सं जयामेव गामाणुगाम दूइज्जेज्जा ॥ ७ ॥ से भिक्खू वा (२) गामाणुगामं दूइज्जे-

भावार्थ

मैं जानता हूं ऐसा बोलना. इस तरह सर्व जीवों की रक्षा करता हुवा ग्रामानुग्राम विचरना. ॥ ७ ॥

करे नहीं इस मे कितनेक टव्वावाले "जानता हुवा मैं जानता हूं ऐसा नहीं बोले" इस में भाषा से अर्थ नहीं निकलता है क्यों कि ऐसा होता तो "जाणं वा जाणंति णो वएज्जा" ऐसा पाठ होना चाहिये. इस में भी भाषा दोष रहता है और जिनभाषित सूत्रों में भाषा दोष कदापि नहीं होता है. यदि यहां पर "णो" का

शब्दार्थ आ० ते० वे पा० पंथीक ए० ऐसा व० बोले आ० आयुष्मान स० साधु ! अ० अपि ए० यहां प० रस्तेमें पा० देखा. उ० पानी प्रसूत कं० कंद मू० मूल त० त्वचा प० पत्र पु० फूल फ० फल बी० बीज ह० हरी उ० पानी सं० नत्थावादि अ० अग्नि सं० जल्ती से० शेष तं० वेगेहि ता० यावत

सूत्र माणं अंतरासि पाडिपहिया आगच्छेज्जा ते णं पाडिपहिया एवं वदेज्जा आउसंतो स मणा अवियाइं एत्तो पडिपहे पासह उदगपसूयाणि कंदाणि वा, मूलाणि वा तया णि वा, पत्ताणि वा, पुप्फाणि वा, फलाणि वा, बीयाणि वा, हरिताणि वा, उदगं वा,

भावार्थ इस तरह ग्रामानुग्राम विचरते मुनि तथा आर्या को कोइ पूछे कि आयुष्मान श्रमण, तुम ने इस रास्ते में कंद, मूल, पान, फूल, फल, बीज, वनस्पति, पानी का समूह और अग्नि देखी होवे तो कहो और बतावो.

अर्थ "हम को" किया जाय तो कोइ दोषोत्पत्ति नहीं आती है. और अस्मद् शब्द का षष्ठिका अनेक वचन का रूप " णो " होता है. " णे, णो, मज्झ, अम्ह, अम्हं, अम्हे, अम्हो, अम्हाण, ममाण, महाण, मज्झाण, आमा " इति हेम व्याकरण अष्टमाध्याय ॥ पा० ३ ॥ सूत्र ११४ ॥ इस का अर्थ यह हो सकता है कि " ज्ञान होवे तो हम को ज्ञान है ऐसा बोले " अर्थात् कोइ परिषद जिसमें समर्थ मुनि के लिये ऐसा वाक्य होवे तो अयोग्य कहा जाय नहीं. इस अर्थ में भाषा दोष नहीं है और तीर्थंकर का वचन में बाधा भी नहीं आती है, ऐसे ही अर्थ भी योग्य होता है, तत्त्व केवलिगम्य ॥

सूत्र

माणाइय अगणिं वा, संणिक्खित्तं सेसं तं चेव से आइक्खह जाव दूइज्जेज्जा ॥८॥ से भिक्खू वा (२) गामाणुगामं दूइज्जमाणे अंतरासे पाडिपहिया उवागच्छेज्जा ते णं पाडिपहिया एवं वदेज्जा आउसंतो ! समणा अवियाइं एत्तो पडिपहे पासह ज वसाणि वा जाव सेणं वा विरूवरूवं संणिविट्ठं से आइक्खह जाव दूइज्जेज्जा ॥ ९॥

शब्दार्थ

दू० विचरे ॥ ८ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० फिरते अं० बीचमें पा० पंथिक उ० आवे ते० वे प० पंथिक ए० ऐसा व० कहे आ० आयुष्यमान स० साधु अ० अपि प० रस्ते में पा० देखा ज० अनाज जा० यावत् से० सेना वि० विविध प्रकार सं० सन्निविष्ट से० वे आ० कहो जा० यावत् दू० विचरे ॥ ९ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० फिरते अं० बीचमें प० पंथिक जा०

भावार्थ

तब उन को कुच्छ भी कहना नहीं. और इन के कोइ भी प्रश्न का स्वीकार करना नहीं परंतु मौन रहना, या ज्ञान होवे तो " हम को ज्ञान है " (परंतु बताना हमारा धर्म नहीं है) ऐसा बोले. इस तरह सर्व जीवों की रक्षा करता हुवा ग्रामानुग्राम विचरे ॥ ८ ॥ ग्रामानुग्राम विचरते साधु को कोइ पथिक ऐसा पूछे कि. आयुष्यमान् श्रमण, इस मार्ग में तुम धान्य या सेना का पडाव देखते हो तो कहो और बताओ ऐसे समय में भी साधु को मौन रहना. या ज्ञान होने पर मुझे ज्ञान है, परंतु बता नहीं सकता ऐसा बोले ॥ ९ ॥

शब्दार्थ

यावत अ० आयुष्यमान स० साधु के० कौनसा ए० यहांसे गा० गाम जा० यावत् रा० राजधानी से० वे आ० कहो जा० यावत दू० विचरे. ॥ १० ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरते हुवे अं० विषमे पा० पंथिक जा० यावत् आ० आयुष्यमान स० श्रमण के० कितना ए० यहांसे गा० ग्रामका, ण० नगरका जा० यावत् रा० राजधानी का म० मार्ग से० उसे आ० कहो त० तैसेही जा० यावत दू० विचरे. ॥ ११ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० फिरते से० वे

सूत्र

से भिक्खू वा (२) गामाणुगामं दूइज्जमाणे अंतरासे पाडिपहिया जाव आउसं-तो समणा केवतिए एत्तो गामे वा जाव रायहाणी वा से आइक्खह जाव दूइज्जे ज्जा ॥ १० ॥ से भिक्खू वा [२] गामाणुगामं दूइज्जमाणे अंतरासे पाडिपहि-या जाव आउसंतो समणा केवतिए एत्तो गामस्स वा णगरस्स वा जाव रायहाणी-ए वा मग्गे से आइक्खह तहेव जाव दूइज्जेज्जा ॥ ११ ॥ से भिक्खू वा [२]

भावार्थ

ग्रामानुग्राम विचरनेवाले साधु साध्वी को कोइ ऐसा पूछे कि हे आयुष्यमान् श्रमण यहां से कोनसा ग्राम या कोनसा शहेर आवेगा. तब भी मुनि को पूर्वोक्त रीत्या मौन रखना ॥ १० ॥ और भी मुनि को कोइ पन्थिक ऐसा पूछे कि:—" आयुष्यमान् श्रमण ! यहां से ग्राम या नगर का कोनसा मार्ग है सो बतावो " तो मुनि को मौन रखना ॥ ११ ॥ (१) मुनि या आर्या को ग्रामानुग्राम विहार करते मार्ग में विकाल

(१) यह सूत्र जिन कल्पि साधु के लिये है ऐसा टीकाकार लिखते हैं.

शब्दार्थ दू० विचरे ॥ ८ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० फिरते अं० बीचमें पा० पंथिक उ० आवे तं० वे प० पंथिक ए० ऐसा व० कहे आ० आयुष्यमान स० साधु अ० अपि प० रस्ते में पा० देखा म० अनाज जा० यावत् से० सेना वि० विविध प्रकार सं० मनीविष्ट से० वे आ० कहो जा० यावत् दू० विचरे ॥ ९ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० फिरते अं० बीचमें प० पंथिक जा०

मूल साणिहियं अगणिं वा, संणिविखत्तं सेसं तं चेव से आइक्खह जाव दूइज्जेज्जा ॥८॥ से भिक्खू वा (२) गामाणुगामं दूइज्जमाणे अंतरासे पाडिपहिया उवागच्छेज्जा ते ण पाडिपहिया एवं वदेज्जा आउसंतो ! समणा अवियाइं एत्तो पडिपहे पासह ज वसाणि वा जाव सेणं वा विरूवरूवं संणिविट्ठं से आइक्खह जाव दूइज्जेज्जा ॥ ९॥

भावार्थ तब उन को कुच्छ भी कहना नहीं. और इन के कोइ भी प्रश्न का स्वीकार करना नहीं परंतु मौन रहना, या ज्ञान होवे तो " हम को ज्ञान है " (परंतु बताना हमारा धर्म नहीं है) ऐसा बोले. इस तरह सर्व जीवों की रक्षा करता हुवा ग्रामानुग्राम विचरे ॥ ८ ॥ ग्रामानुग्राम विचरते साधु को कोइ पंथिक ऐसा पूछे कि. आयुष्यमान् श्रमण, इस मार्ग में तुम धान्य या सेना का पडाव देखते हो तो कहो और बतावो ऐसे समय में भी साधु को मौन रहना. या ज्ञान होने पर मुझे ज्ञान है, परंतु बता नहीं सकता ऐसा बोले ॥ ९ ॥

शब्दार्थ यावत् आ० आयुष्मान् स० साधु के० कौनसा गु० यहांसे गा० ग्राम आ० यावत् रा० राजधानी है० है आ० यहांसे आ० यावत् दू० विहार. ॥ १० ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरते हुवे अं० बिचमें पा० पथिक आ० यावत् आ० आयुष्मान् स० श्रमण के० कितना गु० यहांसे गा० ग्राम, न० नगर आ० यावत् रा० राजधानी का म० मार्ग है० है आ० यहांसे आ० यावत् दू० विहार. ॥ ११ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरते से० वे

सूत्र से भिक्खू वा (२) गामाणुगामं दूइज्जमाणे अंतरासे पाडिपहिया जाव आउसंतो समणा केवतिए एस गामे वा जाव रायहाणी वा से आइक्खह जाव दूइज्जेज्जा ॥ १० ॥ से भिक्खू वा [२] गामाणुगामं दूइज्जमाणे अंतरासे पाडिपहिया जाव आउसंतो समणा केवतिए एस गामस्स वा णगरस्स वा जाव रायहाणीए वा मग्गे से आइक्खह तहेव जाव दूइज्जेज्जा ॥ ११ ॥ से भिक्खू वा [३]

भावार्थ ग्रामानुग्राम विचरनेवाले साधु साध्वी को कोइ ऐसा पूछे कि हे आयुष्मान श्रमण यहां से कौनसा ग्राम या कौनसा शहर आवेगा. तब भी मुनि को पूर्वोक्त रीत्या मौन रहना ॥ १० ॥ और भी मुनि को कोइ पथिक ऐसा पूछे कि—" आयुष्मान् श्रमण ! यहां से ग्राम या नगर का कौनसा मार्ग है सो बताओ " तो मुनि को मौन रहना ॥ ११ ॥ (१) मुनि या आर्या को ग्रामानुग्राम विहार करते मार्ग में विकराल

(१) यह सूत्र जिन कल्पि साधु के लिये है ऐसा टीकाकार लिखते हैं.

शब्दार्थ अं बीचमें गो० बैल वि० विकाल प० रस्तेमें पे० देख, जा० यावत् चि० चीता का बचा वि० विकाल प० रस्तेमें पे० देखकर णो० नहीं ते० उससे भी० डरके उ० उन्मार्ग ग० जावे, णो० नहीं म० मार्गसे अन्य मार्ग सं० जावे णो० नहीं ग० गहन बनमें दु० दुर्गमें अ० प्रवेशकरे, णो० नहीं रु० वृक्षपर दु० चढे णो० नहीं म० बडा म० बहुत ऊंडा उ० पानी में का० शरीर वि० प्रक्षेपे णो० नहीं वा० वाड वा० या स० शरण स० साथ कं० वांछे, अ० अनुत्सुक, जा० यावत् स० समाधिसे त० तत्र सं० साधु गा० ग्रामानुग्राम

सूत्र गामाणुगामं दूइज्जमाणे अंतरासे गोणं वियालं पडिपहे पेहाए जाव चिताचेल्लडं वियालं पडिपहे पेहाए णो तेसिं भीतो उम्मग्गेणं गच्छेज्जा णो मग्गाओ मग्गं संकमेज्जा णो गहणं वा दुग्गं वा अणुपविसेज्जा णो रुक्खंसि दुरुहेज्जा णो महति महालयंसि उदयंसि कायं विउसेज्जा णो वाडं वा, सरणं वा, सत्थं वा, कंखेज्जा अप्पुसुए जाव समाहीए तओ संजयामेव गामाणुगामं दूइज्जेज्जा ॥ १ ॥ से भिक्खू वा (५) गामाणुगामं दूइज्जमाणे अंतरासे विहंसिया से जं पुण विहं जाणेज्जा इमंसि खलु विहंसि बहवे आमोसगा उवकरणपडियाए संपिंडियागच्छेज्जा

भावार्थ बैल, या सिंह को खडा देख, उन से डरकर उन्मार्ग जाना नहीं, वृक्षपर चढना नहीं, पानी में प्रवेश करना नहीं. वाड वगैरह का आश्रय या साथको वांच्छना नहीं. किन्तु धैर्यतासे समाधि पूर्वक ग्रामानुग्राम विचरना.

शब्दार्थ — दू० विचरे. ॥ १२ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० फिरते अं० बीचमें वि० रस्तेमें वि० कदाचित से० वे आ० जो वि० मार्ग जा० जाणे इ० इस स० निश्चय वि० रस्तेमें ब० बहुत आ० लुटारे उ० उपकरण केलिये सं० एकत्रहो जाते हैं, णो० नहीं ते० उनसे भी० डरकर उ० उन्मार्ग से० निश्चय जा० यावत् सं० समाधिसे त० तब सं० साधु गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरे. ॥ १३ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० फिरता अं० बीच रस्तेमें आ० लुटारे सं० एकत्रहो ग० आवे ते० उसको

सूत्र — णो तेसिं भिओ उम्मग्गं चेव जाव समाहीए तनो संजयामेव गामाणुगामं दूइज्जेज्जा ॥१२॥ से भिक्खू वा (२)गामाणुगामं दूइज्जमाणे अंतरासे विहं सिया सेज्जं पुण विहं जाणेज्जा इमंसि खलु विहंसि बहवे आमोसगा उवकरणपडियाए संपिंडियागच्छेज्जा णो तेसिं भिओ उम्मग्गं चेव जाव समाहीएततोसंजयामेव गामाणुगामंदूइज्जेज्जा ॥ १३ ॥ से भिक्खू वा (२)गामाणुगामं दूइज्जमाणे अंतरासे आमोसगा संपिंडिया गच्छेज्जा ते णं आमो

भावार्थ — ॥ १२ ॥ (१) साधु साध्वी को ग्रामानुगाम फिरते दीर्घ पंथ उल्लंघने का आजावे और ऐसा मालूम पडे कि इसमार्गमें बहुत लुटारु एकत्रित होकर वस्त्र लूटनेको आनेवाले हैं तो भी उनसे डरकरके उन्मार्गमें नजावे या सत्य मार्ग को छोडकर अन्य मार्ग में जाना नहीं किन्तु समाधि भाव से चले जाना. ॥ १३ ॥ साधु साध्वी को मार्ग में लुटारे मिले और कहे कि अरे साधु यह वस्त्र, पात्र, कंबल, रजोहरण हमारे पास रखकर इस

(१) यह सूत्र जिन कल्पि साधु के लिये है.

शब्दार्थ अ० पीछे णो० नहीं वि० विकाल प० रस्तेमें पे० देख, जा० यावत् चि० चीता का बचा वि० विकाल प० रस्तेमें पे० देखकर णो० नहीं ते० उससे भी० डरके उ० उन्मार्ग ग० जावे, णो० नहीं म० मार्गसे अन्य मार्ग सं० जावे णो० नहीं ग० गहन वनमें दु० दुर्गमें अ० प्रवेशकरे, णो० नहीं रु० वृक्षपर दु० चढे णो० नहीं म० बडा म० बहुत उदा उ० पानी में का० शरीर वि० प्रक्षेपे णो० नहीं वा० वाड वा० या स० शरण स० साथ कं० वांछे. अ० अनुत्सुक, जा० यावत स० समाधिसे त० तत्र सं० साधु गा० ग्रामानुग्राम

सूत्र गामाणुगामं दूइज्जमाणे अंतरासे गोणं वियालं पडिपहे पेहाए जाव चित्ताचेल्लडं वियालं पडिपहे पेहाए णो तेसिं भीओ उम्मग्गेणं गच्छेज्जा णो मग्गाओ मग्गं संकमेज्जा णो गहणं वा दुग्गं वा अणुपविसेज्जा णो रुक्खंसि दुरुहेज्जा णो महति महालयंसि उदयंसि कायं विउसेज्जा णो वाडं वा, सरणं वा, सत्थं वा, कंखेज्जा अप्पुस्सुए जाव समाहिए तओ संजयामेव गामाणुगामं दूइज्जेज्जा ॥ १ ॥ से भिक्खू वा (५) गामाणुगामं दूइज्जमाणे अंतरासे विहं सिया से ज्जं पुण विहं जाणेज्जा इमंसि खलु विहंसि बहवे आमोसगा उवकरणपडियाए संपिंडियागच्छेज्जा

भावार्थ देख, या चित्ते को बचा देख, उन से डरकर उन्मार्ग जाना नहीं, वृक्षपर चढना नहीं, पानी में प्रवेश करना नहीं. वाड वगैरह का आश्रय या साथको वांछना नहीं. किन्तु धैर्यतासे समाधि पूर्वक ग्रामानुग्राम विचरना.

शब्दार्थ

दू० विचरे. ॥ १२ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दू० फिरते अं० बीचमें वि० रस्तेमें सि० कदाचित से० वे जं० जो वि० मार्ग जा० जाणे इ० इस ख० निश्चय वि० रस्तेमें ब० बहुत आ० लूटार उ० उपकरण केलिये सं० एकत्रहो जातेहैं, णो० नहीं ते० उनसे भी० डरकर उ० उन्मार्ग चे० निश्चय जा० यावत सं० समाधिसे त० तब सं० साधु गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरे. ॥ १३ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० ग्रामानुग्राम दु० फिरता अं० बीच रस्तेमें आ० लुटार सं० एकत्रहो ग० आवे ते० उसको

सूत्र

णो तेसिं भिओ उम्मग्गं चेव जाव समाहीए ततो संजयामेव गामाणुगामं दूइज्जेज्जा ॥१२॥ से भिक्खू वा (२)गामाणुगामं दूइज्जमाणे अंतरासे विहं सिया सेज्जं पुण विहं जाणेज्जा इमंसि खलु विहंसि बहवे आमोसगा उवकरणपडियाए संपिंडियागच्छेज्जा णोतेसिं भिओ उम्मग्गं चेव जाव समाहीएततोसंजयामेव गामाणुगामंदूइज्जेज्जा ॥ १३ ॥ से भिक्खू वा (२)गामाणुगामं दूइज्जमाणे अंतरासे आमोसगा संपिंडिया गच्छेज्जा ते णं आमो

भावार्थ

॥ १२ ॥ (१) साधु साध्वी को ग्रामानुगाम फिरते दीर्घ पंथ उल्लंघने का आजावे और ऐसा मालूम पडे कि इसमार्गमें बहुत लूटारू एकत्रित होकर वस्त्र लूटनेको आनेवालेहैं तो भी उनसे डरकरके उन्मार्गमें नजावे या चालु मार्ग को छोडकर अन्य मार्ग में जाना नहीं किन्तु समाधि भाव में चले जाना. ॥ १३ ॥ साधु साध्वी को मार्ग में लूटार मिले और कहे कि अरे साधु यह वस्त्र, पात्र, कंबल, रजोहरण हमारी पास रखकर हम

(१) यह सूत्र जिन कल्पि साधु के लिये है.

शब्दार्थ

आ० लुटारे ए० ऐसा व० कहे आ० आयुष्यमान स० साधु ! आ० ला ए० यह व० वस्त्र पा० पात्र क० कम्बल पा० रजोहरण दे० देदे नि० नीचेरख तं० उसे णो० नहीं दे० देवे णि० नीचेरखदे, णो० नहीं वं० गुणानुवाद कर करके जा० याचे, णो० नहीं अं० हाथ जोडकर जा० याचे, णो० नहीं क० करुणा होनिये जा० याचे, ध० धर्मसे जा० याचे, तु० मौनस्थपने से से० वे आ० लूटारे स० स्वयं क० नहीं करने योग्य नि० कृतव्य ऐसा क० करके, अ० अक्रोशकरे जा० यावत् उ० उपद्रव करे, व० वस्त्र पा० पात्र कं०

मूल

सगा एवं वदेज्जा आउसंतो समणा आहर एयं वत्थं वा पायं वा कंबलं वा पायं पुंच्छणं वा देहि णिक्खिवाहि तं णो देज्जा णिक्खिवेज्जा णो वंदिय २ जाएज्जा णोअंजलिंकट्टु जाएज्जा णो कलुण पडियाए जाएज्जा धाम्मियाए जाएज्जा तुसिणीय भावेण वा से णं आमोसगा सयं करणिज्ज निकट्टु अक्कोसंति वा, जाव उद्दवंति वा, वत्थं वा, पायं वा, कंबलं वा पायपुंच्छणं वा, आच्छिंदेज्ज वा, जाव परिट्ठवेज्ज वा, तं णं णो गामसंसारियं

भावार्थ

को दो या नीचे रखो तब मुनि को वे उपकरणा देना नहीं किन्तु नीचे रखना. उन को चोर उठाते साधु को आजीजी, नरमाइ, लाचारी, दीनता करके पीछा याचना नहीं. किन्तु धर्म कथन पूर्वक याचना. या मौन रखकर खडा रहना. कदाचित वे लोको अपना कुल रिवाज से उन को धमकावे या गालीयां देवे धक्के या मुक्के मारे या वस्त्रादि लूंट लज्जा रहित करे तो साधु ग्राम में या राज्य दरबार में इस घात का फैलाव

तत्त्वार्थ

कन्दन पा० स्नोदरण अ० ऐसे जा० यावत प० विचरता है, तं० उसे णो० नहीं गा० ग्राम सं० सांसारिक कु० करे णो० नहीं गा० गज सं० सांसारिक कु० करे, णो० नहीं प० दूसरे की उ० पास जाकर बू० कहे, आ० आयुष्यमान गा० गृहस्थ ? ए० यह ख० निश्चय मे० मुझ को आ० लूटारोंने उ० उपकरण ... स्वयं क० कर्तव्य नि० ऐसा क० करके अ० आक्रोश करते हैं, जा० यावत प० ... हैं, ए० ... म० मन व० वचन णो० नहीं पु० आगे क० करके वि० विचरे, अ० अ-

सूत्र

कुज्जा णो गायसंगामियं कुज्जा णो परं उवसंकमित्तु बूया आउसंतो गाहाव

इ एसे खलु मे आमोसगा उवकरणपडियाए सयं करणिज्जं त्तिकट्टु अक्कोसंति वा

जाव परिहवेंति वा. एतप्पगारं मणं वा वयं वा णो पुरओ कट्टु विहरेज्जा अप्पुस्सुए

जाव समाहीए तओ संजयामेव गामाणुगामं दूइज्जेज्जा ॥ १४ ॥ एवं खलु तस्स

भावार्थ

करे नहीं, ... किसी गृहस्थ के पास जाकर कहे नहीं कि " आयुष्यमान गृहस्थ! ये लूटारे अपना कृत्य विचार अनुसार मुझे हैरान करते हैं, लूटते हैं " इस प्रकार की चल्वल्ल मन से या शरीर से भी करना नहीं. किन्तु धैर्यता से समाधिपूर्वक यतनासे ग्रामानुग्राम विचरना ॥ १४ ॥ उक्त प्रकार से साधु साध्वी को ईर्यापथ की विधि बताई वैसे ही सदा समता युक्त सावधानी से सदा प्रवर्ते ऐसा श्री वीरप्रभु

शब्दार्थ क॰ वचन, अ॰ अपकर्ष वचन, उ॰ उत्कर्ष अपकर्ष वचन, अ॰ अपकर्ष उत्कर्ष वचन, ती॰ भूतकाल वचन, प॰ वर्तमानकाल वचन, अ॰ भविष्यकाल वचन, प॰ प्रत्यक्ष वचन, प॰ परोक्ष वचन. ॥ ३ ॥ से॰ वे ए॰ एक वचन व॰ बोलूंगा इ॰ ऐसा ए॰ एक वचन व॰ बोले, जा॰ यावत् प॰ परोक्ष वचन बोलूंगा इ॰ ऐसा प॰ परोक्ष वचन बोले, इ॰ स्त्रीवेष, पु॰ पुरुषवेष, ण॰ नपुंसकवेष ए॰ ऐसा वे॰ वेद, अ॰ अन्यथा, वे॰ वेद, अ॰ विचारकर. णि॰ निश्चयभाषी स॰ समितिसे सं॰ साधु भा॰ भाषा भा॰

सूत्र वणीतवयणं, अवणीतवयणं, उवणीयावणीयवयणं, अवणीयउवणीयवयणं, तीयवयणं, पडुप्पन्न वयणं, अणागत वयणं, पच्चक्खवयणं, परोक्खवयणं ॥ ३ ॥ से एगवयणं वदिस्सामीति एगवयणंवदेज्जा जाव परोक्खवयणं वदिस्सामीति परोक्खवयणं वदेज्जा इत्थीवेस, पुरिसवेसं, णपुंसगवेसं, एवं वा वेयं अण्णहा वा वेयं अणुवीइं णिट्ठा-

भावार्थ लिया) (१३) वर्तमान काल वचन करता है, धरता है, लेता है, देता है. (१४) भविष्यकाल वचन करूंगा, धरूंगा, लूंगा, देऊंगा, (१५) प्रत्यक्ष वचन, यह है (१६) और परोक्ष वचन वह है. ॥३॥ साधु साध्वी को जहां एक वचन बोलने का होवे वहां एकही वचन बोले ऐसे ही जहां परोक्ष वचन बोलने का होवे वहां परोक्ष वचन बोले. जैसे ही यह स्त्री ही है, यह पुरुषही है, या नपुंसक ही है, यह बात ऐसी ही है, या वैसी है, यह सब तपास कर निश्चय हुवे बाद वैसे ही बोले. यों सब बातों की पूर्ण तपासकर निश्चय हुवे

शब्दार्थ

बोले इ० ये आ० पापस्थान उ० निवार कर. ॥ ४ ॥ अ० अथ भि० साधु जा० जाने च० चार भा० भाषाके भेद तं० वह ज० यथा—स० सत्य मे० एक प० पहिली भा० भाषा, बी० दूसरी मो० मृषा, त० तीसरी स० सत्यमृषा, जं० जो णे० नहीं स० सत्य णे० नहीं मो० मृषा, अ० असत्यमृषा णा० नाम तं० वह च० चौथी भा० भाषा. ॥ ५ ॥ से० अथ बे० कहताहूं जे० जो अ० गत कालमें प० वर्तमान कालमें, अ० अनागत कालमें अ० अर्हत भ० भगवन्त स० सर्व ते० वे ए० यही

मूल

भासी समियाए संजए भासं भासेज्जा इच्चेयाइं आयतणाइं उवातिक्कम्म ॥ ४ ॥ अह भिक्खू णं जाणेज्जा चत्तारि भासा जायाइं तंजहा सच्च मेगं पढमं भासज्जायं बीयं मोसं, तइयं सच्चामोसं, जं णेव सच्चं णेव मोसं "असच्चमोसं" णाम तं चउत्थं भासज्जायं ॥ ५ ॥ से बेमि जेय अतीता, जेय पडुप्पन्ना, जे य अणागता अरहंता भगवंतो सव्वेते एयाणि चेव चत्तारि भासज्जायाइं भासिंसु वा, भासंति वा, भासिस्संति

भावार्थ

भाषा समिति की यत्ना पूर्वक बोले और भाषाका सर्व दोष का परिहार करे ॥ ४ ॥ साधु साध्वी को चार प्रकार की भाषा का ज्ञान होना चाहिए. १ सत्य, असत्य भाषा, सत्यमृषा, तथा ४ सत्यासत्य रहित ॥ ५ ॥ अब मैं कहता हूं कि अहो जंबु गतकालके, वर्तमानकालके, और अनागतकालके सर्व तीर्थंकरोंने उक्त रीति मुजब भाषा के चार ही प्रकार बताये हैं, बताते हैं, और बतावेंगे. इन चारों प्रकार के भेदों में

मूलार्थ जा० नहीं ए० ऐसा व० कहे हो० मूर्ख, गो० गोला, व० वृषभ, कु० कुपक्षी, घ० दास, सा० कुत्ता ते० चोर, चा० व्यभिचारी, मा० कपटी, मु० झूठा ए० ऐसा तु० तू इ० ऐसाही ते० तेरे ज० मातापिता ए० ऐसे प्रकारकी भा० भाषा सा० सावद्य स० पापकारी जा० यावत् अ० वांछता णो० नहीं बोले. ॥१०॥ से० वे भि० साधु साध्वी पुरुषको आ० बोलाते आ० बोलाते हुवे अ० पु०नहीसुनेतो ए० ऐसे व० बोले अ०

सूत्र मंतिए वा, अपडिसुणमाणे णो एवं वदेज्जा होले त्ति वा, गोले त्ति वा, वसले त्ति वा, कुपक्खेत्ति वा, घडदासे त्ति वा, साणे त्ति वा, तेणे त्ति वा, चारिए त्ति वा, माई त्ति वा, मुसावाईत्ति वा एयाइं तुमं, इनियाइं ते जणगा. एतप्पगारं भासं सावज्जं सकिरियं जाव अभिकंख णो भासेज्जा ॥ १० ॥ से भिक्खू वा (२) पुमं आमंतमाणे आमंतिए वा अपडिसुणमाणे एवं वदेज्जा अमुगेति वा आउसोति वा आउसंतोति

भावार्थ किसी पुरुष को बोलाने या बोलाये हुवे न सुना होतो ऐसा न बोले "रे मूर्ख, गुलाम, चांडाल, कुपक्षी, नोकर, कुत्ता, चोर, व्यभिचारी. दगलबाज, झूठा तू ऐसा है, तेरे बाप भी ऐसा है वगैरह. ऐसी दोषयुक्त भाषा बोलना नहीं. ॥ १० ॥ साधु साध्वी किसी को बोलाने या बोलाये हुए उत्तर न देवे इस तरह कहे कि:—भो कल्याण या आयुष्मान्, श्रावक, उपासक, धर्मात्मा, धर्म प्रिय, वगैरह. ऐसी तरह की निर्दो

शब्दार्थ अमुक आ० आयुष्यमान, अ० आयुष्यवन्त सा० श्रावक उ० उपासक ध० धर्मी ध० धर्मप्रिय, ए० ऐसी भा० भाषा अ० निर्दोष अ० दयापूर्ण अ० वांछे भा० बोलना. ॥ ११ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी इ० स्त्रीको आ० बोलाते आ० बोलाते हुवे अ० अनसुने णो० नहीं ए० ऐसे व० बोले, हो० मूर्खणी गो० गोली इ० स्त्री ग० रीतसे णे० कहना. ॥ १२ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी, इ० स्त्रीको आ० बोलाते आ० बोलाते अ० अनसुने ए० ऐसा व० बोले, आ० आयुष्यवन्ती, भ० बहिन, भ० भाग्यवती सा० श्राविका,

सूत्र सावगेति वा उपासगेति वा धम्मिणुति वा धम्मपियेति वा एयप्पगारं भासं असावज्जं जाव अभूतोवघातियं अभिकंख भासेज्जा ॥ ११ ॥ से भिक्खू वा (२) इत्थी आमंतेमाणे आमंतिते य अपडिसुणमाणी णो एवं वदेज्जाः—होलेति वा गोलेति वा इत्थीगमेणं णेतव्व ॥ १२ ॥ से भिक्खू वा (२) इत्थियं आमंतेमाणे आमंतिए य अपडिसुणमाणी एवं वदेज्जा आउसो ति वा, भगिणिति वा, भगवति ति वा साविगेति वा उवासिएति वा धम्मिए ति वा धम्मपिएति वा एतप्पगारं भासं अ

भावार्थ भाषा बोले ॥ ११ ॥ इस प्रकार किसी स्त्री को बोलाते या बोलाये हुवे नहीं सुनते मूर्ख, गोली, वगैरह सदोष वचन से बोलावे नहीं. ॥ १२ ॥ किन्तु आयुष्यमती, बहिन, भगवती, श्राविका, उपासिका, धार्मिक,

शब्दार्थ उ० उत्पन्नहो. घ० धान्य घ० धर्मविपए० ऐसी अ० निरोध जा० यावत् भा० बोले भा० बोले.॥१२॥ से० वे साधु साध्वी णो० नहीं ए० ऐसा व० बोले ण० आकाश देव ति० ऐसा ग० गर्जना देव ति० ऐसा वि० विद्युत देव ति० ऐसा वि० वर्षाद देव ति० ऐसा णि० निरष्ट दे० देव, प० वर्षा वर्षाद मा० मत प० वर्षो नि० निपजो ध० धान्य म० मतनिपजो. वि० जाओ र० रात्रि, मा० मतजाओ, उ० उदय होवो सू० सूर्य. मा मतऊगो. मो० यह राजा ज० जीतो, मा० मतजीतो णो० नहीं ए० इसप्रकार भा० भाषा भा० भाषा प० बहावन ॥ १४ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी अं० आकाश में गु० गुह्यानुचरित स० समुच्छिम,

सूत्र समुच्छ जाव अभिवरख भासेज्जा ॥ १३ ॥ से भिक्खू वा (२) णो एवं वदेज्जा णभोदेवे त्ति वा, गज्जदेवे त्ति वा, विज्जुदेवे त्ति वा; पवुट्ठदेवे ति वा, निवुट्ठदेवेति वा; पडउ वास मावा पडउ णिप्फज्जउवा सस्सं, मा वा णिप्फजउ, विभायउ वा रयणी; मावा विभायउ, उदउ वा सूरिए मावा उदउ; सो वा राया जयउ मावा जयउ णो

भावार्थ पभासेज्जा. इत्यादि निरोध वचनों से बोलावे ॥ १३ ॥ साधु साध्वी आकाश, गर्जना, विद्युत, वर्षा को देव करकर बोलावे नहीं वर्षा होवो या मत होवो, धान्य उत्पन्न होवो या मत होवो. रात्रि व्यतीत होवो या मत होवो, सूर्य का उदय होवो या मत होवो; अमुक राजा जय पावो या मत पावो. वगैरह वचन बोले नहीं ॥ १४ ॥ साधु साध्वी को आकाश को अन्तरिक्ष, गुह्यानुचरित; वगैरह नामों से बोलाना. और वर्षा

... किया हु० अच्छा तरह किया हु० छायादार है. क० कल्याण कारी है. क० करने योग्य ए० इस प्रकारकी भ० भाषा सा० सावद्य जा० यावत् णो० नहीं भा० बोले. ॥ १ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी ज० जिस प्रकार वे० एकेक रू० रूप पा० देखे तं० वह ज० यथा—व० किल्ला जा० यावत भ० भुवनघर त० तैसे ता० उसे ए० ऐसे व० बोले, तं० वह ज० यथा—आ० आरंभ कारी है. सा० सावद्य है, प० यत्न से बनाहे. पा० प्रसन्नकारी को प्रसन्नकारी द० देखने योग्य को देखने योग्य शोभनिक को शोभनिक प० प्रतिरूपको प्रतिरूप कहे, ए० इस प्रकार भा० भाषा अ० निर्वद्य जा० यावत

सूत्र

वा, सुकडेति वा, साहुकडेत्ति वा, कल्लाणेत्ति वा, करणिज्जेत्ति वा, एयप्पगारं भासं सावज्जं जाव णो भासेज्जा ॥ १ ॥ से भिक्खू वा [२] जहा वेगइयाइं रूवाइं पासेज्जा तंजहा वप्पाणि वा जाव भवणगिहाणि वा, तहावि ताइं एवं वदेज्जा तंजहा आरंभकडेत्ति वा, सावज्जकडेत्ति वा, पयत्तकडेत्ति वा; पासाइयं पासादिएत्ति वा दरिसणीयं दरिसणीएत्ति वा अभिरूवं अभिरूवेत्ति वा पडिरूवं पडिरूवेति वा एयप्प

भावार्थ

करने योग्य है; ऐसी सावद्य भाषा बोले नहीं ॥ १ ॥ किन्तु कोट किल्ला आदि आरंभ से बने को आरंभसे पाप से; परिश्रम से बने कहे. और वे देखने लायक, चित्त को प्रसन्न हो तो वैसाही कहे. अयोग्य प्रशंसा

शब्दार्थ

अच्छा उ० हरतको सरस र० माठको रसाल म० मनोज्ञको मनोज्ञ, ए० ऐसी तरह भा० भाषा अ० निर्वद्य भा० को ॥ ६ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी म० मनुष्य गो० बैल म० भैंसा मि० मृग प० पशु प० पक्षी सि० सर्प ज० जलचर, से० वे प० पुष्ट का० शरीर पे० देखकर णो० नहीं ए० ऐसा व० कहे थु० स्थूल प० मेदयुक्त व० वर्तुलाकार है, व० वधकरने योग्य है, पा०पचानेयोग्य है ए० इसतरहकी भा० भाषा सा० सावद्य जा० यावत् णो० नहीं बोले. ॥ ७ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी म० मनुष्य जा० यावत् ज० जलचर से० वे

सूत्र

पयत्तकडेति वा, भद्दं भद्दएति वा, ऊसढं ऊसढेति वा, रसियं रसिएति वा, मणुण्णं मणुण्णेति वा, एयप्पगारं भासं असावज्जं जाव भासेज्जा ॥ ६ ॥ से भिक्खू वा (२) मणुस्सं वा, गोणं वा, महिसं वा, मिगं वा, पसुं वा, पक्खि वा, सिरासिवं वा, जलयरं वा, से तं परिवूढकायं पेहाए णो एवं वदेज्जा थुल्लेति वा पमेतिलेति वा, वट्टेति वा वज्झेति वा, पाइमेति वा, एयप्पगारं भासं सावज्जं जाव णो भासेज्जा ॥ ७ ॥ से भि-

भावार्थ

रसिक कहना, मनोहर को मनोहर कहना. ऐसी निर्दोष भाषा बोलना ॥ ६ ॥ साधु साध्वी को मनुष्य, बैल, महिष; मृग; पशु; पक्षी, सर्प, जलचर आदि को देख कर ऐसा नहीं बोलना कि यह पुष्ट, चरबीवाला, इसे मारो, पकाओ, ऐसी पाप की भाषा सदैव त्यागे ॥ ७ ॥ मुनि तथा आर्या को मनुष्य यावत् पशु

शब्दार्थ

भा० बोले. ॥९॥ से० वे भि० साधु साध्वी वि० विविध प्रकारकी गा० गायों पे० देख ए० ऐसे बोले तं० वह ज० यथा यु० युवानहै, धे० बैल ग० गाय है, र० रसवंतीहै, ह० छोटीहै, म० बडीहै. म० धोरी सं० भारउठाने समर्थ ए० ऐसी भा० भाषा अ० निर्दोष भा० बोले. ॥ १० ॥ से० वे भि० साधु साध्वी त० तैसेही ग० जाकरके मु० उद्यानमें प० पर्वतमें व० वनमें रु० वृक्ष म० बडा पे० देख णो० नहीं ए० ऐसे व० कहे तं० वह ज० यथा पा० प्रासाद योग्य, वा० या तो० तोरण योग्य, गि० घर योग्य, फ० पटिये

सूत्र

जं णो भासेज्जा ॥ ९ ॥ से भिक्खू वा (२) विरूवरूवाओ गाओ पेहाए एवं वदेज्जा तंजहा जुवं गवेति वा, धेणूति वा, रसवतीति वा, हस्सेति वा, महल्लएतिवा महव्वएति वा, संवाहणेति वा, एयप्पगारं भासं असावज्जं जाव भासेज्जा ॥ १० ॥ से भिक्खू वा, (२) तहेव गंतु मुज्जाणाइं पव्वयाइं वणाणि वा, रुक्खा महल्ला पेहाए णो एवं वदेज्जा तंजहा पासायजोग्गाति वा, तोरणजोग्गाति वा,

भावार्थ

बोलने योग्य है. ॥ ९ ॥ साधु तथा साध्वी को विविध प्रकार की गायों देख कर काम पडे तो ऐसा बोलना कि यह बैल युवान है, यह गाय दुध देनेवालीहै. रसवाली है, या यह बैल छोटा है, बडा है, बोजा उठाने को समर्थ है. ऐसी निर्दोष भाषा बोले. ॥ १० ॥ साधु साध्वी बगीचे में, पर्वतपर के वनमें जाकर वहां खडे हुवे बडे वृक्षों को देख कर ऐसा न कहे कि इस वृक्ष का लकड महल, हवेली, तोरण, घर, पटिया,

शब्दार्थ

अ० अभिग्ग योग्य,—णा० नाव—उ० मकरा—पी० पाट—चं० कपाट—णं० हल—कु० कुंडी—जं० पंचदोत्कट णा० नहीं—दो० नाली—आ० आसन—स० शैया—जा० वाहन—उ० उपाश्रय—जो० योग्य, इ० इस प्रकार की भा० भाषा सा० सावद्य जा० यावत् णो० नहीं भा० बोले. ॥ ११ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी ब० ब- हीं गं० गय उ० वनस्पति प० पर्वत व० वनसं० रु० वृक्ष म० बडा पे० देखकर ए० ऐसा व० कहे, जं० यह त० यथा आ० जातिवंत, दी० लम्बा व० गोल, म० बडा, प० पाली शाखाओं, वि० सघन

मूल

णिट्ठजोग्गाणि वा, फलिहजोग्गाणि वा, अग्गल-णावा-उदगदोणि-पीढ-चंगबेर-णं गल-कुलिय-जंतलट्ठि-णाभि-गंडी-आसण-सयण-जाण-उवस्सयजोग्गाणि वा ए- यप्पगारं भासं सावज्जं जाव णो भासिज्जा ॥ ११ ॥ से भिक्खू वा (२) तहे- व गंतु मुज्जाणाइं पव्वयाणि वणाणि य रुक्खा महल्ला पेहाए एवं वइज्जा तंजहा आ- जाइमंताति वा, दीहवट्टाति वा, महालयाति वा, पयायसालाति वा, विडिमसालाति

भावार्थ

कांद, नाव, मकरा, पाट, कपाट, हल, कुंडी, पाणी आदि की माट, पानी की नाली, आसन, शैया, वाहन, और उपाश्रय बनाने योग्य है. ऐसी सावद्य भाषा बोले नहीं ॥ ११ ॥ किन्तु उद्यान पर्वत या वन में जाके कि यह वृक्ष बडी जाति के हैं, ऊंचे गोल घेरावन्त हैं, बडे विस्तार है, [illegible]

शब्दार्थ शाखाहै, प० प्रसन्न करताहै, जा० यावत् प० प्रतिरूपहै, ए० ऐसी भा० भाषा अ० निर्वद्य जा० यावत् अ० वांछकर भा० बोले.॥१२॥ से० वे भि० साधु साध्वी ब० बहुत स० उत्पन्न हुए व० वनफल पे० देखकर त० वैसेही ते० वह णो० नहीं ए० ऐसे व० बोले, तं वह ज० यथा—प० पकेहैं, पा० पचाके खावो, वे० तोडने योग्य टा० कोमलहैं, वे० टुकडे करने योग्य ए० ऐसी तरहकी भा० भाषा सा० सावद्य जा० यावत् णो० नहीं बोले, ॥ १३ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी ब० बहुत सं० उत्पन्न हुवे फ० फल अ० आम्र देखकर ए० ऐसे व० बोले, तं० वह ज० यथा अ० असमर्थ ब० बहुत लगेहैं फ० फलहैं, ब० बहुत सं० उत्पन्न हुवेहैं, भू० को०

सूत्र वा, पासादियाति वा, जाव पडिरूवाति वा एयप्पगारं भासं असावज्जं जाव अभिकंख भासेज्जा ॥ १२ ॥ से भिक्खू वा (२) बहुसंभूता वणफला पेहाए तहावि ते णो एवं वदेज्जा तंजहा पक्काति वा, पायखज्जाति वा, वेलोचियाति वा, टालाति वा वेहियाति वा एयप्पगारं भासं सावज्जं जाव णो भासेज्जा ॥ १३ ॥ से भिक्खू वा बहुसंभूता फला अंबा पेहाए एवं वदेज्जा तंजहा असंथडाति वा बहुनि

भावार्थ शाखा युक्त है, रमणीय, वगैरह. ऐसी निर्दोष भाषा बोले. ॥ १२ ॥ साधु साध्वी ने बहुत पके हुवे फलों देख कर ऐसा नहीं बोलना कि ये फल पके हुवे हैं पकाकर खाने योग्य है, अभी ही तोडने योग्य है, कोमल है, कटका करने योग्य है, ऐसी सावद्य भाषा बोलना नहीं ॥ १३ ॥ साधु साध्वी बहुत पके हुवे, आम्र को देख प्रसंग पडे तो ऐसा बोले कि यह वृक्ष फलों से भारी हुआ है, बहुत सघन फल लगे हैं

शब्दार्थ

ब० बहुत पैदाहुवे, थि० स्थिरहै, ऊ० रसभरेहै, वा० या ग० गंभीरहै, प० प्रसूतहै, स० बडेहुवेहैं, ए० ऐसाकरे. ॥ १६ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी ज० यथा वे० एकेकके स० शब्द सु० सुने त० तैसे ए० ऐसे णो० नहीं ए० ऐसे व० बोले, तं० वह ज० यथा सु० अच्छा शब्द दु० बुराशब्द, ए० ऐसे तरह सा० सावद्य जा० यावत् णो० नहीं भा० बोले. ॥ १७ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी ज० जैसा वे० एकेक स० शब्द सु० सुने त० तैसे ए० ऐसे व० कहे, तं० वह ज० यथा सु० अच्छेशब्दको सु० सुशब्द, दु०

सूत्र

रूढाति वा, बहुसंभूताति वा, थिराति वा, ऊसढाति वा, गब्भियाति वा, पसुयाति वा, ससराति वा, एयप्पगारं असावज्जं जाव भासेज्जा ॥ १६ ॥ से भिक्खू वा (२) जहा वेगइयाइं सद्दाइं सुणेज्जा तहावि एयाइं णो एवं वदेज्जा तंजहा सुसद्देति वा दुसद्देति वा एयप्पगारं सावज्जं जाव णो भासेज्जा ॥ १७ ॥ से भिक्खू वा (२) जहा वेगइयाइं सद्दाइं सुणेज्जा तहावियाइं एवं वदेज्जा तंजहा सुसद्दं सुसद्देति वा

भावार्थ

उत्पन्न हुवा है ऐसी निर्वद्य भाषा बोले ॥ १६ ॥ साधु साध्वी अच्छा अवाज सुनकर ऐसा नहीं कहे यह अच्छा है या खराब अवाज सुनकर ऐसा नहीं कहे कि यह खराब है ऐसी सावद्य भाषा नहीं बोले ॥ १७ ॥ परंतु शब्दका स्वरूप बताने के लिये सुशब्द को सुशब्द कहे और खराब शब्द को खराब शब्द कहे ऐसी

वि० विवेकसे बोले, स० समतासे बोले, सं० साधु भा० भाषा भा० बोले. ॥ २० ॥ पूर्ववत्. ॥ २१ ॥

इति भासाज्झयणस्स बीओद्देसो सम्मत्तो॥ इति भासाणाम तयोदश ममज्झयणं सम्मत्तं

आचार है ॥ २१ ॥ यह भाषा जात त्रयोदश अध्ययन का द्वितीय उद्देशा पूर्ण हुवा भाषा जात त्रयोदश अध्ययनभी समाप्त हुवा. उक्त अध्ययन में दूसरी भाषा समिति कही. आगे तीसरी एषणा समिति कहते हुवे वस्त्र याचने की शुद्धि के लिये चतुर्दश वस्त्रैषणा अध्ययन कहते हैं.

वि० विवेकसे बोले, स० समतासे बोले, सं० साधु भा० भाषा भा० बोले. ॥ २० ॥ पूर्ववत्. ॥ २१ ॥

इति भासाज्झयणस्स बीओद्देसो सम्मत्तो॥ इति भासाणाम तयोदश ममज्झयणं सम्मत्तं

भाषता है ॥ २१ ॥ यह भाषा जात त्रयोदश अध्ययन का द्वितीय उद्देशा पूर्ण हुवा भाषा जात त्रयोदश अध्ययनभी समाप्त हुवा. उक्त अध्ययन में दूसरी भाषा समिति कही. आगे तीसरी एषणा समिति कहते हुवे वस्त्र याचने की शुद्धि के लिये चतुर्दश वस्त्रैषणा अध्ययन कहते हैं.

... दो ... विस्तार ... एक ... बागाथ का विस्तार ... अविद्यमान ... फिर ... ॥ १ ॥ ... अर्थांशकने ... नहीं ... जाते हो. ... और ... दश ... जाते ... हम ... मार्गी (...) ॥ २ ॥ ... बहुत

... चउहत्थवित्थारे, एगहिं वत्थेहि अविम्न ... ॥ १ ॥ से निक्खू वा (२) परं अ- ... अभिकंखेज्जा गमणाए ॥ २ ॥ से निक्खू ... अभिसंधिज्जा ... एगं साहम्मियं समुद्दिस्स ... ॥ ३ ॥ एवं बहवे साहम्मिया एगं साहम्मिणिं बहवे

... महाराज ... पर्याप्त वस्त्र न ... ॥ १ ॥ साधु साध्वी को ... में अधिक ... ॥ २ ॥ साधु साध्वी के लिये मार्ग आदि की हिंसा करके वस्त्र बनाया ... ॥ ३ ॥ इस प्रकार से बहुत साधु

पु॰ [illegible] ए॰ ऐसा आ॰ आने पु॰ पुरषान्तर कृत जा॰ यावत् प॰ ग्रहण करे. ॥ ५ ॥ से॰ वे भि॰ साधु साध्वी सं॰ वे आ॰ जो पु॰ और व॰ वस्त्र जा॰ जाने वि॰ विविध प्रकार के म॰ बहुमूल्य तं॰ वह म॰ यथा मा॰ चर्मके, स॰ अति सूक्ष्म म॰ अति शोभित आ॰ मादरके रोमके, का॰ रंगित कपासके [illegible] श्वेत कपासके, मि॰ मृग चर्मके दु॰ बंगाली कपास के, प॰ पट्टकूल सूतके म॰ मलया वल्कसूतके प॰ [illegible] अ॰ अमुक देशके, ची॰ चीनदेशके, दे॰ देशराग, अ॰ आनिल जात, ग॰ गाजके, फा॰ फलक

सूत्र व पडिग्गाहेज्जा ॥ ५ ॥ से भिक्खू वा (२) से ज्जाइं पुण वत्थाइं जाणेज्जा, वि- रूवरूवाइं महद्धणमोल्लाइं तजहा आजिणाणि वा, सहिणाणि वा, सहिणकल्लाणा- णि वा आयाणि वा, कायकाणि वा, खोमियाणि वा, मियाणि वा, दुगुल्लाणि वा, पट्टाणि वा मलयाणि वा पत्तुण्णाणि वा, अंसुयाणि वा, चीणंसुयाणि वा, देसरागाणि वा, अमिलाणि वा, गज्जलाणि वा, फालियाणि वा, कायहाणि वा, कंबलगाणि वा,

भावार्थ वो लेना नहीं यावत् दूसरे [illegible] किया होवे तो ले लेवे ॥ ५ ॥ साधु तथा साध्वी को निम्नोक्त बताये हुवे [illegible] बहु मूल्यवान वस्त्र लेना नहीं. चर्मके कपडे, सुंवाले कपडे, सुशोभित कपडे, बकरे के [illegible] बने हुवे कपडे, रुई से बने हुवे कपडे, मृग के चर्म के, बंगाली मलके कपडे, पट्टसूत्रके, मलय

[illegible]

आभरणोवचित्ताणि वा, अण्णयराणि वा, तहप्पगाराणि ... लाभे संते णो पडिग्गाहेज्जा ॥ ७ ॥ इच्चेयाइं आयतणाइं उवाइकम्म अह भिक्खू जाणेज्जा चउहिं पडिमाहिं वत्थं एसित्तए तत्थ खलु इमा पढमा पडिमा से भिक्खू वा भिक्खुणी वा (२) उद्दिसिय वत्थं जाएज्जा तंजहा जंगियं वा, भंगियं वा, साणयं वा, पोत्तयं वा, खोमियं वा; तूलकडं वा; तहप्पगारं व ...

[illegible] आभूषण से जड़े हुए तथा ऐसे जानकर अन्य कोई भी ... ॥ ७ ॥ शुद्ध वस्त्र धारण करने के लिये उपर्युक्त दोषों का निराकरण कर ... वस्त्र याचना. प्रथम प्रतिज्ञा यह है कि, साधु तथा साध्वी को ... वस्त्र लेने की धारणा ...

पहिलेही आ० कहे आ० आयुष्मन भ० भगिनी णो० नहीं ख० निश्चय मे० मुझे क० कल्पताहै ए० ऐसा सं० मुद्दतका व० वचन प० सुनने को अ० इच्छतेहो मे० मुझे दा० देनेको इ० अधुनाही द० देवो से० वे ए० एसा व० बोलने को प० अन्य व० बोले आ० आयुष्मन् स० श्रमण अ० पीछे आवो तो० तब ते० तुमको व० हम अ० दूसरा व० वस्त्र दा० देवेंगे से० वे पु० पहिलेही आ० कहे आ० आयुष्मन् भ० बहिन णो० नहीं ख० निश्चय मे० मुझे क० कल्पताहै ए० ऐसा सं० मुद्दत का व० वचन प० सुनने को अ० इच्छतेहो मे० मुझे दा० देनेको इ० अधुनाही द० देवो से० वे से० एसा व० बोलते को प० अन्य णे० लेजाने वाला प० बोले आ० आयुष्मन भ० बहिन आ० लाव ए० यह व० वस्त्र स० साधुको दा०

सूत्र

त्ति वा णो खलु मे कप्पति एयप्पगारे संगारे वयणे पडिसुणेत्तए अभिकंखसि मे दानुं इयाणि मेव दलयाहि सेणेवं वदंतं परोवदेज्जा आउसंतो समणा अणुगच्छाहि ता ने वयं अण्णयरं वत्थं दास्सामो से पुव्वामेव आलोएज्जा, आउसो त्ति वा भइणि ति वा णो खलु मे कप्पइ एयप्पगारे संगारे वयणे पडिसुणेत्तए अभिकखंसि मे दानुं इदाणिमेव दलयाहि से सेवं वदंतं परो णेत्ता वदे-

भावार्थ

ऐसा मुदत का वचन सुनना मुझे कल्पता नहीं है. यदि वस्त्र देने की तुम्हारी इच्छा होवे तो अधुना ही देवो ऐसा सुन गृहस्थ कहे जरा देरी में तुम को वस्त्र देऊंगा, तब साधु को कहना की यहभी मुझे नहीं

वस्त्र क॰ कंदको आ॰ यावत ह॰ हरी वनस्पति को वि॰ दूरकर स॰ साधुको दा॰ देवेंगे ए॰ ऐसा नि॰ शब्द सो॰ सुनकर णि॰ अवधारकर जा॰ यावत भ॰ भगिनी मा॰ मत ए॰ यह तु॰ तुम कं॰ यावत वि॰ दूरकरो णो॰ नहीं ख॰ निश्चय मे॰ मुझे क॰ कल्पताहै ए॰ऐसा व॰ वस्त्र प॰ ग्रहण व॰ ऐसा व॰ बोलतेको प॰ अन्य क॰ कंदको जा॰ यावत् वि॰ दूरकरके द॰ देवे त॰ ऐसा व॰ अप्रासुक जा॰ यावत णो॰ नहीं प॰ ग्रहण करे. ॥ १२ ॥ सि॰ कदाचित् से॰ वे

सिया, आहट्टु वत्थं कंदाणि वा जाव हरियाणि वा, विसोधित्ता समणस्स दा-
हामो'' एयप्पगारं णिग्घोसं सोच्चा णिसम्म जाव भइणि त्ति वा मा एयाणि तुमं
कंदाणि वा जाव विसोहेहि णो खलु मे कप्पति एतप्पगारे वत्थे पडिग्गाहित्तए
से सेवं वदंतस्स परो कंदाणि वा जाव विसोहित्ता दलएज्जा तहप्पगारं वत्थं अफा
सुयं जाव णो पडिग्गाहिज्जा ॥ १२ ॥ सिया से परो णेत्ता वत्थं णिसिरेज्जा, से पु-

दूरकर साधु को देवे ऐसा उन का वचन सुनकर साधु को कहना कि अहो आयुष्मन् गृहस्थ ! या बहिन ! तुम इन को मत दूर करो. मनाई करने पर भी गृहस्थ देवे तो उसे अप्रासुक मानकर ग्रहण नहीं करना ॥ १२ ॥ साधु को वस्त्र देने के लिये लेजानेवाला गृहस्थ साधु को वस्त्र देवे तब पहिले

प० पहले [illegible] वस्त्र णि० देवे से० [illegible] पु० पहले ही आ० कहे आ० आयुष्मन भ० भ-
गिनी तु० तब [illegible] तुम्हारा यह व० वस्त्र अं० चारों तरफ प० देखूंगा के० केवल ज्ञानीने वु०
कहा आ० पापस्थान ए० यह व० वस्त्र के पड़े में अं० बन्धाहो सि० कदाचित कुं० कुण्डल, गु० कन्दो-
रा, हि० चांदी सु० सुवर्ण, म० मणि, जा० यावत र० रत्नावली हार पा० प्राणी बी० बीज ह० हरी वन-
स्पति भ० अथ भि० साधुको पु० पहिले उपदेश जा० यावत जं० जो पु० पहिलेही व० वस्त्र अं० चा-

व्वामेव आलोएज्जा "आउसो त्ति वा, भइणि त्ति वा, तुमं चेवणं संतियं वत्थं अंतो-
अंतेण पडिलेहिस्सामि" केवली बूया "आयाणमेयं" वत्थंतेण ओवद्धेग्गिया कुंडले वा,
गुणे वा, हिरण्णे वा, सुवण्णे वा, मणी वा, जाव रयणावली वा, पाणे वा, बीए वा,
हरिए वा, अह भिक्खूणं पुव्वोवदिट्ठा जाव जं पुव्वामेव वत्थं अंतोअंतेण पडि-

भावार्थ—ये ही साधु उस गृहस्थ को कहे कि अहो आयुष्मन् गृहस्थ या बहिन इस वस्त्र को चारों तरफ देखे बाद ग्रहण करूंगा. जो साधु अंदर बाहिर चारों तरफ बिना देखे ग्रहण करेगा तो वह दोषपात्र होगा ऐसा केवलज्ञानी का फरमान है क्यों की उस के किसी विभाग में कुंडल, सांकल, चांदी, सुवर्ण, मणि, या रत्न की माला वगैरह बंधे हुवे होवे अथवा उस को जीव जंतु धान्य आदि लगे हुवे होवे

शब्दार्थ चौतरफ प० देखे. ॥ १३ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे ज्जं० जो पु० फीर जा० जाने स० अंडे सहित जा० यावत् सं० मकडीके जाले सहित त० वैसा व० वस्त्र अ० अफासुक जा० यावत् णो० नहीं प० ग्रहण करे. ॥ १४ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे ज्जं० जो पु० और व० वस्त्र जा० जाने अ० अल्प अण्ड जा० यावत् सं० मकडीके जाले अ० अपूर्ण, अ० जीर्ण, अ० अध्रुव, अ० धारन करने योग्य रो० देनेको णो० नहीं रो० रुचनेहो त० तथा प्रकारका व० वस्त्र अ० अफासुक जा० यावत् णो० नहीं

सूत्र लेहिज्जा ॥ १३ ॥ से भिक्खू वा (२) से ज्जं पुण वत्थं जाणेज्जा, सअंडं जाव संताणगं तहप्पगारं वत्थं अफासुयं जाव णो पडिग्गाहेज्जा ॥ १४ ॥ से भिक्खू वा (२) से ज्जं पुण वत्थं जाणेज्जा अप्पंडं जाव संताणगं, अणलं, अथिरं, अधुवं, अधारणिज्जं, रोइज्जंतं ण रोच्चइ तहप्पगारं वत्थं, अफासुयं जाव णो पडिग्गा-

भावार्थ मुनि को लाम उपदेश है कि पहिले ही वस्त्र की तपास किये बाद ग्रहण करना. ॥ १३ ॥ जो वस्त्र जीव यावत् जाले सहित होवे उसे ग्रहण नहीं करना. ॥ १४ ॥ साधु साध्वी अण्डे यावत् जाले रहित वस्त्र है परंतु लंबाइ चौडाइ में कमी है, बहुत पुराना होगया है, बहुत समय चले ऐसा नहीं है, या दातार विशेष रखने को देता नहीं है, या साधु को पहिनने लायक न होवे, सुशोभित दिखता न होवे

शब्दार्थ

[illegible] ग्रहण करे. ॥ १५ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे जं० जो पु० फीर व० वस्त्र जा० जाने अ० [illegible] जा० [illegible] पु० पूर्ण [illegible] नया पु० [illegible] धारन करने योग्य [illegible] ॥ १६ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी णो० नहीं [illegible] कर० णो० नहीं [illegible] भि० सुगंधि [illegible] ॥ १७ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी णो० नहीं ण० नविन [illegible]

मूल

[illegible]ज्जा ॥ १५ ॥ से भिक्खू वा (२) से जं पुण वत्थं जाणेज्जा अप्पंडं जाव सं- [illegible], थिरं, धुवं, धारणिज्जं, रोइज्जंतं [illegible] तहप्पगारं वत्थं फासुयं जाव प- डिग्गाहिज्जा ॥ १६ ॥ से भिक्खू वा [२] णो णवए मे वत्थे त्तिकट्टु णो ब- हुदेसिएण सिणाणेण वा जाव पघंसेज्जा ॥ १७ ॥ से भिक्खू वा (२) णो

भावार्थ

[illegible] ग्रहण करना नहीं ॥१५॥ जो वस्त्र, अण्डे, जाले, आदि रहित, चाहिये इतना लंबा, [illegible], साधु को पहिनने योग्य, आयगा, सदा के लिये दातारने दिया [illegible] ग्रहण करना. ॥ १६ ॥ साधु साध्वी को मेरा वस्त्र नया नहीं है अर्थात पुराना होगया है ऐसा विचार कर उसे थोडा बहुत सुगंधि द्रव्य से उसे घसना नहीं मसलना नहीं ॥ १७ ॥

शब्दार्थ ध० वस्त्र चि० ऐसा करके णो० नहीं ब० बहुथोडा सी० शीतोदक वि० अचित्तसे जा० यावत् प० धोवे. ॥ १८ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी दु० खराब मे० मेरे व० वस्त्र चि० ऐसा क० करके णो० नहीं ब० बहुथोडा सि० सुगन्धि द्रव्यसे न० नेमेही सी० शीतोदक अचित्त से वा० या उ० उष्णोदक अचित्त से आ० आलापक ॥ १९ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी अ० वांछे व० वस्त्र आ० तपाने को प० विशेष तपाने को त० तथा प्रकारका व० वस्त्र णो० नहीं अ० सचित्त पु० पृथ्वीपर णो० नहीं स० स्निग्ध जा० या-

सूत्र णवए मे वत्थे त्तिकट्टु णो बहुदेसिएण सीतोदगावियडेण वा जाव पधोवेज्जा ॥१८॥ से भिक्खू वा (२) दुब्भिगंधे मे वत्थे त्तिकट्टु णो बहुदेसिएण सिणाणेण वा तहेव सीतोदगावियडेण वा, उसिणोदगावियडेण वा, (आलावओ) ॥ १९ ॥ से भिक्खू वा, (२) अभिकंखेज्ज वत्थं आयावेत्तए वा, पयावेत्तए वा, तहप्पगारं वत्थं णो अणंतरहियाए पुढवीए णो ससणिद्धाए जाव संताणाए आयावेज्ज वा पयांव-

भावार्थ इस तरह पुराना वस्त्र को शीतल या उष्ण जल से भी धोना नहीं ॥ १८ ॥ साधु साध्वी को वस्त्र दुर्गन्धि धना हुआ जानकर सुगन्धि द्रव्य से या शीतोष्ण पानी से धोकर साफ करना नहीं ॥ १९ ॥ साधु साध्वी को वस्त्र सुकाने की जरूरत पडे तो सचित्त पृथ्वी या पानी हरी यावत् जालेवाली पृथ्वीपे सुकाना नहीं.

शब्दार्थ

वत मं० जाले युक्त आ० तपावे प० विशेप तपावे. ॥२०॥ से० वे भि० साधु साध्वी अ० वांच्छे व० वस्त्र आ० तपाने को प० विशेप तपाने को त० तथा प्रकारका व० वस्त्र थू० स्थूणीपे, गि० द्वारपे, उ० उखलपर, का० स्नानके पाटपर अ० अन्यतर वा० या त० तथा प्रकारके अं० अंतरिक्ष रही हुई दु० मगाय बन्धि हुइ दु० अस्थिर अ० चला चल, णो० नहीं आ० तपावे णो० नहीं, प० विशेप तपावे ॥ २१ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी अ० वांच्छे व० वस्त्र आ० तपाने को प० विशेप तपाने को त० तथा प्रकारका व० वस्त्र कु० भित्तिपर, भि०

मूल

ज्ज वा ॥ २० ॥ से भिक्खू वा (२) अभिकंखेज्जा वत्थं आयावेत्तए वा, पयावेत्तए वा, तहप्पगारं वत्थं थूणंसि वा, गिहेलुगंसि वा, उसुयालंसि वा, कामजलंसि वा अण्णयरे वा तहप्पगारे अंतलिक्खजाए दुब्बद्धे, दुन्निक्खित्ते, अणिकंपे चलाचले णो आयावेज्ज वा णो पयावेज्ज वा ॥ २१ ॥ से भिक्खू वा (२) अभिकंखेज्जा वत्थं आयावेत्तए वा, पयावेत्तए वा, तहप्पगारं वत्थं कुलियंसि वा भित्तिंसि

भावार्थ

॥ २० ॥ साधु साध्वी को वस्त्र सुकाने की जरूरत होवे तो काष्ट की स्थूणी पे, घरके द्वार पे, ऊखल, स्नान का बाजोट या अन्य कोइ ऐसा डगमगता स्थान पर सुकावे नहीं ॥ २१ ॥ साधु साध्वी को कपडा सुकाने की जरूरत पडे तो मकान की भित्ति पर, नदी के तटपर, पहाड, शिला, या सचित्त कंकर पर

शब्दार्थ पा० धारण करे थे०... छिपाये गा० अन्य ग्राम ओ० सादा वस्त्र धारन करने वाला ए० यह ख० निश्चय व० वस्त्रधारी का सा० आचार. ॥ १ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० गृहस्थका कु० कुलमें पिं० आहार केलिये प० प्रवेश करने की इच्छा वाला, स० सर्व चीं० वस्त्र आ० लेकर गा० गृहपतिके घर पिं० आहार केलिये णि० नीकले प० प्रवेशकरे ए० ऐसे ब० बाहिर वि० स्वाध्याय स्थान वि० स्थंडिल स्थान गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरे अ० अथ पु० फीर ए० ऐसा जा० जाने ति० शद्धविस्तार वाला वा० वर्षा वा० वर्षता हुआ पे० देखकर ज० जैसा पिं० आहारैषणा ण० विशेष स० सर्व ची० वस्त्र मा० ग्रहण कर. ॥२॥

मंतरेसु ओमचेलिए. एयं खलु वत्थधारिस्स सामग्गियं ॥ १ ॥ से भिक्खू वा (२) गाहावइ कुलं पिंडवायपडियाए पविसिउकामे सव्वं चीवर मायाए गाहावइकुलं पिंडवायपडियाए णिक्खमेज्ज वा पविसेज्ज वा ॥ एवं बाहिया वियारभूमिं विहारभूमिं वा गामाणुगामं दूइज्जेज्जा अह पुण एवं जाणेज्जा तिव्वदेसियं वा ...सं वासमाणं पेहाए, जहा पिंडेसणाए णवरं सव्वं चीवर मायाए ॥ २ ॥ से

...र धोया हुवा रंगाहुवा वस्त्र पहिनना नहीं और ग्रामान्तर जाते अपना वस्त्र छिपाना नहीं यह वस्त्रधारी मुनि [illegible] आचार है ॥ १ ॥ साधु तथा साध्वी को भिक्षा लेने जाते या स्थंडिल भूमि जाते अपना सर्व वस्त्र साथ लेकर जाना यदि वर्षा होवे तो पिण्डैषणा में कहे मुजब वर्तना ॥ २ ॥ किसी मुनि की पास से

शब्दार्थ धा० धारण करे अ० विना छिपाये गा० अन्य ग्राम ओ० सादा वस्त्र धारन करने वाला ए० यह ख० निश्चय व० वस्त्रधारी का सा० आचार. ॥ १ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० गृहस्थका कु० कुलमें पिं० आहार केलिये प० प्रवेश करने की इच्छा वाला, स० सर्व ची० वस्त्र आ० लेकर गा० गृहपतिके घर पिं० आहार केलिये णि० नीकले प० प्रवेशकरे ए० ऐसे ब० बाहिर वि० स्वाध्याय स्थान वि० स्थंडिल स्थान गा० ग्रामानुग्राम दू० विचरे अ० अथ पु० फीर ए० ऐसा जा० जाने ति० बहुविस्तार वाला वा० वर्षा वा० वर्षता हुआ पे० देखकर ज० जैसा पिं० आहारैषणा ण० विशेष स० सर्व ची० वस्त्र मा० ग्रहण कर. ॥२॥

सूत्र संतरेस्सु ओमचेलिए. एयं खलु वत्थधारिस्स सामग्गियं ॥ १ ॥ से भिक्खू वा (२) गाहावइ कुलं पिंडवायपडियाए पविसिउकामे सव्वं चीवर मायाए गाहा वइकुलं पिंडवायपडियाए णिक्खमेज्ज वा पविसेज्ज वा ॥ एवं बहिया वियारभू-मि विहारभूमिं वा गामाणुगामं दूइज्जेज्जा अह पुण एवं जाणेज्जा तिव्वदेसियं वा वासं वासमाणं पेहाए, जहा पिंडेसणाए णवरं सव्वं चीवर मायाए ॥ २ ॥ से

भावार्थ और धोया हुवा रंगाहुवा वस्त्र पहिनना नहीं और ग्रामान्तर जाते अपना वस्त्र छिपाना नहीं यह वस्त्रधारी मुनि का आचार है ॥ १ ॥ साधु तथा साध्वी को भिक्षा लेने जाते या स्थंडिल भूमि जाते अपना सर्व वस्त्र साथ लेकर जाना यदि वर्षा होवे तो पिण्डैषणा में कहे मुजब वर्तना ॥ २ ॥ किसी मुनि की पास से

शब्दार्थ

नि० नीचे रख ज० जैसा इ० ईर्या अध्ययन में णा० विशेष व० वस्त्र कोलिये ॥ ८ ॥ पूर्ववत्. ॥९॥

सूत्र

याए णाणत्तं वत्थपडियाए ॥ ८ ॥ एयं खलु तस्स भिक्खुस्स भिक्खुणीए वा सामग्गियं जं सव्वट्ठेहिं सहिएहिं सया जएज्जासि त्तिबेमि ॥ ९ ॥ इति वत्थेसणाज्झयणस्स बीओद्देसो ॥ इति वत्थेसणा चउदसमज्झयणं सम्मत्तं

भावार्थ

कहा है उस मुवाफीक वर्तना ॥८॥ उक्त प्रकार से वस्त्र धारन करनेकी साधु साध्वीकी समाचारी बतलाइ है इस सर्व अर्थ साधने को सदा यत्नासे प्रवर्ते ॥ ९ ॥ यह वस्त्रैपणा नामक चतुर्दश अध्ययन का द्वितीय उद्देशा समाप्त हुवा और चतुर्दश अध्ययन भी संपूर्ण हुवा. आगे पात्र किस विधि से धारन करना यह बताने के लिये पात्रैपणा नामक पंचदश अध्ययन कहते हैं.

* *

शब्दार्थ पाप के लिये क० नहीं अ० बांधे ग० जाना. ॥ २ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे ज्ञा० जो पु० और पा० पाप आ० आने अ० इन के लिये ए० एक सा० साधु स० उद्देशकर पा० प्राणी ज० जैसा पिं० पिण्डैषणा ब च० चार आ० आलापक पं० पांचवा ब० बहुत स० साधु मा० ब्राह्मण प० गिनकर त० तैसे ही ॥ ३ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी अ० असंयति भि० साधु के लिये ब० बहुत स० श्रमण मा० ब्राह्मण (व० वस्त्रैषणा का आ० आलापक) ॥ ४ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे ज्ञा० जो पु० और

सूत्र ॥ २ ॥ से भिक्खू वा (२) से ज्ज पुण पायं जाणेज्जा, अस्सिपडियाए एगं साहम्मिय समुद्दिस्स पाणाइ जहा पिंडेसणाए चत्तारि आलावगा पंचमे बहवे समण माहणा पगणिय तहेव ॥ ३ ॥ से भिक्खू वा (२) असंजए भिक्खुपडियाए बहवे समणमाहण (वत्थेसणा लावओ) ॥ ४ ॥ से भिक्खू वा (२)

भावार्थ नहीं ॥ २ ॥ साधु तथा साध्वी को एक साधु के लिये प्राण, भूत, जीव, सत्व की घात कर जो पात्र तैयार किया हो सो ग्रहण करना नहीं यहां पिण्डैषणा अध्ययन में कहे मुजब जानना ॥ ३ ॥ वैसे ही बहुत साधर्मिक साधु ब्राह्मण के आलापक वस्त्रैषणा अनुसार जानना. ॥ ४ ॥ साधु साध्वी को लोहे के, कथीर के, सीसे के, तांबे के, सुवर्ण के, पीतल के, पाषाण के, कांच के, काष्ठ के, [illegible]

शब्दार्थ यावत च० चर्मबंधन वाले अ० अन्य त० तथा प्रकारके म० बहुमूल्य बंधन वाले अ० अप्रासुक जा० यावत पो० नहीं प० ग्रहण करे इ० ये आ० पाप उ० उत्पन्नकर ॥ ६ ॥ अ० अथ भि० साधु जा० जाने च० चार प० प्रतिज्ञासे पा० पात्र ए० गवेषनेको त० तहां ख० निश्चय इ० यह प० प्रथमा प० प्रतिज्ञा से० वे भि० साधु भि० साध्वी उ० उद्देशकर २ पा० पात्र जा० याचे तं० वह ज० यथा ला० तुम्बीपात्र दा० काष्टपात्र म० मिट्टिका पात्र त० तथा प्रकारका पा० पात्र स० स्वयं जा० याचे जा० यावत प० ग्रहण करे प० प्रथमा प० प्रतिज्ञा अ० अथ अ० अपर दो० द्वितीया प० प्रतिज्ञा० से० वे भि० साधु साध्वी पे० देख कर २ पा० पात्र जा० याचे तं० वह ज० यथा गा० गृहस्थ

सूत्र म्मबंधणाणि वा अन्नयराइं तहप्पगाराइं महद्धणबंधणाइं अफासुयाइं जाव णो पडिग्गाहेज्जा इच्चेयाइं आयतणाइं उवातिकम्म ॥ ६ ॥ अह भिक्खू जाणेज्जा चउहिं पडिमाहिं पायं एसित्तए तत्थ खलु इमा पढमा पडिमा से भिक्खू वा भिक्खुणी वा उद्दिसिय २ पायं जाएज्जा तंजहा लाउयपायं वा दारुपायं वा मट्टिया-पायं वा तहप्पगारं पायं सयं वा णं जाएज्जा जाव पडिग्गाहेज्जा पढमा पडिमा

भावार्थ होवे तो उसे भी ग्रहण करना नहीं. इस तरह पाप के स्थानसे दूर रहना. ॥ ६ ॥ उक्त प्रकार से निर्दोष पात्र याचने के लिये साधु साध्वी चार प्रकार की प्रतिज्ञा धारण करते हैं (१) तुम्बे के, काष्ठ के, मिट्टि के इन तीन प्रकार के पात्र में से जिस प्रकार के पात्र की इच्छा होवे

शब्दार्थ स्वयं वा॰ या जा॰ यावत प॰ ग्रहणकरे त॰ तृतीया प॰ प्रतिज्ञा अ॰अथ अ॰ अपर च॰ चतुर्थी प॰ प्रति-ज्ञा से॰ वे भि॰ साधु साध्वी उ॰ न्हाखने योग्य पा॰ पात्र जा॰ याचे जं॰ जिसको अ॰ अन्य ब॰ बहुत स॰ श्रमण मा॰ माह्मण, ण॰ नहीं अ॰ इच्छे त॰ तथा प्रकारका पा॰ पात्र स॰ स्वयं जा॰ याचे जा॰ यावत प॰ ग्रहणकरे च॰ चतुर्थी प॰ प्रतिज्ञा इ॰ यह च॰ चार प॰ प्रतिज्ञा को अ॰ अन्य प॰ प्रतिज्ञा (ज॰ जैसा पि॰ पिण्डैषणा में)॥७॥से॰वे ए॰ये ए॰एषणाओंसे ए॰गवेषते प॰दूसरा पा॰ देखकर व॰ बोले

सूत्र संगतियं वा वेजयंति वा तहप्पगारं पायं सयं वा जाव पडिग्गाहेज्जा तच्चा पडिमा ॥ अहावरा चउत्था पडिमा–से भिक्खू वा (२) उज्झिय धम्मियंपायं जाणेज्जा जं चण्णे बहवे समण माहण जाव वणिमग्गा णावकंखंति तहप्पगारं पायं सयं वा णं जाव पडिग्गाहेज्जा चउत्था पडिमा ॥ इच्चेयाणं चउण्हं पडिमाणं अण्णयरं पडिमं (जहा पिंडेसणाए) ॥ ७ ॥ से णं एताए एसणाए एसमाणं परो पासित्ता वदेज्जा आ-

भावार्थ वो उसे देख ग्रहण करे (४) जो पात्र फेंकने योग्य होवे और साधु, माह्मण, भिखारी आदि कोइ भी ग्रहण करता नहीं होवे उसे ग्रहण करना नहीं इन चारों प्रतिज्ञामेंसे कोइ भी प्रतिज्ञाके धारक मुनि को अभिमान करना नहीं और दूसरेकी निन्दा करना नहीं किन्तु समभावमे रहना ॥ ७ ॥ उक्त विधि अनु-

शब्दार्थ [illegible] ब्रह्मचारी मु[illegible] श्री [illegible] ऋषिजी

[illegible] आ० यावत ता० तावत अ० हम अ० अन्न उ० बनावे उ० तैयारकरे तो० तब तं० तुमको व० [illegible] आ० आयुष्मन स० पानी सहित स० भोजन सहित प० पात्र दा० देवेंगे तु० खाली प० पात्र दि० [illegible] नहीं सु० अच्छा भ० होवे से० वे पु० पहिलेही आ० कहे आ० आयुष्मन् भ० [illegible] निश्चय मे० मुझे क० कल्पनाहि आ० आधाकर्मी अ० अशन पा० पानी, खा० खा- [illegible] भोगने को पा० पीनेको मा० मत उ० बनावो मा० मत उ० तैयार करो अ० [illegible] दा० देनेको ए० ऐसेही द० देवो से० वे मे० ऐसा व० बोलते को प० अन्य अ० अन्न

सूत्र

[illegible] अम्हे असणं वा उवकरेम वा, उवक्खडेम वा तो ते वयं आउसो सपाणं, सभो [illegible] पडिग्गहगं [illegible] तुच्छए पडिग्गहए दिण्णे समणस्स णो सुट्ठ साहु भवति. [illegible] आउसो त्ति वा भइणि त्ति वा णो खलु मे कप्पइ आ- [illegible] असणं वा, पाणं वा, खाइमं वा, साइमं वा, भोत्तए वा, पायए वा, मा उव- [illegible] उवक्खडेहि अभिकंखसि मे दाउं एमेव दलयाहि से सेवं वयंतस्स परो

भावार्थ

[illegible] को भी भोजन सहित पात्र देवेंगे. क्यों कि साधु को खाली पात्र देना [illegible] साधु का कहना कि हे आयुष्मन या बहिन! मुझे मेरे लिये बनाये हुवे भोजन [illegible]

पा० या जा० यावत त्र० धनाकर उ० नियारकर स० पानी सहित न० भोजन सहित प० पात्र दे० देय मु० तथा प्रकार का प० पात्र अ० अप्रासुक जा० यावत णो० नहीं प० ग्रहण करे. ॥ १० ॥ सि० कदा- चित से० ऐसेही णे० [illegible] प० पात्र नि० देवे से० वे पु० पहिले ही आ० आयुष्मन भ० भगिन तु० तुम मे० मुझको यह अं० चारों तरफ प० देखूंगा के० केवल ज्ञानीने बू० कहा आ० आदान मे० यह अं० अंदर पा० पात्रमें प० प्राणी बी० बीज ह० हरी वनस्पति जा० यावत अ० अब नि० साधुको पु० पहिले

अस्सणं वा जाव उवकरेज्जा उवक्खडेत्ता सपाणं सभोयणं पडिग्गहगं दलएज्जा- तहप्पगारं पडिग्गहं अफासुयं जाव णो पडिग्गाहेज्जा ॥ १० ॥ सिया सेवं परो णेत्ता पडिग्गहगं णिसिरेज्जा से पुव्वामेव आलोएज्जा आउसो त्ति वा भइणि त्ति वा तुमं चेवणं संतियं अंतो अंतेण पडिलेहिस्सामि केवली बूया "आयाणमेयं" अं- तो पडिग्गहंसि पाणाणि वा बियाणि वा हरियाणि वा जाव अह भिक्खूणं पु-

वो. इतना कहने पर भी गृहस्थ आहार पानी तैयार कर उस सहित पात्र देवे तो ग्रहण करना नहीं ॥१०॥ साधु साध्वी को [illegible] गृहस्थ पात्र देने लगे तब पहिले ही [illegible] "हे आयुष्मन या भगिन यह पात्र तुम्हारा होने पर भी मैं चारों तरफ इस को देख कर लूंगा" और बिना देखा पात्र लेने से यह दोष प्राप्त है ऐसा केवलज्ञानी का कथन है. क्यों कि कदाचित पात्र में जीव जंतु हरी वनस्पति आदि होवे इस लिये साधु को यह उपदेश है कि पहिले ही चारों तरफ पात्र देख कर बाद में ग्रहण

शब्दार्थ अ० वैठो जा० यावत् ता० तावत् अ० हम अ० अन्न उ० बनावे उ० तैयारकरे तो० [redacted] ते० तुमको व० हम आ० आयुष्मन स० पानी सहित स० भोजन सहित प० पात्र दा० देवेंगे तु० खाली प० पात्र दि० देना स० साधु को णो० नहीं सु० अच्छा भ० होवे से० वे पु० पहिलेही आ० कहे आ० आयुष्मन् भ० चहिन णो० नहीं ख० निश्चय मे० मुझे क० कल्पताहै आ० आधाकर्मी अ० अशन पा० पानी, खा० खादिम सा० स्वादिम भो० भोगवने को पा० पीनेको मा० मत उ० बनावो मा० मत उ० तैयार करो अ० इच्छतेहो मे० मुझे दा० देनेको ए० ऐसेही द० देवो से० वे से० ऐसा व० बोलते को प० अन्य अ० अन्न

सूत्र व अम्हे अमणं वा, उवकरेसु वा, उवक्खडेसु वा तो ते वयं आउसो सपाणं; सभोयणं पडिग्गहगं दास्सामो. तुच्छए पडिग्गहए दिण्णे समणस्स णो सुट्ठु साहु भवति. से पुव्वामेव आलोएज्जा आउसो त्ति वा भइणि त्ति वा णो खलु मे कप्पइ आधाकम्मिए असणे वा, पाणे वा, खाइमे वा, साइमे वा, भोत्तए वा, पायए वा, मा उवकरेहि मा उवक्खडेहि. अभिकंखसि मे दातुं एमेव दलयाहि से सेवं वयंतस्स परो

भावार्थ भोजन तैयार कर लेंगे और तुम को भी भोजन सहित पात्र देवेंगे. क्यों कि साधु को खाली पात्र देना अच्छा नहीं है. ऐसे प्रसंग पर साधु को कहना कि हे आयुष्मन् या बहिन! [redacted] मेरे लिये बनाये हुवे भोजन काम में आवेंगे नहीं, इस लिये मेरे लिये तुम तैयार मत करना. यदि मुझे पात्र देना चाहते हो तो ऐसा ही

शब्दार्थ वा० या जा० यावत उ० बनाकर उ० तैयारकर ...

शब्दार्थ ले उ० उपदेशा ए० यह प० प्रतिज्ञा जं० जो पु० पहिले ही प० पात्र जं० मांगे तथा प० देखे ॥११॥ स० अण्डे सहित स० सर्व आ० आलापक ज० जैसे वस्त्रैषणा में णा० विशेष ते० तेलसे घ० घृतसे प० मक्खनसे व० चरबीसे सि० सुगंधि द्रव्य जा० यावत अ० अन्य त० तथा प्रकार की थं० स्थंडिलमें प० देखकर २ प० पूंजकर २ त० तब सं० साधु आ० घसे ॥ १२ ॥ पूर्ववत ॥ १३ ॥

सूत्र वोग्गदिट्ठा एस पतिण्णा जं पुव्वामेव पडिग्गहगं अंतोअंतेण पडिलेहिज्जा ॥११॥ सअंडादि सव्वे आलावगा जहा वत्थेसणाए णाणत्तं तेल्लेण वा, घएण वा, णवणीए वा, वसाए वा, सिणाणादि जाव अण्णयरंसि वा तहप्पगारंसि थंडिलंसि पडिलेहिय २ पमज्जिय २ तओ संजयामेव आमज्जेज्ज वा ॥ १२ ॥ एयं खलु तस्स भिक्खुस्स भिक्खुणीए वा सामग्गियं जं सव्वट्ठेहिं सहिए सया जएज्जासि त्तिबेमि॥१३॥
इति पत्तेसणा अज्झयणस्स पढमोद्देसो सम्मत्तो ॥

*

भावार्थ करना. ॥ ११ ॥ सअंडादि सर्व आलापक वस्त्रैषणा में कहे मुजब जानना विशेष मात्र यह ही है कि यदि तेल, घृत, चरबी आदि से पात्र भराहुआ मालूम पडे तो अचित स्थान में जाकर देख कर पूंजकर यत्नासे उसे घस कर साफ करना. ॥ १२ ॥ यह साधु साध्वी का पात्र लेने का आचार कहा. इस में सदैव यत्नावंत रहना ऐसा मैं कहता हूं ॥ १३ ॥ यह पात्रैषणा नामक पन्दरवा अध्ययन का प्रथम उद्देशा पूर्ण हुआ. आगे पात्रैषणा विधि विशेष कहते हैं.

कर पा० प्राणी प० स्वच्छकर र० रज त० तब सं० साधु गा० गृहस्थके घर पिं० आहार के लिये प० प्रवेश करे णि० नीकले. ॥ १ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० गृहस्थ जा० यावत् स० प्रवेश करते सि० कदाचित से० वे प० अन्य अ० न्हामकर अं० अंदर प० पात्रमें सी० शीतोदक प० [illegible]भागकर णि० नीकाल द० देवे त० तथा प्रकारका प० पात्र प० दूसरेके हाथमें प० दूसरे के पात्रमें अ० अप्रासुक जा० यावत णो० नहीं प० ग्रहण करे से० वे आ० कदाचित् प० ग्रहण कीया जाय सि० कदाचित से० वे सि० शीघ्रही उ० पानी में सा० लेजावे स० पात्र सहित आ० ले-

सूत्र

गाहावइकुलं पिंडवायपडियाए पविसेज्ज वा णिक्खमेज्ज वा ॥ १ ॥ से भिक्खू वा (२) गाहावइ जाव समाणे सिया से परो अभिहट्टु अंतो पडिग्गहगंसि सीओदगं परिभाएत्ता णीहट्टु दलएज्जा तहप्पगारं पडिग्गहगं परहत्थंसि वा परपायंसि वा अफासुयं जाव णो पडिग्गाहेज्जा सेय आहच्च पडिग्गाहिए सिया से खिप्पामेव उदगंसि साहरेज्जा सपडिग्गह मायाए च णं परिट्ठवेज्जा ससणिद्धाए

भावार्थ

॥ १ ॥ साधु साध्वी गृहस्थ के गृह भिक्षार्थ गये कदाचित गृहस्थ अपने पात्र में शीतल जल डालकर मुनि को देवे तो गृहस्थ का हाथ के पात्र में रहा हुवा शीतल पानी को अप्रासुक जानकर ग्रहण करना नहीं. कदाचित अज्ञानसे लेने में आजावे तो [यह दातार को पीछा देना या लेने का ना कहे तो] दूसरे करे [illegible]-

शब्दार्थ

कर प० परठे म० भीनागवाली भृ० भूमिमें णि० रखना ॥ २ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी उ० पानी से भिजा स० भिनाशवाला प० पात्र णो० नहीं आ० मसले जा० यावत् प० तपावे अ० अथ प० फीर ए० ऐसा जा० जाने वि० पानी रहित से० मेरा प० पात्र छि० सूका साफ त० तथा प्रकारका प० पात्र त० तब सं० साधु आ० पूंछे जा० यावत् प० तपावे ॥ ३ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी गा० गृहस्थके घर प० प्रवेश करने की इच्छा वाला स० पात्र सहित गा० ग्रहण कर गा० गृहस्थके

सूत्र

-ए वा भूमिए णिक्खेवेज्जा ॥ २ ॥ से भिक्खू वा [२] उदउल्लं वा; ससणिद्धं वा; पडिग्गहं णो आमज्जेज्ज वा; जाव पयावेज्ज वा; अह पुण एवं जाणेज्जा विगओद- ए मे पडिग्गहे छिण्णसिणेहे तहप्पगारं पडिग्गहं ततो संजयामेव आमज्जेज्ज वा; जाव पयावेज्ज वा ॥ ३ ॥ से भिक्खू वा (२) गाहावइकुलं पविसिउकामे सपडिग्गहं मायाए गाहावइकुलं पिंडवायपडियाए पविसेज्ज वा णिक्खमेज्ज वा

भावार्थ

रद के पानी में डालना या भीजी जमीन पर परठाना ॥ २ ॥ साधु साध्वी को भींगा पात्र को पूछना या मसलना नहीं परंतु ऐसा मालूम पडे कि यह पात्र की भी नाश सूकगई है तब उसे ग्रहण करे पूंछे ॥ ३ ॥ साधु साध्वी को गृहस्थ के घर जाते पात्रों सहित जाना आना ऐसे ही स्वाध्याय स्थान या स्थंडिल स्थान

... वेलिये प० प्रवेश णि० निकले ए० ऐसे ब० बाहिर वि० स्वाध्याय स्थान वि० स्थंडिल ... विये ॥ ४ ॥ ति० तिव्रदेश में ज० जैसे वी० बीज व० वस्त्रेषणा में ण० वि- ... पात्र ॥ ५ ॥ पूर्ववत ॥ ६ ॥

*   *

... विहारभूमि वा गामाणुगामं दुइज्जेज्जा ॥ ४ ॥ तिव्वदेसि ... वत्थेसणाए णवरं एत्थ पडिग्गहंसि ॥ ५ ॥ एयं खलु त- ... वा सामग्गियं जं सव्वट्ठेहिं सहिते हिं सयाजएज्जासि त्तिबेमि ... इति पत्तेसणा णामं पंचदसमं मज्झयणं सम्मत्तं.

... पात्रे सहित निकलना ॥४॥ पात्र लेने को जाते मार्ग में थोड़ा या बहुत वर्षा होवे ... करना ॥ ५ ॥ यह साधु साध्वी की पात्र ग्रहण करने की विधि यत- ... रहना ऐसा मैं कहता हूं ॥ ६ ॥ यह पात्रैषणा नामक पंचदश अध्ययन ... अवग्रह-प्रतिज्ञा पालन करने के लिये अवग्रह-प्रतिज्ञा नामक षोडश अध्ययन

*   *

॥ अवग्रह—प्रतिमाख्यं षोडश मध्ययनम् ॥

स० साधु भ० होवूंगा अ० गृहत्यागी, अ० धनत्यागी अ० पुत्रत्यागी, अ० पशुत्यागी, प० दूसरेका दियाहुवा को भो० भोगवने वाला पा० पापकर्म णो० नहीं क० करूंगा स० सावधान स० सर्व भं० हे पूज्य अ० अदत्ता-दान का० प० त्याग करताहूं ॥ १ ॥ से० वे अ० प्रवेशकर गा० ग्राममें जा० यावत् रा० राजधानी में णे० नहीं ही स० स्वयं अ० अदत्त गि० ग्रहण करे णे० नहीं अ० अन्यकी पास अ० अदत्त गि० ग्रहण करावे

समणे भविस्सामि, अणगारे, अकिंचणे, अपुत्ते, अपसू परदत्तभोई, पावकम्मं णो क-रिस्सामिति, समुट्ठाए सव्वं भंते अदिण्णादाणं पच्चक्खामि. ॥ १ ॥ से अणुपविसित्ता गामं वा, जाव रायहाणिं वा, णेव सयं अदिन्नं गिण्हेज्जा, णे वण्णेणं अदिन्नं गिण्हा

मैं श्रमण हूं इस लिये घर, धन, पुत्र, कुटुम्ब तथा चतुष्पदादि सर्व वस्तु की ममत्व त्यागकर भिक्षा वृत्ति से अन्य की पास से जो कुच्छ मिलेगा इस से निर्वाह करता हुवा पापकर्म करूंगा नहीं. इस लिये सावध बनकर मैं ऐसी प्रतिज्ञा अंगीकार करता हूं कि हे पूज्य मैं अन्य से नहीं दी हुइ कोइ भी वस्तु ग्रहण नहीं करूंगा ॥ १ ॥ ऐसी प्रतिज्ञावाले मुनि को ग्राम या नगर में जाकर बिना दी हुइ वस्तु ग्रहण करना नहीं, या दूसरे से ग्रहण कराना नहीं, और जो ग्रहण करता होवे उसे अच्छा मानना नहीं, किंबहुना

शब्दार्थ से० वे कि० क्या पु० और त० तहां उ० आज्ञा में प० करे जे० जो त० तहां सा० समान धर्मी सं० संभोगी स० सदाचारी उ० आवे ते० जो ते० उनने स० स्वयं ए० लाया हुवा अ० अन्न ते० उससे ते० वे सा० स्वधर्मी सं० संभोगिक स० सदाचारी उ० निमंत्रण करना णो० नहीं प० दूसरे के लिये उ० ले लेकर उ० निमंत्रणा करे ॥ ४ से० वे आ० मुसाफीरखाने में जा० यावत् से० वे कि० क्या त० तहां उ० आज्ञामें प० करे ! जे० जो त० तहां सा० समानधर्मी अ० अन्य संभोगिक स० सदाचारी उ० आवे जे० जो ते० उनमें सं० स्वयं ए० लायाहुवा पी० बाजोट फ० पाटिया से० शैया सं० संथारा ते० उनसे ते० वे सा०

सूत्र तत्थ साहम्मिया संभोइया समणुण्णा उवागच्छेज्जा, जे तेण सयमेसियए असणे वा, (४) तेण ते साहम्मिया संभोइया समणुण्णा उवणिमंतेज्जा; णो चेवणं परवडियाए उगिज्झिय २ उवणिमंतेज्जा ॥ ४ ॥ से आगंतारेसु वा, (४) जाव से किंपुण तत्थोग्गहंसि एवोग्गहियंसि, जे तत्थ साहम्मिया अण्णसंभोइया समणुण्णा उवागच्छेज्जा, जे तेण सयमेसियए पीढे वा, फलए वा; सेज्जा संथारए वा; तेण ते साहम्मिए

भावार्थ चारी संभोगी साधु आवे तो उन को अपना लाया हुवा आहार पानी में से निमंत्रण करना परंतु दूसरे का लाया हुवा आहार पानी में से लेकर लेकर निमंत्रित करना नहीं. ॥ ४ ॥ रहने का स्थान प्राप्त किये बाद वहां जो सदाचारी समान धर्मी परंतु असंभोगी साधु आवे तो उन को ...

शब्दार्थ स० हाथ क० करके भू० जमीन पर ठ० रखे इ० यह ख० निश्चय त्ति० ऐसा आ० कहे णो० नहीं चे० निश्चय स० स्वयं पा० हाथ से प० दूसरे के पा० हाथ में प० देवे ॥ ६ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे ज० जो पु० और उ० अवग्रह जा० जाने अ० सचित्त पु० पृथ्वी स० भीनाश वाली पु० पृथ्वी जा० यावत् सं० जाले युक्त त० तथा प्रकार का उ० अवग्रह णो० नहीं उ० ग्रहण करे प० विशेष ग्रहण करे ॥ ७ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे जं० जो पु० और उ० अवग्रह जा० जाने थु० स्तंभ-पर त० तथा प्रकार के अ० अन्तरिक्ष स्थान दु० वगैरह यथा जा० यावत् णो० नहीं उ० अवग्रह उ० ग्रहण करे

सूत्र ए हत्थे कट्टु भूमीए वा ठवेत्ता इमं खलु २ त्ति आलोएज्जा, णो चेवणं सयं पाणिणा परपाणिसि पच्चप्पिणेज्जा ॥ ६ ॥ से भिक्खू वा (२) से ज्जं पुण उग्गहं जाणेज्जा अणन्तरहियाए पुढवीए ससणिद्धाए पुढवीए जाव संताणाए तहप्पगारं उग्गहं णो उगिण्हेज्ज वा पगिण्हेज्ज वा ॥ ७ ॥ से भिक्खू वा (२) से ज्जं पुण उग्गहं

भावार्थ अपना गुच्छा हाथ में रख कर या भूमि पर रखकर कहना कि "यह तुम्हारी वस्तु, यह तुम्हारी वस्तु" परन्तु साधु को गृहस्थ के हाथ में रखना नहीं ॥ ६ ॥ जो मकान सचित्त या भींजी पृथ्वीवाला होवे या और मसुवाला होवे तो उस की आज्ञा रहने के लिये ग्रहण करना नहीं ॥ ७ ॥ जो मकान स्तंभ पर

शब्दार्थ

प० विशेष ग्रहण करे. ॥८॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे जं० जो पु० और उ० अवग्रह जा० जाने कु० भित्तिपर जा० यावत णो० नहीं उ० ग्रहण करे ॥९॥ से० वे भि० साधु साध्वी खं० स्तंभपर अ० अन्यतर त० तथा प्रकारका जा० यावत णो० नहीं उ० ग्रहण करे. ॥ १० ॥ से० वे जं० जो पु० और उ० अवग्रह जा० जाने स० गृहस्थ युक्त स० अग्नियुक्त स० उदकयुक्त स० स्त्री सहित स० क्षुद्र (बालक) सहित स० पशु सहित स० भक्त पानीयुक्त णो० नहीं प० प्रज्ञावंत को णि० निकलना प० प्रवेश करना जा०

सूत्र

जाणेज्जा थुणंसि वा (४) तहप्पगारं अंतलिक्खजाए दुब्बद्धे जाव णो उग्गहं उगिण्हेज्ज वा पगिण्हेज्ज वा ॥ ८ ॥ से भिक्खू वा (२) से जं पुण उग्गहं जाणेज्जा कुलियंसि वा जाव णो उगिण्हेज्ज वा ॥ ९ ॥ से भिक्खू वा (२) खंधंसि वा अण्णयरे वा तहप्पगारे जाव णो उगिण्हेज्ज वा ॥ १० ॥ से जं पुण उग्गहं जाणेज्जा ससागारियं, सागणियं, सउदयं, सइत्थिं, सखुड्डं सपसुं, सभ-त्तपाणं णो पण्णस्स णिक्खमणपवेस जाव धम्माणुजोगचिंताए सेवं णच्चा त-

भावार्थ

पाले पर इगमग करना होवे तो उस की आज्ञा ग्रहण करना नहीं ॥ ८ ॥ जो मकान कची भींत पर बंधा हुवा होवे उस की आज्ञा ग्रहण करना नहीं ॥ ९ ॥ जो मकान गढ या स्तंभ वगैरह पर ऊंचा बंधा हुवा होवे अथवा ऐसा कोइ दूसरा स्थान होवे तो ग्रहण करना नहीं ॥ १० ॥ जिस उपाश्रय में गृहस्थ, अग्नि,

धारिए प० धर्मानुयोगचिन्तवन से० ऐसा ण० जानकर त० तथा प्रकारके उ० उपाश्रय में स० गृहस्थ सहित जा० यावत् स० धान्यक रहित प० पशु भ० भात पानी सहित णो० नहीं उ० अवग्रह उ० ग्रहण करे. ॥ ११ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे जं० जो पु० फीर उ० अवग्रह जा० जाने गा० गृहस्थके घर में म० मध्यमें से गं० जाने का पं० मार्ग में प० प्रतिबंध णो० नहीं प० प्रज्ञावंत को जा० यावत् ए० ऐसा ण० जानकर त० तथा प्रकारके उ० उपाश्रय में णो० नहीं उ० अवग्रह उ० ग्रहण करे. ॥ १२ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे जं० जो पु० और उ० अवग्रह जा० जाने इ० यहां ख० निश्चय गा० गृहस्थ जा०

सूत्र

हप्पगारे उवस्सए ससागारिए जाव सक्खुइ पसु भत्तपाणे णो उग्गहं उगिण्हेज्ज वा, ॥ ११ ॥ से भिक्खू वा (२) से ज्जं पुण उग्गहं जाणेज्जा गाहावइकुलस्स मज्झमज्झेणं गंतुं पंथे पडिबद्धं वा णो पण्णस्स जाव से एवं णच्चा तहप्पगारे उवस्सए णो उग्गहं उगिण्हेज्ज वा ॥ १२ ॥ से भिक्खू वा (२) से ज्जं पुण उग्गहं जाणेज्जा इह खलु गाहवई वा जाव कम्मकरीओ वा अण्णमण्णं अक्कोसं-

भावार्थ

पानी, स्त्री, बालक, पशु, आहार पानी होवे और निकलने प्रवेश करने में या धर्म विचारणा में अडचण पडती होवे तो वहां रहना नहीं ॥ ११ ॥ जिस मकान का मार्ग गृहस्थ के घर के बिच में होकर निकलता होवे और जहां निकलने प्रवेश करने या स्वाध्याय में अडचण पडती होवे तो रहना नहीं ॥ १२ ॥ जिस मकान में गृहस्थ गृहस्थ की स्त्री, पुत्र, पुत्री यावत् नौकरनी परस्पर झगडा फसाद करते होवे शरीर को

शब्दार्थ — मा० यावत् क० नोकरनी अ० परस्पर आ० आक्रोश करे त० तैसेही ते० तैलादि सि० सुगंधि द्रव्यादि मो० यावत् क० नोकरनी अ० परस्पर आ० आक्रोश करे त० तैसेही ते० तैलादि सि० सुगंधि द्रव्यादि सी० शीतोदक वि० अंचलादि ण० नग्नादि ज० जैसे से० शैया अध्ययन में आ० आलापक ण० विशेष उ० अवग्रह की व० वक्तव्यता. ॥ १३ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी सं० वे जं० जो पु० और उ० अवग्रह जा० जाने आ० चित्रने सं० चित्रा हुवा णो० नहीं प० प्रज्ञावन्त को जा० यावत् चि० चित्रवन त० तथा प्रकारका उ० उपाश्रय में णो० नहीं उ० अवग्रह उ० ग्रहण करे. ॥ १४ ॥ पूर्ववत्. ॥ १५ ॥

सूत्र — ति वा तहेव तेल्लादि सिणाणादि सीओदगवियडादि णगिणादि य जहा सेज्जाए आलावगा णवरं उग्गहवत्तव्वता ॥ १३ ॥ से भिक्खू वा (२) से जं पुण उग्गहं जाणेज्जा आइण्णसंलेक्खं णो पण्णस्स जाव चित्ताए तहप्पगारे उवस्सए णो उग्गहं उगिण्हेज्ज वा ॥ १४ ॥ एयं खलु तस्स भिक्खुस्स भिक्खुणीए वा सामग्गियं ॥ १५ ॥ इति उग्गहपडिमा ज्झयणस्स पढमोद्देसो सम्मत्तो.

भावार्थ — तैलादि लगाते होवे, स्नान करते होवे, नग्न कथा करते होवे, वगैरह सब शैयाध्ययन में कहे मुजब जानना विशेष में उपाश्रय की आज्ञा लेना ॥ १३ ॥ जिस मकान में स्त्रियादि के विरूप चित्र होवे और धर्मध्यान में अनुकूलता न होवे तो उस की आज्ञा ग्रहण करना नहीं ॥ १४ ॥ यह साधु साध्वी के आचार की संपूर्णता है कि उनोंने सर्व स्थान सावधान रहना ॥ १५ ॥ यह अवग्रह प्रतिमा नामक षोडश अध्ययन का प्रथम उद्देशा पूर्ण हुवा. आगे रहने का मकान की पसंदगी तथा उन की ज्ञान प्रतिज्ञा करते हैं.

शब्दार्थ से॰ वे आ॰ मुसाफिरखाना में (४) अ॰ विचार कर उ॰ अवग्रह जा॰ याचे जे॰ जो त॰ तहां ई॰ मालिक स॰ अधिकारी ते॰ उनकी उ॰ आज्ञा अ॰ लेकर का॰ इच्छतेहो ख॰ निश्चय आ॰ आयुष्मान् अ॰ जितना काल अ॰ जितना स्थान व॰ रहेंगे जा॰ यावत् आ॰ आयुष्मन् जा॰ यावत् आ॰ आयुष्मन् की उ॰ अनुज्ञा जा॰ यावत् सा॰ समानधर्मी ता॰ तावत् उ॰ आज्ञा उ॰ ग्रहण करेंगे ते॰ उसके प॰ बाद वि॰ विहार करेंगे ॥ १ ॥ से॰ वे किं॰ क्या पु॰ फीर त॰ तहां उ॰ आज्ञामें प॰ करे ?

सूत्र से आगंतारेसु वा (४) अणुवीइ उग्गहं जाएज्जा जे तत्थ ईसरे समाहिट्ठाए ते उग्गहं अणुण्णविज्जा कामं खलु आउसो अहालंदं अहापरिण्णायं वसामो जाव आउसो जाव आउसंतस्स उग्गहे जाव साहम्मियाए ताव उग्गहं उग्गिण्हिस्सामो तेण परं विहरिस्सामो ॥ १ ॥ से किं पुण तत्थ उग्गहंसि पवोग्गाहियंसि-

भावार्थ साधु तथा साध्वी को मुसाफिरखाना वगैरह स्थलों में विमर्श पूर्वक स्थान की आज्ञा याचते उस का मालिक या रक्षक को ऐसा कहना कि हे आयुष्मन् जितना स्थल या जितना काल तक तुम्हारी इच्छा हो उतने में उतने काल तक रहेंगे, और अन्य समान धर्मी साधु आवेंगे उन को भी रखेंगे फीर विहार कर जावेंगे. ॥ १ ॥ जिस मकान में रहे हो उस मकान में जो शाक्यादि साधु ब्राह्मण के दंड, छत्र, सूई लेखक

शब्दार्थ

ज० जो त० तहां स० साधुका मा० ब्राह्मण का दं० दण्ड, छ० छत्र जा० यावत् च० चर्म छेदनक तं० उसे णो० नहीं अं० अंदरसे बा० बाहिर णी० लेजावे ब० बाहिर से णो० नहीं अं० अंदर प० लेजावे णो० नहीं सु० सोए हुवे को प० जगावे णो० नहीं ते० उनको किं० किंचिदपि अ० नहीं सुहाता प० प्रत्यनीक क० करे. ॥ २ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी अ० वांच्छे अ० आम्रका वनमें उ० जाने को जे० जो त० तहां ई० ईश्वर जे० जो त० तहां स० अधिकारी ते० उनका उ० अवग्रह अ० जनावे का० वांच्छे हो स० निश्चय जा० यावत् वि० विचरेंगे ॥ ३ ॥ से० वे किं क्या पु० और त० तहां उ०

सूत्र

जे तत्थ समणाण वा, माहणाण वा; दंडए वा, छत्तए वा, जाव चम्मछेदणए वा, तं णो अंतोहिंतो वाहिं णीणेज्जा; बहियाओ वा णो अंतो पवेसेज्जा, णो सुत्तं वा णं पडिबोहेज्जा; णो तेसिं किंचिवि अप्पतियं पडिणीयं करेज्जा ॥ २ ॥ से भिक्खू वा (२) अभिकंखेज्जा अंबवणं उवागच्छित्तए जे तत्थ ईसरे जे तत्थ समाहिट्ठाए ते उग्गहं अणुजाणावेज्जा "कामं खलु जाव विहरिस्सामो" ॥ ३ ॥

भावार्थ

शस्त्र पड़े होवे तो उनको अंदर से बाहिर लाना नहीं वैसे ही बाहिर से अंदर लेजाना नहीं, वे सोते हुवे होवे तो जगाना नहीं वैसे ही उन के प्रतिकूल कार्य करना नहीं ॥ २ ॥ साधु साध्वी आम्र के वन में विश्राम लेना चाहे तो उस के मालिक की या उस के अधिकारी की आज्ञा लेकर रहना ॥ ३ ॥ पूर्वोक्त रीत्या

शब्दार्थ

अवग्रह प० करे अ० अथ भि० साधु इ० वांछे अं० आम्र भो० खानेको से० वे जं० जो पु० और अ० आम्र जा० जाने स० अण्डेसहित जा० यावत स० जाले सहित त० तथा प्रकार का अं० आम्र अ० अ-प्रासुक जा० यावत णो० नहीं प० ग्रहण करे ॥ ४ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी अं० आम्र जा० जाने अ० अल्प अण्ड जा० यावत सं० जाले अ० नियंक्त नहीं छेदा अ० टुकडे नहीं किये अ० अप्रासुक जा० यावत णो० नहीं प० ग्रहण करे. ॥ ५ ॥ से० भि० साधु साध्वी अं० आम्र जा० जाने अ० अल्प अंड जा० यावत स० जाले नि० नियंक्त छेदा हुवा वो० टुकडेकिये हुवे फा० फासुक जा० यावत् प०

सूत्र

से किं पुण तत्थ उग्गहंसि एवोग्गहियंसि अह भिक्खू इच्छेज्जा अंबं भोत्तए वा, से जं पुण अंबं जाणेज्जा सअंड जाव ससंताणं तहप्पगारं अंबं अफासुयं जाव णो पडिगाहेज्जा ॥ ४ ॥ से भिक्खू वा. (२) से जं पुण अंबं जाणेज्जा अप्पंडं जाव संताणगं अतिरिच्छच्छिण्णं अवोच्छिण्णं अफासुयं जाव णो पडिगाहेज्जा. ॥ ५ ॥ से भिक्खू वा (२) से जं पुण अंबं जाणेज्जा, अप्पंडं जाव संताणगं तिरिच्छच्छिण्णं

भावार्थ

आज्ञा के लिये बाद यदि आम्र खाने की इच्छा होवे तो अंडे जाले युक्त आम्र लेना नहीं ॥ ४ ॥ जो आम्र अंडे और जाले रहित होवे परन्तु छेदाये न होवे सो अयोग्य जानकर ग्रहण करना नहीं ॥ ५ ॥

ग्रहण करे. ॥ ६ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी अ० वांच्छे अं० आधा आम्र अं० आम्रकी गुठली, अं० आम्रकी छाल, अं०आम्रका रस अं०आम्रके टुकडे भो०खानेको पा०पीनेको से०वे जं०जो पु०और जा०जाने अं०आधा आम्र जा०यावत अं०आम्रके टुकडे स० अण्डे सहित जा० यावत् सं० जालेसहित अ० अप्रासुक जा० यावत णो०नहीं प०ग्रहण करे. ॥७॥ से०वे भि० साधु साध्वी से०वे जं०जो पु०और जा०जाने अं०आधा आम्र अ० अण्डे रहित जा०यावत सं० जाले अ० नहीं छेदाया अ० टुकडे नहीं किया अ० अप्रासुक

वोच्छिण्णं फासुयं जाव पडिग्गाहेज्जा. ॥ ६ ॥ सेभिक्खू वा (२) अभिकंखेज्जा अंबभित्तयं वा, अंबपेसियं वा, अंबचोयगं वा, अंबसालगं वा, अंबदालगं वा, भोत्तए वा, पायए वा, से जं पुण जाणेज्जा अंबभित्तयं वा, जाव अंबदालगं वा, सअंडं जाव संताणगं अफासुयं जाव णो पडिग्गाहेज्जा. ॥ ७ ॥ सेभिक्खू वा (२) से जं पुण जाणेज्जा अंबभित्तगं वा, अप्पंडं जाव संताणगं अतिरिच्छच्छिण्णं वा;

जो आम्र छेदे हुवे, निर्जीव अण्डे, जाले रहित, निर्दोष होवे तो धणी की आज्ञा लेकर ग्रहण करे ॥ ६ ॥ साधु साध्वी को आधा आम्र, आम्र की गुठली, आम्र की छाल, आम्र के टुकडे, आम्र का रस लाने की इच्छा होवे और वे जो अण्डे यावत् जाले सहित सदोष होवे तो उन्हे ग्रहण करना नहीं ॥ ७ ॥ आम्र

मा० यावत णो० नहीं प० ग्रहण करे. ॥ ८ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे जं० जो पु० और जा० जाने अं० आम्रका टुकडा अ० अण्डे रहित जा० यावत् सं० जाले ति० छेदाहुवा वो० टुकडेकिये हुवे फा० फासुक जा० यावत प० ग्रहण करे. ॥९॥ से० वे भि० साधु साध्वी अ० वांच्छे उ० इक्षुकावन उ० जानेको मे० जो न० नहीं ई० मालिक जा० यावत उ० अवग्रह में ॥ १० ॥ अ० अथ भि० साधु साध्वी इ० वांछे उ० इक्षु भो० खानेको पा० पीनेको से० वे जं० जो उ० इक्षुको जा० जाने अ० अण्डे सहित जा०

अवोच्छिण्णं वा, अफासुयं जाव णो पडिग्गाहेज्जा. ॥ ८ ॥ सेभिक्खू वा, (२) सेज्जं पुण जाणेज्जा अम्बभित्तगं वा, अप्पंडं जाव संताणयं, तिरिच्छच्छिण्णं, वोच्छिण्णं, फासुयं जाव पडिग्गाहेज्जा. ॥९॥ से भिक्खू वा (२) अभिकंखेज्जा उच्छुवणं उवागच्छित्तए, जे तत्थ ईसरे जाव उग्गहंसि. ॥ १० ॥ अह भिक्खू वा (२) इच्छेज्जा उच्छुं भोत्तए वा, पायए वा, सेज्जं उच्छुं जाणेज्जा सअंडं जाव णो पडिग्गाहेज्जा

भावार्थ

यावत रस अण्डे, जाले सहित होवे परंतु छेदायेभेदाये न होवे तो अयोग्य जानकर ग्रहण करना नहीं ॥ ८ ॥ किन्तु जो आम्र यावत रस अण्डे, जाले रहित होवे, और छेद भेद कर निर्जीव किये होवे तो उसे ग्रहण करना ॥ ९ ॥ साधु साध्वी को इक्षु के वन में ठहरने की इच्छा होवे तो उस के मालिक की या उस के अधिकारी की आज्ञा लेकर ठेरे ॥ १० ॥ वहां यदि साधु को इक्षु खाने पीने की इच्छा होवे तो जो इक्षु विरीयो, आम्र रहित होवे, बराबर कटा हुवा न होवे तो लेना नहीं परंतु अण्डे जाले रहित होवे छेदन भेदन

अवग्रह गि० ग्रहण करूंगा अ० अन्य भि० साधु की उ० आज्ञा उ० ग्रहण करने पर उ० लेऊंगा दो० द्वितीया प० प्रतिज्ञा (३) अ० अथ अ० अपर त० तृतीया प० प्रतिज्ञा ज० जिस भि० साधु को ए० ऐसा भ० होवे अ० मैं अ० अन्य भि० साधु केलिये उ० आज्ञा गि० लेऊंगा अ० अन्य की उ० लेनेपर उ० आज्ञा णो० नहीं उ० लेऊंगा त० तृतीया प० प्रतिज्ञा (४) अ० अथ अ० अपर च० चतुर्थी प० प्रतिज्ञा ज० जिस भि० साधु को ए० ऐसा भ० होवे अ० मैं ख० निश्चय अ० अन्य भि० साधु केलिये उ० आज्ञा णो० नहीं उ० ग्रहण करूंगा अ० अन्य की उ० अवग्रह उ० ग्रहण करने पर उ० लेऊंगा च० चतुर्थी प० प्रति-

सूत्र

उग्गहिए उग्गहे उवल्लिस्सामि दोच्चा पडिमा ॥ अहावरा तच्चा पडिमा जस्स णं भिक्खुस्स एवं भवति अहं च खलु अण्णेसिं भिक्खूणं अट्ठाए उग्गहं गिण्हिस्सामि अण्णेसिं च उग्गहिए उग्गहे णो उवल्लिस्सामि तच्चा पडिमा ॥ अहावरा चउत्था पडिमा जस्स णं भिक्खुस्स एवं भवति अहं च खलु अण्णेसिं भिक्खूणं अट्ठाए उग्गहं णो उगिण्हिस्सामि अण्णेसिं च उग्गहे उग्गहिए उवल्लिस्सामि च-

भावार्थ

प्रतिज्ञा यह है कि मुसाफिरखाना वगैरह जैसा मिले वैसा ही उस के मालिक की या अधिकारी की आज्ञा लेकर उस में रहना (२) कोइ साधु ऐसी प्रतिज्ञा धारन करे कि मैं दूसरे के लिये आज्ञा लेऊंगा और [illegible]

शब्दार्थ

अवग्रह गि० ग्रहण करूंगा अ० अन्य भि० साधु की उ० आज्ञा उ० ग्रहण करने पर उ० लेऊंगा दो० द्वितीया प० प्रतिज्ञा (३) अ० अथ अ० अपर त० तृतीया प० प्रतिज्ञा ज० जिस भि० साधु को ए० ऐसा भ० होवे अ० मैं अ० अन्य भि० साधु कोलिये उ० आज्ञा गि० लेऊंगा अ० अन्य की उ० लेनेपर उ० आज्ञा णो० नहीं उ० लेऊंगा त० तृतीया प० प्रतिज्ञा (४) अ० अथ अ० अपर च० चतुर्थी प० प्रतिज्ञा ज० जिस भि० साधु को ए० ऐसा भ० होवे अ० मैं ख० निश्चय अ० अन्य भि० साधु कोलिये उ० आज्ञा णो० नहीं उ० ग्रहण करूंगा अ० अन्य की उ० अवग्रह उ० ग्रहण करने पर उ० लेऊंगा च० चतुर्थी प० प्रति-

मूल

उग्गहिए उग्गहे उवल्लिस्सामि दोच्चा पडिमा ॥ अहावरा तच्चा पडिमा जस्स णं भिक्खुस्स एवं भवति अहं च खलु अण्णेसिं भिक्खूणं अट्ठाए उग्गहं गिण्हिस्सामि अण्णेसिं च उग्गहिए उग्गहे णो उवल्लिस्सामि तच्चा पडिमा ॥ अहावरा च उत्था पडिमा जस्स णं भिक्खुस्स एवं भवति अहं च खलु अण्णेसिं भिक्खूणं अट्ठाए उग्गहं णो उगिण्हिस्सामि अण्णेसिं च उग्गहे उग्गाहिए उवल्लिस्सामि च-

भावार्थ

प्रतिज्ञा यह है कि मुसाफिरखाना वगैरह जैसा मिले वैसा ही उस के मालिक की या अधिकारी की आज्ञा लेकर उस में रहना (२) और साधु ऐसी प्रतिज्ञा धारन करे कि मैं दूसरे के लिये आज्ञा लेऊंगा और [illegible]

पदार्थ

अप्प भ० अपर स० सप्तमी मे० वे भि० साधु साध्वी अ० जैसा कहा वैसाही उ० अवग्रह जा० याचे तं० वह जं० यथा पु० पृथ्वी शिला क० काष्टकी शिला अ० जैसा कहा त० उसकी ला० प्राप्तिमें सं० रहे त० उनकी अ० अप्राप्तिमें उ० उत्कटासन से ण० बैठे वि० विहार करे स० सप्तमी प० प्रतिज्ञा इ० ये स० सात प० प्रतिज्ञा को अ० अन्य ज० जैसे पिं० पिंडैषणा में ॥ १७ ॥ सु० सुना मे० मैंने आ० आयुष्मन् ते० उन भ० भगवन्तने

सूत्र

सत्तमा पडिमा से भिक्खू वा (२) अहा संथडमेव उग्गहं जाएज्जा तंजहा पुढविसिलं वा कट्ठसिलं वा अहासंथडमेव तस्स लाभे संवसेज्जा तस्स अलाभे उक्कडुओ वा णेसज्जिओ वा विहरेज्जा सत्तमा पडिमा ॥ इच्चेतासिं सत्तण्हं पडिमाणं अण्णयरं जहा पिंडेसणाए ॥ १७ ॥ सुयं मे आउसं तेणं भगवया एव स

भावार्थ

(यह अभ्युद्यतविहारी जिन कल्पी साधु के लिये) (५) कोइ ऐसी प्रतिज्ञा ग्रहण करे कि मैं मात्र मेरे लिये आज्ञा ग्रहण करूंगा परंतु दो, तीन, चार, पांच के लिये नहीं ग्रहण करूंगा (६) कोइ साधु ऐसा नियम करे कि रहने का स्थान में यदि मुझे पराला दि मिलेगा तो उसे ग्रहण करूंगा, नहीं तो वैसा ही बैठा रहूंगा (७) कोइ साधु ऐसा नियम करे कि सीधा रक्खा हुवा पाषाण, काष्ट का पटिया मिलजायगा तो उसे ग्रहण करूंगा नहीं तो वैसा ही बैठा रहूंगा. इन सातों प्रतिज्ञा में से यथाशक्ति प्रतिज्ञा धारन करे परंतु अभिमान या ईर्षा करे नहीं ॥ १७ ॥ अहो आयुष्मन् जम्बू भगवन्त के मुखारविन्द से मैंने सुना है

शब्दार्थ

ए० एसा अ० कहा इ० यहां ख० निश्चय थे० स्थविर भ० भगवानने पं० पांच प्रकार के उ० अवग्रह प० प्ररूप तं० वह ज० यथाः—दे० देवेन्द्रका अवग्रह रा० राजाका अवग्रह गा० गृहस्थ का अवग्रह सा० सागारिकका अवग्रह सा० स्वधर्मी का अवग्रह ॥ १८ ॥ पूर्ववत् ॥ १९ ॥ * *

सूत्र

स्वायं इह खलु थेरेहिं भगवंतेहिं पंचविहे उग्गहे पण्णत्ते:—तंजहा देविंदोग्गहे, रायोग्गहे, गाहावइउग्गहे, सागारियउग्गहे, साहम्मियउग्गहे ॥ १८ ॥ एयं खलु तस्स भिक्खुस्स भिक्खुणीए वा सामग्गियं जं सव्वट्ठेहिं सहिएहिं सयाजएज्जा त्ति त्तिबेमि ॥ १९ ॥ इति उग्गह पडिमाज्झयणस्स बीओद्देसो सम्मत्तो ॥ इति उग्गह पडिमा नामं सोलस मज्झयणं सम्मत्तं ॥ (प्रथमा चूला समाप्ता) *

भावार्थ

उन्होंने ऐसा कथन किया था. भगवन्तने पांच प्रकार का अवग्रह कहा हुवा है:—देवेन्द्र का अवग्रह, चक्रवर्ती का अवग्रह, गाथापति का अवग्रह, सागारिक का अवग्रह, साधर्मिकका ॥१८॥ उक्त प्रकार से अनुज्ञा ग्रहण करने की विधि में साधु साध्वी को सदैव यत्ना पूर्वक प्रवर्तना ॥ १९ ॥ यह अवग्रह-प्रतिमा नामक षोडश अध्ययन का द्वितीय उद्देशा पूर्ण हुवा. और अवग्रह प्रतिमा षोडश अध्ययन भी संपूर्ण हुवा. अब साधु को घर रहने के लिये स्थान की विधि बताते हुवे स्थानं नाम सप्तदश अध्ययन कहते हैं. *

[illegible] आयुष्मान् [illegible] ऐसा करता बैठा रहे उ० अथवा [illegible] जाऊंगा [illegible]
[illegible] शाहे [illegible] ऐसा कहा है उसको [illegible] पांचवें मे० यह [illegible] इनको अ०
[illegible] सातवी प० प्रतिज्ञा इ० ये स० सात प० प्रतिज्ञा को
[illegible] ॥ १७ ॥ सु० सुना मे० मैंने आ० आयुष्मन् ते० उन भ० भगवान्ने

[illegible] (०) अहा सथडमेव उग्गहं जाएज्जा तंजहा पुढ
[illegible] अहासंथडमेव नरस ठामे सवसेज्जा तस्स अज्ञाने उ०
[illegible] विहरेज्जा सत्तमा पडिमा ॥ इच्चेयासिं सत्तण्हं पडिमा
[illegible] ॥ १७ ॥ सुयं मे आउसं तेणं भगवया एवमं

[illegible] साधु के लिये) (५) कोई ऐसी प्रतिज्ञा ग्रहण करे कि मैं
[illegible] साधु को [illegible] के लिये नहीं ग्रहण करूंगा (६) कोई साधु ऐसा
[illegible] यदि मुझे यथायोग्य मिलेगा तो उसे ग्रहण करूंगा, नहीं तो वैसा ही बैठा
रहूंगा (७) कोई साधु ऐसा विचार करे कि [illegible] हुआ [illegible], काष्ठ का पाटिया बिछायगा तो
[illegible] ग्रहण करूंगा नहीं तो वैसा ही बैठा रहूंगा. इन सातों प्रतिज्ञा में से यथाशक्ति प्रतिज्ञा धारन करे
[illegible] ॥ १७ ॥ [illegible] के समागमिज्ञ से [illegible]

शब्दार्थ

ए० एसा अ० कहा इ० यहां ख० निश्चय थे० स्थविर भ० भगवानने पं० पांच प्रकार के उ० अवग्रह प० प्रदेप तं० यह ज० यथाः—दे० देवेन्द्रका अवग्रह रा० राजाका अवग्रह गा० गृहस्थ का अवग्रह सा० सागारिकका अवग्रह सा० स्वधर्मी का अवग्रह ॥ १८ ॥ पूर्ववत् ॥ १९ ॥ * *

सूत्र

सुयायं इह खलु थेरेहिं भगवंतेहिं पंचविहे उग्गहे पण्णत्तेः—तंजहा देविंदोग्गहे, रायोग्गहे, गाहावइ उग्गहे, सागारियउग्गहे, साहम्मियउग्गहे ॥ १८ ॥ एयं खलु तस्स भिक्खुस्स भिक्खुणीए वा सामग्गियं जं सव्वट्ठेहिं सहिएहिं सयाजएज्जासि त्तिबेमि ॥ १९ ॥ इति उग्गह पडिमाज्झयणस्स बीओद्देसो सम्मत्तो ॥ इति उग्गह पडिमा नामं सोलस मज्झयणं सम्मत्तं ॥ (प्रथमा चूला समाप्ता) *

भावार्थ

उन्होंने ऐसा कथन किया था. भगवन्तने पांच प्रकार का अवग्रह कहा हुवा हैः—देवेन्द्र का अवग्रह, चक्रवर्ती का अवग्रह, गाथापति का अवग्रह, सागारिक का अवग्रह, साधर्मिकका ॥१८॥ उक्त प्रकार से अनुज्ञा ग्रहण करने की विधि में साधु साध्वी को सदैव यत्ना पूर्वक प्रवर्तना ॥ १९ ॥ यह अवग्रह-प्रतिमा नामक षोडश अध्ययन का द्वितीय उद्देशा पूर्ण हुवा. और अवग्रह प्रतिमा षोडश अध्ययन भी संपूर्ण हुवा. अब साधु को स्थान रहने के लिये स्थान की विधि बताते हुवे स्थानं नाम सप्तदश अध्ययन कहते हैं. *

॥ निषीथिका नामक अष्टादश मध्ययनम् ॥

शब्दार्थ

से० वे भि० साधु साध्वी अ० वांछे णि० स्वाध्याय ग० जाने को से० वे जं० जो पु० और णि० स्वाध्याय जा० जाने स० अण्डे सहित स० प्राणी सहित जा० यावत् म० मर्कट सं० जाले त० तथा प्रकार का णि० स्वाध्याय स्थान अ० अनेषणिक ला० प्राप्त होने पर णो० नहीं चे० करे॥१॥ से० वे भि० साधु साध्वी अ० वांछता है णि० स्वाध्याय को ग० जाने को से० वे जं० जो पु० और णि० स्वाध्याय जा० जाने अ० अण्डे रहित अ० प्राण रहित जा० यावत् म० मर्कट सं० जाले त० तथा प्रकारका णि० स्वाध्याय

सूत्र

से भिक्खू वा (२) अभिकंखेज्जा णिसीहियं गमणाए से जं पुण णिसीहियं जाणेज्जा सअंडं सपाणं जाव मक्कडासंताणयं तहप्पगारं णिसीहियं अणेसणिज्जं लाभेसंते णो चेतिस्सामि ॥ १ ॥ से भिक्खू वा (२) अभिकंखइ णिसीहियं गमणाए से जं पुण णिसीहियं जाणेज्जा अप्पंडं, अप्पपाणं जाव मक्कडासंताणयं त-

भावार्थ

साधु साध्वी अपना उपाश्रय छोडकर अन्य स्थान में स्वाध्याय करने को जावे और जो वह स्थान जीव जन्तु यावत् जाले सहित होवे तो वहां उनको स्वाध्याय करना नहीं॥१॥साधु साध्वी स्वाध्याय करने को स्वस्थान छोडकर अन्यत्र जावे जो वह स्थान जीव जंतु रहित होवे तो वह योग्य जानकर ग्रहण करे. इस तरह सब विना शय्या अध्ययनमें कहे मुजब जानना॥२॥ जो वहां दो दो, तीन तीन, चार चार, पांच पांच

स्थान में फा० फासुक ए० एषणिक ला० मास होने पर चे० करूंगा ए० ऐसेही से० शय्यागत … जा० यावत् उ० पानी प्रसूत त्ति० ऐसा ॥ २ ॥ जे० जो त० तहां दु० दो दो ति० तीन तीन च० चार धार पं० पांच पांच अ० धार णि० स्वाध्याय ग० जाने को ते० वे णो० नहीं अ० परस्पर की का० कायको आ० आलिंगन करे वि० लिपटे चुं० चुम्बन करे दं० दांत से ण०नख से अ०छेदे ॥३॥पूर्ववत्॥४॥

हप्पगारं णिसीहियं फासुयं एसणिज्जं लाभेसंते चेतिस्सामि एवं सेज्जागमेणं णेयव्वं जाव उदयपसूयाए त्ति ॥ २ ॥ जे तत्थ दुवग्गा वा, तिवग्गा वा, चउवग्गा वा, पंचवग्गा वा, अभिसंधारेइ णिसीहियं गमणाए; ते णो अण्णमण्णस्स कायं आलिंगेज्ज वा, विलिंगेज्ज वा, चुंवेज्ज वा, दंतेहिं वा, णहेहिं वा, अच्छिदेज्ज वा ॥ ३ ॥ एयं खलु तस्स भिक्खुस्स भिक्खुणीए वा सामग्गियं जं सव्वट्ठेहिं सहिए समिए सयाजएज्जा सेयमिणं मण्णेज्जासि त्तिवेमि ॥ ४ ॥ इति णिसीहिया णाम अट्ठारह मज्झयणं सम्मत्तं निसीहियासत्तिक्कियं सम्मत्तं बीइयं * *

साधुओं वैसी स्वाध्याय भूमि में जावे तो वहां उन के परस्पर शरीर को आलिंगन के स्पर्श या दंत से नख से छेदन करना नहीं ॥ ३ ॥ यह सब साधु साध्वी के आचार की संपूर्णता है. उनोंने सर्व कार्य में सावधान रहकर उद्यमवन्त रहना और यह ही कल्याण कारक है ऐसा मानना ॥ ४ ॥ यह स्वाध्याय स्थान में बैठने की विधि बतानेवाला निषीधिका नामक अष्टादश अध्ययन समाप्त हुवा. आगे स्थंडिल जाने की विधि बतानेवाला उच्चार पासवण सत्तिक्कय नामक एकोनविंश अध्ययन कहते हैं.

॥ उच्चार प्रश्रवणं नाम एकोनविंश मध्ययनम् ॥

शब्दार्थ से० वे भि० साधु साध्वी उ० बडीनीत पा० लघुनीत कि० क्रियामें उ० बाधाहोते स० स्वयं का पा० भाजन अ० नहोने न० तब प० पिछेसे सा० समान धर्मीका जा० याचे. ॥ १ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे जं० जो पु० और थं० स्थंडिल जा० जाने स० अण्डे सहित स० प्राणी सहित जा० यावत् म० मर्कट सं० जाले स० तथा प्रकार की थं० स्थंडिल में णो० नहीं उ० बडी नीत पा० लघुनीत वो० वोसि० रावे ॥ २ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे जं० जो पु० और थ० स्थंडिल जा० जाने अ० प्राणी रहित अ०

सूत्र से भिक्खू वा (२) उच्चारपासवणकिरियाए उब्बाहिज्जमाणे सयस्स पायपुंछणस्स असतीए तओ पच्छा साहम्मियं जाएज्जा ॥ १ ॥ से भिक्खू वा (२) से जं पुण थंडिलं जाणेज्जा सअंडं, सपाणं जाव मक्कडासंताणयं तहप्पगारंसि थंडिलंसि णो उच्चारपासवणं वोसिरेज्जा ॥ २ ॥ से भिक्खू वा (२) से जं पु-

भावार्थ साधु साध्वी को बडीनीत लघुनीत की बाधा होवे तो अपना पात्र में करना यदि अपनी पास पात्र न होवे तो दूसरे साधु की पास से याचकर उस में करना ॥ १ ॥ जो स्थान अण्डे कीडे जाले युक्त होवें वहां लघुनीत बडीनीत नहीं करना ॥ २ ॥ जहां अण्डे, जाले न होवे वहां लघुनीत बडीनीत करना ॥ ३ ॥

शब्दार्थ

बीज रहित जा० यावत् म० मर्कट सं० जाले त० तथा प्रकार का थं० स्थंडिल में उ० वडीनीत पा० लघु-नीत वो० करे ॥ ३ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे ज्जं० जो थं० स्थंडिल जा० जाने अ० इसकेलिये ए० एक सा० साधु को स० उद्देशकर अ० इस के लिये व० बहुत सा० साधु स० उद्देशकर अ० इसकेलिये ए० एक सा० साध्वी को स० उद्देशकर अ० इसकेलिये व० बहुत सा० साध्वी को स० उद्देशकर अ० इसकेलिये व० बहुत स० श्रमण, मा० ब्राह्मण, प० गिन गिनकर स० उद्देशकर पा० प्राणी जा० यावत् उ० घातकर चे० बनाते त० तथा प्रकार का थं० स्थंडिल पु० पुरुषान्तर कृत जा० यावत् व० बाहिर

सूत्र

ण थंडिलं जाणेज्जा अप्पपाणं अप्पबीयं जाव मक्कडासंताणयं तहप्पगारंसि थंडिलंसि उच्चारपासवणं वोसिरेज्जा ॥ ३ ॥ से भिक्खू वा, (२) से ज्जं पुण थंडिलं जाणेज्जा अस्सिंपडियाए एगं साहम्मियं समुद्दिस्स, अस्सिंपडियाए बहवे साहम्मिया समुद्दिस्स अस्सिंपडियाए एगं साहम्मिणिं समुद्दिस्स, अस्सिंपडियाए बहवे साहम्मिणीओ समुद्दिस्स अस्सिंपडियाए बहवे समण—माहण पगणिय २ समुद्दिस्स, पाणाइ (४) जाव उद्देसियं चेतेति तहप्पगारं थंडिलं पुरिसंतरकडं जा-

भावार्थ

साधु साध्वी को ऐसा मालूम पडे कि यह स्थंडिल स्थान एक साधु के लिये, या बहुत साधु के लिये, बनाया है, या एक साध्वी के लिये, या बहुत साध्वी के लिये बनाया है, या बहुत शाक्यादि साधु ब्राह्मण को उद्देश

व वहिया णीहड वा अण्णयरंमि वा तहप्पगारंसि थंडिलंसि णो उच्चारपासवणं वोसिरेज्जा ॥ ४ ॥ से भिक्खू वा (२) से ज्जं पुण थंडिलं जाणेज्जा बहवे सम-[illegible] किवण वणीमगा अतिही समुद्दिस्स पाणाइ (४) जाव उद्देसियं चे-[illegible] गार थंडिल्लं अपुरिसंतरकडं जाव वहिया अणीहडं वा अण्णयरंसि वा [illegible] थंडिल्लंसि णो उच्चारपासवणं वोसिरेज्जा ॥ ५ ॥ अह पुण एवं जा-

[illegible] स्थंडिल स्थान में णो० नहीं उ० बडीनीत पा० लघुनीत [illegible] ॥ ४ ॥ से० [illegible] साध्वी से० वे ज्जं० जो पु० और थं० स्थंडिल जा० जाने ब० ब-[illegible] भिखारी अ० अतिथि स० उद्देशकर पा० प्राणी उ० घात [illegible] स्थान अ० अपुरुषान्तर कृत जा० यावत् ब० बाहिर [illegible] थं० स्थंडिल में णो० नहीं उ० बडीनीत पा० लघुनीत [illegible] ॥ ५ ॥ अ० अथ पु० फिर ए० ऐसा जा० जाने पु० पुरुषान्तर कृत जा० यावत् ब० बाहिर

भावार्थ

[illegible] बहुत जीवों की हिंसा करके बनाने में आया है. इस तरह जो उद्देशिक दोष युक्त स्थान [illegible] हो या न हो तो उस में लघुनीत बडीनीत करना नहीं ॥ ४ ॥ जो स्थान बहुत श्रमण, ब्राह्मण, [illegible] भिखारी, तथा मुसाफिरों के लिये सामान्यपने करने में आया होवे वैसा स्थान अपुरुषान्तर कृत [illegible]

शब्दार्थ णी० निकाला अ० अन्य त० तथा प्रकारका थं० स्थंडिलमें उ० वडीनीत पा० लघुनीत वो० करे ॥ ६ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे जं० जो पु० फीर जा० जाने थं० स्थंडिल जा० जाने अ० इस के लिये क० किया का० कराया पा० उधार लिया, छ० छवाया, घ० सुधारा, लि० लिपा, म० साफ किया म० धूपदिया, अ० अन्य त० तथा प्रकारका थं० स्थंडिल स्थान में णो० नहीं उ० वडीनीत पा० लघुनीत वो० करे. ॥ ७ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे जं० जो पु० और थं० स्थंडिल जा० जाने इ० यहां ख०

सूत्र णेज्जा पुरिसंतरकडं जाव बहिया णीहडं वा अण्णयरंसि तहप्पगारंसि थंडिलंसि उच्चारपासवणं वोसिरेज्जा ॥ ६ ॥ से भिक्खू वा (२) से जं पुण थंडिलं जाणेज्जा अस्सिंपडियाए कयं वा, कारियं वा, पामिच्चियं वा, छण्णं वा, घट्ठं वा, लित्तं वा, मट्ठं वा, सपधूवितं वा, अण्णयरंसि तहप्पगारंसि थंडिलंसि णो उच्चारपासवणं वोसिरेज्जा ॥ ७ ॥ से भिक्खू वा (२) से जं पुण थंडिलं जाणेज्जा इह खलु

भावार्थ पुरुषांतर कृत और उपभोग में लिया हुवा होवे तो वहां लघुनीत वडीनीत करना ॥ ६ ॥ जो स्थंडिल स्थान साधु साध्वी के लिये कराया होवे उधार लिया होवे, सुधराया होवे लीपाया होवे, साफ कराया होवे, धूपादि दिया होवे, और इन प्रकारके अन्य भी आरंभिक कार्य किये होवे तो उन में लघुनीत वडीनीत करना नहीं॥ ७॥ जिस मकान में से गृहस्थ, गृहस्थ के पुत्र, कंद, मूल, हरी, धान्य, वगैरह अंदरसे बाहिर लाये

[illegible] स्थंडिल स्थान में णो० नहीं उ० बडीनीत पा० लघुनीत [illegible] ॥ ४ ॥ से० [illegible] माध्वी से० वे जं० जो पु० और थं० स्थंडिल जा० जाने ब० ब- [illegible] भिक्षारी अ० अतिथि स० उद्देशकर पा० प्राणी उ० घात [illegible] स्थान अ० अपुरुषान्तर कृत जा० यावत् ब० बाहिर [illegible] स्थंडिल में णो० नहीं उ० बडीनीत पा० लघुनीत [illegible] ॥ ५ ॥ अ० अथ पु० [illegible] ए० ऐसा जा० जाने पु० पुरुषान्तर कृत जा० यावत् ब० बाहिर

[illegible] अण्णयरंसि वा तहप्पगारंसि थंडिलंसि णो उच्चारपासवणं [illegible] ॥ ४ ॥ से भिक्खू वा (२) से जं पुण थंडिलं जाणेज्जा बहवे सम- [illegible] किवण वणीमग अतिही समुद्दिस्स पाणाइ (४) जाव उद्देसियं चे- [illegible] अपुरिसंतरकडं जाव बहिया अणीहडं वा अण्णयरंसि वा [illegible] णो उच्चारपासवणं वोसिरेज्जा ॥ ५ ॥ अह पुण एवं जा-

[illegible] जीवों की हिंसा करके बनाने में आया है. इस तरह जो उद्देशिक दोष युक्त स्थान [illegible] होवे या [illegible] होवे तो उन में लघुनीत बडीनीत करना नहीं ॥ ४ ॥ जो स्थान बहुत श्रमण, ब्राह्मण, [illegible] भिखारी, सब मुनाफिरों के लिये साधारणपने करने में आया होवे वैसा स्थान अपुरुषान्तर कृत और बाहर में नहीं लाया हुवा होवे तो वहां बडीनीत लघुनीत करना नहीं ॥ ५ ॥

नि॰ निकाली भ॰ अन्य त॰ तथा प्रकारका थं॰ स्थंडिलमें उ॰ वडीनीत पा॰ लघुनीत वो॰ करे ॥ ६ ॥
से॰ वे भि॰ साधु साध्वी से॰ वे जं॰ जो पु॰ फीर जा॰ जाने थं॰ स्थंडिल जा॰ जाने अ॰ इस के लिये
क॰ किया का॰ कराया पा॰ उधार लिया, छ॰ छवाया, घ॰ घुटाया, लि॰ लिंपा, म॰ साफ किया स॰
पूर्वादिया भ॰ अन्य त॰ तथा प्रकारका थं॰ स्थंडिल स्थान में णो॰ नहीं उ॰ वडीनीत पा॰ लघुनीत वो॰
करे ॥ ७ ॥ से॰ वे भि॰ साधु साध्वी से॰ वे जं॰ जो पु॰ और थं॰ स्थंडिल जा॰ जाने इ॰ यहां ख॰

सूत्र

णेज्जा पुरिसंतरकडं जाव बहिया णीहडं वा अण्णयरंसि तहप्पगारंसि थंडिलंसि उच्चारपासवणं वोसिरेज्जा ॥ ६ ॥ से भिक्खू वा (२) से जं पुण थंडिलं जाणेज्जा अस्सिंपडियाए कयं वा, कारियं वा, पामिचियं वा, छण्णं वा, घट्ठं वा, लित्तं वा, मट्ठं वा, संपधूमियं वा अण्णयरंसि तहप्पगारंसि थंडिलंसि णो उच्चारपासवणं वोसिरेज्जा ॥ ७ ॥ से भिक्खू वा (२) से जं पुण थंडिलं जाणेज्जा इह खलु

भावार्थ

पश्चात् कृत और उपभोग में लिया हुआ होवे तो वहां लघुनीत वडीनीत करना ॥ ६ ॥ जो स्थंडिल स्थान साधु साध्वी के लिये कराया होवे उधार लिया होवे, घुटाया होवे लींपाया होवे, साफ कराया होवे, धूपादि दिया होवे, और इस प्रकारके अन्य भी आरंभिक कार्य किये होवे तो उस में लघुनीत वडीनीत करना नहीं ॥ ७ ॥ इस प्रकार गृहस्थ गृहस्थ के पुत्र, कंद, मूल, हरी, धान्य, वगैरह अंदरसे बाहिर लावे

शब्दार्थ

गृहस्थ गा० गृहस्थ गा० गृहस्थका पुत्र कं० कंद, मू० मूल जा० यावत् ह० हरी वनस्पति अं० अंदर से बा० बाहिर नी० निकाला बा० बाहिर से अं० अंदर सा० लेजावे अ० अन्य त० तथा प्रकारका थं० स्थंडिल स्थान में णो० नहीं उ० बडीनीत पा० लघुनीत वो० करे. ॥ ८ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे जं० जो पु० और थं० स्थंडिल जा० जाने खं० स्थंभ पर पी० पाटपर मं० मांचापर मा० मालिया, अ० अगासी पर, पा० प्रासाद पर अ० अन्य थं० स्थंडिल में णो० नहीं उ० बडीनीत पा० लघुनीत वो० करे. ॥ ९ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे जं० जो पु० और थं०

मूल

गाहावई वा, गाहावइपुत्ता वा, कंदाणि वा, मूलाणि वा, जाव हरियाणि वा, अंतातो बाहिं णीहरिंति बाहाओ वा अंतो साहरंति अण्णयरंसि वा तहप्पगारंसि थंडिलंसि णो उच्चारपासवण वोसिरेज्जा ॥ ८ ॥ से भिक्खू वा (२) से जं पुण थंडिलं जाणेज्जा खधंसि वा, पीढंसि वा, मंचंसि वा, मालंसि वा, अट्टंसि वा, पासायंसि वा, अण्णयरंसि थंडिलंसि णो उच्चारपासवण वोसिरेज्जा ॥ ९ ॥ से भिक्खू

भावार्थ

होवे बाहिर से अंदर लाये होवे ऐसे मकान में साधु को बडीनीत लघुनीत करना नहीं ॥ ८ ॥ साधु साध्वी को स्थंभ बाजोठ, पाट, मांचा, माल, अगासी, प्रासाद के या ऐसी अन्य जगह पर बडीनीत लघुनीत करना नहीं ॥ ९ ॥ साधु साध्वी को सचित्त मिट्टि वाली जमीन में, भीनी मिट्टि वाली जमीन में, रूखी मिट्टि वाली

शब्दार्थ

स्थंडिल जा० जाने अ० सचित्त पु० पृथ्वी स० स्निग्ध पु० पृथ्वीपर म० कची पु० पृथ्वीपर म० [illegible] सि० [illegible] सचित्त सि० शिला सचित्त ले० कंकर सचित्त को० सडा दा० काष्ट जी० जीव प० [illegible] नि० [illegible] अ० अन्य त० तथा प्रकारका थं० स्थंडिल मंतानीत तें जा० यावत म० मकड सं० [illegible] ॥ १० ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० [illegible] णो० नहीं उ० बडीनीत पा० लघुनीत वो० करे. ॥ १० ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० [illegible] जा० जाने इ० यहां ख० निश्चय गा० गृहस्थ गा० गृहस्थ के [illegible] पु० [illegible] थं० स्थंडिल जा० जाने

सूत्र

वा (२) से जं पुण थंडिलं जाणेज्जा अणंतरहियाए पुढवीए, ससणिद्धाए पुढवीए, ससरक्खाए पुढवीए, मट्टियामक्कडाए चित्तमंताए सिलाए, चित्तमंताए लेलुए चित्तमंताए कोलावासंसि वा, दारुयंसि वा, जीवपइट्ठियंसि वा, जाव मक्कडा संताणसंसि वा अण्णयरंसि वा तहप्पगारंसि थंडिलंसि णो उच्चारपासवणं वोसिरेज्जा॥१०॥से भिक्खू वा (२) से जं पुण थंडिलं जाणेज्जा इह खलु गाहावई वा, गाहावइपुत्ता वा,

भावार्थ

सचित्त में, सचित्त शिला में, सचित्त पाषाणमें, कीडे युक्त काष्टपर, या ऐसी अन्य जीव जंतु युक्त जमीनमें बडीनीत लघुनीत करना नहीं ॥ १० ॥ जिस स्थान में गृहस्थ या गृहस्थ का पुत्रने कंद, मूल, या बीज गत काल में भरा वर्तमान काल में भरता है और आगामी काल में भरेंगे ऐसा स्थान में साधु साध्वी को

शब्दार्थ तित्त० तीतर क० कपोत क० कपिजल (कावर) अ० अन्य त० तथा प्रकारका थं० स्थंडिल स्थान में णो० नहीं उ० वडीनीत पा०लघुनीत वो० करे. ॥१४॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे जं० जो पु० और थं० स्थंडिल जा० जाने वे० फांसी स्थान गि० गृद्धपक्षीसे मराने के स्थान, त० वृक्षसे गिरके मरने का स्थान मे०पर्वतसे पड मरने का स्थान वि० विषभक्षण कर मरने का स्थान, अ० अग्निमें जल मरने का स्थान अ० अन्य त० तथा प्रकार का थं० स्थंडिल स्थान में णो० नहीं उ०वडीनीत पा०लघुनीत वो०करे. ॥१५॥ से०वे

सूत्र करणाणि वा, कविंजलकरणाणि वा, अण्णयरंसि वा, तहप्पगारंसि थंडिलंसि णो उच्चारपासवणं वोसिरेज्जा ॥ १४ ॥ से भिक्खू वा (२) से जं पुण थंडिलं जाणेज्जा वेहाणसट्ठाणेसु वा, गिद्धपिट्ठट्ठाणेसु वा, तरुपतणट्ठाणेसु वा, मेरुपवडणट्ठाणेसु वा विसभक्खणयट्ठाणेसु वा, अगणिकडयट्ठाणेसु वा अण्णयरंसि तहप्पगारंसि थंडिलंसि णो उच्चारपासवणं वोसिरेज्जा ॥ १५ ॥ से भिक्खू वा (२) से जं पुण थंडिलं

भावार्थ पक्ष, पतक, तितर, कबूतर, या कपिजल वगैरह रखने में आते होवे वैसे स्थल में साधु साध्वीको लघुनीत वडीनीत करना नहीं ॥ १४ ॥ जिस स्थान में मनुष्य फांसी लेते होवे, अपने को गृद्ध भक्षण कराते होवे, वृक्षपरसे गिरते होवे, या पर्वत परसे झंपापात करते होवे, या जहां विष खाकर मरते होवे, या जहां अग्नि में प्रवेश करते होवे, वैसे स्थल में लघुनीत वडीनीत करना नहीं ॥ १५ ॥ साधु साध्वी को बाग में, बगीचे में,

शब्दार्थ दि० आ० आने दा० दालके स्थल, सा० साक के स्थल, मू० कंदमूलके स्थल, ह० हस्तक वनस्पति का स्थान अ० अन्य त० तथा प्रकारके थं० स्थंडिल स्थान में णो० नहीं उ०वडीनीत पा०लघुनीत वो०करे. ॥ २२ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी से० वे जं० जो पु० और थं० स्थंडिल जा० जाने अ० बीया वृक्षके [illegible] स० शणके वन, धा० धावडीका वन, कें० केतकी कावन अं० आम्रका वन अ० अशोक वृक्षका वन णा० नाग वृक्षका वन पु० पुनाग वृक्षका वन चु० चूर्ण वृक्षका वन अ० अन्य त० तथा प्रकार के प० पत्र पर, पु० पुष्प पर, फ० फलपर बी० बीजपर, ह० हरीपर णो०नहीं उ०वडीनीत पा०लघुनीत वो० करे.

सूत्र से भिक्खू वा (२) से जं पुण थंडिलं जाणेज्जा डागवच्चंसि वा, सागवच्चंसि वा, मूलगारच्चंसि वा, हत्थंकरवच्चंसि वा, अण्णयरंसि वा तहप्पगारंसि थंडिलंसि णो उच्चारपासवणं वोसिरेज्जा ॥ २२ ॥ से भिक्खू वा (२) से जं पुण थंडिलं जाणेज्जा असणवणंसि वा; सणवणंसि वा, धायईवणंसि वा, केयईवणंसि वा; अंबवणंसि वा, असोगवणंसि वा, णागवणंसि वा, पुण्णागवणंसि वा, चुण्णगवणंसि वा, अण्णयरेसु वा, तहप्पगारेसु वा, पत्तोवएसु वा, पुप्फोवएसु वा, फलोवएसु वा, बीओव-

भावार्थ और अन्य भी ऐसे स्थान में लघुनीत वडीनीत करना नहीं ॥ २२ ॥ बीयों के वन में शण के वन में, धावडी के वन में, केतकी के वन में, आम के वन में, अशोक के वन में, नागवृक्ष के वन में, पुनागवृक्ष के

शब्दार्थ ॥ २३ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी स० अपना पात्र वा० या प० अन्य का पात्र ग० ग्रहण कर से० फिर त० उसे आ० लेकर ए० एकान्त अ० जावे अ० मौन अ० अदृश्य अ० प्राणी रहित जा० यावत् म० मर्कट सं० जाले अ० अथ आ० बगीचे में उ० उपाश्रय में उ० वडीनीत लघुनीत वो० करे वोसराकर से० फीर त० उसे आ० लेकर ए० एकान्त अ० जावे अ० मौन जा० यावत् म० मर्कट सं० जाले अ०

सूत्र एसु वा, हरिओवएसु वा; णो उच्चारपासवणं वोसिरेज्जा ॥ २३ ॥ से भिक्खू वा (२) सयपाययं परपाययं वा गहाय सेत मायाए एगंत मवक्कमेज्जा अणावायंसि वा असंलोइयंसि अप्पपाणंसि जाव मक्काडासंताणयंसि अहारामंसि वा उवस्सयंसि उच्चारपासवणं वोसिरेज्जा वोसिरित्ता से त मायाय एगंत मवक्कमेज्जा अणावायंसि जाव मक्काडासंताणयंसि अहारामंसि वा झामथंडिलंसि वा अण्णयरंसि वा तहप्पगारंसि थंडिलंसि अचित्तंसि ततो संजयामेव उच्चारपासवणं परिट्ठवेज्जा

भावार्थ वृक्ष के, इत्यादि वनों में जहां फल, फूल, बीज, पड़े होवे तो वहां लघुनीत वडीनीत करे नहीं ॥२३॥ साधु साध्वी को अपना या अन्य का पात्र लेकर एकान्त में जहां कोइ आवे नहीं, तथा जहां कोइ देखे नहीं, वैसा निर्जीव स्थल में वडीनीत लघुनीत करना, करके उस पात्र को लेकर आराम में, जलाहुवा स्थल में, या

शब्दार्थ अथ अा० अंगिये में त० तब से० साधु उच्चा० इस अक्षिन में अ० अन्य त० तथा प्रकारके थं० स्थान में प० आदेश दे म० उस मं० साधु उ० बडीनीत लघुनीत प० परिठवे ॥ २४ ॥ पूर्ववत् ॥ २५ ॥

मूल ॥ २४ ॥ एय खलु तस्स भिक्खुस्स भिक्खुणीए वा सामग्गियं जावजएज्जासि त्तिबेमि ॥ २५ ॥ इति उच्चारपासवणं सत्तिक्कयनामं एकोनत्रीस मज्झयणं सम्मत्त उच्चारपासवण सत्तिक्कयं सम्मत्तं तइयं

भावार्थ अन्य भी ऐसा प्रकार का कोई अचित्त स्थल में यत्ना पूर्वक परिठवना ॥ २४ ॥ यह सर्व साधु साध्वी के आचार की संपूर्णता है उनोंने सर्व बातों में सावध रहना ॥ २५ ॥ यह बडीनीत लघुनीत परिठाने की विधि बतानेवाला एकोनविंश अध्ययन समाप्त हुवा. आगे शब्द विषय से निवृत्ति बतानेवाला शब्द नामक बीसवा अध्ययन कहते है

॥ शब्द नामकं विंशतितम मध्ययनम्. ॥

शब्दार्थ — से० वे भि० साधु साध्वी मु० मृदंग का शब्द नं० तबले का शब्द झ० झालर का शब्द अ० अन्य त० तैसे वि० विविध प्रकार के वि० विशेष अवाजवाले स० शब्द क० कर्णश्रोत के लिये णो० नहीं अ० धारे ग० जानेको ॥ १ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी अ० अथ प० एकेक स० शब्द सु० सुने तं० वह ज० यथा वी० वीणाके शब्द वि० विपंचीके शब्द व० वद्धिसकके शब्द तु० तारके शब्द प० पणवके शब्द तुं० तुम्बीकी वीणाके शब्द ढु० ढुगुर्वी के शब्द अ० अन्य त० तैसे वि० विविध प्रकार के स० शब्द त० सामान्य अ-

सूत्र — से भिक्खू वा (२) मुइंगसद्दाणि वा, नंदीमुइंगसद्दाणि वा, झल्लरिसद्दाणि वा, अण्णयराणि वा तहप्पगाराणि विरूवरूवाणि वितताइं सद्दाइं कण्णसोयपडिया-ए णो अभिसंधारेज्जा गमणाए ॥ १ ॥ से भिक्खू वा (२) अहावेगइयाइं सद्दाइं सुणंति तंजहा वीणासद्दाणि वा, विपंचिसद्दाणि वा, वद्धीसगसद्दाणि वा, तुणयसद्दाणि वा, पणवसद्दाणि वा तुंबवीणियसद्दाणि वा, ढुकुलसद्दाणि वा, अण्ण-यराइं वा तहप्पगाराइं विरूवरूवाणि सद्दाणि तताइं कण्णसोयपडियाए णो अ-

भावार्थ — साधु साध्वी को मृदंग, तबले, झालर आदि वादिंत्रों के शब्द सुनने की इच्छा से किसी स्थान जाना नहीं ॥ १ ॥ वीणा के, दशमुखी के, वर्द्धीशक के, सतार के, पत्ते की सतारके, तुम्बी पात्र की सतारके, ढीगुर्वी के और भी ऐसे तारकी जात के वादित्र के सामान्य अवाजवाले के शब्द सुनने को जाना नहीं

शब्दार्थ

बाज बाजे क० कर्णश्रोत के लिये णो० नहीं अ० धारे ग० जानेको ॥ २ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी अ० अथ वे० एकक स० शब्द म० सुने नं० वह ज० यथा ता० तालके शब्द कं० कंसताल के शब्द ल० कं० सिकाके शब्द गो० गोजिव्हा के शब्द कि० किरकिरी के शब्द अ० अन्य त० तैसे वि० विविध प्रकार के ता० तालके क० सुननेको म० शब्द णो० नहीं अ० वांच्छे ग० जाने को ॥ ३ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी अ० अथ वे० एकक स० शब्द सु० सुने त० वह ज० यथा सं० शंख के शब्द वे० वेणुके शब्द, वं० बांसके शब्द ख० खरमुखी के शब्द पि० पीपी के शब्द अ० अन्य त० तैसे वि० विविध प्रकारके स० शब्द सु०

सूत्र

भिसंधारिज्जा गमणाए ॥ २ ॥ से भिक्खु वा (२) अहावेगइयाइं सद्दाइं सुणे ति तंजहा तालसद्दाणि वा, कंसतालसद्दाणि वा, लत्तियसद्दाणि वा, गोहियसद्दाणि वा किरिकिरियसद्दाणि वा, अण्णयराणि वा, तहप्पगाराइं विरूवरूवाइं तालसद्दाइं कण्णसोयपडियाए णो अभिसंधारिज्जा गमणाए ॥ ३ ॥ से भिक्खु वा (२) अहावेगइयाइं सद्दाइं सुणेति तंजहा संखसद्दाणि वा, वेणुसद्दाणि वा, वंससद्दाणि वा खरमुहिसद्दाणि वा पिरिपिरियसद्दाणि वा, अण्णयराइं वा तहप्पगाराइं विरूवरूवाइं

भावार्थ

॥ २ ॥ ताल, कंसताल, लत, किरिकिरा, गोजिव्हा आदि तालजाति के शब्द सुनने को जाना नहीं ॥ ३ ॥ शंख के, वंशी के, खरमुखी के, पीपी के और अन्य भी ऐसे फूकने से बजे ऐसे वादित्र के शब्द सुनने को

आने को ॥ ६ ॥ से० वह भि० साधु साध्वी अ० एकेक त० शब्द सु० सुने त० वह ज० यथा गा० [illegible] णि० निगम के रा० राजधानी के आ० आश्रम के प० पाटण के सं० सन्निवेश के अ० [illegible] अ० [illegible] नहीं अ० धारे ग० आने को ॥ ७ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी अ० ए- [illegible] यथा आ० बगीचे, उ० उद्यान में व० वनमें व० वनखण्ड में दे० देवल में स० सभा में प० पानी की प्रपा में अ० अन्य त० तैसे स० शब्द को० नहीं अ० धारे ग० आने को ॥८॥

[illegible]ज्जाइं सद्दाइं कण्णसोयपडियाए णो अभिसंधारेज्जा गमणाए ॥ ६ ॥ से भिक्खू वा (२) अहावेगइयाइं सद्दाइं सुणेति तंजहा गामाणि वा, णगराणि वा, णिगमाणि वा, रायहाणिओ वा, आसमपट्टणसंणिवेसाणि वा, अण्णयराइं वा, तहप्पगाराइं सद्दाइं णो अभिसंधारेज्जा गमणाए ॥ ७ ॥ से भिक्खू वा (२) अहावेगइयाइं सद्दाइं सुणेति तंजहा आरामाणि वा, उज्जाणाणि वा, वणाणि वा, वणसंडाणि वा, देवकुलाणि वा, सभाणि वा, पवाणि वा, अण्णयराइं वा, तहप्पगाराइं सद्दाइं णो अभिसंधारेज्जा गमणाए ॥ ८ ॥ से भिक्खू वा (२) अहावेगइया-

[illegible] हुवे शब्द सुनने को जाना नहीं ॥ ६ ॥ ग्राम, नगर, निगम, राजधानी, आश्रम, पाटण या माथे [illegible] हुवे शब्द सुनने को जाना नहीं ॥ ७ ॥ आराम, उद्यान, वन, वनखंड, देवल, सभा, पानी की [illegible] हुवे शब्द सुनने को जाना नहीं ॥ ८ ॥ चौक में, मंदिर की चांदनीपर, नगर-

शब्दार्थ से० वे भि० साधु साध्वी भ० एकेक म० शब्द सु० सुने तं० वह ज० यथा भ० चांदनी में भ० कोटपर च० भांगरा दा० द्वारपर गो० नगर पोलमें भ० अन्य त० तैसे स० शब्द णो० नहीं अ० धारे ग० जाने को ॥ ९ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी अ० एकेक म० शब्द सु० सुने तं० वह ज० यथा ति० त्रिपुर च० चौक, च० चतुर्मुखी रस्ता म० चौमुखी भ० अन्य त० तैसे स० शब्द णो० नहीं अ० धारे ग० जाने को ॥ १० ॥ से० वे भि० साधु साध्वी म० महिष स्थान, व० वृषभ स्थान, भ० अश्व स्थान ह० हस्ती का

सूत्र इं सद्दाइं सुणेति तंजहा अट्टाणि वा, अट्टालयाणि वा, चरियाणि वा, दाराणि वा, गोपुराणि वा, अण्णयराइं वा, तहप्पगाराइं सद्दाइं णो अभिसंधारेज्जा गमणाए॥९॥ से भिक्खू वा (२) अहावेगइयाइं सद्दाइं सुणेति तंजहा तियाणि वा, चउक्काणि वा, चच्चराणि वा, चउम्मुहाणि वा, अण्णयराइं वा, तहप्पगाराइं सद्दाइं णो अभिसंधारेज्जा गमणाए ॥ १० ॥ से भिक्खू वा (२) अहावेगइयाइं सद्दाइं सुणेति तंजहा महिसट्ठाण—करणाणि वा, वसभट्ठाण—करणाणि वा, अस्सट्ठाण करणा-

भावार्थ कोटपर, स्तंभ में, दरवाजे पर होते हुवे शब्दों सुनने को जाना नहीं ॥ ९ ॥ साधु साध्वी को त्रिपथ, चौपथ, स्थान में, या मार्ग में गमनागमन होता होवे तो उसे सुनने को जाना नहीं ॥ १० ॥ साधु साध्वी को महिष, वृषभ, अश्व, हस्ती, आदि पशु के स्थान तथा कपिंजल आदि पक्षियों के स्थान में होते हुवे शब्दों

[illegible] स्थान अ० अन्य ह० तैसे स० शब्द [illegible] अ० धारे म० मानि [illegible] शब्द सु० सुने त० दा म० यथा [illegible] का [illegible] कांसिनर का युद्ध अ० अन्य व० तथा प्रकार [illegible] आन वा ॥ [illegible] ॥ से० [illegible] साधु साध्वी अ० एकेक म० शब्द सु० सु- [illegible] स्थान ह० अथवा युद्ध स्थान [illegible] युद्ध स्थान अ० अन्य

[illegible] वा [illegible] आन कवि जलट्ठाण-करणाणि वा, अण्णयराइं वा, [illegible] अभिसधारज्ञा गमणाए ॥ ११ ॥ से भिक्खू वा (२) [illegible] महिसजुद्धाणि वा, वसभजुद्धाणि वा, अस्सजु- [illegible] कविंजलजुद्धाणि वा, अण्णयराइं तहप्पगाराइं [illegible] ॥ से भिक्खू वा (२) अहावेगइयाइं सद्दाइं [illegible] हयजूहियट्ठाणाणि वा, गयजूहिय ट्ठाणा-

[illegible] वृषभ, अश्व, हस्ती, कपिञ्जल [illegible] का युद्ध [illegible] के युद्ध स्थान, अश्व के युद्ध स्थान, हस्ती के युद्ध-

शब्दार्थ तैसे णो० नहीं अ० धारे ग० जाने को ॥ १५ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी जा० यावत् स० शब्द सु० सुने खु० छोटी दा० बालिका प० परवरी मं० मंडित अ० अलंकृत नि० लेजाते अश्वसे पे० देखकर ए० एक पु० पुरुष को व० वध केलिये णी० लेजाते पे० देख अ० अन्य त० तैसे णो० नहीं अ० वांच्छे ग० जाने को ॥ १६ ॥ से० वे भि० साधु साध्वी अ० अन्य वि० विविध प्रकार के म० महोत्सव ए० ऐसा जा० जाने तं० वह ज० यथा ब० बहुत शकट ब० बहुत रथ ब० बहुत म्लेच्छ ब० बहुत चोर अ० अन्य त०

सूत्र

विरूद्धरज्जाणि वा अण्णयराइं वा तहप्पगाराइं णो अभिसंधारेज्ज गमणाए ॥ १५ ॥ से भिक्खू वा (२) जाव सद्दाइं सुणेति खुड्डियं, दारियं, परिभुयं, मंडियालंकिय निवु समाणियं पेहाए एगं पुरिसं वा वहाए णीणिज्जमाणे पेहाए अण्णयराइं तहप्पगाराइं णो अभिसंधारेज्ज गमणाए ॥ १६ ॥ से भिक्खू वा (३) अण्णयराइं विरूवरूवाइं महासवाइं एवं जाणेज्जा तंजहा बहुसगडाणि वा, बहुरहाणि वा,

भावार्थ विपाक, स्वचक्री की सेना परचक्री की सेना के कथन होते होवे वहां उसे सुनने को जाना नहीं ॥ १५ ॥ स्नानात्मवादि प्रयोजन में किसी बाल कुमारीका को अश्वारूढ करा के वस्त्राभूषण से सजाकर बहुत मनुष्यों के परिवार से लेजाते होवे या किसी घातकी पुरुष को वध करने के लिये लेजाने में आता होवे तो वहां जाना नहीं ॥ १६ ॥ अनेक प्रकारके महा आश्रव स्थान कि जहां बहुत गाडी, बहुत रथ, बहुत म्लेच्छ या

शब्दार्थ

[illegible] रूप थान [illegible] णो० नहीं अ० [illegible] जाने को ॥ १८ ॥ से० वे मि० [illegible] १० दूसरा लोक का शब्द णो० नहीं सु० सुना [illegible] णो० नहीं दि० देखा हुआ णो० नहीं अ० नहीं देखा हुआ शब्द [illegible] रक्ताराँ णो० नहीं गि० गृद्ध होवे णो० नहीं मु० मुग्ध होवे [illegible] ॥ पूर्ववत् ॥ २० ॥ * * *

[illegible] विरूवरूवाइं महुस्सवाइं कण्णसोयपडियाए [illegible] गमणाए ॥ १८ ॥ से भिक्खू वा (२) णो इह लोइएहिं [illegible] सद्देहिं णो सुतेहिं सद्देहिं णो असुतेहिं सद्देहिं णो दिट्ठेहिं सद्देहिं णो अदिट्ठेहिं सद्देहिं णो सज्जेज्जा, णो रज्जेज्जा, णो गिज्झेज्जा णो मुज्झेज्जा णो- अज्झोववज्जेज्जा ॥ १९ ॥ एयं खलु तस्स भिक्खुस्स भिक्खुणीए वा सामग्गियं जा- व जएज्जासि त्ति बेमि ॥ २० ॥ इति सद्द सत्तइक्कयं चिसमज्झयणं सम्मत्तं सत्तसत्तिक्कय चउथं.

भावार्थ

वे [illegible] सुनने को जाना नहीं ॥ १८ ॥ साधु साध्वी को स्वजातीय मनुष्यादिक के शब्दों, और विजातीय [illegible], सुने हुवे शब्दों, अनसुने शब्दों, देखे हुवे शब्दोंमें आसक्त, रक्त, मूढ [illegible] मोहित बनना नहीं ॥ १९ ॥ [illegible]

[illegible] ... बोधित करें ... विधि को ॥ ६ ॥

... [illegible] ... ॥ ६ ॥ इति ... सहित

... [illegible] ... पंचमं

... [illegible] ... विषय में निरंतर को पावकी ... संपूर्ण हुए. ... अध्ययन भी संपूर्ण हुआ. आगे इनमें से क्रिया कराने की निवृत्ति के लिये ... अध्ययन करते है

* * *

शब्दार्थ वांच्छे णो॰ नहीं तं॰ उसे णि॰ करावे सि॰ कदाचित् से॰ उसका प॰ अन्य पा॰ पाँव लो॰ लोद्रसे क॰ कर्क में चु॰ चूर्ण मे व॰ सुगन्धि द्रव्य मे उ॰ घसे उ॰ लेपकर णो॰ नहीं तं॰ उसे वांच्छे णो॰ नहीं तं॰ उसे णि॰ करावे सि॰ कदाचित् से॰ उसका प॰ दूसरा प॰ पगको सी॰ शीतोदक अचित्तसे उ॰ उष्णोदक अचित्तमे स उ॰ प्रक्षालन करे प॰ धोवे णो॰ नहीं तं॰ उसे सा॰ वांच्छे णो॰ नहीं तं॰ उसे णि॰ करावे सि॰ कदाचित् से॰ उसका प॰ अन्य पा॰ पाँव अ॰ अन्य तरह वि॰ विलेपनकी जाति मे आ॰ लिपनकरे वि॰ विशेष लिपनकरे णो॰ नहीं तं॰ उसे सा॰ वांच्छे णो॰ नहीं तं॰

सूत्र । सिया से परो पादाइं लोद्देण वा, कक्केण, वा चुन्नेण वा, वन्नेण वा, उल्लोलेज्ज वा उवलिंपेज्ज वा, णो तं सातिए णो तं नियमे । सिया से परो पादाइं सीओदगवियडेण वा उसिणोदगवियडेण वा उच्छोलेज्ज वा; पधोएज्ज वा णो तं सातिए णो तं नियमे । सिया से परो पादाइं अण्णयरेण विलेवणजातेण आलिंपेज्ज वा विलिंपेज्ज वा णो तं सातिए णो तं नियमे । सिया से परो पादाइं

भावार्थ तेल, घी, चरबी से मसले, लोद्र, क्षार, या चूर्ण से घसे या लेप करे, ठंडा या उष्ण पानी से सिंचे या धुवे अनेक प्रकारके विलेपन से लींपे या धूप से धूपित करे, या पाँव में से

शब्दार्थ

उसे णि० करावे भि० कदाचित से० उसका प० अन्य पा० पाँव अ० अन्य धू० धूपकी जातिसे धू० धूप देवे पि० विशेष धूपदेवे णो० नहीं तं० उसे सा० वांच्छे णो० नहीं तं० उसे णि० करावे भि० कदाचित से० उसके प० अन्य पा० पांवमे खा० कील्ला, कं० कंटक णी० नीकाले वि० साफकरे णो० नहीं तं० उसे सा० वांच्छे णो० नहीं तं० उसे णि० करावे भि० कदाचित से० वे प० अन्य पा० पगसे पू० राध सो० रक्त णी० नीकाले वा० या वि० साफकरे णो० नहीं तं० उसे सा० वांच्छे णो० नहीं तं० उसे णि० करावे॥२॥

सूत्र

अण्णयरेण धूवजाएण धूवेज्ज वा, पधूवेज्ज वा, णो तं सातिए णो तं नियमे। सिया से परो पादाओ—खाणुं वा, कंटयं वा, णीहरेज्ज वा, विसोहेज्ज वा, णो तं सातिए णो तं नियमे। सिया से परो पादाओ—पूयं वा, सोणियं वा; णीहरेज्ज वा, विसोहेज्ज वा, णो तं सातिए णो तं नियमे ॥ २ ॥ सिया से परो कायं आमज्जेज्ज वा, पमज्जेज्ज वा, णो तं सातिए णो तं नियमे। सिया से परो कायं संवाहेज्ज वा, पलिमद्देज्ज वा, णो तं सातिए णो तं नियमे। सिया से परो कायं तेल्लेण वा, घएण वा, वसाए वा, मक्खेज्ज वा, अब्भंगेज्ज वा, णो तं सातिए णो तं नियमे।

भावार्थ

स्वच्छ करे या राध और लोही नीकाल कर साफ करे तो उसे वांच्छना नहीं और ऐसा कराना नहीं॥

णो न नियमे। सिया से परो कायं सीओदगवियडेण

उच्छोलेज्ज वा पधोएज्ज वा णो तं सातिए णो तं नि

अण्णयरेण विलेवणजातेण आलिंपेज्ज वा विलिंपेज्ज-

नियमे। सिया से परो काय अण्णयरेणं धूवणजातेण-

सातिए णो तं नियमे ॥ ३ ॥ सिया से परो कायंसि

वा णो तं सातिए णो तं नियमे। सिया से परो

वा णो तं सातिए णो तं नियमे। सिया से

वा वसाए वा, मक्खेज्ज वा भिलिंगेज्ज वा

नियमे। सिया से परो कायंसि वणं लोद्देण वा, क-

वा उच्छोलेज्ज वा उव्वलेज्ज वा णो तं सातिए णो

विशेष इतना ही कहना कि यहां पग की जिगह यहां काया

एसा साधु को कार्य करने का बोले नहीं और करावे नहीं ॥ ३ ॥ यहां विशेष इतना

ने नियम । सिया से परो कायंसि वणं सीतोदगवियडेण वा, उसिणोदगवियडेण वा, [illegible] वा पधोवेज्ज वा णो तं सातिए णो तं नियमे । सिया से परो कायंसि [illegible] अण्णयरेणं सत्थजातेणं अच्छिंदेज्ज वा विच्छिंदेज्ज वा णो तं सातिए णो तं नियमे । सिया से परो अण्णयरेणं सत्थजातेणं अच्छिंदित्ता विच्छिंदित्ता पूयं वा सोणियं वा णीहरेज्ज वा विसोहेज्ज वा णो तं सातिए णो तं नियमे ॥ ४ ॥ सिया से परो कायंसि गंडं वा, अरतियं वा, पुलयं वा, भगंदलं वा, आमज्जेज्ज वा पम-[illegible] वा णो तं सातिए णो तं नियमे सिया से परो कायंसि गंडं वा, जाव भगंदलं वा [illegible] णो तं सातिए णो तं नियमे सिया से परो कायंसि गंडं वा जाव भगंदलं [illegible] वा [illegible] वा, मक्खेज्ज वा भिलिंगेज्ज वा णो तं सातिए णो तं नियमे सिया से परो कायंसि गंडं वा जाव भगंदलं वा, लोद्धेण वा कक्केण वा;

[illegible]) शरीरको उक्त प्रकारके कार्य करे या मल से छेद भेद कर गव [illegible] नहीं और करनावी नहीं ॥ ४ ॥ यदि उस शरीर में भगंदर, जलोदर [illegible] आश्रय करता ॥ ५ ॥

*

*

शब्दार्थ सि० कदा, स० उसकी प० अन्य का० शरीर से से० स्वेद ज० मेल णी० नीकाले वि० साफकरे णो० नहीं . ० उसे सा० वांच्छे णो० नहीं तं० उसे नि० करावे ॥६॥ सिं० कदाचित् सं० उसको प० अन्य अ० आंखका मेल, क० कर्ण का मेल, ण० नखका मेल, णी० नीकाले वि० साफकरे णो० नहो तं० उसे सा०

सूत्र चुण्णेण वा वण्णेण वा उल्लोडेज्ज वा उव्वलेज्ज वा णो तं सातिए णो तं नियमे सिया से परो कायंसि गंडं वा जाव भगंदलं वा सीतोदगवियडेण वा उसीणोदग वियडेण वा उच्छोलेज्ज वा पधोवेज्ज वा णो तं सातिए णो तं नियमे । सिया से परो कायंसि गंडं वा जाव भगंदलं वा अण्णयरेणं सत्थजाएणं अच्छिदेज्ज वा विच्छिदेज्ज वा सिया से परो अण्णयरेणं सत्थजाएणं अच्छिदित्ता वा पूयं वा सोणियं वा णीहरेज्ज वा णो तं सातिए णो तं नियमे ॥ ५ ॥ सिया से परो कायाओ सेयं वा जल्लं वा णीहरेज्ज वा विसोधेज्ज वा णो तं सातिए णो तं नियमे । ॥ ६ ॥ सिया से परो अच्छिमलं वा कण्णमलं वा णहमलं वा णीहरेज्ज वा वि-

भावार्थ साधु साध्वी के शरीर का स्वेद या मेल कोइ गृहस्थ साफ करे तो उसे वांच्छे नहीं और करावे भी नहीं ॥ ६ ॥ आंख का मेल, कान का मेल, नख का मेल जो कोइ गृहस्थ नीकाले तो उसे वांच्छे नहीं और करावे नहीं ॥ ७ ॥ और किसी मुनि का बाल, रोम, भ्रमर तथा गुप्त प्रदेश के रोम लम्बे देख कर

शब्दार्थ

भरण गे० गेहाभरण म० मुकुट पा० माला सु० सुवर्ण सूत्र आ० विंधे पि० पहिनावे णो० नहीं तं० उसे सा० वांच्छे ॥ १० ॥ सि० कदाचित से० उसको प० दूसरा आ० बागमें उ० उद्यान में णी० लेजाकर वि० शुद्धकर पा० पांव आ० मसले प० विशेष मसले णो० नहीं तं० उसे सा० वांच्छे ए० ऐसा णे० जानना अ० अन्योन्य की कि० क्रिया अपि ॥ ११ ॥ सि० कदाचित् से० उसको प० अन्य सु० शुद्ध

सूत्र

सि वा, तुयट्टावेत्ता हारं वा, अद्धहारं वा, उरच्छं वा; गेवेयं वा मउडं वा पालं वं वा सुवण्णसुत्तं वा, आविंधेज्ज वा पिणिधेज्ज वा, णो तं सातिए णो तं नियमे॥१०॥ सिया से परो आरामंसि वा उज्जाणंसि वा णीहरित्ता वा विसोहित्ता वा पायाइं आमज्जेज्ज वा पमज्जेज्ज वा णो तंसातिए। एवं णेयव्वा अण्णमण्ण किरियावि ॥ ११ ॥

भावार्थ

गोद में या पलंग पर सुलाकर हस्त पांव वगैरह की पूर्वोक्त क्रियाओं करे या हार अर्धहार उरस्थ आभरण गेहा भरण मुकुट माला सुवर्ण सूत्र पहिनावे तो उसे इच्छना नहीं और कराना नहीं ॥ १० ॥ उक्त प्रकार से कोइ गृहस्थ साधु को वनमें लेजाकर उसके पॉव मसले तो भी वांच्छे नहीं और करावे नहीं इसी तरह + परस्पर की क्रिया केलिये भी समझना ॥११॥ कोइ गृहस्थ शुद्ध या अशुद्ध विद्यामंत्र के बल

+ पूर्वोक्त कार्यो यदि साधु स्वयं करने को समर्थ होवे तो वह नतो गृहस्थ की पास करावे और न अन्य साधु की पास करावे. यह उत्सर्ग मार्ग जानना

[illegible] वा० वाक्य से [illegible] चिकित्सा आ० कराना सि० कदाचित मे० उसको प० अन्य अ० अशुद्ध व० वाक्य से [illegible] चिकित्सा [illegible] सि० कदाचित से० उसको प० अन्य गि० रोगीको स० सचित कं० कन्द मू० मूल [illegible] ह० हरि ख० खोदके, क० काढके क० कराके ते० चिकित्सा आ० करे णो० नहीं

सूत्र — [illegible] सिया से परो सुद्धेणं वतिबलेणं तेइच्छं आउट्टे सिया से परो असुद्धेणं वतिबलेणं [illegible] आउट्टे सिया से परो गिलाणस्स सचित्ताइं कंदाणि वा मूलाणि वा [illegible] वा [illegible] वा खणित्तु वा, कड्डेत्तु वा, कड्डावेत्तु वा, तेइच्छं आउट्टेज्जा [illegible] वेयणा पाणभूतजीवसत्ता वेयणं वेदेंति ॥ १२ ॥ एयं खलु [illegible] सामग्गियं जं सव्वट्ठेहिं सहिते समिते सदाजए

भावार्थ — [illegible] कन्द आदि हरीकाय उखेल कर रोगी साधु की चिकित्साकरनेको साधु उसे वांछे [illegible] सर्व प्राणी, भूत जीव और सत्व स्वयं कृत कर्म का फल (सुख दुःख) [illegible] अन्य को दुःख दियाहै वैसाही दुःख यहां प्राप्त हुवा है, ऐसा विचारना ॥ १२ ॥ [illegible] आचार की यह ही पूर्णता है, इसलिये उनको सर्व तरह से सांधर्म युक्त यत्ना-वन्त रहना और इसे ही श्रेय मानना ऐसा मैं कहता हूं. ॥ १३ ॥ यह दूसरेसे क्रिया कराने का छट्ठा

॥ भावनाख्यं चतुर्विंशतितम मध्ययनम् ॥

शब्दार्थ ते० उस का० कालमें ते० उस स० समयमें स० श्रमण भ० भगवन्त म० महावीर पं० पांचहस्तोत्तरवाले (उत्तरा फाल्गुनी) हो० थे ह० हस्तोत्तर में चु० चवे च० चवकर ग० गर्भमें ग० उत्पन्न हुवे ह० हस्तोत्तरमें ग० गर्भसे ग० गर्भमें सा० साहरण किया ह० हस्तोत्तरमें जा० जन्महुवा ह० हस्तोत्तर में स० सर्वतः सर्वथा प्रकार मु० मुण्डित भ० होकर अ० गृहसे अ० साधुपना प० अंगीकार कीया ह० हस्तो-

सूत्र तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे पंचहत्थुत्तरेयावि होत्था हत्थुत्तराहिं चुए चइत्ता गब्भं वकंते हत्थुत्तराहिं गब्भाओ गब्भं साहरिए हत्थुत्तराहिं जाए हत्थु-

भावार्थ उसकाल उस समय में श्री श्रमण भगवन्त महावीर स्वामीके सम्बन्ध में पांच वक्त उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र [illegible] प्रथम देवलोक से चव * चवकर यहां गर्भमें उत्पन्न हुवे (२) वहां देवानन्दाजी [illegible] की कुक्षी में साहरण हुवा (३) वहां उसी नक्षत्र में जन्म [illegible] (४) उत्तरा फाल्गुनी [illegible] गृहस्थ से मुण्डित साधु बने (५) और उत्तरा फाल्गुनी

* नरकके जीव मरकर ऊपर आते हैं इस लिये उसे उद्वर्तन कहा है, और देव लोक के जीव मरकर नीचे आते हैं इस लिये उसे चवना बोलते हैं.

शब्दार्थ त्तरमें क० कृत्स्न प० प्रतिपूर्ण अ० अव्याघात नि० निरावरण अ० अनंत अ० प्रधान के० केवल व० श्रेष्ठ णा० ज्ञान दं० दर्शन स० उत्पन्नहुवा सा० स्वान्ति में भ० भगवान प० मोक्ष पधारे ॥ १ ॥ स० श्रमण भ० भगवान म० महावीर इ० इस ओ० अवसर्पिणीके सु० सुषम सुषमा स० समय वी० वीतगया सु० सुषम स० समय वी० व्यतिक्रान्त हुवा सु० सुषम दुषम स० समय वी० व्यतीत हुवा दु० दुषम सुषम स० समय ब० बहुत वी० व्यतीत हुवा प० पचतरह वा० वर्ष मा० मास अधिक अ० आधा ण० नवमा से०

सूत्र त्तराहिं सव्वओ सव्वत्ताए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइए हत्थुत्तराहिं कसिणे प-डिपुण्णे अव्वाघाए निरावरणे अणंते अणुत्तरे केवलवरणाण दंसणे समुप्पण्णे साइणा भगवं परिणिव्वुए ॥ १ ॥ समणे भगवं महावीरे इमाए ओसप्पिणीए सुसमसुसमाए समाए वीतिक्कंताए सुसमाए समाए वीतिकंताए, सुसमदुसमाए समाए वीतिक्कंताए, दुसमसुसमाए समाए बहु-वीतिक्कंताए, पण्णत्तरीए वासेहिं मासेहिय अद्धणवमसेसेहिं, जे से गिम्हाणं चउत्थे

भावार्थ नक्षत्र में संपूर्ण, प्रतिपूर्ण, अव्याघात अनन्त, उत्कृष्ट केवल ज्ञान केवल दर्शन की प्राप्ति हुइ और स्वान्ति नक्षत्र में सर्व कर्मका क्षय कर निर्वाण पधारे ॥ १ ॥ इस अवसर्पिणीका सुषमसुषमा, सुषमा, सुषम-दुषमा ये तीन आरे व्यतीत हुवे और चौथा दुषमसुषम आरेके ७५ वर्ष साढे आठ [८॥] मास बाकी रहे

म० उस भा० आश्विनवदी का ते० त्रयोदशी को ह० हस्तोत्तर न० नक्षत्र में जो० योग प्राप्त होनेपर बा० [illegible] रा० रात्रिदिवस बी० व्यतीत हुए ते० त्यासीका रा० रात्रिदिन का प० पर्याय व० वर्तता हुवा दा० दक्षिण मा० माहण कु० कुंडपुर न० नगर से उ० उत्तर ख० क्षत्रिय कुंडपुर सं० संनिवेश में णा० ज्ञात वंशी ख० क्षत्रियों में सि० सिद्धार्थ क्षत्रिय का का० काश्यपगोत्र का ति० त्रिशला ख० क्षत्रियाणी वा० वासिष्ठ गोत्री अ० अशुभ पो० पुद्गल अ० अपहार क० करके सु० शुभ पो० पुद्गल का प० प्रक्षेप क०

[illegible] तेरसी पक्खेणं हत्थुत्तराहिं नक्खत्तेणं जोगोवगतेणं बासीतीहिं रातिंदिएहिं वीतिकंतेहिं तेसीतिमस्स रातिंदियस्स परियाए वट्टमाणे दाहिण माहण कुंडपुरसंणिवेसाओ उत्तरखत्तियकुंडपुरसंणिवेसंसि णायाणं खत्तियाणं सिद्धत्थस्स खत्तियस्स कासवगोत्तस्स तिसलाए खत्तियाणीए वासिट्ठसगोत्ताए असुभाणं पोग्गलाणं अवहारं करेत्ता सुभाणं पोग्गलाणं पक्खेवं करेत्ता कुच्छिंसि गब्भं साहरिए, जे०

[illegible] मी रे मास में पांचवा पक्ष में आश्विन कृष्णा त्रयोदशी के दिन उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र में ब्यासी दिन व्यतीत हुए बाद त्यासीवे दिन में दक्षिण ब्राह्मण कुंडपुर स्थान से उत्तर में आये हुवे क्षत्रिय कुंडपुर स्थान में ज्ञातवंशी काश्यप गोत्रीय सिद्धार्थ राजा के गृह वासिष्ठ गोत्र की त्रिशला क्षत्रिया-

[illegible] जो नि० त्रिशला ख० क्षत्रियाणी के कु० कुक्षिमें ग० गर्भ [illegible] ब्राह्मण कुंडपुर सन्निवेश में उ० ऋषभदत्त मा० ब्राह्मण का को० कोडाल [illegible] देवानंदा ब्राह्मणी जा० जालंधर गोत्री की कु० कुक्षिमें ग० गर्भ सा० महारा ॥ ४ ॥ [illegible] भगवान [illegible] तीनज्ञान सहित हो० थे सा० साहरण करेंगे ति० ऐसा जा० [illegible] ऐसा जा० जानते थे सा० साहरण करते समय भी जा० जानते थे [illegible] आयुष्मन ॥ ५ ॥ ते० उस का० काल ते० उस सं० समय ति० त्रिशला ख० क्षत्रिया-

मूल

[illegible] कुच्छिंसि गब्भे तंपिय दाहिण माहणकुंडपुर संणि [illegible] माहणस्स कोडालसगोत्तस्स देवाणंदाए माहणीए जालंधरा [illegible] गब्भं साहरिए ॥ ४ ॥ समणे भगवं महावीरे तिणाणो [illegible] साहरिजिस्सामि त्ति जाणइ, साहरिएमित्ति जाणइ, साहरिज्जमा- [illegible] ॥ ५ ॥ ते णं कालेणं ते णं समएणं तिसला खत्ति

भावार्थ

[illegible] शुभपुद्गल का प्रक्षेप कर गर्भ में रखे. ॥ ४ ॥ इस समय भगवान् [illegible] जानते थे, संहरण हुआ ऐसा जानते थे, और संहरण होते समय [illegible] जानते थे ॥ ५ ॥ उस काल उस समय में त्रिशलादेवी क्षत्रियाणी को नव मास पूर्ण हुवे और साडी-

पा॰ भ॰ तप भ॰ अन्यदा क॰ कदापि ण॰ नव मा॰ मास प॰ प्रतिपूर्ण अ॰ अर्ध आठ रात्रि रा॰ रात्रिदिन वी॰ व्यतीत हुवा जे॰ जब गि॰ ग्रीष्मका प॰ प्रथम मा॰ मास दो॰ दूसरा प॰ पक्ष चै॰ चैत्रशुदी त॰ उस चे॰ चैत्रशुदी ते॰ त्रयोदशी ह॰ हस्तोत्तर में जो॰ योग मिलनेपर स॰ श्रमण भ॰ भगवन्त म॰ महावीर आ॰ नीरोगीपने प॰ जन्मे ॥ ६ ॥ जं॰ जिस रा॰ रात्रिमें ति॰ त्रिसला ख॰ क्षत्रि-याणिने स॰ श्रमण भ॰ भगवंत मा॰ महावीर को आ॰ नीरोगीपने प॰ जन्म दीया तं॰ उस रा॰ रात्रि में भ॰ भवनपति वा॰ वाणव्यंतर जो॰ ज्योतिषिक वि॰ विमानवासी दे॰ देवोंने दे॰ देवीओंने उ॰

सूत्र

याणी अह अन्नया कयाइ णवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं अद्धट्ठमाणं राइंदि-याणं वीतिक्कंताणं जे से गिम्हाणं पढमे मासे दोच्चे पक्खे चित्तसुद्धे तस्सणं चित्तसुद्धस्स तेरस्सीपक्खेणं हत्थुत्तराहिं जोगोवगतेणं समणं भगवं महावीरं आरोयारोयं पसूया ॥ ६ ॥ ज णं राइं तिसलाखत्तियाणी समणं भगवं महावीरं आरोयारोयं पसूया तंणं राइं भवणवइ—वाणमंतर—जोइसिय—विमाणवासि देवे

भावार्थ

रात्रि व्यतीत हुए तब चैत्र शुदी त्रयोदशी १३ को उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में भगवान् महावीर स्वामी का जन्म हुआ ॥६॥ जिस रात्रि में त्रिसला देवीने भगवान का जन्म दिया उस रात्रि में भवनपति, वाणव्यं-तर, ज्योतिषिक, तथा विमानवासी देव देवीयों के उतरने से ऊंचे जाने से एक महान् दिव्य देवों का

... उद्योत हुवा हो० था ॥ ७ ॥ ... दि० दिव्य दे० देवका उद्योत दे० देवका मेला; दे० देवकी
... भगवन्त महावीरको आ० आरोग्य प० जन्मदिया तं० उस र० रात्रिमें ब० बहुत दे० देवता य० बहुत दे० देवीयाँ ए०
एक म० महान अ० अमृत वर्षा गं० गंधकी वर्षा चु० चूर्णकी वर्षा पु० पुष्पकी वर्षा हि० सुवर्ण चांदिकी
वर्षा र० रत्नकी वर्षा वा० वर्षाई ॥ ८ ॥ जं० जिस र० रात्रिमें ति० त्रिशला खत्रियाणीने स० श्रमण
भगवन्त महावीरको आ० आरोग्य प० जन्मदिया तं० उसरात्रिको भ० भवनपति वा० वाणव्यंतर जो० ज्यो-

हि य देवीहि य उवयंतेहि य उप्पयंतेहि य एगे महं दिव्वे देवुज्जोए देवसण्णिवाते देवकह-
कहे उप्पिंजलग भूते यावि होत्था ॥७॥ जं णं रयणिं तिसला खत्तियाणी समणं भगवं
महावीरं आरोग्गारोग्गं पसूया तं णं रयणिं बहवे देवा य देवीओ य एगं महं अमयवासं
च गंधवासं च चुण्णवासं च पुप्फवासं च, हिरण्णवासं च रयणवासं च वासिंसु ॥ ८ ॥
जं णं रयणिं तिसला खत्तियाणी समणं भगवं महावीरं आरोग्गारोग्गं पसूया
तं णं रयणिं भवणवइ—वाणमंतर—जोतिसिय—विमाणवासिणो—देवाय देवीओय

पश्चात देवोंका आगमन, देवोंका आनंदाप तथा प्रकाशका होरहा था ॥७॥ जब भगवन्त महावीर स्वामीका
जन्म हुवा तब देवताओंने अमृत, गंध, चूर्ण, फूल, रूप्य, सुवर्ण, व रत्नों की वृष्टि की ॥ ८ ॥ उसी रात्रिको
... देवीओंने कौतुक ? कर्म ? भूति कर्म और तीर्थंकराभिषेक किया ॥ जिस दिन से भग-

(४) मांगलिक कार्य को कौतुक कर्म (५) रक्षाबंधन को भूति कर्म.

अर्थ

विमानवासी दे० देव दे० देवीयोंने स० श्रमण भगवन्त महावीर को को० कौतुक कर्म भू० प्रतिकर्म ति० तीर्थंकराभिषेक क० किया. ॥ ९ ॥ ज० जबसे भ० भगवान् महावीर ति० त्रिसला क्षत्रियाणी की कु० कुक्षिमे ग० गर्भमे आ० आये त० तब से तं० वह कु० कुल वि० बहुत हि० चांदीसे सु० सुवर्ण से ध० धनसे ध० धान्यसे मा० माणिक्यसे मो० मोतिसे सं० शंख सि० शिला प० प्रवाल अ० अतीव प० बढा स० तब स० श्रमण भगवंत महावीर के अ० मातापिता ए० यह अ० अर्थ जा० जानकर णि० दशदिन निवर्त्या वो० व्यतिक्रांत स० विस्तार में वि० बहुत अ० अशन पा० पान खा० खादिम

सूत्र

समणस्स भगवओ महावीरस्स कोतुगभूतिकम्माइं तित्थराभिसेयं च कीरिंसु ॥ ९ ॥ जतो णं पभिति भगवं महावीरे तिसलाए खत्तियाणीए कुच्छिसि गब्भं आहूए ततोणं पभिति तं कुलं विपुलेणं हिरण्णेणं, सुवण्णेणं, धणेणं, धण्णेणं, माणिक्केणं, मोत्तिएणं, संखसिलप्पवालेणं, अतीव परिवड्ढइ ततो णं समणस्स भगवओ महावीरस्स अम्मापियरो एयमट्ठं जाणित्ता णिव्वत्तदसाहंसि वोक्कंतंसि सु विभूतंसि विपुलं असणपाणखाइमसाइमं उवक्खडावेंति विपुलं असणपा-

भावार्थ

वान श्री महावीर स्वामी कुक्षि में आये उस ही दिन से उन के कुल में सुवर्ण, रजत, धन, धान्य, माणिक्य, मोती, उत्तम शंख, पत्थर, और मवाल की बहुत वृद्धि हुई जिस से भगवान के मात पिताने जन्म के दश

शब्दार्थ ॥ श्रा मू॰ निवारक मि॰ मित्र स्वजन सम्बन्धिओं से इ॰ यह णा॰ नामधेय क॰ किया ज॰ जबसे इ॰ यह
कु॰ कुमार ति॰ त्रिशला क्षत्रियाणी के कुं॰ कुक्षिमें ग॰ गर्भमें आ॰ आये त॰ तब से इ॰ यह कु॰ कुल
वि॰ विपुल हि॰ हिरण्य सु॰ सुवर्ण ध॰ धान्य ध॰ धन मा॰ माणिक्यमे मो॰ मोतिमे सं॰ शंख शि॰ शिला
प॰ प्रवाल अ॰ अति प॰ बढ़ा त॰ इसलिये हो॰ होवे कु॰ कुमार व॰ वर्धमान ॥ १० ॥ त॰ तब स॰
श्रमण भ॰ भगवान म॰ महावीर प॰ पांच धा॰ धाइमे प॰ परवरे तं॰ वह ज॰ यथा खी॰ दुध पीलाने

मूल ॥ धिज्जंतीण इमेयारूवं णामधेज्जं करेंति जओ णं पभिइ इमे कुमारे तिसलाए खत्तियाणीए कुच्छिंसि गब्भे आहूए तओ णं पभिइ इमं कुलं विपुलेणं, हिरण्णेणं, सुवण्णेणं धण्णेणं, धणेणं, माणिक्केणं मोत्तिएणं संखसिलप्पवालेण अतीव २ परिवड्ढइ त होउ ण कुमारे वद्धमाणे ॥ १० ॥ तओ णं समणे भगवं महावीरे पंचधाइपरिवुडे तंजहा खीरधाईए मज्जणधाईए मंडावणधाईए खेल्लावणधाईए अं-

भावार्थ ॥ कुल धन धान्यादिक की वृद्धि हुइ तदनुसार वर्धमान कुमार ऐसा नाम रक्खा ॥ १० ॥ श्रमण भगवन्त महावीर स्वामी के लिये पंच धायी रखने में आइ थी (१) दुध पीलानेवाली, [२] स्नान करानेवाली, ३ भूषण पहिरानेवाली, ४ खेलानेवाली, ५ गोद में रखनेवाली, और एक गोद में दूसरी गोद में जाते

शब्दार्थ

वाली धाइ म० मंजन करानेवाली मं० वस्त्रालंकार पहिरानेवाली खे० खेलानेवाली अं० गोदमें लेने वाली धाइ अं० गोदमें से अं० गोदमें सा० लेजाते र० रम्य म० कोट्टिम मणिकातला वाली गि० पर्वतकी गुफा माफिक ह्री० हवीहुइ चं० चंपाका पादप जैसे अ० अनुक्रमे सं० बढे ॥ ११ ॥ त० तब स० श्रमण भगवंत महावीर वि० विज्ञान प० परिणत वि० निवर्त बा० बालभावसे अ० अनुत्सुक उ० उदार मा० मनुष्य संबन्धि पं० पांच प्रकारके का० कामभोग स० शब्द फ० स्पर्श, र० रस रू० रूप गं० गंध प० भोगवंत हुवे आ० भोगवते वि० विचरते थे ॥ १२ ॥ स० श्रमण भ० भगवंत म० महावीर का० काश्यप गोत्रीय

सूत्र

अंकाओ अंकं साहरिज्जमाणे रम्मे मणिकोट्टिमतले गिरिकंदरसमल्लीणे व्व चंपयपायवे अहाणुपुव्वीए संवड्ढइ ॥ ११ ॥ तओणं समणे भगवं महावीरे विण्णायपरिणए विणियत्तबालभावे अप्पुस्सुयाइं, उरालाइं, माणुस्सगाइं, पंचलक्खणाइं, कामभोगाइं सद्दफरिसरसरूवगंधाइं परियारेमाणे एवं चणं विहरति ॥ १२ ॥ समणे भगवं महावीरे कासवगोत्ते इमे तिण्णि णामधेज्जा ए-

भावार्थ

एवं रम्य रत्नजडित मकान में रह कर गिरि गुफा में रहा हुवा चंपक वृक्षकी जैसे बढने लगे ॥ ११ ॥ जब भगवान बाल अवस्था से मुक्त होकर विज्ञान अवस्था को प्राप्त हुवे तब उत्सुकता रहित मात्र भोगावली कर्म क्षय करने पांचों इन्द्रियों के काम भोग भोगवते विचरने लगे ॥ १२ ॥ भगवान् काश्यप गोत्रीय थे. उन के

शब्दार्थ

ए० ये ति० तीन णा० नामधेय ए० ऐसे आ० कहते हैं अ० मातापिता से सं० दिया व० वर्धमान स० सहज गुणों से स० श्रमण, भी० रौद्र भ० भयंकर भे० दारुण उ० उदार अ० वस्त्र रहित प० परिषह स० सहे उ० ऐसा क० करके दे० देवोंने से० ऐसा णा० नाम क० किया स० श्रमण भगवान् महावीर ॥ १३ ॥ स० श्रमण भगवान महावीर के पि० पिता का० काश्यप गोत्रीय त० उसका ति० तीन णा० नाम ए० ऐसे आ० कहते हैं तं० वह ज० यथा सि० सिद्धार्थ से० श्रेयांस ज० यशस्वी ॥ १४ ॥ स० श्रमण भगवान् महावीर की अ० माता वा० वाशिष्ट गोत्रीय ती० उनके ति० तीन णा० नाम ए० ऐसे आ० बोलते हैं

सूत्र

व माहिज्जंति अम्मापिउसंतिए "वद्धमाणे" सहसमुदिए "समणे" भीमभयभेरवं, उरालं, अचेलयं, परीसहं सहइ त्तिकट्टु देवेहिं से णामं कयं "समणे भगवं महावीरे" ॥१३॥ समणस्स भगवओ महावीरस्स पिता कासवगोत्तेणं तस्सणं तिण्णि णामधेज्जा एवमाहिज्जंति तंजहा-सिद्धत्थेति वा, सेज्जंसेति वा, जसंसेति वा, ॥ १४ ॥ समणस्स भगवओ महावीरस्स अम्मा वासिट्ठसगोत्ता तीसेणं तिण्णि णामधेज्जा ए-

भावार्थ

तीन नाम कहे जाते हैं. (१) मातपिताने वर्धमान नाम दिया, गुणों करके श्रमण नाम पडा और भयंकर महान् अचेल परिषह सहन करने से देवोंने श्रमण भगवान नाम रक्खा ॥ १३ ॥ श्रमण भगवान महावीर स्वामी के पिता काश्यप गोत्रीय थे, उन के तीन नाम सिद्धार्थ, श्रेयांस और यशस्वी ॥ १४ ॥ श्रमण भगवान् महावीर की माताके तीन नाम-त्रिशला देवी, विदेहदिन्ना...

ए० एस आ० कहते हैं. तं० वह ज० यथा अ० अनवद्या पि० प्रिय दर्शना स० श्रमण भगवान् महावीर की ण० दौहित्री को० कौशिक गोत्रकी ती० उनका दो० दो णा० नाम आ० कहते हैं तं० वह ज० यथा से० शेषवती ज० यशोमती ॥ १६ ॥ स० श्रमण भगवान् महावीर के अ० माता पिता पा० पार्श्व संतानिय स० श्रमणो पासक हो० थे ते० इससे ब० बहुत वा० वर्ष पर्यंत स० श्रमणो पासक की प० पर्याय पा० पालके छ० षट् जी० जीव निकाय को सं० संरक्षण निमित्त आ० आलोचकर निं० निंदकर ग०

या कासवगोत्तेणं तीसेणं दो णामधेज्जा एवमाहिज्जंति तंजहा अणोज्जाति वा पियदंसणाति वा, समणस्सणं भगवओ महावीरस्स णत्तुई कोसियागोत्तेणं तीसेणं दो णामधेज्जा एव माहिज्जंति तंजहा सेसवइत्ति वा जसवतीति वा ॥ १६ ॥ समणस्सणं भगवओ महावीरस्स अम्मापियरो पासावच्चिज्जा समणोवासगा यावि होत्था ते णं बहूइं वासाइं समणोवासगपरियाणं पालयित्ता छण्हं जीवनिका-

वती, यशोमती ॥ १६ ॥ भगवंत महावीर स्वामी के माता पिता श्री पार्श्वनाथ स्वामी के संतानिय श्रमणों के श्रावक थे. बहुत कालतक श्रावकपना पालकर, षट्काय के जीवों की रक्षार्थ पाप की आलोचना कर, स्वात्माकी निन्दा कर, गुरु की साक्षि से घृणाकर, पाप से निवृत्ति कर, यथा योग्य प्रायश्चित्त

शब्दार्थ विशेष निन्दकर प० पापका प्रायश्चित्त कर अ० जैसाकहा वैसा उ० उत्तरगुण का पा० प्रायश्चित्त प० अंगीकार कर कु० कुशका संथारा दु० बिछाकर भ० भक्त का प० प्रत्याख्यान किया भ० भक्त का प्रत्याख्यान करके अ० पीछे नहीं म० मरणान्तिक स० शरीर की सं० संलेषणासे झु० निर्बलकर स० शरीर को का० कालके आ० अवसर का० काल कि० करके तं० उस स० शरीर को वि० छोड़कर अ० अच्युत कल्प दे० देवता में उ० उत्पन्न हुवे त० वहां से आ० आयुष्यक्षयसे भ० भवक्षय से ठि० स्थिति का क्षय

सूत्र याणं संरक्खणनिमित्तं आलोइत्ता, निंदित्ता, गरहित्ता, पडिक्कमित्ता, अहारिहं उत्तरगुणपायच्छित्तं पडिवज्जित्ता कुससंथारं दुरुहित्ता भत्तं पच्चक्खाइंति, भत्तं पच्चक्खाइत्ता अपच्छिमाए मरणंतियाए सरीरसंलेहणाए झुसियसरीरा कालमासे कालं किच्चा तं सरीरं विप्पजहित्ता अच्चुए कप्पे देवताए उववण्णा; तओणं आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएणं चुए, चवित्ता महाविदेहवासे चरिमेणं ऊसा

भावार्थ कर, घासके बिछौने पर बैठ कर, भक्त प्रत्याख्यान कर, अन्तिमश्वासोश्वास तक संलेषणा से शरीर का शोष करके, आयुष्य के पूर्ण होने से शरीर का त्याग कर बारवां अच्युत देवलोक में देवता हुवे. वहां से आयुष्य का क्षय होने पर चवकर महाविदेह क्षेत्र में संयम अंगीकार कर अन्तिम श्वासमें सिद्ध,

मे च० चंवे च० चवकर म० महाविदेह क्षेत्रमें च० छेल्ला उ० उश्वास से सि० सिद्ध होवेंगे, मु० मुक्त होवेंगे प० निर्वाण पधारेंगे स० सर्व दु० दुःख का अं० अन्त क० करेंगे ॥ १७ ॥ ते० उसकाल ते० उस समय में स० श्रमण भगवंत महावीर णा० जगत विख्यात णा० ज्ञातपुत्र णा० ज्ञातकुल चंद्र णा० ज्ञात कुलोत्पन्न वि० विशिष्टदेह युक्त वि० विदेहापुत्र वि० कंदर्पजेता वि० गृहस्थावासमें उदास ती० तीसवर्ष वि० गृहवास में त्ति० क्षमा क० करके अ० अगारमध्ये व० रहकर अ० माता पिताके का० कालहुवे बाद दे० देवलोक को अ० प्राप्त हुवे बाद स० प्रतिज्ञा पूर्णजान चि० छोडकर हि० चांदि चि० छोडकर सु० सुवर्ण

सूत्र

सेण सिज्झस्संति बुज्झिस्संति मुच्चिस्संति परिणिव्वाइस्संति सव्वदुक्खाणं अंतं करिस्सति ॥ १७ ॥ तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे णाये, णायपुत्ते, णायकुलचंदे, णायकुलणिव्वत्ते, विदेहे, विदेहादिण्णे, विदेहजच्चे, विदेहसूमाले तीसं वासाइं विदेह त्तिकट्टु अगारमज्झेवसित्ता अम्मापिउहिं कालगएहिं देवलोगमणुपत्तेहिं समत्तपइण्णे चिच्चा हिरण्णं, चिच्चा सुवण्णं, चिच्चा बलं, चिच्चा वा-

भावार्थ

बुद्ध मुक्त. सर्व कर्म रहित होवेंगे ॥ १७ ॥ उस काल उस समय में जगत् विख्यात सिद्धार्थ राजाके पुत्र, ज्ञातवंशोत्पन्न, विशिष्ट देहधारी, विदेहापुत्र, कंदर्पजेता, गृहवास में सदा उदास ऐसा श्री श्रमण भगवान् महावीर स्वामीने तीस वर्ष तक गृहवास में रह कर मातापिता स्वर्ग पधारे तब गर्भ में की ■ प्रतिज्ञा पूर्ण

शब्दार्थ

चि० छोडकर वा० वाहन चि० छोडकर ध० धन ध० धान्य क० कनक र० रत्न सं० बहुमूल्य सा० द्रव्यको वि० देकर वि० गुप्तदेकर वि० प्रकटदेकर दा० दातार में दा० दानका प० विभाग करके सं० संवत्सर दान द० देकर जे० जो से० वे हे० हेमन्त ऋतुका प० प्रथम मासमें प० प्रथमपक्षमें म० मार्गशीर्ष वदी त० उस म० मार्गशीर्ष वदी द० दशमी पक्षमें ह० उत्तरा फाल्गुनी न० नक्षत्रके जो० योग में अ० निकलने का अ० अभिप्राय हो० हुवा ॥ १८ ॥ सं० वर्षमें हो० होगा अ० निकलना जि० जिनवरेन्द्रका तो० तव

सूत्र

हणं चिच्चाधणधण्णकणयरयणसंतसारसावदेज्जं विच्छड्डेत्ता, विगोवित्ता, विस्साणित्ता, दायारेसु णं दायं पज्जाभातित्ता संवच्छरं दाणं दलइत्ता जे से हेमंताणं पढमे मासे पढमे पक्खे मग्गसिरबहुले तस्स णं मग्गसिरबहुलस्स दसमीपक्खेणं हत्थुत्तराहिं णक्खत्तेणं जोगोवतेणं अभिणिक्खमणाभिप्पाए यावि होत्था ॥ १८ ॥ संवच्छरेण होहिंति अभिणिक्खमणंतु जिणवरिंदाणं तो अत्थि सं-

भावार्थ

कर जानकर सुवर्ण, चांदी, वाहन, धन, धान्य, कनक रत्न तथा और भी अनेक बहुमूल्य वस्तु को दानार्थ छोडकर, बारह मास वर्षी दान देकर हेमन्त ऋतु के पहिले पक्ष में मृगशर वदी १० मी के दिन उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र का योग में दीक्षा लेने का विचार किया ॥ १८ ॥ श्री श्रमण भगवान् वर्ष के अन्त में दीक्षा

अ० थी सं० संपदाकी प० प्रवृत्ति पु० पहिले सु० सूर्योदय से (१) ए० एक हि० हिरण्य कोटी अ० आठ अ० पूरा स० लक्ष सू० सूर्योदय से आ० लेकर दि० देतेथे जा० यावत् पा० भोजन तक (२) ति० तीन को० कोटिशत अ० अठ्यासी हो० होवे को० कोटि अ० अस्सी स० शतसहस्र (लक्ष) ए० ऐसे सं० संवत्सर में दि० दिया (३) ॥ १९ ॥ वे० वैश्रमण कुं० कुंडलधारी दे० देवता लो० लोकान्तिक म० महर्धिक बो० बोधदेते हैं ति० तिर्थंकर को प० पंदरह क० कर्मभूमिमें (४) य० ब्रह्म क०

सूत्र

पदाणं(१)एगा हिरण्णकोडी अट्ठेव अणूणया सयसहस्सा सूरोदयमादीयं दिज्जइ जा पायरासो त्ति(२)तिण्णेव य कोडिसया अट्ठासीतिं च होंति कोडीओ असियंच सयसहस्सा एयं संवच्छरे दिण्णं(३)।१९। वेसमण कुंडलधरा देवालोगंतिया महिड्ढीया बोहंति य तित्थयरं पण्णरससु कम्मभूमीसु।४।बंभंमि य कप्पंमि य बोद्धव्वा कण्हराइणोमज्झे लोगंतिया विमाणा अट्ठसुवत्था

भावार्थ

लेनेवाले हैं इस लिये सूर्य का उदय होते ही दान की प्रवृत्ति करने में आती थी. प्रतिदिन सूर्योदय से एक प्रहर में एक क्रोड आठ लाख सोनामहोरों दान में देते थे वैसे ही एक वर्ष में तीन सो अठासी क्रोड अस्सी लाख सोनामहोरों दान में दी ॥ १९ ॥ वर्षिदान दिये बाद पांचवे स्वर्ग के नजीक आठ कृष्ण राजी के अन्तर में आठ लोकान्तिक देवता के रहने का विमान असंख्यात योजन का है जिस में एक विमान मध्य में है इस में सारस्वत, आदित्य, वन्हि, वरुण, गर्धतोय, तोषित, अव्याबाध, और आरिष्ट ये नव

शब्दार्थ

कल्प में पां० जानना क० कृष्ण गजिये लो० लोकान्तिक वि० विमान अ० आठ प्रकारका प० विस्तार पाया अ० असंख्याता (८) ए० ये दे० देवोंका समूह भ० भगवान को बो० बोधदेते है. जि० जिनवर वि० वीर म० सर्व ज० जगतके जी० जीवका हि० हित अ० अर्हन ति० तीर्थ को प० प्रवर्तावो [६] ॥२०॥ त० तब म० श्रमण भगवंत महावीर का अ० निकलने का अ० अभिप्राय जा० जानकर भ० भवनपति वा० वाणव्यंतर जो० ज्योतिषिक वि० विमानवासी दे० देवता दे० देवी स० अपने २ रू० रूपसे स० अ-

सूत्र

असंखेज्जा ॥५॥ एते देवणि काया भगवं बोहिंति जिणवरं वीरं, सव्वजगज्जीवहियं अरहं तित्थं पवत्तेहि (६)॥२०॥ तओणं समणस्स भगवओ महावीरस्स अभिणिक्खमणाभिप्पायं जाणित्ता भवणवइ–वाणमंतर–जोइसिय–विमाणवासिणो देवा य देवीओ य सएणं २ रूवेहिं सएहिं २ णेवत्थेहिं सएहिं २ चिंधेहिं सव्विड्ढीए सव्वजुईए सव्वबलसमुदएणं सयाइं २ जाणविमाणाइं दुरुहंति सयाइं २ जाण विमाणाइं दुरुहित्ता अ-

भावार्थ

जाति के देव रहते हैं उन का सीताचार यह है कि पंद्रह कर्मभूमि में जो तीर्थंकर होते हैं उन को दीक्षा के अवसर में संबोधे. इस रीत्यानुसार श्री महावीर प्रभु को भी बोध किया कि हे अर्हन! तीर्थ प्रवर्तावो सर्व जीवों का कल्याण करो ॥ २० ॥ फीर भगवान का दीक्षा अंगीकार करने का अभिप्राय जानकर चारों जाति के देव, देवी अपने २ रूप, वेश, चिन्हों को धारण कर सर्व ऋद्धि, द्युति, तथा सेना के साथ

शब्दार्थ

पने २ पे० वेशसे म० अपने २ चि० चिन्हसे स० सवद्युतिसे स० सर्वऋद्धिसे स० सबबलसमुदायसे स० अपना २ जा० यान विमानपर दु० चडे स० अपना २ जा० विमानपर दु० बैठकर अ० यथा बा० बादर पो० पुद्गल प० छोड अ० जैसे बा० बादर पो० पुद्गल प० छोडकर अ० यथा सु० सूक्ष्म पो० पुद्गल प० ग्रहण किया अ० यथा सूक्ष्म पु० पुद्गल प० ग्रहणकर उ० ऊर्ध्व उ० उडे उ० ऊर्ध्व उ० उडकर ता० उस उ० उत्कृष्ट सि० शीघ्र भ० चपल तु० वादित्र दि० दिव्य दे० देवगतिसे अ० नीचे उ० उतरते २ ति० तिर्यक् से अ० असंख्याता दी० द्विप समुद्र वी० उल्लंघता हुवा २ जे० जहां जं० जम्बूद्वीप द्वीप ते० वहांही उ० आये उ०

सूत्र

हाबादराइ पोग्गलाइं परिसाडेंति, अहाबादराइं पोग्गलाइं परिसाडित्ता अहासुहुमाइ पोग्गलाइं परियाइंति अहासुहुमाइं पोग्गलाइं परियाइत्ता उड्ढं उप्पयंति उड्ढं उप्पइत्ता ताए उक्किट्ठाए, सिग्घाए, चवलाए, तुरियाए दिव्वाए, देवगइए, अहेणं उवयमाणा २ निरिएणं असंखेज्जाइं दीव-समुदाइं वीतिक्कममाणा २ जेणे व जंबूदीवे दीवे तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता जे णेव उत्तरखत्तियकुंडपुरसंणि-

भावार्थ

अपने २ विमानों पर आरूढ होकर, बादर पुद्गलोंको साग कर, सूक्ष्म पुद्गलोंको धारन कर, ऊंचा चढकर, अत्यंत शीघ्रता तथा चपलता युक्त दिव्य देवगति से नीचे उतरकर, तिर्यक् लोक में असंख्याता द्विप समुद्र का उल्लंघन कर जम्बूद्विप के दक्षिण भरत में क्षत्रियकुंड नगर की इशान कोन में शीघ्र २ आ पहुंचे

शब्दार्थ

आकर जे० जिसतरफ उ० उत्तर ख० क्षत्रिय कुंडपुर संनिवेश ते० उसी तरफ उ० आये उ० आकर जे० जिसतर्फ उ० उत्तर क्षत्रिय कुंडपुर संनिवेश में उ० ईशान दि० दिशा विभाग में तं० तहां श० जाते थे वे० वेगसे उ० पहुंचने को ॥ २१ ॥ त० तब स० शक्र दे० देवेन्द्र दे० देवराज स० धीरे २ जा० विमान ठ० स्थापन किया स० धीरे २ वि० विमान को ठ० स्थापन करके स० धीरे २ जा० विमान से प० नीचे उतरे स० धीरे २ जा० विमानसे प० नीचे उतर कर ए० एकान्त अ० गये ए० एकान्त अ० जाकरके म०

सूत्र

वेसे तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता जे णेव उत्तरखत्तियकुंडपुरसंणिवेसस्स उत्तरपुरत्थिमे दिसिभाए तेणेव झत्ति वेगेण उवट्ठिया ॥ २१ ॥ तओणं सक्के देविंदे देवराया सणियं २ जाणविमाणं ठवेति सणियं २ विमाणं ठवेत्ता सणियं २ जाण विमाणाओ पच्चोतरति सणियं २ जाण विमाणाओ पच्चोतरित्ता एगंतमवक्कमंति एगंतमवक्कमित्ता महया वेउव्विएणं समुग्घाएणं समोहणति

भावार्थ

॥ २१ ॥ फिर शक्र नामक देवेन्द्रने धीरे २ विमान को स्थंभित किया और उस में से उतरकर एकांत में जाकर वैक्रेय समुद्घात करके एक महान मणि, सुवर्ण, रत्नजडित शुभ मनोहर रूप देवच्छंदक बनाया. उस की मध्य में वैसा ही रमणिक मनोहर पाद पीठिका युक्त सिंहासन बनाया. फिर जहां भगवान् थे वहां भगवान् को तीन बार प्रदक्षिणा कर, वंदना नमस्कारकर, जहां देवच्छंदक सिंहासन था वहां भगवान् को

शब्दार्थ

महान वे० वैक्रेय स० समुद्घात से स० मोहित किया म० महान् वे० वैक्रेय स० समुद्घात से स० मोहितरकर ए० एक महान् णा० विविध प्रकारकी म० मणि क० सुवर्ण र० रत्न भ० भात भात के चि० चित्र वाला सु० शुभ चा० मनोहर रूप वाला दे० देवच्छंदक वि० बनाया त० उस दे० देवच्छंदक की ब० बहुतमध्य में ए० एक म० महान् स० पादपीठिका सहित सी० सिंहासन णा० विविध प्रकारके म० मणि क० सुवर्ण र० रत्न भ० भात भातके चि० चित्र युक्त सु० शुभ चा० मनोहर रूपवाला वि० बनाया वि०

सूत्र

महया वेउव्विएणं समुग्घाएणं समोहणित्ता एगं महं णाणामणिकणगरयण भत्तिचित्तं सुभं चारुकंतरूवं देवच्छंदयं विउव्वति तस्सणं देवच्छंदयस्स बहुमज्झदेसभाए एगं महं सपायपीढं सीहासणं णाणामणि कणयरयणभत्तिचित्तं सुभं चारुकंतरूवं विउव्वइ विउव्वित्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छति तेणेव उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पया-

भावार्थ

लाकर पूर्व दिशा में सिंहासन पर बैठाये. फीर (१) शतपाक और (२) सहस्रपाक तेल से भगवान् के शरीर को मर्दन कर गंध कापायिक वस्त्र से (३) पुंछ कर पवित्र जल से स्नान कराकर लक्ष्य मूल्यवाला रक्त गोशीर्ष चंदन तैयार कर लेप किया. फिर निश्वास का किंचित वायु से उडे ऐसे प्रसिद्ध नगर या

(१-२) सो तथा हजार औषधि के पाक से बनाहुवा (३) सुगंधवासित और पीला रंग का.

प्र० आकर जे० जहां म० श्रमण भगवान महावीर तं० वहांही उ० गये ते० वहांही उ० जाकर स० श्रमण भगवान महावीर को ति० तिनवार आ० आदान प० प्रदक्षिणा क० की स० श्रमण भगवंत महावीर को वं० वंदनाकी न० नमस्कार कीया वं० वंदनाकर न० नमस्कार कर स० श्रमण भगवंत महावीर को ग० ग्रहणकर जे० जहां दे० देवच्छंदक ते० तहां उ० गये उ० जाकर स० धीरे २ पु० पूर्वाभिमुख वाला सी० सिंहासन पर णि० बैठाये स० धीरे धीरे पु० पूर्वाभिमुख में णि० बैठाकर स० शतपाक स० सहस्रपाक वाला तैल से अ० मर्दन करा अ० मर्दनकर गं० गंधकाषायिक वस्त्र से उ० पूंछा उ० पूंछकर सु० शुद्ध उदक से

सूत्र

हिणं करेइ समणं भगवं महावीरं वंदति णमंसति; वंदित्ता नमंसित्ता समणं भगवं महावीरं गहाय जेणेव देवच्छंदए तेणेव उवागच्छति; उवागच्छित्ता साणियं २ पुरत्थाभिमुहं सीहासणे णिसीयावेइ; साणियं २ पुरत्थाभिमुहं णिसीयावित्ता सयपागसहस्सपागेहिं तेल्लेहिं अब्भंगेति; अब्भंगेत्ता गंधकासाइएहिं उल्लोलेति उल्लोलित्ता सुद्धोदएणं मज्जावेइ मज्जावित्ता जस्सय मुल्लं सय सहस्सेहिं ति प-

भावार्थ

पाटण में धरे हुवे, चतुरजनों में प्रशंसा पाये हुवे, घोडे की फेन सदृश मनोहर, चतुर कारिगरोंने सुवर्ण के तार से बनाये हुवे, हंस समान श्वेत दो वस्त्र भगवान को पहिनाये. फिर अठारसरा, नवसरा, हार, उरस्व, एकावलि, प्रलंब, कंदोरा, मुकुट, रत्नमालादि आभरण पहिनाये. फिर भिन्न भिन्न जाति के पुष्प की मालाओं से

... स्नान करके ज० जिसका मु० मूल्य स० लक्ष प० प्राप्त करके प० विशेषकर सी० ठंडा गो० गोशीर्ष र० रक्त चं० चंदन से अ० विलेपन किया अ० विलेपन करके इ० थोडा नि० निश्वास-वायु से उडे ऐसा ... श्रेष्ठ ण० नगर प० पाटण में उ० बना हुवा कु० कुशल ण० नरमें प० प्रशंसा पाया हुवा अ० अश्वकी ... मदन पे० रमणिक छे० चतुर कारिगर क० कनक से ख० खींचा हुवा क० कर्म हं० हंसका ... लक्षणवाला (श्वेत) प० पट जु० युगल णि० पहिनाये णि० पहिनाकर हा० हार अ० अर्धहार उ० उरस्थ ए० एकावली पा० मालंब सु० सुत्रपट म० मुकुट र० रत्नकी मालादिक

सूत्र

डोलभित्तए पम्हाइएणं सीतएणं गोसीरत्तचंदणेणं अणुलिंपति अणुलिंपित्ता ईसि णिस्सासवातवोज्झं, वरणगरपट्टणुग्गयं, कुसलणरपसांसितं, अस्सलालापेलवं, छेयायरियकणगखचियंतकम्मं, हंसलक्खणं, पट्टजुयलं, णियंसावेइ। णियंसावेत्ता हार, अद्धहारं, उरत्थं, एगावलिं, पालंब-सुतपट्ट-मउड-रयणमालाइ आविधावेति; आविधावेत्ता गंठिम-वेढिम-पुरिम-संघातिमेणं मल्लेणं कप्परुक्खं

भावार्थ

पुष्पक की माला अलंकृत किये. फिर सहस्र मनुष्य उठावके ऐसी एक बडी चंद्रप्रभा नामे पालखी इन्द्रने वैक्रेयसमुद्घात करके बनाइ. वह पालखी ईहामृग, बैल, घोडे, मनुष्य, मगर, पक्षी, वानर, हस्ती, अष्टापद, सरभ, चमरीगाय, व्याघ्र, सिंह, वन की लता, तथा अनेक विद्याधर युग्म के यंत्र योग करितथी.

शब्दार्थ आ० पहिनाये आ० पहिनाकर गं० गुम्फित पुष्पकी माला, वे० पुष्पका हार पु० पूरित सं० माला से माला वेष्टित म० मानों क० कल्प वृक्ष की तरह स० अलंकृत किया स० अलंकृत करके दो० दूसरी वक्त म० बड़ी वे० वैक्रेय स० समुद्घात स० की स० करके ए० एक म० महान चं० चन्द्रप्रभा सि० शिविका (पालखी) स० सहस्रवाहिनी वि० विकुर्वी तं० वह जं० यथा ई० ईहामृग (शार्दूल) उ० वृषभ, तु० अश्व, ण० मनुष्य म० मगर, वि० पक्षी, वा० वानर, कुं० हाथी रु० हरिण स० अष्टापद च० चमरी गाय स० व्याघ्र सी० सिंह व० वनलता प० पद्मलता वि० विचित्र वि० विद्याधर जु० युगल जं० यंत्रयोग जु० युक्त अ० सूर्य के किरण की स० सहस्र मा० माला वाली सु० रमणीय मि० झगझगाय-

सूत्र रुक्खमिव समालंकरेति; समालंकरेत्ता दोच्चंपि महया वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहणइ; समोहणित्ता एगं महं चंदप्पभं सिवियं सहस्सवाहिणिं विउव्वइ:—तं-जहा ईहामिय—उसभ—तुरग—णर—मकर—विहग—वाणर—कुंजर—रुरु—सरभ—चमर—सद्दूल—सीह—वणलय—पउमलय—विचित्तविज्जाहरमिहुणजुगल——जंतजोग——जुत्तं अ-च्चिसहस्समालीणियं——सुणिरूविय . मिसिमिसंतं रूवगसहस्सकलियं ईसिं भिस—

भावार्थ और महान् तेजगति से भरपूर थी, रमणीय दर्शन करते हजारों चित्रों से परिपूर्ण और देदीप्यमान और नेत्र से न देखनेके योग्य थी, अनेक मोतियों से विराजित सुवर्णमय, प्रतरयुक्त थी, और झूलती मोतियों की माला, हार, अलंकार, वगैरह भूषणों से सुशोभित थी, अतीव दर्शनीय थी, पद्मलता, अशोकलता

[illegible] का० कान्ति से० देदीप्यमान च० चक्षु उ० नहीं देखसके ऐसा मु० मोतिके हार मु०
[illegible] जाल र० सुवर्ण प० पांखडी की दाम लं० लंबाईमें प० लटकती हुइ मु० मोति
[illegible] अ० अलंकार भू० भूषण, स० शोभिती अ० अधिक पे० देखने योग्य प० पद्मल-
[illegible] अ० अशोकलता भ० जैसे चि० चित्रित कुं० कुंदलता जैसी चि० चित्रित
[illegible] चि० चित्रित सु० शुभ चा० मनोहर आकृतिवाली णा० अनेक म०
[illegible] प० पंचवर्णी घ० घंटा प० पताका में प० मंडित अ० अग्रशिखरवाली सु० शुभ चा० मनोहर आ-
[illegible] वाली पा० मनोहर द० दर्शनीय सु० रम्य देखावयाली ॥ २८ ॥ सि० शिबिका उ० लाने में आइ

माण चक्खुल्लोयणलेस्सं, मुत्ताहडं, मुत्तजालंतरोसियतवणीयपयरलंबूसं, पलं-
बंतमुत्तदामं, हारद्धहारभूसणसमोणयं, अहियपेच्छणिज्जं, पउमलयभत्तिचित्तं,
असोगलयभत्तिचित्तं, कुंदलयभत्तिचित्तं, णाणालयभत्तिविरइयं, सुभं, चा-
रुकंतरूवं, णाणामणिपंचवण्णघंटापडायपरिमंडियग्गसिहरं, सुभं, चारुकंत रूवं,
पासादीयं, दरिसणिज्जं, सुरूवं. ॥ २२ ॥ सीया उवणीया जिणवरस्स जरम-

भावार्थ

[illegible] वगैरह लताओं से चित्रित थी, शुभ तथा मनोहर आकारवाली थी, अनेक प्रकारकी पंचवर्णी मणियुक्त घंटा
तथा पताकासे शोभित अग्रभागवाली थी, तथा मनोहर, देखनेयोग्य और रम्य आकृतिवाली थी ॥ २८ ॥

शब्दार्थ — जि० जिनवर न० नग प० प्राण म वि० सहित उ० चांदी म० मुख्यकी दा० माला ज० जन्म स्थलका दि० दिव्य पु० पुष्पा से ... सि० सिंहासन के म० मध्य में दि० दिव्य र० श्रेष्ठ र० रत्नरूप के० देदीप्यमान ... पा० पादपीठ सहित जि० जिनवर का (२) आ० धारण ... मा० माला म० मुकुट आ० देदीप्यमान अंगवाले व० श्रेष्ठ आ० आभरण को धारण करने वाले ... वर्ण ... पहिननेवाले न० जिनका मो० मूल्य म० लाख का [३] छ० दो उपवास ... म० मनवाल भा० ... जिन के० कल्याण वि० विशुद्ध भा० भाव उ० उत्तम सि० शिवि

मूल — सर्वाभरणभूषितम्म उपसन्नमल्लदामा जन्मथलयं दिव्वकुसुमेहिं (१) सिंहियाइ म- ज्झयारे दि० व रयणरुवंचेयनियं, सीहासणं महरिहं सपादपीढं जिणवरस्स (२) आलइय मालमउडे भासुरबोंदी वराभरणधारी; खोमयवत्थणियत्थो जस्सय मो- ल्लं सयसहस्सं (३) छट्ठेणउ भत्तेणं अज्झवमाणेण सोहणेण जिणो

भावार्थ — सुकुमार ... दिव्य पुष्पों की मालाओं से सुशोभित पालखी जन्म मरण से मुक्त जिनवर के लिये लाये ... के मध्य में पाद पीठिका सहित रत्नरूप, प्रकाशमान, बहुमूल्य सिंहासन स्थापन किया, लाख मूल्य का उत्तम दोषित वस्त्रों (मलमल व्यतीत) पहिन कर माला मुकुटादि आभरणों से प्रकाशित बनकर

…का पर [४] ॥ २३ ॥ सी० सिंहासनपर णि० बैठे हुवे स० शक्र इ० इशान दो० दो पा० बाजु वी० विंजते है चा० चमर से म० मणि र० रत्न से वि० युक्त दं० दण्ड वाले (५) ॥ २४ ॥ पु० पहिले उ० उठाइ मा० मनुष्योंने सा० सहर्ष रो० रोमपुल्कितने प० पिछेमें ह० हुवे दे० देवता, सु० सुर अ० असुर ग० गरुड णा० नागेन्द्र (६) पु० पूर्वमें सु० देवता व० वहते अ० असुर पु० और दा० दाक्षिण की पा० बाजु में अ० पश्चिम में व० वहते ग० गरुड णा० नाग पु० और उ० उत्तर दिशामें [७] ॥ २५ ॥

सूत्र

हेसाहि विसुज्झंतो आरुहइ उत्तमं सियं (४) ॥ २३ ॥ सीहासणे णिविट्ठो सक्कीसाणाय दोहि पासेहिं, वीयंति चामराहिं मणिरयणविचित्तदंडाहिं (५) ॥ २४ ॥ पुव्विंउक्खित्ता माणुस्सेहिं साहट्ठरोमपुलएहिं पच्छा हवंति देवा सुर असुर गरुल णागिंदा (६) पुरओ सुरा वहंति असुरा पुण दाहिणंमि पासंमि, अवरे वहंति गरुला णागा पुण उत्तरे पासे ॥७॥२५॥ वणसंडं वहु कुसुमियं पउ-

भावार्थ

हो उपादान कर पवित्र परिणाम और शुभ लेश्या सहित जिनेश्वर देव पालखी उपर चढे ॥ २३ ॥ शक्र और इशानेन्द्र सिंहासन की दोनों बाजु बैठकर मणिरत्न दंड युक्त चंवर अपना हस्त में लेकर भगवान् को ढालते थे ॥ २४ ॥ पालखी को पहिले मनुष्योंने हर्ष सहित उठाइ फिर सुर, असुर, नाग आदि देवोंने सन्मुख रहकर उठाइ. पूर्व दिशा में देवों, दक्षिण में असुरों, पश्चिम में गरुडों और उत्तर में नाग जाति के देवों पालखी उठाते सबद करते थे ॥ २५ ॥ जिस समय भगवान् दीक्षा ग्रहण करने को जाते थे उस समय

शब्दार्थ

व० वनखंड प० बहुत कु० कुसुमवाला प० पद्मसर ज० जैसे स० शरदऋतु में सो० शोभता है कु० कुसुम का भ० भारसे इ० यह ग० गगनतल सु० देवताओं के समूहसे (८) सि० सरसव का वन ज० जैसे क० कणियर का वन चं० चंपाका सो० शोभताहै कु० कुसुम का भारसे इ० यह ग० गगनतल सु० देवसमूहों से (९) ॥ २६ ॥ व० श्रेष्ठ प० पटह भे० भेरी झ० झाल्लर सं० शंख स० लक्ष तू० वादित्र ग० गगनतल में ध० धरणितल में तु० वादित्रों का णि० आवाज प० परम र० रम्य (१०) त० तत वि०

सूत्र

सरसं वा जहा सरयकाले, सोहइ कुसुमभरेणं इय गगणतलं सुरगणेहिं (८) सिद्धत्थवणं वा, जहा कणियारवणं वा, चंपयवणं वा, सोहइ कुसुमभरेणं इय गगणतलं सुरगणेहिं (९) ॥ २६ ॥ वरपडह—भेरी—झल्लरी—संख—सयसहस्सिएहि तूरेहिं; गगणतले धरणितले तुरियणिणाओ परमरम्मो (१०) ततवितयं घणझुसिरं आउज्जं चउव्विहं बहुविहीयं वायंति तत्थ देवा बहुहिं आणट्ट-

भावार्थ

देवता से आकाश ऐसा शोभित हो रहा था कि जैसे पुष्पों से वनखंड शोभता होवे, अथवा शरदऋतु में पद्म विकसित होवे, जैसे सरसव का वनखंड तथा कणियर या चंपा का वन विकसित पुष्पों से शोभित होता होवे ॥ २६ ॥ उस समय पटह, भेरी, झाल्लर, शंख आदि चारों प्रकार के लाखों वादित्रों आकाश में देवता और पृथ्वीतलपे मनुष्य बजा रहे थे. तत, वितत, घन और शुषिर ये चारों अवाजवाले वादित्रों को

शब्दार्थ वितत घ० घन सु० शुषिर अ/० वादिंत्र च० चार प्रकार के ब० बहुत प्रकार के वा० बजाते त० न ही दे० देवता च० बहुत आ० आनर्तक सहित (११) ॥ २७ ॥ ते० उस का० काल ते० उस स० समय में जे० जो मे० वे हे० हेमन्तका प०प्रथम मास प० प्रथम प० पक्ष म० मृगशर वदी त० उस म० मृगशरवदी की द० दशमी के दिन सु० सुव्रत नाम दि० दिवस में वि०विजय नाम मु० मुहूर्त में ह० हस्तोत्तरा नक्षत्र का जो० योग में पा० पूर्वमें जती छा० छाया वि० छेल्ला पों० प्रहर में छ० छठ भक्त अ० पानी रहित ए० एक सा० पट आ० लेकर चं० चंद्रप्रभा नामक सि० शिविका में स० सहस्र वाहिनी स० देव

सूत्र गसएहिं (११) ॥ २७ ॥ तेणं कालेणं तेणं समएणं जे से हेमंताणं पढमे मासे पढमे पक्खे मग्गसिरबहुले तस्सणं मग्गसिरबहुलस्स दसमी पक्खेणं सुव्वएणं दिवसेणं विजएणं मुहुत्तेणं हत्थुत्तराणक्खत्तेणं जोगोवगतेणं पाईणगामिणीए छायाए वियत्ताए पोरिसीए छट्ठेणं भत्तेणं अपाणएणं एकसाडगमायाए चंदप्पहाए सिवियाए सहस्सवाहिणीए सदेवमणुयासुरापरिसाए

भावार्थ देवता नाटक की साथ बजाते थे ॥ २७ ॥ उस काल उस समय में मृगशर वदी १० मी के सुव्रत नामे दिन में विजयमुहूर्त में उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र का योग में अन्तिम प्रहर में चौविहार बेला सहित एक वस्त्र धारन कर, सहस्रवाहिनी चंद्रप्रभा नामक शिविका में चढकर देव, मनुष्य, असुरोंके समूह की साथ चलते २

... भगृ की प० परिक्रमा में म० निकलते हुवे म० निकलते हुवे उ० उत्तर क्षत्रिय कुं० कुंडपुर सन्निवेश के म० मध्य में णि० निकलकर जे० जिस दिशा में णा० ज्ञातखंड उ० उद्यान ते० वहां उ० उप० आकर ई० थोड़ीसी (एक हाथ) प० प्रमाण अ० उंच भू० भूमिका भाग स० धीरे २ चं० चंद्रप्रभा नामक सि० शिबिका स० सहस्र वाहिनी ठ० रखी ठ० रखकर स० धीरे २ चं० चंद्रप्रभा सि० शिबिका स० स० स० सहस्र वाहिनी प० नीचे उतरे प० नीचे उतरकर स० धीरे २ पु० पूर्वाभिमुख सी० सिंहासनपर णी० बै० आ० आभरणालंकार उ० उतारे त० तब वे० वैश्रमण दे० देवने जं० गोडु

समभिक्कममाणे समभिक्कममाणे उत्तरखत्तियकुंडपुरसंणिवेसस्स मज्झंमज्झेणं णि-गच्छइ जेणेव णायसंडे उज्जाणे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता ईसिरयणि-प्पमाणं अच्छोप्पेणं भूमिभागेणं सणियं २ चंदप्पभं सिवियं सहस्सवाहिणिं ठ-वेइ ठवेत्ता सणियं २ चंदप्पभाओ सिवियाओ सहस्सवाहिणीओ पच्चोयरइ पच्चो-यरित्ता सणियं २ पुरत्थाभिमुहे सीहासणे णिसीयइ, आभरणालंकारं उमुयइ, त-

भावार्थ कुंडपुर सन्निवेश के मध्य में होकर जहां ज्ञातखंड नामक उद्यान था वहां भगवान पधारे वहां भूमि से एक हाथ ऊपर शिबिका धीरे से रखी उस में से धीरे २ उतरकर पूर्वाभिमुख सिंहासन पर विराजमान होकर वस्त्राभूषण उतारे तब वैश्रमण देवने गोदोहासनसे रहकर श्वेत वस्त्रों में भगवान् के आभरणा-

शब्दार्थ

चारित्र अ० अहोरात्रि स० सर्व पा० प्राण भू० भूत का हि० हित सा० सहर्ष लो० रोम से पु० पुलकित प० मायथपनामे दे० देवता नि० मुनते थे (२) ॥ २९ ॥ त० तब स० श्रमण भगवंत महावीर का सा० सामायिक खा० क्षायोपशामिक च० चारित्र प० अंगीकार किये बाद म० मनःपर्ययज्ञान णा० नामक णा० ज्ञान स० उत्पन्न हुवा अ० अढाइद्विप में दो० दो स० समुद्र में स० संज्ञी के प० पंचेन्द्रिय के प० पर्याप्ता के रहित म० मन म० मनोगत भा० भाव जा० जाण्या ॥ ३० ॥ त० तब स० श्रमण भ० भगवा म० महावीर प्र० प्रवर्ज्या लेते मि० मित्र णा० ज्ञाति स० स्वजन सं०

सूत्र

सव्वपाणभूतहिन माहट्टुलोमपुलया, पयया देवा निसामंति ॥ २ ॥ २९ ॥

तओण समणस्स भगवओ महावीरस्स सामाइयं खाओवसमियं चरित्तं पडिवन्नस्स मणपज्जवणाण णाम णाणे समुप्पन्ने अड्डाइज्जेहिं दीवेहिं दोहिंय समुद्देहिं सण्णीण पंचेंदियाणं पज्जत्ताणं वियत्तमणसाणं मणोगयाइं भावाइं जाणेइ ॥ ६० ॥

तओण समणे भगवं महावीरे पव्वइस्से समाणे मित्त—णाइ—सयण—संबंधिवग्गं

भावार्थ

पुलकित मन करते ... ॥ २९ ॥ इस तरह भगवान्ने क्षायोपशामिक सामायिक चारित्र अंगीकार किये बाद ३ । मनःपर्यय ज्ञान उत्पन्न हुवा जिस से अढाइ द्वीप तथा दो समुद्र के पर्याप्त और व्यक्त मनवाले संज्ञी पंचेन्द्रिय के मनोगत भाव जानने लगे ॥ ३० ॥ दीक्षा ग्रहण किये बाद

स्वाधयंग को प० विसर्जित किये प० विसर्जित कर त० तब इ० यह ए० ऐसा अ० अभिग्रह अ० ग्रहण किया बा० द्वादश वा० वर्ष वो० यजी का० काया च० छोडादेह जे० जो के०कोइ उ० उपसर्ग स० आवेंगे तं० वह ज० यथा दि० देवताका मा० मनुष्य का ते० तिर्यंच का ते० वे स० सर्व उ० उपसर्ग स० प्राप्त होने प० स० सम्यक् प्रकारे स० सहूंगा ख० खमूंगा अ० अहियासूंगा ॥ ३१ ॥ त० तब स० श्रमण भ० भगवंत म० महावीर इ० यह ए० ऐसा अ० अभिग्रह अ० ग्रहणकर वो० वोसिराकर का० काया च०

सूत्र

पडिविसज्जेति, पडिविसज्जित्ता तओणं इमं एयारूवं अभिग्गहं अभिगिण्हइ "बारस वासाइं वोसटुकाए चत्तदेहे जे केइ उवसग्गा समुप्पज्जंति तंजहा:—दिव्वा वा, माणुस्सा वा, तेरिच्छिया वा, ते सव्वे उवसग्गे समुप्पन्ने समाणे सम्मं सहिस्सामि, खमिस्सामि अहियासइस्सामि ॥ ३१ ॥ तओणं समणे भगवं महावीरे इमे यारूवं अभिग्गहं अभिगिण्हित्ता वोसटुकाए चत्तदेहे दिवसे मुहुत्तसेसे कुम्मारग्गा

भावार्थ

भगवानने अपने मित्र, ज्ञाति, स्वजन संबंधि को विसर्जित किये, विसर्जित करके ऐसा अभिग्रह किया कि बारह वर्ष पर्यंत मैं शरीर की संभाल करूंगा नहीं और देव, मनुष्य, या तिर्यचों से जो उपसर्ग होगा वे सर्व सहूंगा. ॥ ३१ ॥ ऐसा अभिग्रह लेकर शरीर की ममतासे रहित होते हुवे एक मुहूर्त जितना दिन होते

... कुमार ... ॥ २२ ॥ त० तब स० श्रमण भ० भगवान महावीर वो० वोसराइ च० त्यजी दे० देहको अ० प्रधान आ० स्थान में अ० प्रधान वि० विहार मे ए० ऐसे स० भजम प० नियम सं० संवर त० तप बं० ब्रह्मचर्य खं० क्षांति मो० मुक्ति तु० संतोष स० समिति गु० गुप्ति ठा० स्थान क० कर्म सु० अच्छा फ० फल णि० निर्वाण का मु० मुक्ति मार्ग में अ० आत्मा को भा० भावते वि० विचरते थे॥ २३ ॥ ए० ऐसे वि० विचरते को जे० जो के० कोइ उपसर्ग स० उत्पन्न हुवे दि० देवता के मा० मनुष्य के ते० तिर्यंच के ते० वे० स० सर्व उ० उपसर्ग

सूत्र

म समणुप्पन्ने ॥ ३२ ॥ तओणं समणे भगवं महावीरे वोसट्ठचत्तदेहे अणुत्तरेण आलएणं, अणुत्तरेण विहारेणं, एवं संजमेणं, पग्गहेणं, संवरेणं, तवेणं, बंभचेरवासेणं, खंतीए, मोत्तीए, तुट्ठीए, समितीए, गुत्तीए, ठाणेणं, कम्मेणं, सुचरियफलणिव्वाणमुत्तिमग्गेणं, अप्पाणं भावेमाणे विहरइ ॥ ३३ ॥ एवं वा विहरमाणस्स जे केइ उवसग्गा समुप्पज्जिसु—दिव्वा वा, माणुस्सा वा, तेरिच्छिया वा,

भावार्थ

कुमार गाव में आये ॥ ३२ ॥ फिर भगवान उत्कृष्ट आलय, उत्कृष्ट विहार वैसे ही वैसा संयम, नियम, संवर, तप, ब्रह्मचर्य, क्षान्ति, त्याग, संतोष, समिति, गुप्ति, स्थान, कर्म, तथा अच्छा फल देनेवाला निर्वाण मार्ग से स्वतः को भावते हुवे विचरते थे ॥ ३३ ॥ यों विचरते जो देव मनुष्य और तिर्यंचों की तरफ से

शब्दार्थ स० उत्पन्न होने अ० शुद्धपन मे अ० निडरपने अ० दीनता रहित ति० त्रिविध म० मन व० वचन का० काय गु०गुप्त स०सम्यक् प्रकार स०सहन किया ख०खम्या ति०सहन किया अ०अध्यासा॥३८॥त०तब स०श्रमण भगवान म० महावीर का ए० इस वि० विहार से वि० विचरते हुवे बा० बारह वा० वर्ष वी० व्यतीतहुवे ते० तेरह में वा० वर्षका प०पर्याय व० वर्तते जे० जब गि० ग्रीष्म का दो० द्वितीय मास का च० चौथा पक्ष व० वैशाख सूदी त० उस व० वैशाख सूदी की द० दशमी के दिन सु० सुव्रत दि० दिनमें वि० विजय मु० मुहूर्त ह० उत्तरा फाल्गुनी ण० नक्षत्र का जो० योग होने पर पा० पूर्वमें जती छा० छाया में वि०

सूत्र ते सव्वे उवसग्गे समुप्पणे समाणे, अणाइले, अव्वहिते, अदीणमणसे तिविह मणवयणकायगुत्ते सम्मं सहइ, खमइ, तितिक्खइ अहियासेइ ॥ ३४ ॥ तओ णं समणस्स भगवओ महावीरस्स एतेणं विहारेणं विहरमाणस्स बारस वासा विनिकंता तेरसमस्स वासस्स परियाए वट्टमाणस्स जे से गिम्हाणं दोच्चे मासे चउत्थे पक्खे वइसाहसुद्धे—तस्सणं वइसाहसुद्धस्स दसमीपक्खेणं सुव्वए-

भावार्थ जो जो उपसर्ग हुवे उन सब को भगवानने स्वच्छ भाव में रहकर अपीडाते, अदीन मन करके, मन वचन और कायाको गोप कर, सम्यक प्रकार से सहन किये ॥ ३४ ॥ इस तरह विचरते भगवान् को बारह वर्ष व्यतिक्रमे और तेरमे वर्षमें उन्हाला का दूसरा मास का दूसरा पक्ष-वैशाख सुदी १० मी को सुव्रत नाम

व्यतीत हुए पो० पहोरसी में जं० जंभिका ग्राम ण० नगर की व० बाहिर ण० नदीके उ० ऋजु वालिका के उ० उत्तर कू० किनारे सा० श्यामाक गा० गाथापतिका क० कर्षणक्षेत्र में वे० व्यावृत्त चे० चैत्यके उ० इशान दि० दिशा विभाग में सा० शालवृक्ष की अ० नजीक उ० उत्कटासन में गो० गोदुह आसने आ० आतापनासे आ० आतापनालेते हुवे छ० दोउपवास से अ० बिना पानीका उ० ऊंचाजानु अ० नीचेमस्तक कर ध० धर्म ध्यान में लीन ज्झा० ध्यान रूप को० कोठा में उ०

सूत्र

ण दिवसेणं विजएणं मुहुत्तेणं हत्थुत्तराहिं णक्खत्तेणं जोगोवगतेणं पाईणगामिणीए छायाए वियत्ताए पोरिसीए जंभियगामस्स णगरस्स बाहिया णदीए उज्वालियाए उत्तरकूले सामागस्स गाहावइस्स कट्ठकरणंसि वेयवत्तस्स चेइयस्स उत्तरपुरच्छिमे दिसिभाए सालरुक्खस्स अदूरसामंते उक्कुडुयस्स गोदोहियाए आयावणाए आयावेमाणस्स छट्ठेणं भत्तेणं अपाणएणं उड्ढंजाणु अहोसिरस्स ध-

भावार्थ

का विजय मुहूर्त में उत्तरा फाल्गुनी के योग में पूर्व दिशा में छाया जाते अंतिम प्रहर में, जंभिका नामक नगरके बाहिर, ऋजुवालिका नदी के उत्तर किनारे, श्यामाक गाथा पतिका कर्षण स्थल में, व्यावृत्त नामक चैत्य के इशान कोनमें शालवृक्ष के नजीक नमे हुवे उत्कट गोदुहासन से आतापना करते हुवे, चौविहार दो उपवास से जंघाओं ऊंची रखकर मस्तक नीचे डालकर ध्यान कोठे में रहते हुवे शुक्ल ध्यान में वर्तते

मास सु० नक्षत्र ध्यान म० मध्य में वर्तते हुवे नि० निर्वाण का क० कृत्स्न प० प्रतिपूर्ण अ० अव्याघात
नि० निरावरण अ० अनंत अ० अनुत्तर के० केवल व० श्रेष्ठ णा० ज्ञान दं० दर्शन स० समुत्पन्न
॥ २० ॥ से० अथ भ० भगवान अ० अर्हन्त जि० जिन के० केवली स० सर्वज्ञ स० सर्व भाव
दर्शी स० देव, मनुष्य असुर सहित लोक की प० पर्याय को जा० जानते हैं म० यथा आ०
आगति ग० गति ठि० स्थिति च० च्यवन उ० उपपात भु० खाया हुवा पी० पीया हुवा क० किया
हुवा प० प्रतिसेवित आ० प्रकट कर्म र० गुप्त कर्म ल० बोला हुवा क० कहा हुवा म० मनका

समणस्स भगवओ महावीरस्स णायपुत्तस्स भगवओ वट्टमाणस्स निव्वाणे, कसिणे, पडिपुण्णे, अव्वाहए, णिरावरणे, अणंते, अणुत्तरे, केवलवरणाणदंसणे समुप्पण्णे ॥ २० ॥ से भगवं अरहा, जिणे, जाए, केवली, सव्वण्णू, सव्वभावदरिसी, सदेवमणुयासुरस्स लोगस्स पज्जाए जाणइ तंजहा आगतिं, गतिं, ठितिं, चयणं, उववायं, भुत्तं, पीयं, कडं, पडिसेवियं, आवीकम्मं, रहोकम्मं, लवियं, कहियं,

सम्पूर्ण, संपूर्ण, प्रतिपूर्ण, अव्याघात, निरावरण, अनंत, उत्कृष्ट केवल ज्ञान केवल दर्शन उत्पन्न
हुवा ॥ २० ॥ अब भगवान अर्हन्त, जिन, केवली सर्वज्ञ, सर्वभावदर्शी होकर देव, मनुष्य, असुरादि सर्व
लोक की पर्याय जानते, देखते, उस अर्थात इन की आगति, गति, स्थिति, च्यवन, उपपात, [illegible]

जंभिका ग्राम न० नगर की ब० बाहिर न० नदीके उ० ऋजु वा-
[illegible] उ० इधर कू० किनारे सा० श्यामाक गा० गाथापतिका क० कर्षणक्षेत्र में वे० व्या-
[illegible] उ० ईशान दि० दिशा विभाग में सा० शालवृक्ष की अ० नजीक उ० उत्कट-
[illegible] आतापनासे आ० आतापनालेते हुवे छ० छट्ठपवास से अ०
[illegible] नीचमस्तक कर ध० धर्म ध्यान में लीन झा० ध्यान रूप को० कोठा में उ०

[illegible] विजएण मुहुत्तेण हत्थुत्तराहि णक्खत्तेणं जोगोवगतेणं पाईण-
[illegible] वियत्ताए पोरिसीए जंभियगामस्स णगरस्स बहिया णईए उ-
[illegible] सामागस्स गाहावइस्स कट्ठकरणंसि वेयावत्तस्स चेइयस्स
[illegible] दिसिभाए सालरुक्खस्स अदूरसामंते उक्कुडुयस्स गोदोहियाए
[illegible] आयावेमाणस्स छट्ठेणं भत्तेणं अपाणएणं उड्ढंजाणु अहोसिरस्स ध-

भावार्थ- [illegible] विजय मुहूर्त में उत्तरा फाल्गुनी के योग में पूर्व दिशा में छाया जाते अंतिम पहर में, जंभिका नामक नगर के बाहर, ऋजुवालिका नदी के उत्तर किनारे, श्यामाक गाथा पतिका कर्षण स्थल में, व्यावृत्त नामक चैत्य के ईशान कोने में शालवृक्ष के नजीक बैठे हुवे उत्कट गोदुहासन से आतापना करते हुवे, चौविहार दो उपवास से [illegible] रखकर मस्तक नीचे डालकर ध्यान कोठे में रहते हुवे शुक्ल ध्यान में [illegible]

अनुत्तर के० केवल श्र० श्रेष्ठ णा० ज्ञान दं० दर्शन स० समुत्पन्न प० प्रतिपूर्ण अ० अव्याघात ॥ ३० ॥ से० वह भ० भगवान अ० अर्हत जि० जिन के० केवली स० सर्वज्ञ स० सर्व भाव दर्शी स० देव, मनुष्य असुर सहित लो० लोककी प० पर्याय को जा० जानी आ० आगति ग० गति ठि० स्थिति च० च्यवन उ० उपपात भु० भुक्त पी० पीया क० किया प० प्रतिसेवित आ० प्रकट कर्म र० गुप्त कर्म ल० बोला हुआ क० कहा हुआ म० मनका

मूल

अणुत्तरे, निव्वाघाए, निरावरणे, अणंते, अणुत्तरे, केवलवरणाणदंसणे समुप्पन्ने ॥ ३० ॥ से भगवं अरहा, जिणे, जाए, केवली, सव्वण्णू, सव्वभावदरिसी, सदेवमणुयासुरस्स लोगस्स पज्जाए जाणइ तंजहा आगतिं, गतिं, ठितिं, चवणं, उववायं, भुत्तं, पीयं, कडं, पडिसेवियं, आवीकम्मं, रहोकम्मं, लवियं, कहियं,

भावार्थ

प्रतिपूर्ण, संपूर्ण, अव्याघात, निरावरण, अनंत, उत्कृष्ट केवल ज्ञान केवल दर्शन उत्पन्न हुवा ॥ ३० ॥ अब भगवान अर्हत, जिन, केवली सर्वज्ञ, सर्वभावदर्शी होकर देव, मनुष्य, असुरादि सर्व लोक के पर्याय जानते, देखते, अब अर्थात् इन की आगति, गति, स्थिति, च्यवन, उपपात, खाया पीया,

[illegible] सर्वजीवों का स० सर्व भाव जा० जानते हुवे पा० देखते
[illegible] ॥ ३६ ॥ जि० जिस दि० दिवस में भ० श्रमण भगवान महावीर को
[illegible] उत्पन्न हुवा उ० उत्पन्न [illegible] वा० वाण
[illegible] दे० देवों दे० देवियों के उ० उतरने से आ० चढने उ० उत्तर
[illegible] भ० श्रमण भगवान महावीर उ० उत्पन्न हुवा णा० ज्ञान द० दर्शन का

[illegible] सव्वजीवाणं सव्वभावाइं जाणमाणे पासमाणे एवं चा-
[illegible] दिवसं समणस्स भगवओ महावीरस्स केवलवरनाणदंसणे समुप्पन्ने तं दिवसं भवणवइ-वाणमंतर-जोइसिय-विमाणवासि देवेहिं
[illegible] आउ उप्पिंजलगभूए यावि होत्था ॥ ३७ ॥ तओणं सम

[illegible] इस प्रकार सब लोक में सर्व भाव जानते हुवे देखते
[illegible] ॥ ३६ ॥ जिस दिन श्रमण भगवान महावीर स्वामी को केवल ज्ञान, केवल दर्शन उत्पन्न
हुआ उस दिन भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषिक और [illegible] वासी आदि के देव देवियों के आने जाने
[illegible] ॥ ३७ ॥ इस प्रकार उत्पन्न ज्ञान दर्शन के धारक श्री महावीर

वयनाई म० सर्वं पा० प्राणातिपात से० वे सु० सूक्ष्म वा० या वा० बादर त० त्रस वा० या था० स्था- र पा ... न म० स्वयं पा० प्राणातिपात क० करे (३) जा० यावज्जीवनपर्यंत ति० तिन प्रकार ... से म० मन से व० वचन से का० कायासे त० उसका भं० हेपूज्य प० प्रायश्चित्त करता ... नि० निंदताहूं ग० विशेष निंदताहूं अ० आत्मा का स्वभाव को वो० त्यजताहूं त० उसकी इ० ये प० पांच भा० भावना भ० होतीहैं त० तहां इ० यह प० प्रथम भा० भावना इ० ईर्या समिति से से० वे णि० निग्रंथ ... अ० विनाईर्या स० समिति से के० केवलीने वू० कहा अ० ईर्या रहित स० समिति वाला

मूल पाइवाय से सुहुम वा, बायरं वा, तस वा, थावरं वा, णेव सयं पाणाइवायं करेज्जा (३) जावज्जीवाए तिविहं तिविहेणं मणसा वयसा कायसा तस्स भंते पडिक्कमामि, निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि । तस्सिमाओ पंच भावणाओ भवंति तत्थिमा पढमा भावणा—इरियासमिए से णिग्गंथे णो अणइरिया समिए त्ति के-

भावार्थ ... भगवन्तः—हे भगवान मैं सर्व प्राणातिपात का त्याग करता हूं:—वह इस तरह सूक्ष्म, या बादर त्रस और स्थावर जीवों की यावज्जीव पर्यंत मन वचन काया करके त्रिविधे मैं घात करूंगा नहीं अन्य की घात कराऊंगा नहीं और घात करनेवाले को अच्छा जानूंगा नहीं. और उस जीवघात से निवर्तता हूं; उस को निंदता है ... और ऐसा स्वभाव को वोसिराता हूं, इस प्रकार ...

...प्राणी को अ० हणे व० एकटा करे प० परितापना दे ले० रगडे उ० उद्वेग उपजावे ई० ईर्या समिति वाला णि० निर्ग्रन्थ णो० नहीं ई० ईर्या असमिति त्ति० ऐसा प० प्रथमा भावना अ० अथ अ० अपर दो० द्वितीया भा० भावना म० मन प० जाने से० वे णि० निर्ग्रन्थ जे० जो म० मन पा० पापकारी सा० सावद्य स० क्रिया वाला अ० आश्रवकारी छे० छेदकारी भे० भेदकारी अ० कलहकारी पा० द्वेषकारक प० परितापकारी पा० प्राणातिपातवाला भू० जीवों की घात करने वाला त० तथा प्रकार का

सूत्र

वत्ती वृया अणइरिया समिते णिग्गंथे पाणाइं (४) अभिहणेज्ज वा, वत्तेज्ज वा, परियावेज्ज वा, लेसेज्ज वा, उद्दवेज्ज वा, इरियासमिए से णिग्गंथे णो इरिया असमिए त्ति पढमा भावणा। अहावरा दोच्चा भावणा—मणं परिजाणाइ से णिग्गंथे जे- मणं पावए, सावज्जे; सकिरिए, अण्हयकरे, छेयकरे, भेयकरे, अधिकरणिए, पाउसिए, परितावित्ते, पाणातिवादित्ते, भूतोवघातिए, तहप्पगारं मणं णो पधारेज्जा, मणं परिजा-

भावार्थ

ना नहीं है उन में से पहिली भावना यह है कि मुनि को ईर्यासमिति सहित विचरना परंतु ईर्यासमिति रहित विचरना नहीं. क्यों कि जो साधु ईर्या समिति रहित विचरता है वह साधु प्राणी आदि की घात करता है इस लिये ईर्या समिति सहित वर्तना यह प्रथम भावना. दूसरी भावना यह है कि मुनि को मन,

शब्दार्थ ...मन णा० नहीं प० धारण करे म० मनको प० जानने वाला से० वे णि० साधु जे० जो म० मन अ० पाप रहित त्ति० ऐसा दो० द्वितीया भा० भावना अ० अथ अ० अपर त० तृतीया भा० भावना व० वचन प० जाने से० वे णि० साधु जा० जो व० वचन पा० पापकारी सा० सावद्य स० सक्रिय जा० यावत् भू० जीवोंकी घात करने वाला त० तथा प्रकार [illegible] व० वचन णो० नहीं उ० बोले व० वचनको प० जानने वाला से० वे णि० साधु जा० जो व० वचन अ० पापरहित त्ति० ऐसा त० तृतीया भा० भावन

सूत्र णाति, से णिग्गंथे जय मणे अपावते त्ति दोच्चा भावणा । अहावरा तच्चा भावणा वतिं परिजाणाति से णिग्गंथे जाय वती पाविया, सावज्जा, सकिरिया, जाव भूतोव घाइया तहप्पगारं वाइं णो उच्चारिज्जा वइं परिजाणाइ से णिग्गंथे जाय वई अपावियत्ति तच्चा भावणा । अहावरा चउत्था भावणा—आयाणभंडाणिक्खेवणा-

भावार्थ पहिचानना अर्थात् जो मन पाप युक्त, सदोष, सराव, क्रिया सहित, कर्म बंधकारी, छेद्कारी, भेद्कारी, कलहकारी, द्वेष से भराहुवा, परितप्त तथा अन्य जीव का घातक होवे ऐसा मन नहीं करना. ऐसा जानकर मन पाप रहित रखना यह दूसरी भावना. तीसरी भावना यह है कि निर्ग्रन्थ को वचन पहिचानना—अर्थात् जो वचन पाप पूर्ण, सदोष, सराव, क्रियावाला यावत् भूतोपघातक होवे ऐसा मन वचन इच्छना नहीं, इस [illegible] रहित वचन बोलना यह तीसरी भावना. चौथी भावना यह है कि साधु को

अथ अ० अपर च० चौथी भा० भावना आ० आदान भं० भंड णि० रखने में स० समितिवन्त णि० निर्ग्रन्थ णो० नहीं आ० आदान भं० भंड णि० रखने में अ० असमितिवंत णि० साधु के० केवलीने बू० कहा आ० आदान भं० भंडको णि० रखने का अ० असमिति वाला णि० साधु पा० प्राणी (४) अ० हणे जा० यावत उद्वेग उपजावे आ० आदान भं० भंड णि० रखने में स० समितिवंत से० वे णि० साधु णो० नहीं आ० आदान भं० भंड णि० रखने में अ० असमिति त्ति० एसा च० चौथी भा० भावना अ० अथ अ० अपर पं० पंचमी भा० भावना आ० देखकर पा० पानी भो० भोजनकरे (भोगवे) से० वे

समिए से णिग्गंथे णो आयाणभंडणिक्खेवणा समिए णिग्गंथे केवली बूया आयाणभंडणिक्खेवणा असमिए णिग्गंथे पाणाइं (४) अभिहणेज्ज वा जाव उद्दवेज्ज वा आयाणभंडणिक्खेवणा समिए से णिग्गंथे णो आयाणभंडणिक्खेवणा असमिए त्ति चउत्था भावणा। अहावरा पंचमा भावणा—आलोइय पाणभोई से णिग्गंथे णो अणालोइय पाणभोयणभोई से णिग्गंथे पाणाइं (४) अभिहणेज्ज

भंडोपकरण रखने लेने समिति सहित वर्तना क्यों कि, केवल ज्ञानी कहते हैं कि आदान भंड निक्षेपणा समिति रहित निर्ग्रन्थ प्राणादिक की घात करता रहता है, इस लिये साधु को समिति सहित वर्तना यह चौथी भावना ... वना यह है कि साधु को आहार पानी देखकर काम में लेना. बिना देखे वापरना नहीं

शब्दार्थ रोसि णो० नहीं अ० विना विचारे भा० बोलने वाले के० केवलीने बू० कहा अ० विना विचारे भा० बो-लने वाले म० वे णि० साधु म० बोले मो० मृषा व० वचन से अ० विचार कर भा० बोलने वाला से० वे णि० साधु णो० नहीं अ० विना विचारे भा० बोलने वाला त्ति० ऐसा प० प्रथमा भा० भावना अ० अथ अ० अपर दो० द्वितीया भा० भावना को० क्रोध को प० जानने वाला से० वे णि० साधु णो० नहीं को० क्रोधी सि० होवे के० केवलीने वू० कहा को० क्रोध प्राप्त को० क्रोधी म० बोले मो० मृषा व० व-चन से को० क्रोध को प० जानकर से० वे णि० साधु ण० नहीं को० क्रोधी सि० होवे दो० द्वितीया

मूल अणणुवीइ भासी केवली बूया—अणणुवीइ भासी से णिग्गंथे समावदेज्जा मोसं वयणाए अणुवीइ भासी से णिग्गंथे णो अणणुवीइ भासी त्ति पढमा भावणा। अहावरा दोच्चा भावणा कोहं परिजाणाइ से णिग्गंथे णो कोहणे सिया केवली बूया कोहप्पत्ते कोही समावदेज्जा मोसं वयणाए कोहं परिजाणाइ से णिग्गं-

भावार्थ ज्ञानी फरमाते हैं कि विना विचारे बोलनेवाला साधु मृषा वचन बोले. इस लिये साधु को विचार कर बोलना. विना विचारे बोलना नहीं. यह प्रथम भावना. दूसरी भावना यह है कि साधु को क्रोध का स्वरूप जानकर क्रोधित होना नहीं क्यों कि केवलज्ञानी कहते हैं कि क्रोध के वशीभूत होनेवाला क्रोधी जीव मृषा बोले. [illegible]

शब्दार्थ होवे च० चौथी भा० भावना अ० अथ अ० अपर पंचमी भा० भावना हा० हास्य को प० जानने वाला से० वे णि० साधु णो० नहीं हा० हास्य करने वाला सि० होवे के० केवल ज्ञानीने वु० कहा हा० हास्य प्राप्त हा० हास्यकारी म० बोले मो० मृषा व० बोलने को हा० हास्यको प० जानने वाला से० वे णि० साधु णो० नहीं हा० हास्य करनेवाले सि० होवे त्ति० ऐसा पं० पंचमी भावना ए० इससे म० महाव्रत स० सम्यक् का० कायासे फा० स्पर्शित आ० यावत् आ० आज्ञासे आ० आराधित भ० होवे दो० दुसरा भं० पूज्य म० महाव्रत ॥ ४१ ॥ अ० अथ अ० अपर त० तीसरा म० महाव्रत का प० पच्चक्खाण करताहूं स० सर्व अ०

मूल

मुषा भयपत्ते भीरू समावदेज्जा मोसं वयणाए भयं परिजाणइ से णिग्गंथे णो भयभीरू सिया त्ति चउत्था भावणा। अहावरा पंचमा भावणा हासं परिजाणइ से णिग्गंथे णो य हासणए सिया केवली बूया—हासपत्ते हासी समावदेज्जा मोसं वयणाए हासं परिजाणइ से णिग्गंथे णो य हासणिए सियत्ति पंचमा भावणा। एत्तावताव महव्वए सम्मं काएण फासिए जाव आणाए आराहिते यावि भवति। दोच्चं भंते महव्वयं(२)॥४१॥ अहावरं तच्चं महव्वयं

भावार्थ

साधु को हास्य करनेवाला न होना क्यों कि केवलज्ञानी कहते हैं कि हास्य करनेवाला पुरुष मृषा बोले इस लिये साधु को हास्य करना नहीं यह पंचमी भावना. इन पांचो भावनाओं से महाव्रत काया से अच्छीतरह स्पर्शित यावत् आज्ञानुसार आराधित होता है यह दूसरा महाव्रत ॥ ४१ ॥ तीसरा

शब्दार्थ [illegible] ग्राम में या ण० नगर में अ० अरण्य में अ० अल्प ब० बहुत अ० छोटा थू० [illegible] नहीं स० स्वयं अ० नहीं दिया गि० ग्रहण करे णे० नहीं अ० अन्य की पास [illegible] ग्रहण करावे अ० अन्यको भी अ० अदिन्न गि० ग्रहण करते को ण० नहीं स० अच्छा [illegible] यावत्जीव जा० यावत् वो० त्यजता हूं त० इसकी इ० यह पं० पांच भा० भावना भ० है त० [illegible] भावना अ० विचार कर मि० परिमित उ० अवग्रह जा० याचने वाला से०

सूत्र [illegible] से गामे वा, णगरे वा, अरण्णे वा, अप्पं वा, बहुं वा, अणुं वा, [illegible] वा, चित्तमंतं वा, अचित्तमंतं वा, णेव सयं अदिण्णं गिण्हेज्जा, णेवण्णेहिं अदि-[illegible] अण्णंपि अदिण्णं गिण्हंतं ण समणुजाणेज्जा जावज्जीवाए जाव वो-[illegible] पंच भावणाओ भवंति तत्थिमा पढमा भावणा—अणुवीइ मिउग्गहजाई से णिग्गंथे. केवली बू-

भावार्थ [illegible] ग्राम में, नगर में या जंगल में थोडा बहुत, छोटा बडा, सचित्त, अचित्त बिनादिया मन, वचन और काया करके लूंगा नहीं. लेवाऊंगा नहीं और लेनेवाले को अच्छा जानूंगा नहीं. और मन [illegible] को में त्यजता हूं. और ऐसा स्वभाव को वोसिराता हूं. इस महाव्रत की पांच भा-[illegible] पहिली भावना यह है कि साधु को विचार पूर्वक परिमित [illegible]

ये णि० साधु णो० नहीं अ० विना विचारे मि० परिमित उ० अवग्रह जा० याचने वाला से० वे णि० साधु के० केवल ज्ञानीने वू० कहा अ० विना विचारे मि० परिमित उ० अवग्रह जा० याचने वाला से० वे णि० साधु अ० नहीं दियाहुवा गि० ग्रहण करे अ० विचार कर मि० परिमित उ० अवग्रह याचने वाला णि० साधु णो० नहीं अ० विना विचारे उ० अवग्रह याचने वाला त्ति० एसा प० प्रथमा भावना अ० अथ अ० अपर दो० द्वितीया भा० भावना अ० विचारकर पा० पानी भो० भोजन भो० खाने वाला से० वे णि० साधु णो० नही अ० विना विचारे पा० पानी भो० भोजन भो० खानेवाला के० केवल ज्ञानी वू०

सूत्र

या अणणुवीइ मितोग्गहजाई से णिग्गंथे अदिण्णं गिण्हेज्जा अणणुवीइ मिउग्गहजाई से णिग्गंथे णो अणणुवीइ मितोग्गहजाई त्ति पढमा भावणा । अहावरा दोचा भावणा—अणुण्णवियपाणभोयणभोई से णिग्गंथे णो अणणुण्णवियपाणभोयणभोई केवली वूया अणणुण्णवियपाणभोयण भोई से णिग्गं-

भावार्थ

विचारे परिमित अवग्रह याचना नहीं, क्योंकि केवलज्ञानी कहते हैं कि विना विचारे परिमित अवग्रह याचनेवाला निर्ग्रन्थ अदत्त लेनेवाला होता है. इस लिये विचार कर परिमित अवग्रह याचना. यह प्रथमा भावना. दूसरी भावना यह है कि साधु को आज्ञा लेकर आहार पानी ग्रहण करना. विना आज्ञा आहार पानी ग्रहण करना नहीं. क्यों कि केवलज्ञानी कहते हैं कि विनाआज्ञा लिये ...

शब्दार्थ

कहा अ० बिना विचारे पा० पानी भोजन भो० खाने वाला से० वे णि० साधु अ० बिना दिया भुं० भोगेगा अ० इसलिये अ० विचार कर पा० पानी भोजन भो० खाने वाला णि० साधु णो० नहीं अ० विना विचारे पा० पानी भोजन भो० खाने वाला त्ति० ऐसा दो० दूसरी भा० भावना अ० अथ अ० अपर त० तीसरी भा० भावना णि० साधु उ० अवग्रह उ० मांगे ए० इस प्रकार उ० अवग्रह मांगने वाले सि० होवे के० केवलीने बू० कहा णि० साधु उ० अवग्रह उ० ग्रहण करे ए० इस प्रकार अ० अवग्रह नहीं मांगने वाले अ० नहीं दिया हुवा गि० ग्रहण करे णि० साधु उ० अवग्रह उ० मांगे ए० इस प्रकार उ०

सूत्र

थे अदिण्णं भुंजेज्जा, तम्हा अणुण्णवियपाणभोयणभोई से णिग्गंथे, णो अणणुण्णवियपाणभोयणभोई त्ति दोच्चा भावणा । अहावरा तच्चा भावणा णिग्गंथेणं उग्गहंसि उग्गहियंसि एत्तावताव उग्गहणसीलए सिया, केवली बूया—णिग्गंथेणं उग्गहंसि उग्गहियंसि एत्तावताव अणोग्गहणसीले अदिण्णं गिण्हेज्जा णिग्गंथेणं उग्गहंसि उग्गहियंसि एत्तावताव उग्गहणसीलए सिय त्ति तच्चा भावणा

भावार्थ

पापरनेवाला निर्ग्रंथ अदत्त लेनेवाला होता है. इस लिये आज्ञा लेकर आहार पानी पापरना यह दूसरी भावना. तीसरी भावना यह है कि साधु को अवग्रह मांगते प्रमाण सहित अवग्रह लेना क्यों कि केवलज्ञानी कहते हैं कि प्रमाण बिना अवग्रह लेनेवाला निर्ग्रंथ अदत्त लेनेवाला हो जावे इस लिये प्रमाण सहित अव-

मैथुन मे० इस प्रकार दि० देवता संबंधि मा० मनुष्य संबंधि ति० तिर्यचयोनि संबंधि णे० नहीं स० स्वयं मे० मैथुन केलिये ग० जावे तं० वह अ० अदत्तदान की व० वक्तव्यता भा० कहना जा० यावत् वो० सजता हूं त० उसकी इ० यह पं० पांच भा० भावना भ० होवे त० तहां इ० यह प० प्रथम भा० भावना णो० नहीं णि० साधु अ० वारम्बार इ० स्त्री की क० कथा क० कहने वाला सि० होवे के० केवल ज्ञानीने वू० कहा णि० साधु को अ० वारम्वार इ० स्त्री की क० कथा क० कहते हुवे सं० शान्ति भेदसे

सूत्र

णं से दिव्वं वा, माणुसं वा, तिरिक्खजोणियं वा, णेव सयं मेहुणं गच्छे, तं चेव अदिण्णादाण वत्तव्वया भा णियव्वा जाव वोसिरामि । तस्सिमाओ पंच भावणाओ भवंति. तत्थिमा पढमा भावणा णो णिग्गंथे अभिक्खणं २ इत्थिणं कहं कहइत्तए सिया केवली बूया—णिग्गंथेणं अभिक्खणं २ इत्थीणं कहं कहमाणे संतिभेदा, संतिविभंगा संतिकेवलिपण्णत्ताओ धम्माओ भंसेज्जा तम्हा णो णि-

भावार्थ

चौथा महाव्रत, सर्वथा प्रकारे मैथुन का त्याग करता हूं. देव, मनुष्य, और तिर्यच संबंधि मैथुन यावज्जीव मन, वचन और काया से सेवुं नहीं, सेवावुं नहीं और सेवनेवाले को अच्छा जानुंगा नहीं, गत पाप के प्रायश्चित युक्त आगामी कालके पाप का त्याग करता हूं. इस महाव्रत का रक्षण के लिये पांच भावना हैं. पहिली भावना यह है कि साधु को वारम्वार स्त्री की कथा करना नहीं,

मे० शान्ति भंग से० शान्ति के० कारण ध० प्रख्या धर्म से भं० भ्रष्ट होवे त० इसलिये णो० नहीं णि० साधु इ० स्त्री क० कथा क० कहने वाला सि० होवे त्ति० ऐसा प० प्रथम भा० भावना

अ० अब अ० अपर दो० दूसरी भा० भावना णो० नहीं णि० साधु इ० स्त्री के म० मनोहर इ० इन्द्रियां आ० देखने वाला णि० चिन्तने वाला सि० होवे के० केवली बू० कहा णि० साधु म० मनोहर इ० इन्द्रियां आ० देखने णि० चिन्तन से० शान्तिभेद सं० शान्ति विभंग जा० यावत ध० धर्म से भं० पडे णो० नहीं णि० साधु इ० स्त्री की म० मनोहर इ० इन्द्रियां आ० देखने वाला णि० चिन्तने वाला सि० होवे

धम्माओ भंसेज्जा णो इत्थीणं कहं कहइत्तए सिया पढमा भावणा। अहावरा दोच्चा भावणा—णो णिग्गंथे इत्थीणं मणोहराइं इंदियाइं आलोइत्तए णिज्झाइत्तए सिया केवली बूया णिग्गंथे णं मणोहराइं इंदियाइं आलोएमाणे णिज्झाएमाणे संतिभेया संतिविभंगा जाव धम्माओ भंसेज्जा णो णिग्गंथे इत्थीणं मणोहराइं इंदियाइं आलोइत्तए णिज्झाइत्तए सिया त्ति दोच्चा भावणा। अहावरा तच्चा भावणा णो

बारंबार स्त्री की कथा करने से शान्तता में तथा केवली भाषित धर्म से भ्रष्ट होवे, इस लिये साधु को स्त्री की कथा बारंबार करना नहीं। दूसरी भावना यह है कि साधु को स्त्रीयों की मनोहर इन्द्रियां देखना जानना नहीं क्योंकि केवलज्ञानी कहते हैं कि ऐसा करने से, शांतिभंग होने से, धर्म भ्रष्ट होवे, इस

पदार्थ

से० ऐसा दो० दूसरी भा० भावना अ० अथ अ० अपर त० तीसरी भा० भावना णो० नहीं णि० साधु इ० स्त्रीके पु० पूर्वरत पु० पूर्व की० क्रीडा सु० याद करने वाला सि० होवे के० केवली ज्ञानीने वू० कहा णि० साधु को इ० स्त्री को पु० पूर्वरत पु० पूर्वक्रीडा स० याद करते सं० शांति भेदसे जा० यावत् भं० भ्रष्ट होवे णो० नहीं णि० साधु पु० पूर्वरत पु० पूर्वक्रीडा स० यादकरने को सि० होवे त्ति० ऐसा त० तीसरी भा० भावना अ० अथ अ० अपर च० चौथी भा० भावना ण० नहीं अ० बहुत पा० पान भो० भोजन भो० खाने वाला से० वे णि० साधु णो० नहीं पा० पानी जैसा र० रसवाले भो० खाने वाला के०

सूत्र

णिग्गंथे इत्थीणं पुव्वरयाइ पुव्वकीलियाइ सुमरित्तए सिया केवली बूया—णिग्गंथेणं इत्थीणं पुव्वरयाइं पुव्वकीलियाइ सरमाणे संतिभेया जाव भंसेज्जा णो णिग्गंथे पुव्वरयाइ पुव्वकीलियाइं सरित्तए सियत्ति तच्चा भावणा। अहावरा चउत्था भावणा—णातिमत्तपाणभोयणभोई से णिग्गंथे णो पणियरसभोयणभोई केवली बूया—अतिमत्तपाणभोयणभोई से णिग्गंथे पणियरसभोयणभोई य-

भावार्थ

[नि]र्ग्रंथ साधु को स्त्रीयों की मनोहर इन्द्रियों देखना नहीं. यह दूसरी भावना. तीसरी भावना यह है कि साधु को स्त्रीयों साथ पहिले की हुइ क्रीडा याद करना नहीं, क्योंकि केवलज्ञानी फरमाते हैं कि पूर्व कृत क्रीडा याद करने से शांति का भंग होता है जिस से धर्म भ्रष्ट होजाय इस लिये पूर्वकृत क्रीडा का स्मरण करना

केवल ज्ञानीने बु० कहा भ० विशेष पा० पान भोजन खाने वाला से० वे नि० साधु प० पानी जैसे रस वाला भो० भोजन खाने वाला सि० होवे सं० शांति भंग जा० यावत् भं० भ्रष्ट होवे णो० नहीं अ० अधिक पान भोजन खानेवाला से० वे नि० साधु प० पानीयरस जैसा भोजन खाने वाला सि० होता च० चौथी भा० भावना अ० अब अ० अपर पं० पंचमी भा० भावना णो० नहीं नि० साधु इ० स्त्री प० पशु पं० नपुंसक स० युक्त स० शयनासन से० सेवने को सि० होवे के० केवलज्ञानीने बु० कहा नि० साधु इ० स्त्री प० पशु पं० नपुंसक सं० युक्त स० शयनासन से० सेवने सं० शांतिभंग जा० यावत भं० भ्रष्ट होवे णो०

सि संतिभेया जाव भंसेज्जा णो पणीयरसभोयणभोई से णिग्गंथे णो प-णीयरसभोयणभोई त्ति चउत्था भावणा । अहावरा पंचमा भावणा णो णिग्गं-थेणं इत्थीपसुपंडगसंसत्ताइं सयणासणाइं सेवित्तए सिया, केवली बूया णि-ग्गंथेण इत्थीपसुपंडगसंसत्ताइं सयणासणाइं सेवमाणे संतिभेया जाव भं-

नहीं यह चौथी भावना । चौथी भावना यह है कि साधु को अधिक खान पान खावना नहीं क्यों की ज्ञान ध्यानादि में बाधा होय ... खावना नहीं क्या कि केवलज्ञानी कहते हैं कि अधिक तथा सरस खान पान भोगवने से शांति का भंग होय, जिस से भ्रष्ट होजाय. इस लिये साधु को अधिक तथा सरस खानपान भोगवना नहीं यह चौथी भावना. पंचमी भावना यह है कि साधु को स्त्री, पशु तथा नपुंसक

शब्दार्थ

णि० साधु इ० स्त्री पशु नपुंसक सं० युक्त स० शयनासन से० सेवने को सि० होवे त्ति० एसा पं० पंचमी भावना ए० इस तरह म० महाव्रत स० सम्यक् का० काया से आ० आराधित भ० होवे च० चौथा भं० पूज्य म० महाव्रत ॥ ४३ ॥ अ० अथ अ० अपर पं० पंचमा भं० पूज्य म० महाव्रत स० सर्व प० परिग्रह का प० प्रत्याख्यान करताहूं से० वे अ० अल्प ब० बहुत अ० छोटा थू० स्थूल चि० सचित्त अ० अचित्त णे० नहीं स० स्वयं प० परिग्रह गि० ग्रहण करे णे० नहीं अ० अन्य की पास प० परिग्रह गि० ग्रहण

सूत्र

सेज्जा णो णिग्गंथे इत्थीपसुपंडगसंसत्ताइं सयणासणाइं सेवित्तए सिय त्ति पंचमा भावणा. एत्तावताव महव्वए सम्मं काएण जाव आराहिते यावि भवति चउत्थं भंते महव्वयं ॥ ४३ ॥ अहावरं पंचमं भंते महव्वयं सव्वं परिग्गहं पच्चक्खामि से अप्पं वा, बहुं वा, अणुं वा, थूलं वा, चित्तमंतं वा, अचित्तमंतं वा, णेव सयं परिग्गहं गिण्हेज्जा णेवण्णेण परिग्गहं गिण्हाविज्जा अण्णंपि परिग्गहं गि-

भावार्थ

वाले शैय्या, आसन, भोगवना नहीं. क्यों कि केवलज्ञानी कहते हैं कि वैसे शैय्या आसन सेवते शांतिभंग होने से धर्म भ्रष्ट होवे इस लिये साधु को स्त्री, पशु नपुंसकवाले शैय्यासन सेवना नहीं. इस तरह महाव्रत अच्छी तरह काया से स्पर्शित यावत् आराधित होता है यह चौथा महाव्रत ॥ ४३ ॥ पंचमा महाव्रत सर्व परिग्रह को त्यजता हूं थोडा बहुत, छोटा बडा, सजीव निर्जीव में ग्रहण करूंगा नहीं, दूसरे से

[illegible] मनोज्ञ अमनोज्ञ [illegible] आवरण [illegible] भावना [illegible]
[illegible] जीव [illegible] मनोज्ञ [illegible] अमनोज्ञ [illegible] शब्द [illegible] भावना [illegible]
नहीं [illegible] आसक्त होवे [illegible] नहीं [illegible] रक्त होवे [illegible] नहीं [illegible] गृद्ध होवे [illegible] नहीं [illegible] मूर्छित होवे
[illegible] नहीं [illegible] लोलुप होवे [illegible] नहीं [illegible] विनाश [illegible] केवल ज्ञानी [illegible]
[illegible] मनोज्ञ अमनोज्ञ [illegible] शब्द में [illegible] आसक्त होवे [illegible] यावत [illegible] विनाश प्राप्त होवे [illegible] शान्ति भेद

णो सक्का ण सोउं सद्दा सोयविसयमागया रागदोसा उ जे तत्थ ते भिक्खू परिवज्जए, सोयओ णं जीवो मणुण्णामणुण्णाइं सद्दाइं सुणेइ मणुण्णामणुण्णेहिं सद्देहिं णो सज्जेज्जा, णो रज्जेज्जा, णो गिज्झेज्जा, णो मुज्झेज्जा, णो अज्झोववज्जेज्जा, णो विणिघायमावज्जेज्जा केवली बूया—णिग्गंथे णं मणुण्णामणुण्णेहिं सद्देहिं सज्जमाणे जाव विणिघायमावज्जमाणे संतिभेया संतिविभंगा संतिकेव-

[illegible] नहीं और [illegible] करनेवाले को [illegible] नहीं [illegible] ऐसा [illegible] को [illegible] है.
[illegible] भावना है [illegible] भावना यह है कि कर्ण से अच्छे बुरे शब्द सुनने [illegible]
[illegible] आसक्त, रक्त, गृद्ध, मोहित, लोलुप व विनाश प्राप्त होना नहीं, क्योंकि केवलज्ञानी कहते हैं कि [illegible]

शब्दार्थ सं० शान्ति विभंग मे भं० शान्ति के० केवलिप्ररूपाधर्म से भं० भ्रष्ट होवे ण० नहीं स० शक्य ण० नहीं सो० सुनने को शब्द सो० श्रोत विषय को आ० आये हुवे रा० रागद्वेष से जे०जो त०उसमें तं० उसको भि० साधु प० छोडदेवे सो० कर्ण से जी० जीव म० मनोज्ञ अमनोज्ञ स० शब्द सु० सुने प० प्रथम भा० भावना अ० अथ अ० अपर दो० द्वितीया भा० भावना च० चक्षुसे जी० जीव म० मनोज्ञ अमनोज्ञ रू० रूप पा० देखे म० मनोज्ञ अमनोज्ञ रू० रूप में णो० नहीं स० आसक्त होवे णो० नहीं र० रक्त

सूत्र लि पण्णत्ताओ धम्माओ भंसेज्जा ॥ गाथा ॥ ण सक्का ण सोउं सद्दा सोयविसोय मागता रागदोसाउ जे तत्थ तं भिक्खू परिवज्जए (१) ॥ सूत्र ॥ सोयओ जीवो मणुण्णामणुण्णाइं सद्दाइं सुणेति पढमा भावणा. अहावरा दोचा भावणा चक्खूओ जीवो मणुण्णामणुण्णाइं रूवाइं पासइ मणुण्णामणुण्णेहिं रूवेहिं णो सज्जेज्जा णो रज्जेज्जा जाव णो विणिग्घाय मावज्जेज्जा केवली बूया मणुण्णामणुण्णेहिं

भावार्थ होते शान्ति का भंग होनेसे केवली भाषित धर्मसे भ्रष्ट होजाय. कर्णमें आते हुवे शब्दोंको रुंधित तो नहीं कर सकते हैं परंतु इस में जो रागद्वेष का परिहार करे वह ही साधु है. इस तरह कर्ण से अच्छे बुरे शब्दों सुनकर रागद्वेष करना नहीं यह प्रथमा भावना द्वितीया भावना यह है कि चक्षु से जीवको अच्छेबुरे रूप देखते उसमें भावस प्राप्त विवेक भ्रष्ट नहीं बनता, क्यों कि केवलज्ञानी कहते हैं कि

शब्दार्थ गं० गंधमें णो० नहीं स० आसक्त होवे णो० नहीं र० रक्त होवे जा० यावत् वि० विवेक विकल बने के० केवल ज्ञानीने वु० कहा णि० साधु म० मनोज्ञ अमनोज्ञ गं० गंध में म० आसक्त र० रक्त जा० यावत् वि० विवेक विकल होवे सं० शान्ति भेदसे सं० शान्ति विभंग से जा० यावत् भं० भ्रष्ट होवे णो० नहीं स० शक्य गं० गंध अ० नहीं सुंघना णा० नासिका के विषय में आ० आइ हुइ रा० रागद्वेष से जे० जो त० तहां ते० उसे भि० साधु प० छोडे घा० घ्राणसे जी० जीव म० मनोज्ञ अमनोज्ञ गं० गंध अ० सुंघे त० तृतीया भा० भावना अ० अथ अ० अपर च० चौथी भा० भावना जि० जिव्हा से जी० जीव

सूत्र

विणिग्घायमावज्जेज्जा केवली बूया णिग्गंथेणं मणुण्णामणुण्णेहिं गंधेहिं सज्जमाणे रज्जमाणे जाव विणिग्घाय मावज्जेमाणे संतिभेदा संतिविभंगा जाव भंसेज्जा ॥ गाथा ॥ णो सक्का गंधमग्घाउं णासाविसय मागयं ॥ रागदोसाउ जे तत्थ तं भिक्खू परिवज्जए (३) घाणओ जीवो मणुण्णामणुण्णाइं गंधाइं अग्घायति तच्चा भावणा ॥ अहावरा चउत्था भावणा जिब्भाओ जीवो मणुण्णामणुण्णाइं रसाइं अस्सा-

भावार्थ केवलज्ञानी कहते हैं कि ऐसे होने शान्तिभंग होने से धर्म भ्रष्ट बनजाता है. आइहुइ गंध तो रूकती नहीं है परन्तु उस में रागद्वेष का परिहार करनेवाला ही साधु है. इस तरह घ्राण से अच्छी बुरी गंध लेता रागद्वेष करना नहीं यह तृतीया भावना चतुर्थ भावना यह है कि अच्छे बुरे रस का स्वाद लेते ...

म० मनोज्ञ अमनोज्ञ र० रसको आ० आस्वादे म० मनोज्ञ अ० अमनोज्ञ र० रसमें णो० नहीं स० रक्त होवे जा०यावत् वि० विवेक विकल्प बने के० केवल ज्ञानीने वु० कहा णि० साधु म०मनोज्ञ अमनोज्ञ र० रसमें स० आसक्त होने जा० यावत् वि० विवेके विकल्प बनते सं० शान्ति भेदसे सं० शान्ति विभंगसे जा० यावत् भं० भ्रष्ट होवे णो० नहीं स० शक्य र० रस अ० नहीं स्वादलेने का जी० जिव्हा विषय को आ०आयाहुवा रा०रागद्वेष से जे०जो० त०तहां तं०उसे भि०साधु प०छोडे जी०जिव्हासे जी०जीव म०मनोज्ञ अमनोज्ञ र० रस आ० आस्वादते है च० चौथी भा० भावना अ० अथ अ० अपर पं० पंचमी भा० भाव-

इति मणुण्णामणुण्णेहिं रसेहिं णो सज्जेज्जा जाव णो विणिग्घाय मावज्जेज्जा केवली वूया णिग्गंथेणं मणुण्णामणुण्णेहिं रसेहिं सज्जमाणे जाव विणिग्घाय मावज्जमाणे संतिभेदा संतिविभंगा जाव भंसेज्जा ॥ गाथा ॥ णो सक्का रस मणासंतु जीहाविसय मागयं राग दोसाउ जे तत्थ तं भिक्खू परिवज्जए ॥ जीहाओ जीवो मणुण्णामणुण्णाइं रसाइं अस्सादेति चउत्था भावणा । अहावरा पंचमा भावणा मणुण्णाम-

क्त यावत् विवेक भ्रष्ट बनना नहीं. क्यों कि केवलज्ञानी कहते हैं कि वैसा होते शान्ति भंग होने से धर्म-भ्रष्ट बनता है. और इस रस को चक्खना तो नहीं है परंतु उसमें रागद्वेष का परिहार करनेवाला मुनि है. जो जिव्हाने अच्छे बुरे रसका स्वाद लेने रागद्वेष करना नहीं. यह चतुर्थ भावना ...

शब्दार्थ म० मनोज्ञ अमनोज्ञ फा० स्पर्श प० वेदे म० मनोज्ञ अमनोज्ञ फा० स्पर्श में णो० नहीं स० आसक्त होवे णो० नहीं र० रक्त होवे णो० नहीं गि० गृद्ध होवे णो० नहीं मु० मुग्ध होवे णो० नहीं अ० तल्लीन बने णो० नहीं वि० विवेक भ्रष्ट० के० केवल ज्ञानीने वु० कहा णि० साधु म० मनोज्ञ अमनोज्ञ फा० स्पर्श स० आसक्त जा० यावत वि० विवेक भ्रष्ट होने सं० शान्ति भेदसे सं० शान्ति भंगसे सं० शान्ति के० केवलि प्ररू पी धर्म से भ्रष्ट होवे णो० नहीं स० शक्य फा० स्पर्श ण० नहीं वे० वेदने को फा० स्पर्श विषय को आ० आया हुआ रा० रागद्वेष में जे० जो त० तहां तं० उसे भि० साधु प० छोडे फा० स्पर्श से० जी० जी-

सूत्र वाइं फासाइं पडिसंवेदेति मणुण्णामणुण्णेहिं फासेहिं णो सज्जेज्जा, णो रज्जेज्जा, णो गिज्झेज्जा, णो मुज्झेज्जा, णो अज्झोववज्जेज्जा, णो विणिग्घाय मावज्जेज्जा केवली बूया—णिग्गंथेणं मणुण्णामणुण्णेहिं फासेहि सज्जमाणे जाव विणिग्घाय मावज्जमाणे संतिभेदा, संतिविभंगा, संतिकेवलि पण्णत्ताओ धम्माओ भंसेज्जा ॥ गाथा ॥ णो सक्का फासं ण वेदेतुं फासविसय मागयं राग दोसाउ जे तत्थ तं भिक्खू परि-

भावार्थ स्पर्श अनुभवते उस में आसक्त यावत् विवेक भ्रष्ट बनना नहीं. क्यों कि केवलज्ञानी कहते हैं कि ऐसा होते शांतिभंग होने से केवली प्ररूपा धर्म से भ्रष्ट होता है. आते हुवे स्पर्श तो रूक सकते नहीं है, परंतु उस में रागद्वेष नहीं करनेवाला ही साधु है. इस तरह स्पर्शेन्द्रिय से अच्छे बुरे स्पर्श का अनुभव कर रागद्वेष करना नहीं यह पंचमी भावना. इस तरह महाव्रत अच्छी तरह ...

विमुक्ति नामक पंचविंशतितम मध्ययनम् ॥

अ० अनित्य आ० आवास में उ० जाते हैं जं० जीवों प० विचार करो सु० सुनकर इ० यह अ० प्रधान वि० छोडे वि० विज्ञ अ० गृहबंधन अ० निडर आ० आरंभ परिग्रहको च० छोड ॥१॥ त० तथागत भि० साधु अ० अनन्तमें सं० संयमी अ० अद्वितीय वि० विद्वान च० विचरते को ए० एषणा में तु० दुःख देते हैं वा० वाचा से अ० उपद्रव करे ण० मनुष्य स० बाणसे सं० संग्राम में रहा हुवा कुं० हाथी त० तथा प्रकार के ज० मनुष्योंमे ही० हिलना कराया हुवा स० शब्द फा० स्पर्श फ० कठोर उ० उपजावे ति० स-

अणिच्चमावास मुवेंति जंतुणो, पलोयए सुच्च मिदं अणुत्तरं, विऊसिरे विन्नु अगारबंधणं, अभीरू आरंभपरिग्गहं चए ॥ १ ॥ तहागअं भिक्खु मणंत संजयं, अणेलिसं विन्नु चरंत मेसणं, तुदंति वायाहिं अभिद्दवं णरा सरेहि संगामगयं व कुंजरं(२)तहप्पगारेहिं जणेहिं हीलिए, ससद्दफासा फरुसा उदीरिया, तितिक्खए णा-

प्रथम अनित्याधिकार करते हैं:—अहो विज्ञ पुरुष ! अनित्य एकेन्द्रियादि गति में जंतु उत्पन्न होते हैं, ऐसा प्रधान जिन प्रवचन सुनकर विचार करें और अगाररूपी बंधन छोडकर अभीरु बनकर परिग्रहारंभ से अपनी आत्मा को बचावें ॥ १ ॥ द्वितीय पर्वताधिकार जैसे पर्वत वायु से कम्पित नहीं होता है, वैसे ही सच्चे, दयालु, उत्कृष्ट और विज्ञ भिक्षुओं को, कोइ मनुष्य संग्राम में रहाहुवा हस्ती की मुवाफिक ... या अपकीर्ति बोले, या कठोर शब्दादिक से पीडित करे तो उन सब को ये

शब्दार्थ हन करे णा० ज्ञानी अ० अदुष्ट चे० मन से गि० पर्वत सदृश वा० वायु से सं० चलायमान ॥ २ ॥ उ० उपेक्षा करता हुआ कु० कुशल सं० रहे अ० अप्रिय दुःख त० त्रस था० स्थावर दु० दुःखी अ० नहीं हण ना हुवा स० सर्व स० सहन करने वाला म० महामुनी त० तैसे से० वे सु० सुसाधु स० समाधिवंत वि० विद्वान ण० नम्र ध० धर्मपद अ० अनुत्तर वि० तृष्णा रहित मु० साधु को झा० ध्यान धारी स० समाधिवंत अ० अग्नि शिखाकी माफक ते० तेजस्वी त० तप प० प्रज्ञा ज० यश व० बढता है. दि० सर्वत्र अ० अ-

सूत्र णा अदुट्ठ चेतसा गिरिव्व वातेण ण संपवेवए (३) ॥ २ ॥ उवेहमाणे कुसलेहिं संवसे अकंतदुक्खा तस थावरा दुही अलूसए सव्वसहे महामुणी तहाहि से सुस्समणे समाहिए (४) विदू णते धम्मपयं अणुत्तरं विणीयत हण्हस्स मुणिस्स झायओ समाहियस्स गिसिहाव तेयसा तवोय पण्णा यं जसो य वढ्ढति (५) दिसोदिसि णंताजिणे ण ताइणा महव्वया खेमपदा पवेदिता महागुरू णि

भावार्थ अट्टहास से सहन करे परंतु चलायमान होवे नहीं ॥ २ ॥ रूप्याधिकारः—जो पुरुष विज्ञपुरुषों की साथ मध्यस्थ भाव से रहकर दुःखी त्रस स्थावर में से किसी जीव की घात न करे वह ही क्षमानिधि महामुनि उत्तम साधु कहा गया है. विद्वान, धर्मपदानुचारी, तृष्णारहित निर्मल ध्यानध्यानेवाले, समाधिवाले मुनि के तप, प्रज्ञा और यश, अग्नि, शिखायुक्तिक प्रकाशते हैं. जीवों की रक्षा करनेवाले अनंत जिनेंद्र

दार्थ

नत मि० मिन ता० त्राता म० महाव्रत ख० क्षेमङ्करं प० कहाहै म० महागुरु ण० कर्म को दूर करने वाला उ० प्रकाश करने वाला त० अंधकार ते० तेज ति० तीनों दिशाको प० प्रकाश करने वाला सि० गृहस्थ में भि० साधु अ० अबद्ध प० विचरे अ० संगरहित इ० स्त्रीयों में च० छोडे पू० पूजा को अ० निश्रा रहित लो० लोक इ० इसतरह से प० अन्य प० नहीं म० स्वीकार करे का० काम गुणोंको पं० पंडित ति० त्रिविध से त्रि० रहित प० परिज्ञा को आचरने वाला धि० धैर्यवन्त दु० दुःख को सहन करने वाला भि० साधु वि० शुद्ध करे ज० जो म० मल पु० पहिले किया म० वायुसे प्रेरित रु० चांदिका मेल की मु-

मूल

रसयग उदीरिता नम व तेऊ तीदिसं पगासया (६) सितेहिं भिक्खू असितो परिव्वए असज्ज मित्थीसु चएज्ज पूअणं अणिस्सिओ लोग मिणं तहा परं ण मज्जति कामगुणेहिं पंडिए (७) तिहा विमुक्कस्स परिण्ण चारिणो धितीमतो दुक्खखमस्स भि-भिक्खुणो विसुज्झए जंसि मलं पुरेकडं समीरियं रुप्पमलं व जोइणा (८) ॥३॥

भावार्थ

ऐसा प्ररूपते हैं कि महाव्रत सब को क्षेम के करनेवाले हैं. वे ही महागुरु कर्म के हरण करनेवाले और प्रकाश करनेवाले हैं, जैसेकी तेजसे सर्वत्र अंधकार का नाश होता है. साधु संसार में रहकर भी त्यागीरूप विचरते हैं और स्त्रीयों से दूर रहकर, मान को छोडकर इहलोक तथा परलोक की निश्रा छोड कर, काम गुणों को सेवते नहीं हैं. त्रिविधे मुक्त साधु परिज्ञा धारण करके धैर्यता से सर्व दुःख सहन करते हैं

... और कहते हैं आ० और म० पानी अ० नहीं पावंदा

... बुनाते हु० दुस्तर अ० ऐसेहां प० जाते पं० पंडित म० वे

... कराया है. न० जैसे वं० बचाया हु० यहां मा० मनुष्यों में

... जिणाणमं उवम्ममेहुणं चेव, भुजंगमे जुण्णतयं जहाजहे

... (९) ॥ ८ ॥ ज माहुआहे मल्लोलं अपारगं, महासमुद्दंव

... पंडिए मेहुणा अंतकंडाचिवुच्चइ १० जहाहि बद्धं

... विमोक्ख आहिओ, अहातहा बंध विमोक्ख जे विऊ

... जैसे कि अग्नि में चांदीका मैल जलजाता है ॥ ७ ॥ भुजंगा-

... है वैसे ही मुनि सर्वथा सद्बुद्धि युक्त किया करते हैं, मैथुन

... का त्याग करते हैं ॥ ८ ॥ समुद्राधिकारः-बहुत पानी

... यह संसार समुद्ररूपसा जाननेवाला मुनि उसका अंत

... हैं, और इस से मुक्त होते हैं वैसे ही बंध मोक्ष का स्व-

... कर सकते हैं. इसलोक में और परलोक में जिस को

... और अप्रतिबद्ध है वह संसार मार्ग में परिभ्रमण नहीं

शब्दार्थ ... यथातथ्य बं० बंध वि० विमोक्ष की जे० जो वि० आ- ... अनन्तर्मा नि० ऐसा वु० कहा जाता है. इ० इस लो० लोकमें प० अन्य ... वचन ज० जिसको किं किंचिदपि से० वे णि० निरावलम्बी ... मार्ग से मि० मुक्तात्मा है

मूल ... अनकोत्ति वुच्चइ (११) इमंमि लोए परते य दोसुवि, ण विज्जइ बंधणं जस्स किंचिवि, से हु णिरालंवणे अप्पतिट्ठे, कलंकली भावपहं विमुच्चइ त्तिबेमि ( ) ॥ ५ ॥ इति विमुत्तिनाम पंचवीस मज्झयणं सम्मत्तं

भावार्थ ... यह श्री सुधर्मा स्वामी फरमाते है कि अहो जम्बू जैसा मैंने श्री श्रमण भगवन्त महावीर स्वामी ... से सुनाहै वैसा ही यह आचारांग सूत्रांग का भाव तेरे प्रति कहा. यह विमुक्त नामक पच्चीसवा अध्ययन समाप्त हुवा और सदाचार नामक द्वितीय श्रुतस्कन्ध भी समाप्त हुवा.

सदाचार नामको द्वितीयः श्रुतस्कन्धः समाप्त

इति आचारांग सूत्रम् समाप्तम्.

(वि. २४४२ आषाढ ...)